B.A / B.sc - Part - I[st] y.

Sub:- Geography.

(Semester - I[st])

Paper - Physical Geography - I

(भौतिक भूगोल - I)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

B.A/B.Sc-I$^{st}_{Y}$ (Physical Geography-Ist)

Geo-517(101) ⇒ P-(भौतिक भूगोल-I)

Unit-Ist

Topic ①

Definition, Scope & Development of Physical Geography.
(परिभाषा, विषय-क्षेत्र, विकास - भौतिक-भूगोल)

प्रश्न ① भौतिक भूगोल की परिभाषा, विषय-क्षेत्र एवं विकास की व्याख्या कीजिए।

(2020)

Topic-02 Origin of the Earth. (पृथ्वी की उत्पत्ति)

- ⇒ : बिग-बैंग सिद्धान्त, The Big-Bang Hypothesis;
- ⇒ : ओटो श्मिड की अन्तरतारक धूल परिकल्पना (The Interstellar Dust Hypothesis)

New

प्रश्न(1) पृथ्वी की उत्पत्ति से सम्बन्धित "बिग-बैंग सिद्धान्त को समझाइयें।

प्रश्न. पृथ्वी की उत्पत्ति से सम्बन्धित-" ओटो श्मिड की अन्तरतारक धूल परिकल्पना को समझाइयें।

Topic:-③ Geological History of the Earth.
(पृथ्वी का भूगर्भिक इतिहास)

प्रश्न-① पृथ्वी के भूगर्भिक इतिहास को समझाइयें।

(2022)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic - 04 - Origin of the Continents & Oceans:- Continental Drift Theory:-

(महाद्वीप एवं महासागरीय उत्पत्ति : महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त)

प्रश्न.01 महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं, इसके समर्थन के प्रमाण दीजिए। (2019)

प्रश्न.(2) वेगनर के 'महाद्वीपीय प्रवाह सिद्धान्त को स्पष्ट कीजिए। (2017)

test

Topic (05) Plate Tectonic Theory

(प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त)

प्रश्न.(1) प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त का वर्णन कीजिये। (2020)

test

प्रश्न.(2) टिप्पणी : प्लेट विवर्तनिकी -(2022)

Unit-II

प्रश्न.(4) पृथ्वी की आन्तरिक संरचना की व्याख्या कीजिए रेखाचित्र भी बनाइयें। (2023)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Unit - II

Topic :- ① Interior of the Earth. (पृथ्वी की आन्तरिक संरचना) :-

प्रश्न(1) पृथ्वी की आन्तरिक संरचना की विभिन्न परतें क्या हैं, भूकम्प विज्ञान की सहायता से आरेख बनाते हुए इन परतों का वर्णन कीजिए। (2019)

प्रश्न(2) पृथ्वी के अभ्यन्तर की जानकारी प्रदान करने वाले कौन - कौन से साक्ष्य (प्रमाण) हैं। (2017)

प्रश्न(3) भूकम्प विज्ञान के प्रमाणों के आधार पर पृथ्वी की आन्तरिक संरचना की विवेचना कीजिए। (2015)

प्रश्न :

Topic :- (2) Earth Movements :- Endogenetic & Exogenetic.
(भू-संचलन :- अन्तर्जात बल और बहिर्जात बल)

प्रश्न(1) भू- गतियाँ क्या हैं? भ्रंशन एवं वलन गतियों के परिणाम स्वरूप बनने वाली स्थलाकृतिक भू- आकृतियों की विवेचना कीजिए। (2020)

प्रश्न(2) टिप्पणी :- पृथ्वी के बल (2013)

प्रश्न(3) भ्रंश के प्रकारों को रेखाचित्र की सहायता से समझाइये। (2023)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic-03 Isostasy:- Views of Airy, Pratt & Holmes

(संन्तुलन की संकल्पना :- सर जार्ज एयरी, प्रॉट और (आर्थर होम्स) के अनुसार)

प्रश्न 01 भू-संन्तुलन के सिद्धान्त को परिभाषित कीजिए, सर जार्ज एयरी तथा प्रॉट के विचारों का भू-सन्तुलन के सिद्धान्त एक तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत कीजिए। (2018)

प्रश्न 02 समस्थिति से क्या तात्पर्य है, प्रॉट एवं ✓ एयरी के समस्थिति सिद्धान्त को समझाइये। (2016)

प्रश्न (3) 'समस्थिति' संक्षिप्त टिप्पणी लिखें (2022) ✓

Topic:-04 Volcanoes & Earthquakes.
(ज्वालामुखी और भूकम्प)

प्रश्न 1 टिप्पणी लिखे
✓ (i) भूकम्प के कारण — (2022)

New
प्रश्न 2 ज्वालामुखी किसे कहते है। ज्वालामुखी के प्रकार व उद्गार के कारण बताइयें।

प्रश्न 3 ज्वालामुखी क्रिया द्वारा निर्मित स्थलाकृतियाँ को समझाइयें।

प्रश्न 4 भूकम्प का वर्गीकरण तथा इसके प्रभाव का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 5 ज्वालामुखियों की उत्पत्ति के कारणों को समझाते हुए इनके विश्व-वितरण तथा सम्बन्धित स्थलाकृतियों का वर्णन कीजिये। (NoN-collegi) 2016)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Unit - III[rd]

Topic - ① Mountain Building Theories :- Kobber & Holmes.
(पर्वत निर्माण सिद्धान्त :- कोबर और होम्स)

प्रश्न-① पर्वत निर्माण के भू-सन्नति सिद्धान्त की विवेचना कीजिए। (कोबर) — (2018)

New ⇒ प्र. होम्स के तापीय संवहन तरंग सिद्धान्त का वर्णन कीजिए। (Non-college - 2017)

प्रश्न ② होम्स का संवहन तरंग सिद्धान्त को समझाइये
([illegible] - [illegible])

Topic :- ② Rocks :- classifications & characteristics.
(चट्टानें :- वर्गीकरण और विशेषताएँ)

प्रश्न-① टिप्पणी लिखें -
(i) आग्नेय चट्टान — (2022)

New -
प्रश्न· चट्टान किसे कहते हैं, चट्टानों का वर्गीकरण और विशेषताएँ बताइयें।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic ③ Denudation : Erosion & (Weathering, Cycle of Erosion : views of W.M. Davis & W. Penck.)

① (अनाच्छादन : अपक्षय (weathering) और अपरदन)

② (अपरदन चक्र : डेविस और W. पेंक के अनुसार)

प्रश्न ① अनाच्छादन से क्या तात्पर्य है?, अपक्षय एवं अपरदन के विभिन्न प्रकारों को समझाइयें।
(2016)

प्रश्न (2) अपरदन चक्र से क्या तात्पर्य है? 'डेविस के त्रिकट' को विस्तार से समझाइयें। (2016)

प्रश्न (3) 'अपरदन चक्र पर W.M. डेविस व W. पैंक के विचारों की तुलना कीजिए'। (2018)

प्रश्न ④ स्थलरूपों के विकास सम्बन्धी पेन्क द्वारा प्रतिपादित मॉडल को समझाइयें। (Non-college -2016)

Topic :- ④ Drainage System & Pattern.
(अपवाह तंत्र तथा प्रतिरूप)

New

प्रश्न ① अपवाह तंत्र किसे कहते है। इसके विभिन्न प्रकारों को समझाइयें

प्रश्न ② विभिन्न अपवाह प्रतिरूपों को समझाइयें

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Unit - IVth

Topic :- (i) Erosional & Depositional Work and Topographies of River, Underground Water, Glaciers, Wind & Oceanic Waves. (अपरदनात्मक और निक्षेपात्मक : कार्य स्थलाकृतियाँ : नदी, भूमिगत जल (कार्स्ट), हिमनद सागरीय तरंगों) द्वारा

प्रश्न (1) नदी के अपरदनात्मक और निक्षेपात्मक कार्यों का वर्णन कीजिए। (2017, 2023)

प्रश्न (2) पवन की अपरदनात्मक एवं निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का चित्र सहित वर्णन करें। (2019)

प्रश्न (3) भूमिगत जल द्वारा निर्मित अपरदनात्मक एवं निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का सचित्र वर्णन करें। (2022)

प्रश्न (4) हिमनदों द्वारा निर्मित अपरदनात्मक व निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों की व्याख्या कीजिये (N.N-colleg. 2017)

प्रश्न. हिमानियों (हिमनद) द्वारा निर्मित भू-दृश्यावलियों का वर्णन कीजिये।

प्रश्न. (5) सागरीय तरंगों द्वारा निर्मित अपरदनात्मक व निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों की व्याख्या कीजिये

#

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic(i)(Fild, function, nature, Definition Physical Geography
(भौतिक भूगोल - परिभाषा, विषय क्षेत्र, प्रकृति)

प्रश्न.1 "भौतिक भूगोल" के क्षेत्र, क्रिया, और बदलती हुई प्रकृति की व्याख्या कीजिए।, (2020)

उत्तर :- भौतिक भूगोल प्राकृतिक विज्ञान की वह शाखा है, जिसमें प्राकृतिक परिवेश प्रक्रमों एवं प्रतिरूपों (Processes and Patterns) का अध्ययन किया जाता है, इनमें वायुमण्डल, जलमण्डल, भूमण्डल, तथा जीवमण्डल प्रमुख है।

विद्वानों के अनुसार परिभाषा :-

(1) मेरी सोमरविले :- "भौतिक भूगोल, भूगोल की वह मूलभूत शाखा है, जिसमें पृथ्वी तल के प्राकृतिक लक्षणों का अध्ययन किया जाता है।"

2. लोबेक (Lobeck) के अनुसार :- "जीव एवं उसके भौतिक पर्यावरण के सम्बन्धों का अध्ययन भूगोल की विषय-वस्तु है तथा भौतिक वातावरण का अध्ययन भौतिक भूगोल है,

3. आर्थर होम्स के अनुसार :- "भौतिक पर्यावरण का अध्ययन ही भौतिक भूगोल है जो कि ग्लोब के धरातलीय उच्चावच, सागर तथा महासागरों तथा जलवायु एवं मौसम के विवरणों का अध्ययन है।"

Clean India, Beautiful India.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भौतिक भूगोल अध्ययन क्षेत्र :(विषय क्षेत्र / कार्य क्षेत्र) :- अध्ययन क्षेत्र के रूप में पृथ्वी पर चार प्राकृतिक तंत्र संचालित होते हैं,

(1) स्थलमण्डल - (Lithosphere) :-
(2) वायुमण्डल - (Atmosphere) :-
(3) जलमण्डल - (Hydrosphere) :-
(4) जैवमण्डल :- (Biosphere) :-

(1) स्थलमण्डल :- (Lithosphere) :-

पृथ्वीतल पर स्थित समस्त स्थलखण्डों तथा उनके विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन मुख्य रूप से स्थलमण्डल के अन्तर्गत किया जाता है, जिन अवस्थाओं एवं प्रक्रियाओं के फलस्वरूप भूतल वर्तमान दशा में पहुँचा है, उस पर भी विचार करके अध्ययन किया जाता है, स्थलमण्डल मे कहीं विशाल मैदान है। तो कहीं पर गहरी - गहरी घाटियाँ, विशाल पर्वत, छोटे द्वीप स्थित है, विभिन्न प्रकार की शैलों का निर्माण भूगर्भिक शक्तियों के परिणामस्वरूप ही होता है अतः ये सभी तथ्य स्थल मण्डल के अंग है,

(2) वायुमण्डल (Atmosphere) :-

वायु के आवरण द्वारा धरातल चारों ओर से घिरा हुआ है, धरातल पर समस्त वायुमण्डलीय दशाओं तथा जीवधारियों के लिए यही वायुमण्डल आवश्यक है, वायुमण्डल की गैसें हमारे लिए महत्वपूर्ण, अदृश्य एवम् आधारभूत संसाधन है, वायुमण्डल परिवर्तनशील घटक है, मौसम के अन्तर्गत - अल्पकालिक परिस्थितियों तथा जलवायु के अन्तर्गत दीर्घकालिक परिस्थितियों को सम्मिलित किया जाता है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

वायुमण्डलीय परिघटनाओं के अन्तर्गत वायुमण्डल की संरचना, संगठन, ऊँचाई, तापमान, वायुदाब, पवनों की गति, दिशा, उत्पत्ति, आर्द्रता, वायुराशियाँ, मेघाच्छादन, वृष्टि आदि सम्मिलित है।

(3) जलमण्डल (Hydrosphere):- पृथ्वी का दो-तिहाई से अधिक क्षेत्र जल द्वारा घिरा है, इसमें समुद्रों एवम् महासागरों से सम्बंध रखने वाले विभिन्न तथ्यों का अध्ययन होता है। इनमें - महासागरों की उत्पत्ति, निक्षेप, तापमान, लवणता, घनत्व, ज्वार-भाटा, प्रवाल-भित्तियाँ, लहरें, धाराए आदि का अध्ययन किया जाता है, जैविक एवं अजैविक संसाधनों का अतुल्य भण्डार भी जलमण्डल में पाया जाता है।

(4) जैवमण्डल :-(Biosphere):- धरातल एवम वायुमण्डल के मध्य मिट्टी, वनस्पति एवम् जीव-जन्तुओं की परत के रूप में विस्तृत एक संकीर्ण पेटी जैवमण्डल कहलाती है, इसके अन्तर्गत समस्त प्रकार के जीवों,- (जन्तु व वनस्पति), मानव की उत्पत्ति, विकास, वितरण, आवास, जीवन-चक्र तथा जीवों व पर्यावरण के मध्य पारस्परिक सम्बंध आदि विविध पक्षों का अध्ययन किया जाता है। जैव प्रक्रम - खाद्य श्रृंखला आदि का अध्ययन किया जाता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

क्रिया और प्रकृति :- (Nature and

- "पोसीडोनियस" (135-50 B.C) ने भौतिक भूगोल को "तर्कसंगत विधि से विकसित किया, उसे "भौतिक भूगोल का जनक" माना जाता है,
- इरेटोस्थनीज को भौतिक भूगोल का पूर्वगामी विद्वान माना जाता है। उन्होंने सर्वप्रथम पृथ्वी के आकार एवं आकृति की गणना की। पृथ्वी की परिधि की शुद्ध गणना के लिए उन्हे सदैव याद रखा जाएगा। उनके इस कार्य से प्रारम्भिक रूप में भूगणित - (Geodesy - The study of the size and shape of the earth) से भौतिक भूगोल का विकास प्रारम्भ हुआ। इस प्रकार 19 वीं सदी में भौतिक भूगोल का वैज्ञानिक आधार तैयार हुआ तथा 20 वीं सदी में यह स्वतंत्र विषय के रूप में स्थापित हुआ। भौतिक भूगोल की प्रकृति परिवर्तनशील है, इस परिवर्तशील के समायोजन से ही विभिन्न भौतिक परिस्थितियों की उत्पत्ति होती है,

अन्तर्क्रिया :-

भूमंडल (भू- आकृतियाँ, प्रवाह, उच्चावच), वायुमंडल इसकी बनावट, संरचना, तत्व एवं मौसम तथा जलवायु, तापक्रम, वायुदाब, वायु, वर्षा जलवायु के प्रकार इत्यादि जलमंडल (समुद्र, सागर, झीलें, तथा जल परिमंडल से संबद्ध तत्व जैव मंडल - (जीव के स्वरूप - मानव तथा वृहद जीव एवं उनके पोषक प्रक्रम जैसे - खाद्य शृंखला, पारिस्थैतिक संतुलन का अध्ययन सम्मिलित होता है।

Let's make a right choice and use dustbin.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

मिट्टियाँ मृदा - निर्माण प्रक्रिया के माध्यम से निर्मित होती है तथा वे मूल चट्टान, जलवायु, जैविक प्रक्रिया एवं कालावधि पर निर्भर करती हैं, कालावधि मिट्टियों को परिपक्वता प्रदान करती है, तथा मृदा के विकास में सहायक होती है। मानव के लिए प्रत्येक तत्व महत्वपूर्ण है। भू- आकृतियाँ आधार प्रस्तुत करती हैं, जिस पर मानव क्रियाएँ संपन्न होती हैं। मैदानों का [redacted] प्रयोग कृषि कार्य के लिए किया जाता है, जबकि पठारों पर वन तथा खनिज संपदा की प्रचुरता होती है। पर्वत, चरागाहों, वनों, पर्यटक स्थलों के आधार तथा निम्न क्षेत्रों को जल प्रदान करने वाली नदियों के स्रोत होते हैं। जलवायु का वनस्पति, शस्य प्रतिरूप, पशुपालन एवं उद्योगों आदि पर गंभीर प्रभाव पड़ता है,

- भौतिक भूगोल प्राकृतिक संसाधनों के मूल्यांकन एवं प्रबंधन से सम्बन्धित विषय के रूप में विकसित हो रहा है। इसके लिए भौतिक पर्यावरण एवं मानव के मध्य संबन्धों को समझना आवश्यक है। भौतिक पर्यावरण संसाधन प्रदान करता है एवं मानव इन संसाधनों का उपयोग करते हुए अपना आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास सुनिश्चित करता है
- तकनीकी सहायता से संसाधनों के बढ़ते उपयोग ने विश्व में पारिस्थैतिक असंतुलन उत्पन्न कर दिया है, सतत विकास के लिए भौतिक वातावरण के तत्वों का आपस मे अन्तक्रिया आवश्यक है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

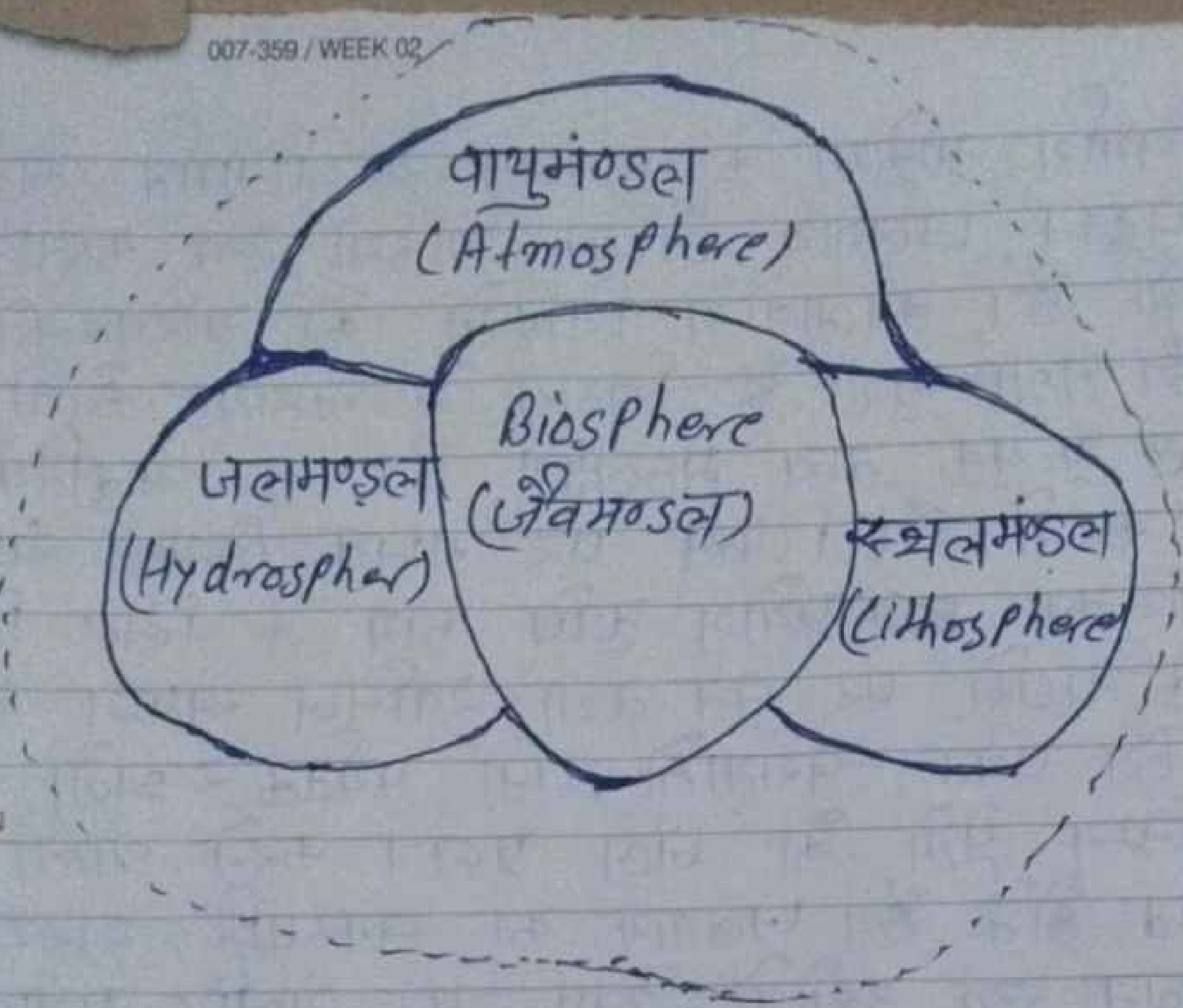

(अन्तर्क्रिया)

- भौतिक पर्यावरण के स्थानिक प्रतिरूपों तथा उसके चरों के अन्तर्सम्बन्धों के आधार पर प्रादेशिक नियोजन तथा विकास को सफल बनाया जा सके पृथ्वी तल भूगोल का आधार स्थल है जिस पर अनेकानेक प्रकार की विभिन्नताएँ पायी जाती हैं,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic -(2) Geological history of the Earth
(पृथ्वी का भूगर्भिक इतिहास)

प्रश्न• (i) पृथ्वी के भूगर्भिक इतिहास को समझाइये। (2022)

उत्तर :- पृथ्वी की आयु लगभग 460 करोड़ वर्ष मानी गई है, जिसे विभिन्न प्रमाणों एवं आधारों पर आकलित किया गया है, भूगर्भिक घटनाएँ विभिन्न दरों से घटित होती हैं, जिनके अध्ययन के लिए लम्बा समय आवश्यक होगा अतः हमें पृथ्वी पर मिले विभिन्न प्रमाणों पर ही विश्वास करना होगा। ये प्रमाण शैलों तथा जीव-जन्तुओं व पादपों के जीवाश्मों के रूप में मिलते हैं,

- प्रारम्भिक समय में पृथ्वी की आयु का निर्धारण विभिन्न प्रमाणों के आधार पर किया गया है जो निम्न है-

(i) पृथ्वी का ठण्डा होना (Cooling of the Earth)
(2) सागरों की लवणता (Salinity of the Oceans)
(3) अवसादीकरण (Sedimentation)
(4) जीवाश्म (Fossils)
(5) अपरदन की दर (Rate of Erosion)
(6) रेडियोधर्मी तत्व (Radioactive Elements)

(1) पृथ्वी का ठण्डा होना (Cooling of the Earth) :- पृथ्वी के ठण्डे होने की दर के आधार पर पृथ्वी की आयु का निर्धारण किया।
भू-सतह के निचे की ओर प्रति 32 मीटर पर 1° सेल्सियस तापमान की वृद्धि हो जाती है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

8.00 इस सम्बन्ध में स्कॉटलैण्ड के विद्वान लॉर्ड केल्विन ने 1862 में एक संकल्पना प्रस्तुत की तथा बताया कि प्रा॰ समय में पृथ्वी पिण्ड के रूप में थी जो कालान्तर में धीरे-2
9.00 ठण्डी हुई है, केल्विन महोदय ने भू-सतह की ताप-
10.00 प्रवणता की गणना करके पृथ्वी की आयु 02 करोड़ वर्ष से 40 करोड़ वर्ष के मध्य बताई।

11.00 (2) सागरों की लवणता :- (Salinity of the Oceans) :- सागरीय
12 NOON जल लवणीय होता है जिसमें स्थानिक भिन्नता मिलती है ऐसा माना जाता है कि यह लवणता सागरों के
1.00 निर्माण के समय नहीं थी। कालान्तर में धरातलीय जल नदियों द्वारा लवण सागरों में पहुँचे।
2.00 अतः यदि प्रतिवर्ष के लवणीय जमाव की दर का पता लगा लिया जाए तो सागरों की आयु का पता लगाया
3.00 जा सकता है
जौली के अनुसार
4.00 - सागरों में विद्यमान लवणों की कुल मात्रा = 1.26×10^{22} ग्राम
- भू-सतह से प्रतिवर्ष 1.56×10^{14} ग्राम लवण
5.00 जमा किया जाता है।

6.00 इस आधार पर सागरों की आयु = $\frac{1.26 \times 10^{22}}{1.56 \times 10^{14}}$ = 80,000,000 वर्ष

इससे केवल सागरों की आयु का पता लगा है पृथ्वी की आयु का नहीं

- 1775 में एडमंड हेली ने महासागरीय लवणता मापन किया।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

लेकिन पृथ्वी की आयु का निर्धारण करने में मुख्य समस्या यह है कि सागरों में नदियों द्वारा प्राप्त होने वाला लवण अवसादों द्वारा जमा होकर स्थल में परिवर्तित होता रहता है। अतः ऐसी दशा में लवणों की कुल मात्रा का आकलन कैसे होगा।, नदियों के अतिरिक्त ज्वालामुखी तथा तटीय पवनों द्वारा भी सागरों में लवण जमा होते है

(3) अवसादीकरण (Sedimentation):- विभिन्न प्राकृतिक प्रक्रमों द्वारा अवसादी शैलों का जमाव किया जाता है, यह एक सतत प्रक्रिया है
प्रथम अवसादी शैल का निर्माण काल =

$$= \frac{\text{अवसादी शैल की कुल सघनता या गहराई}}{\text{प्रतिवर्ष जमाव की दर}}$$

- इस प्रकार अवसादी शैलों की मोटाई या गहराई की माप तथा तलछट जमा होने की दर का आकलन 1860 से 1910 के दौरान अनेक स्थानों पर किया गया तथा इस आधार पर पृथ्वी की आयु 30 लाख वर्ष से 160 करोड़ वर्ष के मध्य आकलित की गई।,

(4) जीवाश्म (Fossils):- भूपटल पर स्थित विभिन्न प्रकार की शैलों में मृत जीवों के अवशेष या अस्थिपंजर दबे मिलते हैं, इन्हें जीवाश्म कहते है। ये अवसादी शैलों में मिलते है तथा इन जीवाश्मों के आधार पर ही अवसादी शैलों की आयु ज्ञात की

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(वर्तमान भूत की कुंजी है।)
(एकरूपतावाद : विचारधारा - हट्टन की)
(न तो आदि का पता है, न अन्त का भविष्य)

'शैलें पृथ्वी के इतिहास की पुस्तक के पृष्ठ हैं।'

जाती है। J.V. कुवियर (1769-1832), तथा ब्रोगनि आर्ट (1770-1847) ने पेरिस के समीपवर्ती क्षेत्रों की अवसादी शैलों का अध्ययन किया। चार्ल्स लायल (1779-1875) ने जीवाश्मों का विस्तृत अध्ययन किया - Book- 'The Principles of Geology' मे दिया है।

(5) अपरदन की दर :- (Rate of Erosion) :- यदि हम वर्तमान तक के कुल अनाच्छादनकारी पदार्थों की मात्रा तथा अनाच्छादन की वार्षिक दर का पता लगा लेते हैं, तो पृथ्वी की आयु का आकलन आसान हो जाएगा। सामान्यत: कुछ भू-वैज्ञानिकों ने यह अनुमान लगाया है कि एक मीटर मोटी सतह परत के अपरदित होने में लगभग 30 हजार वर्ष लगेंगे।

(6) रेडियोधर्मी तत्व :- (Radioactive Elements) :- सर्वप्रथम 1896 में प्रसिद्ध फ्रांसीसी भौतिक विशेषज्ञ हेनरी ने यूरेनियम से बाहर आने वाली शक्ति पर अनुसन्धान कर बताया कि इससे फोटोग्राफी की प्लेटें बिना प्रकाश के (अन्धेरे में) क्रियाशील हो जाती है।
हेनरी महोदय ने यूरेनियम के इस गुण को रेडियों सक्रियता नाम दिया। 1903 में पियरे क्यूरी ने रेडियों सक्रिय तत्वों के विखण्डन से ऊष्मा उत्पत्ति का प्रथम प्रमाण दिया। 1904 में रदरफोर्ड ने रेडियों सक्रिय तत्वों की सहायता से चट्टानों की

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

आयु की गणना करने का प्रयास किया।
रेडियो सक्रिय तत्वों में यूरेनियम एवं थोरियम में सर्वाधिक रेडियो सक्रिय कण उपलब्ध रहते है। ये दोनो तत्व भूपटल में पाई जाने वाली शैलों में विभिन्न रूपों में मिलते है। ये तत्व विखण्डन द्वारा उष्मा उत्पन्न करते है। यूरेनियम विघटित होने पर उष्मा की उत्पत्ति द्वारा उसका रूप बदल जाता है तथा सीसा का निर्माण हो जाता है अतः शैलों में विद्यमान सीसे की मात्रा से यह ज्ञात किया जा सकता है कि कितने समय में इतने यूरेनियम से सीसे का रूपान्तरण हुआ है इस प्रकार उक्त शैल की आयु भी ज्ञात की जा सकती है
– शैलों में यूरेनियम के विखण्डन से हीलियम गैस भी उत्पन्न होती है तथा बैसाल्टिक शैलों में उपस्थित हीलियम की मात्रा ज्ञात करके भी चट्टानों की आयु ज्ञात की जा सकती है। रेडियों सक्रिय पदार्थों की उपस्थिति आज से 1500 करोड वर्ष पूर्व मानी गई है। जिस आधार पर पृथ्वी की आयु 20 से 30 करोड़ वर्ष के मध्य मानी गई है।

(7) मानक भूगर्भिक समय मापनी :- (The Standard Geological Time Scale) :- पृथ्वी की आयु का निर्धारण होने पर उसकी उत्पत्ति से लेकर वर्तमान समय तक के कालक्रम को को किस प्रकार व्यवस्थित किया जाए। इस दिशा में प्रथम प्रयास फ्रांसीसी विद्वान 'बफन' (Bufuton) ने किया इन्होंने पृथ्वी के इतिहास को सात युगों में विभक्त किया।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- भूगर्भिक इतिहास को शुरू में दो प्रमुख कल्पों (Aeons) में विभक्त किया गया।
  (i) क्राइप्टोजोइक कल्प :-
  (2) फेनेरोजोइक कल्प :-

(i) क्राइप्टोजोइक कल्प को तीन खण्डों में विभक्त किया गया है,

(1) हैडन (4600-3800 Milliom years)
(2) आद्य (3800-2500 " ")
(3) प्रोटेरोजोइक (2500-570 Million years)

इन तीनों को सम्मिलित रूप से प्रीकेम्ब्रियन भी कहते हैं।

इस प्रकार दोनों कल्पों को पुनः चार प्रमुख महाकल्पों में विभक्त किया गया :-

(i) प्रीकेम्ब्रियन महाकल्प - क्राइप्टोजोइक कल्प
(ii) पुराजीवी महाकल्प -
(iii) मध्यजीवी महाकल्प -
(iv) नवजीवी महाकल्प :-

(ii)–(iv): फेनेरोजोइक कल्प

(1) प्रीकेम्ब्रियन महाकल्प -

(2) पुराजीवी महाकल्प :- 6 भाग
  (i) केम्ब्रियन काल -
  (ii) ऑर्डोविसियन काल -
  (iii) सिल्यूरियन काल -
  (iv) डिवोनियन काल -
  (V) परमियन काल -
  (vi) कार्बोनीफेरस काल -

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) मध्यजीवी महाकल्प :- 3 कालों में विभक्त किया गया

(i) ट्रायसिक काल
(ii) जुरासिक काल
(iii) क्रिटेशियस काल

(4) नवजीवी महाकल्प :- 2 दो कालों में विभक्त किया गया है।

(i) तृतीयक काल :- पाँच युगों बाँटा गया है।
(ii) चतुर्थक काल :- दो युगों में बाँटा गया है।

(1) तृतीयक काल :- 5 युगों में
(1) पुरानूतन युग
(2) आदिनूतन युग
(3) अल्पनूतन युग
(4) मध्यनूतन युग
(5) अतिनूतन युग

(2) चतुर्थक काल :- 2 युगों में

(i) अत्यन्यूनतम युग :-
(ii) अभिनव या आधुनिक युग -

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(1) क्राइप्टोजोइक कल्प :- (i) हैड्न -
(ii) आद्य -
(iii) प्रोटेरोजोइक -] प्रीकेम्ब्रियन महाकल्प

(1) प्रीकेम्ब्रियन महाकल्प :- यह प्राचिनतम महाकल्प है। इस महाकल्प में भूपर्पटी संगठित हुई थी।, इसकी समयावधि 4600 मिलियन वर्ष पूर्व से 570 मिलियन वर्ष पूर्व तक मानी गई है, इस समयावधि मे शैलों का निर्माण इस काल से पूर्व की हिम चादर गर्म जलवायु से टूट गई थी।, वनस्पति में केवल सागरीय घास की परत थी। इस समय जीवन केवल उष्ण सागरों में था प्रीकेम्ब्रियन शैलों में धात्विक खनिज बहुलता से मिलते है। -

(2) फेनेरोजोइक कल्प :- 3 भागों में
(i) पुराजीवी महाकल्प - (Paleozoic Era)
(ii) मध्यजीवी महाकल्प - (Mesozoic Era)
(iii) नवजीवी महाकल्प - (Caimozoic Era)

(i) पुराजीवी महाकल्प :- (Paleozoic Era) :-

Paleo :- Ancient (प्राचीन)
Zoice - Libe (जीवन)] प्राचीन काल का जीवन

इसकी समयावधि 570 मि. वर्ष पूर्व से 245 मि. वर्ष पूर्व तक मानी गई है।

Cleanliness is happiness.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- विश्व की प्रमुख पर्वत निर्माणकारी घटनाएँ इस महाकल्प में सम्पन्न हुई। इनमें कैलेडोनियन तथा वारिस्कन आदि है, इस महाकल्प के 6 भाग है,

(i) केम्ब्रियन काल -

(ii) ऑर्डोविसियन काल -

(iii) सिल्यूरियन काल -

(iv) डिवोनियन काल -

(v) कार्बोनीफेरस काल -

(vi) परमियन काल -

(1) केम्ब्रियन काल (Cambrian Period) :- 570 मि. वर्ष - 505 मि. वर्ष तक।

- इस काल की शैलें वेल्स, उत्तरी - पश्चिमी स्कॉटलैण्ड तथा पश्चिमी इंग्लैण्ड में मिलती है ये कनाडा व संयुक्त राज्य अमेरिका के ग्राण्ड कैनियन क्षेत्र में भी मिलती है। इन शैलों में प्राचीन जीवों के ~~अव~~ जीवाश्म पाए जाते हैं। इस काल में जीवों में शैवाल, कवक, डायटम तथा जीवाणु, घोंघा मौलस्का पाए जाते ~~है~~ थे। इस काल मे ट्राइलोबाइट की अधिकता थी जिस कारण इसे ट्राइलोबाइट काल भी कहते है,

(ii) ऑर्डोविसियन काल (Ordovician Period) :- 505 मि. वर्ष

पूर्व से 438 मि. वर्ष पूर्व तक मानी गई है। इसका नाम मध्य वेल्स की एक प्राचीन सेल्टिक जनजाति ऑर्डोविसिज के नाम पर किया गया है। इस काल में विस्तृत रूप में ज्वालामुखी उद्‌गार हुए तथा कैलेडोनियन पर्वत निर्माणकारी हलचल हुई। प्रथम रीढ़दार जीवों का उत्पत्ति हुई। आधुनिक मछलियों की पूर्वज जीवाश्म मिले।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(iii) सिल्यूरियन काल :- (Silurian Period) :- इस काल का नामकरण सिल्यूरिस नामक प्राचीन जनजाति के नाम पर किया गया है। इसका समय 438 मि. वर्ष पूर्व से 408 मिलियन वर्ष पूर्व तक माना गया है। इस काल में सागर तल में काफी उतार-चढ़ाव आया। मछलियों का आगमन तथा स्थलीय पौधों का उद्गम शुरू हो गया था। जल जीवों की मात्रा में वृद्धि हुई। इनमें - प्रवाल, बिच्छू, आदि का विकास हुआ।

(iv) डिवोनियन काल (Devonian Period) :- इस काल का नामकरण दक्षिणी-पश्चिमी इंग्लैण्ड की डेवोन काउण्टी के नाम पर किया गया है। इस काल का समय 408 मिलियन वर्ष पूर्व से 360 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। इस काल में महाद्वीपों पर उच्च पर्वतमालाएँ बनीं और स्थलीय भागों में विस्तार हुआ। ज्वालामुखी उद्गार, लाल बलुआ पत्थर का विकास यूरोप में हुआ।
- वृक्षों का विकास, कशेरुकी जीवों का तीव्रता से विकास हुआ। इसे मछलीयुग (Age of Fish) कहते हैं। इस काल में आर्थोपोड़ा वर्ग - कनखजूरे, शतपाद, कुटकी, बिच्छू, मकड़ियाँ मुख्य थे। तथा मरुथलों में बलुआ पत्थर बने थे।

(v) कोर्बोनीफेरस काल :- (Carboniferous Period) :-
कार्बन की उपलब्धता के आधार पर इस युग को कोयलायुग भी कहते हैं। इसका समय 360 मि. वर्ष पूर्व से 286 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। इस काल

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

शैलों को दो भागों में विभक्त किया गया (i) पेन्सिलवेनियन (ii) मिसिसीपियन

- इस काल में आरमोरिकन भू-हलचल हुई जिससे सभी महाद्वीपों में पर्वतों का निर्माण हुआ। इससे ब्रिटेन तथा पश्चिमी फ्रांस सर्वाधिक प्रभावित रहे। इस काल में जलवायु परिवर्तन तथा ताप वृद्धि हुई। सघन वनों का विकास हुआ भू-हलचल से वन समुद्रों में डूब गए तथा अवसाद की परतें जमती गई। जिससे कोयले का निर्माण हुआ।

इस काल में गोण्डवाना में हिमानीकरण हुआ।

(vi) परमियन काल (Permian Period):- मर्किसान के सुझाव पर 1841 में इस काल नामकरण रूस के पर्म प्रान्त के नाम पर किया गया। इसका समय 286 मि. वर्ष पूर्व से 245 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। इस काल में वेरिस्कन भू-हलचल घटित हुई इसी समय अप्लेशियन पर्वत का निर्माण हुआ। नुकीली पत्ती वाले वृक्षों का विकास हुआ। पर्णपाती पौधों का विकास हुआ।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) मध्य जीवी महाकल्प (Mesozoic Era):- इस युग में सरीसृपों (Reptiles) का सर्वाधिक विकास हुआ जिस कारण इसे 'सरीसृपयुग' भी कहा जाता है। रेंगने वाले डायनासोर भी पाए जाते थे। पैंजिया के दक्षिणी भागों में ग्लोसोप्टेरिस पाया जाता है।
इस कल्प को तीन कालों मे बाटाँ गया है।
(i) ट्रायसिक काल -
(ii) जुरासिक काल .
(iii) क्रिटेशियस काल -

(i) जुरासिक काल :- (Jurassic Period);-
इसका नामकरण वान हम्बोल्ट द्वारा 1795 में फ्रांस के जूरा पर्वत के नाम पर किया गया। इसका समय 208 मि. वर्ष पूर्व से 144 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। इस काल में सागरों का विस्तार हुआ। वनों, मैदानों, झीलों, नदियों का विस्तार हुआ; तथा विशाल जीवों का तीव्रता से विकास हुआ

(ii) ट्रायसिक काल (Triassic Period):-
इसका नामकरण जर्मनी की तीन वलित पर्वतों के नाम पर किया गया है इसका समय 245 मि. वर्ष पूर्व से 208 मि. वर्ष पूर्व माना गया है। इस समय गोण्डवाना प्रदेश ब्राजील, दक्षिणी व मध्य अफ्रीका, मेडागास्कर, दक्षिणी भारत तथा आस्ट्रेलिया आदि के रूप में परस्पर जुड़ा हुआ था।
इस काल में शंकु वनों का विकास हुआ

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

डायनासोर इसी युग में उत्पन्न हुए, स्तनधारी जीव, सरीसृप विकसित हुए, तितली, तथा दीमक का भी इसी समय आगमन हुआ।

(iii) क्रिटेशियस काल :- (Cretaceous Period) :- इस काल का नामकरण ग्रीक शब्द क्रेटा -(खड़िया) के नाम पर हुआ इसका समय 144 मि. वर्ष पूर्व से 66.4 मि. वर्ष पूर्व मानी गई है। इस काल में ब्रिटेन से रूस तक का भू-भाग जलमग्न हो गया था। चूने की परतें जमा हो गई थी। नदियाँ धीमी, विशाल डेल्टाओं का निर्माण हुआ लेरेमाइड भू-हलचल हुई तथा अमरीका का कार्डिलेरा पर्वत बना।

पैंजिया का विघटन प्रारम्भ हुआ तथा अफ्रीका एवं अमरीका मध्य समुन्द्र का उदगम हुआ। इस काल में डायनासोर विलुप्त प्राय: हो चुके थे। कछुए तथा सागरीय साँप विकसित हुए।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(IV) नवजीवी महाकल्प :- (Caimozoic Era) :- आधुनिक जीवन का इतिहास नवजीवी महाकल्प मे बताया गया है। इसका प्रारम्भ 66.4 मि. वर्ष पूर्व हुआ इसे दो कालो व 7 युगों मे विभाजित किया गया है।

(1) तृतीयक काल - पाँच युगों
(2) चतुर्थक काल - दो युगों मे

(1) तृतीयक काल :-
यह काल 66.4 मि. वर्ष पूर्व से 1.6 मि. वर्ष पूर्व समाप्त हुआ। पृथ्वी पर महाद्वीपों का आधुनिक स्वरूप इसी काल में विकसित हुआ हिमालय, आल्पस, रॉकीज, एण्डीज पर्वत इसी काल में बने।
इसें पाँच युगों में बाटा गया है।
(i) पुरातन युग - 66.4 मि. वर्ष पूर्व से 57.8 मि. वर्ष पूर्व के मध्य
(ii) आदिनूतन युग -
(iii) अल्पनूतन युग -
(iv) मध्यनूतन युग -
(v) अतिनूतन युग -

(1) पुरातन युग (Palaeoceme Epoch) :- इस युग कि अवधि 66.4 मि. वर्ष पूर्व से 57.8 मि. वर्ष के मध्य मानी गई है। इस युग में रॉकी पर्वत का उद्‌भव हुआ। आदिम स्तनधारियों में उच्च विकास हुआ घोडे का जन्म हुआ है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(ii) आदिनूतन युग :- (Eocene Epoch)
इसका समय 57.8 मि. वर्ष पूर्व से 36.6 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। इस युग मे भूतल से दरारें बनी तथा लावा बाहर आकर भू-सतह पर फैल गया। खुर वाले जीवों का आगमन हुआ। घोड़े, सुअर, बंदर तथा गिब्बन का उद्भव हुआ।

(iii) अल्पनूतन युग :- (Oligocene Epoch)
इस युग का समय 36.6 मि. वर्ष से 23.7 मि. वर्ष पूर्व समाप्त हुआ। कुछ शाकाहारी जन्तुओं गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदि के पूर्वजो का विकास हो गया था।

(iv) मध्यनूतन युग :- (Miocene Epoch)
इस युग का समय 23.7 मि. वर्ष पूर्व से 5.3 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। भूमध्यसागर इसी समय स्थलबध्द सागर बना। आल्पस एवं हिमालय पर्वतों का निर्माण इसी समय पूर्ण हुआ। अनेक ज्वालामुखी क्रियाएँ हुई। मानव के पूर्वज होमोइरेक्टस का भी आगमन मध्य अफ्रीका में हो गया था।

(v) अतिनूतन युग :- (Pliocene Epoch) :-
इस युग का समय 5.3 मि. वर्ष पूर्व से 1.6 मि. वर्ष पूर्व तक माना गया है। महासागर अपने वर्तमान स्वरूप में विकसित होने लगे थे। उत्तरी सागर काला सागर, कैस्पियन सागर तथा अरल सागर का जन्म हुआ। शार्क विलुप्त हो गई थी। हाथी का (मैमूथ) विकास हुआ था।

Cleanliness and beauty always go hand in hand.

(विशाल स्तनधारियों को मैमूथ)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) चतुर्थक काल (Quaternary Period): दो युगों में बाटा गया है

(i) अत्यन्यूनतम युग -
(ii) अभिनव या आधुनिक युग -

(i) अत्यन्यूनतम युग :- (Pliestocene Epoch): इसका समय 1.6 मि. वर्ष पूर्व से 10,000 वर्ष पूर्व ही समाप्त हुआ है इसमें हिमू का विस्तार तथा मानव का विकास अफ्रीका इसी काल हुआ था। पशु आधुनिक रूप में विकसित हो गये थे (हाथी, घोड़े,

(ii) अभिनव या आधुनिक युग :- (Holocene or Recent Epoch): इसका समय 10,000 वर्ष पूर्व से माना गया है आधुनिक समय इसी युग में सम्मिलित किया जाता है सागरों का उत्थान, मरूस्थलों का उद्भव, मानव ने पशुपालन व कृषि कार्य सीख लिया था।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(ii) धूलि कणों का कुछ भाग अन्तरिक्ष में विलीन होना तथा कुछ का सूर्य द्वारा आकर्षण बल से अपने में आत्मसात करना असम्भव है।

Topic :- (3)

प्रश्न 10. **ओटोश्मिड की अन्तर तारक धूल परिकल्पना** (Interstellar Dust Hypothesis)—ओटोश्मिड एक रूसी वैज्ञानिक थे, जिन्होंने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन 1943 A.D. में किया। ओटोश्मिड के अनुसार कालान्तर में ब्रह्माण्ड में बहुत ज्यादा मात्रा में गैस एवं धूलि कण उपस्थित थे। गैस एवं धूल के कणों की उत्पत्ति उल्काओं तथा तारों से निकलने वाले पदार्थों से मानी गई है। कालान्तर में जब सूर्य परिक्रमण करता हुआ आकाशगंगा के पास में होकर गुजरा तो ये गैस एवं धूल के कण सूर्य की आकर्षण शक्ति के कारण सूर्य की ओर आकर्षित हुए। ये आकर्षित गैस एवं धूल के कण अव्यवस्थित रूप से सूर्य की परिक्रमा करने लगे। धूल कण धीरे-धीरे एक-दूसरे में सम्मिलित होने लगे, जिस कारण वे संगठित होने लगे। धूलि कण संगठित एवं घनीभूत होकर एक

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

बॉक्स 2.4 : स्फिति सिद्धान्त

अमेरिकन वैज्ञानिक अलेन गुथ (A. Guth) ने 1980 A.D. में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार ब्रह्माण्ड के दृश्य द्रव्यमान (Visible Mass) के घनत्व की तुलना में उसका वास्तविक घनत्व बहुत अधिक होता है।

तश्तरी के रूप में परिवर्तित हो गए। प्रारम्भ में ये असंगठित धूलि कण आपस में टकराने के कारण इनकी गति मन्द पड़ती गई तथा ये पदार्थ संगठित होकर ग्रहों के भ्रूण के रूप में विकसित हो गए। धीरे-धीरे भ्रूण के रूप में विकसित पदार्थों के पास धूल के कण मिलते रहे तथा ये संगठित पदार्थ क्षुद्रग्रह (Asteriods) के रूप में विकसित होने लगे। क्षुद्रग्रह के पास धीरे-धीरे अन्य धूलि कण आकर सम्मिलित होते गए। यह क्षुद्रग्रह ही कालान्तर में धूलि कणों के सम्मिलित होते रहने से ग्रहों के रूप में परिवर्तित हो गया। ग्रहों के निर्माण के बाद अन्तरिक्ष में बाकी बचे धूल के कण ग्रहों के चारों ओर परिक्रमण करने लगे। आदिकाल में ये धूलि कण ग्रहों के परिक्रमण करते हुए संगठित होकर उपग्रहों के रूप में परिवर्तित हो गए।

आलोचना (Criticism)

(i) गैस, धूल, मेघ आदि की उत्पत्ति अन्तरिक्ष में कैसे हुई इसके बारे में ओटोश्मिड ने कोई आधारभूत सिद्धान्त नहीं दिया।

(ii) इनकी उपस्थिति अन्तरिक्ष में है, इसका भी स्पष्टीकरण ओटोश्मिड ने सन्तोषजनक नहीं दिया है।

(iii) गैस, धूल के कण आदि सूर्य की ओर ही आकर्षित क्यों हुए इसका भी स्पष्टीकरण नहीं दिया।

इन आलोचनाओं के होते हुए भी ओटोश्मिड के धूलि सिद्धान्त के आधार पर सौर परिवार सम्बन्धी निम्न समस्याएँ भी हल होती हैं—

(i) सूर्य तथा ग्रहों के कोणीय आवेग में अन्तर होना स्वाभाविक है, क्योंकि ग्रहों की उत्पत्ति सूर्य से नहीं बल्कि धूल कणों से हुई है।

(ii) सूर्य के नजदीक स्थित ग्रह भारी पदार्थों से तथा दूर स्थित ग्रह हल्के पदार्थों से निर्मित हैं। यह बात भी इस सिद्धान्त द्वारा प्रतिपादित होती है।

प्रश्न-२

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

11. **बिग बैंग सिद्धान्त** (Big Bang Theory)—सन् 1930 में अमेरिकी खगोलविद एडविन हबल ने सर्वप्रथम वैज्ञानिक व्याख्या के साथ बताया था कि ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चित्र 2.11 : बिग बैंग सिद्धांत

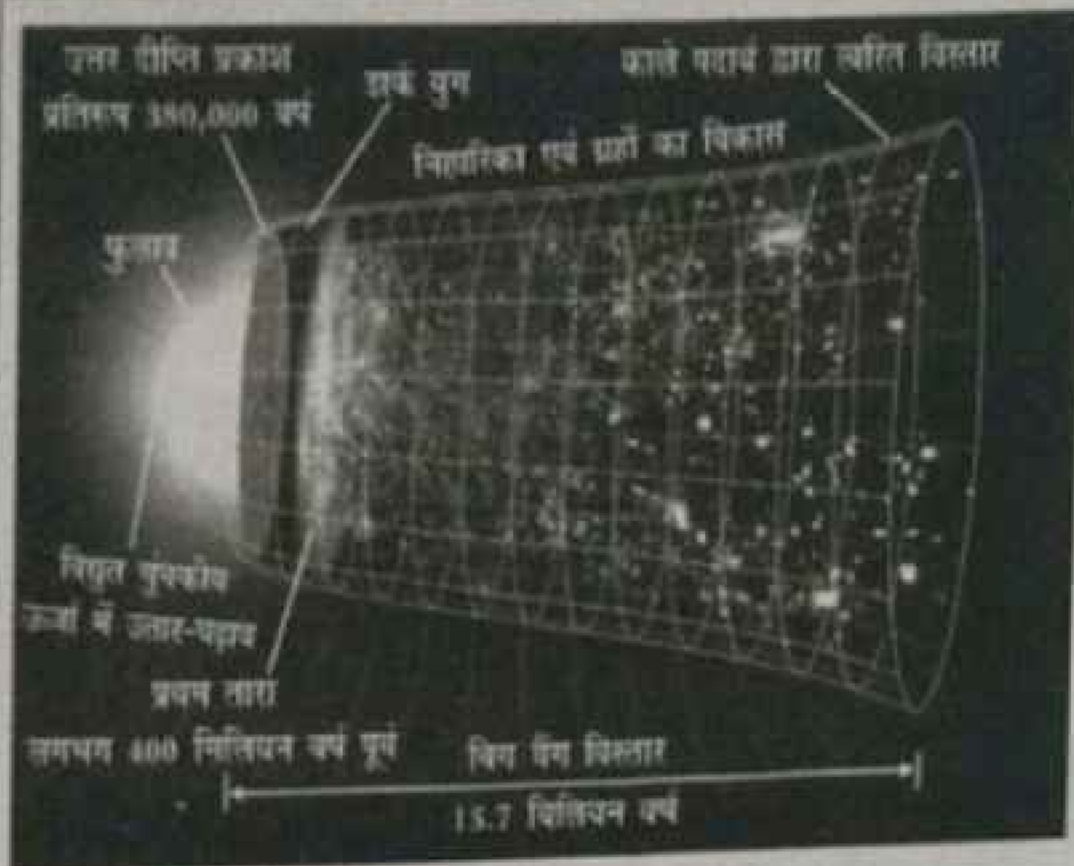

है। उन्होंने पाया कि आकाश गंगाएँ समय के साथ गतिशील हैं। इस विचार ने ब्रह्माण्ड के स्थिर होने के पूर्व के विचारों का खण्डन किया। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में वृहद् विस्फोट का विचार 1927 A.D. में बेल्जियम के कैथोलिक पादरी **जॉर्ज लैमत्रे** (George Lemaitre, 1894-1966) ने दिया जो Annals of the Scientific Society of Brussels में प्रकाशित हुआ तथा इसका सन् 1931 में अंग्रेजी में अनुवाद हुआ। इसीलिए ब्रह्माण्ड सम्बन्धी नियम को हबल और लैमत्रे के नाम से जाना जाता है। इसे बिग बैंग (महा विस्फोट) सिद्धान्त कहते हैं। इसे **विस्तारित ब्रह्माण्ड परिकल्पना** भी कहते हैं। अब तक ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में इसी विचार को प्रामाणिक माना जा रहा है। वृहद् विस्फोट के विचार के अनुसार आज से लगभग 15 अरब वर्ष पहले ब्रह्माण्ड में सारा पदार्थ एक विशाल अग्निपिण्ड के रूप में था इसमें तापमान एवं दाब की अधिकता थी जिसके कारण इसमें भयंकर विस्फोट हुआ। इस विस्फोट से अग्निपिण्ड के रूप में विद्यमान पदार्थों का ब्रह्माण्ड में बिखराव हुआ तथा विस्फोट से पदार्थों के इस बिखराव की प्रक्रिया को महाविस्फोट कहा गया। बिग बैंग नाम का प्रथम बार प्रयोग ब्रिटिश भौतिकविद फ्रेड होयल ने किया था। इन सामान्य पदार्थों का अलगाव होने लगा तथा इससे काले पदार्थों का निर्माण हुआ। बाद में इस काले पदार्थ का एकत्रीकरण (समूहन) हो गया। कालान्तर में इन पदार्थों से अनेक केन्द्रीभूत पिण्ड बन गये तथा इन पिण्डों पर सामान्य पदार्थों का जमाव निरन्तर होता रहा। निरन्तर जमा पदार्थों से इन पिण्डों का आकार बढ़ता गया तथा ये आगे बढ़ते गये। ये जितने आगे बढ़ते गये उतनी ही उनकी गति बढ़ती गई। इस प्रक्रिया से वर्तमान ब्रह्माण्ड की रचना हुई। इसमें पायी जाने वाली विशाल आकाश गंगाओं का निर्माण हुआ। पहले यह ब्रह्माण्ड छोटा था लेकिन फैलाव एवं आन्तरिक गति के कारण इसका आकार बढ़कर वर्तमान रूप में विशाल हो गया। आकाशगंगा का निर्माण अनन्त तारों से मिलकर तथा ब्रह्माण्ड का निर्माण अनन्त आकाशगंगाओं के समूह से हुआ है। वर्तमान में यह माना जाता है कि आकाशगंगा के तारे ठण्डे हो रहे हैं। इनमें आन्तरिक क्रिया के कारण विस्फोट हो गया जिससे निकले पदार्थ के एकत्रीकरण से अनेक छोटे-छोटे पिण्डों का निर्माण हो गया है। कालान्तर में इन पिण्डों पर विस्फोट होने से बिखरे पदार्थों का लगातार जमाव होता रहा। इस जमाव से पुनः पदार्थों के एकत्रीकरण से ग्रहों का निर्माण हुआ। इसी प्रकार की प्रक्रिया ग्रहों पर पुनः होने से उपग्रह बने। इस तरह ब्रह्माण्ड के छोटे उपग्रह से लेकर बड़ी आकाशगंगा तक की उत्पत्ति एक निश्चित प्रक्रिया के अन्तर्गत महाविस्फोट होने से हुई है।

वृहद् विस्फोट के अनुसार ब्रह्माण्ड में सबसे पहले विशाल पिण्ड के विस्फोट से आकाश गंगा बनी थी जो संख्या में अनेक थी। इस विस्फोट से पदार्थों के समूहन एवं एकत्रीकरण से प्रत्येक आकाश गंगा में तारे बनें। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति 4.5 अरब वर्ष पूर्व हुई।

बिग बैंग सिद्धान्त के पक्ष में प्रमाण—

1. इस सिद्धान्त से स्पष्ट होता है कि ब्रह्माण्ड का कोई प्रारम्भ (Beginning) था, उससे पहले कुछ भी नहीं था, परन्तु उसके बाद हमारे ब्रह्माण्ड की रचना हुई।
2. आकाशगंगाएँ एक-दूसरे से दूर जा रही हैं और ब्रह्माण्ड का आकार बढ़ रहा है।
3. इस परिकल्पना के अनुसार प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड बहुत गर्म था।
4. ब्रह्माण्ड में हाइड्रोजन तथा हीलियम जैसे हल्के पदार्थों की उपस्थिति बिग बैंग सिद्धान्त के पक्ष में है।

आलोचना (Criticism)

अनेक वैज्ञानिकों का विचार है कि इतना बड़ा विस्फोट किसी भी अवस्था में सम्भव नहीं है। वे विस्फोट की अपेक्षा विस्तार को अधिक महत्त्व देते हैं।

विश्वविख्यात भौतिकविद् : स्टीफन हाकिन्स के विचार

स्टीफन हाकिन्स ने अपनी पुस्तक 'A Brief History of Time' में स्पष्ट किया है कि ब्रह्माण्ड आज से 15 अरब वर्ष पूर्व (नवीन खोजों के अनुसार 13.7 अरब वर्ष पूर्व) एक मटर के दाने के समान था बाद में इन्होंने बिग बैंग सिद्धान्त का

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

समर्थन करते हुए लिखा है कि महाविस्फोट के पश्चात् ब्रह्माण्ड का स्वरूप विस्तृत हुआ है। इनके अतिरिक्त थॉमस गोल्ड एवं हर्मन बाडी ने **सतत सृष्टि सिद्धान्त** (Steady State Theory) एवं एलन सडेजा ने **दोलन सिद्धान्त** (Pulsating Universe Theory) द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को स्पष्ट की।

वैज्ञानिक खोज की शुरुआत
(Beginning of a Scientific Era)

आज का मनुष्य ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में जानने के लिए निरन्तर वैज्ञानिक विकास कर रहा है जिसके तहत वैज्ञानिक उपकरणों के साथ भूगर्भ में प्रयोग की प्रक्रिया भी प्रारम्भ कर दी है। इसे इक्कीसवीं सदी का महाप्रयोग कहा गया है। यूरोपियन ऑर्गेनाइजेशन फॉर रिसर्च ने **लार्ज हेड्रोन कोलाइडर** (2HC मशीन) में महाविस्फोट की प्रक्रिया करके महाप्रयोग की शुरुआत 9 सितम्बर, 2008 को जेनेवा की प्रयोगशाला में हुई। फरवरी, 2010 से पुनः इस मशीन ने कार्य करना प्रारंभ किया तथा 30 मार्च, 2010 को प्रोटोन बीमों की टक्कर लगभग प्रकाश की गति से सफलतापूर्वक हुई। इस प्रयोग को एक मशीन द्वारा एक सुरंग में किया जा रहा है जिसकी गहराई 100 फीट तथा लम्बाई 27 किमी. है। इसमें घड़ी की सुई की विपरीत दिशा में प्रोटोन पुंज छोड़े गये। 3 सप्ताह बाद ये पुंज पुनः छोड़े गये। अब वैज्ञानिक यह चाहते हैं कि इन प्रोटोन पुंजों के टकराने से महाविस्फोट होना चाहिए जिससे छोटा ब्लेक होल (प्रोटोन के बादल) बन जायें।

महाविस्फोट में कणों के टकराव के बाद आए परिणामों से हम जान पायेंगे कि इस सृष्टि की रचना कैसे हुई। इन कणों में विद्यमान आकर्षण कहाँ से आता है। इस तरह यह प्रयोग भी एक तरह से बिग बैंग (वृहद् विस्फोट) जैसे ही एक बड़े विस्फोट पर आधारित है। ब्रह्माण्ड की रचना का रहस्य जानने के लिए शुरू किये गये इस अभियान के परिणाम धीरे-धीरे आएँगे, क्योंकि इसमें बिग बैंग की स्थिति बनने में अभी काफी समय लगेगा। सुरंग में इस बीम की गति प्रकाश की गति के बराबर है। इसी गति पर घड़ी की सुई के विपरीत दिशा में दो बीमों के टकराने से महाविस्फोट की स्थिति बनायी जा सकती है। इसमें **'हिग्स बोसोन'** नामक मूल कणों को आद्य पदार्थ माना गया है जिनसे ब्रह्माण्ड बनता है। इनमें इन मूल कणों की प्राप्ति आगामी वर्षों में होने की सम्भावना है। ये ही वे कण हैं जिनकी तलाश के लिए वैज्ञानिक प्रयास कर रहे हैं। इस प्रयोग में बीम के टकराने से उत्पन्न अवशिष्ट पदार्थ से यदि ये कण मिले तथा इनमें द्रव्यमान एवं गुरुत्व का पता चला, तो ब्रह्माण्ड की रचना के बारे में प्रचलित बिग बैंग विचार को सिद्ध किया जा सकेगा।

द यूरोपियन सेंटर फॉर न्यूक्लियर रिसर्च (CERN) **सर्न** की प्रयोगशाला में बिग बैंग या ब्रह्माण्ड की शुरुआत जैसे दृश्य यथार्थ होते देखे गये। विश्व की सबसे बड़ी प्रयोगशाला **सर्न** में वैज्ञानिक इस प्रयोग द्वारा ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में अब तक के अनसुलझे प्रश्नों के उत्तर जानने का प्रयास कर रहे हैं जिन्हें अब तक **डार्क मैटर, डार्क एनर्जी, हिग्स बोसान** एवं **गॉड पार्टिकल** के नाम से जानते हैं। इस प्रयोग से 15 अरब वर्ष पुरानी ब्रह्माण्डीय घटना को प्रयोगशाला में दोहराना चाहते हैं जिसे विज्ञान जगत बिग बैंग के नाम से जानता है। इन वैज्ञानिकों का मानना है कि गॉड पार्टिकल नामक हिग्स बोसोन में ही ब्रह्माण्ड के रहस्य छिपे हैं, क्योंकि इसे ही आधारभूत इकाई माना जाता है। विगत 50 वर्षों के उपरांत CERN ने 4 जुलाई, 2012 को हिग्सबोसोन के सदृश्य एक सब-एटोमिक पार्टिकल को खोज लिया है जिससे ब्रह्माण्ड के रहस्यों को आसानी से जान सकते हैं।

❑❑❑

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic (4) (महाद्वीप एवं महासागरीय बेसिन की उत्पत्ति)
(Origin of Continents and Ocean Basins)

प्रश्न (1) महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं? इसके समर्थन के प्रमाण दीजिए (2019)

प्रश्न :- वेगनर के 'महाद्वीपीय प्रवाह सिद्धान्त' को स्पष्ट कीजिए। (2017)

प्रश्न :- वेगनर के 'महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए (2015)

प्रश्न :-

उत्तर ⇒ प्रो. अल्फ्रेड वेगनर जर्मनी के एक प्रसिद्ध जलवायुवेत्ता तथा भूशास्त्रवेत्ता थे वेगनर ने सिद्धान्त का प्रतिपादन 1912 में किया। वेगनर भूतकाल में हुए जलवायु परिवर्तन की समस्या का समाधान चाहते थे।

- भूमण्डल पर अनेक ऐसे प्रमाण मिले हैं जिनके आधार पर यह ज्ञात होता है कि एक ही स्थान पर जलवायु मे समय - समय पर अनेक परिवर्तन हुए है अण्टार्कटिका में कोयले की परतों की उपस्थिति एवं मरूस्थलों में हिमावरण के लक्षणों के मिलने के कारण वेगनर के सामने दो विकल्प थे :-

(i) जलवायु कटिबन्धों का स्थानान्तरण हुआ व स्थल भाग स्थिर रहे।

(ii) जलवायु कटिबन्ध स्थिर रहे व स्थल भागों का स्थानान्तरण हुआ।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- वेगनर ने दूसरे विकल्प को अपनी परिकल्पना का आधार बनाते हुए स्पष्ट किया की कार्बोनिफेरस युग में समस्त महाद्वीप एक स्थलखण्ड के रूप में स्थित थे, जिसे उन्होंने 'पैंजिया' कहा

इसके चारों ओर विशाल महासागर था, जिसे वेगनर ने 'पैंथालासा' कहा। वेगनर के अनुसार (सियाल) निर्मित यह पैंजिया, अगाध सागरीय तली (सीमा) पर निर्बाध रूप से तैर रहा था। कार्बोनिफेरस युग में पैंजिया का विभाजन हुआ।

प्रथम विभंजन में टैथिस भूसन्नति बनी, जिसके उत्तर में स्थित भाग को अंगारालैण्ड (लोरेशिया) तथा दक्षिणी भाग को गोंडवाना लैण्ड कहा गया। कालान्तर में इनके क्रमश: विखण्डन व विखण्डित भागों के विषुवत रेखा व पश्चिम की ओर प्रवाह से महाद्वीपों की वर्तमान स्थिति बनी।

लारेन्शिया में - उत्तरी अमेरिका, ग्रीनलैण्ड, तथा यूरेशिया तथा गोंडवाना लैण्ड में :- दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका, मेडागास्कर, भारत, आस्ट्रेलिया तथा अन्टार्कटिका को सम्मिलित किया गया है। लारेन्शिया तथा गोण्डवाना लैण्ड के मध्य भू-अभिनति थी। इसे वेगनर ने टेथीज भू-अभिनति कहा है।

⇒ वेगनर ने महाद्वीपों के दो दिशाओं में प्रवाह के लिए निम्न बलों को उत्तरदायी माना -

(i) गुरुत्वाकर्षण और प्लवनशीलता बल -
(ii) ज्वारीय बल -

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(1) गुरूत्वाकर्षण और प्लावनशीलता बल :- इनसे भू-भागों का प्रवाह भूमध्यरेखा की ओर हुआ जिससे भारत, आस्ट्रेलिया, मेडागास्कर व अण्टार्कटिका का निर्माण हुआ।

(ii) ज्वारीय बल :- इससे भू-भागों का प्रवाह पश्चिम की ओर हुआ जिससे उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका बने।

⇒ वेगनर के अनुसार उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका के अलग होने से उस रिक्त स्थान पर अंधमहासागर (अंटलांटिक महासागर) तथा आस्ट्रेलिया, अण्टार्कटिका के पृथक होने से रिक्त स्थान पर हिन्द महासागर तथा शेष बचा पैंथालासा प्रशान्त महासागर कहलाता है

(250 मि. वर्ष पूर्व) (पर्मियन)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

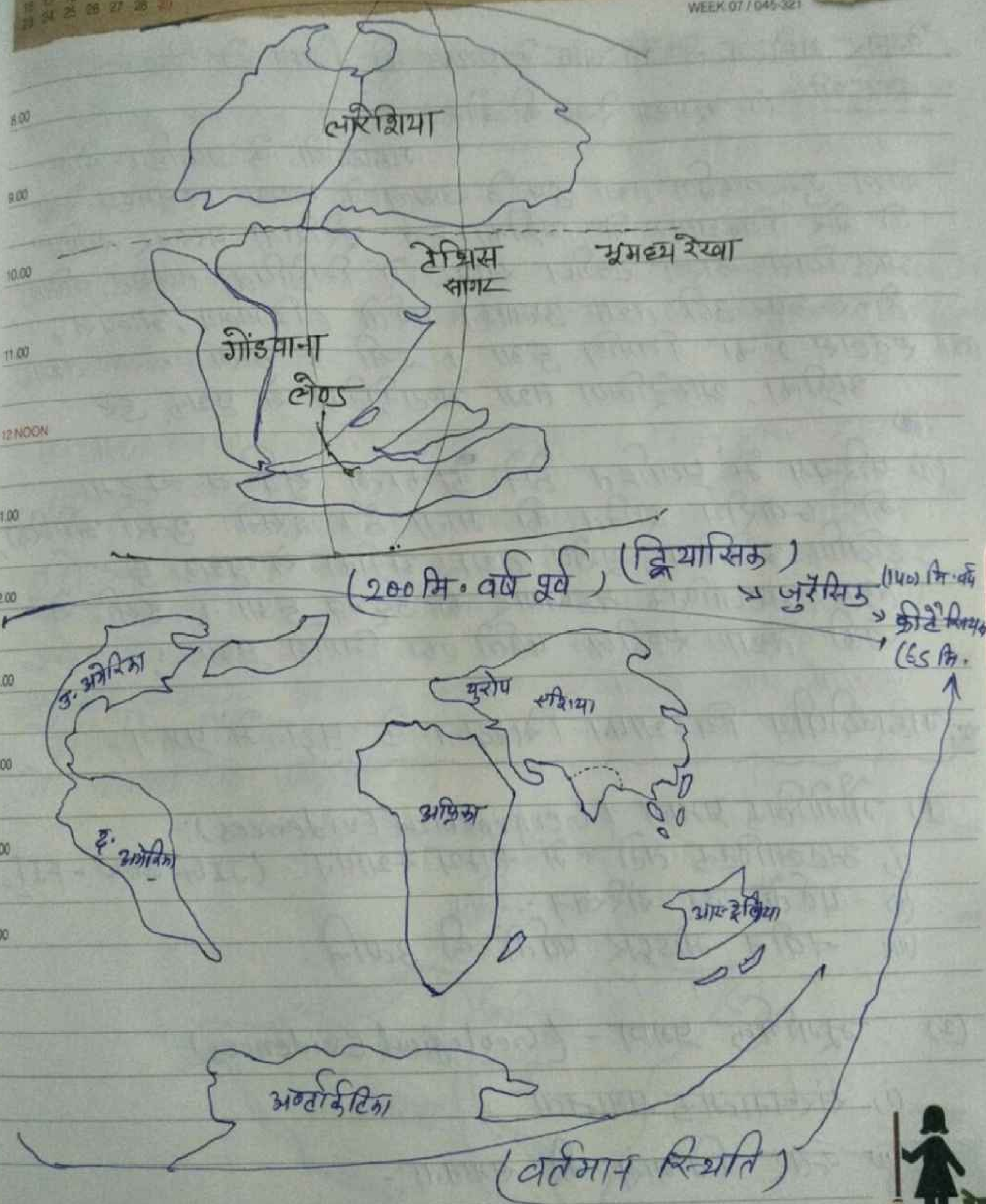

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

⇒ वेगनर महोदय ने पैन्जिया के प्रवाह की निम्न दो दिशाएँ बताई थी :- (i) भूमध्य रेखा की ओर :- महाद्वीपों के प्रवाहित होने कारण गुरुत्वाकर्षण तथा द्रव के उछाल के कारण । भूमध्य रेखा की ओर विस्थापन से अफ्रीका एवं यूरेशिया परस्पर समीप आए जिस कारण टेथीज सागर में निक्षेपित तलछट वलित होकर ऊपर उठी तथा अल्पाइन पर्वतों (हिमालय, आल्पस, तथा एटलस) का निर्माण हुआ । इसी के कारण भारत तथा अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा अण्टार्कटिका से पृथक् हुए

(ii) पश्चिम में प्रवाहित होने का कारण सूर्य व चन्द्रमा की ज्वारीय शक्ति को माना है इससे उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, यूरोप तथा अफ्रीका से पृथक् हुए तथा अटलाण्टिक महासागर का उद्भव हुआ । इसी से रॉकी तथा एण्डीज पर्वतों का निर्माण हुआ ।

महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त के पक्ष में प्रमाण :-

(1) भौगोलिक प्रमाण (Geographical Evidences) :-
(i) अटलाण्टिक तटों में साम्य स्थापन :- (JIG-SAW-FIT)
(ii) पर्वतों का संरेखन :
(iii) नवीन मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति.

(2) भूगर्भिक प्रमाण - (Geological Evidences) :-
(i) संरचनात्मक समानता :
(ii) स्तर विन्यास की समानता :-

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) भू-ज्यामितिय प्रमाण (Evidences of Geodesy)

(4) जैविक प्रमाण (Biological Evidences)

(i) पुराजीवाश्मीय प्रमाण

(ii) जैविक ~~प्रमाण~~ (स्वभाव)

(5) पुराजलवायु के प्रमाण :- (Paleoclimatological Evidences) :-

(6) पुराचुम्बकीय साक्ष्य (Paleomagnetic Evidences)

(1) भौगोलिक प्रमाण :-

(i) अटलाण्टिक तटों में साम्य स्थापन (JIG-SAW-FIT in Atlantic Coast :-

अटलाण्टिक महासागर के पूर्व व पश्चिम तटों में अद्भुत साम्य स्थापन है। अटलाण्टिक महासागर के दोनों तटों को पुनः परस्पर सटाया जा सकता है इसे वे JIG-SAW-FIT का नाम दिया है इनके अनुसार पश्चिम अफ्रीकी उभार कैरीबियन सागर में तथा दक्षिणी अमेरिका का उत्तरी-पूर्वी भाग गिनी की खाड़ी में सटाया जा सकता है।

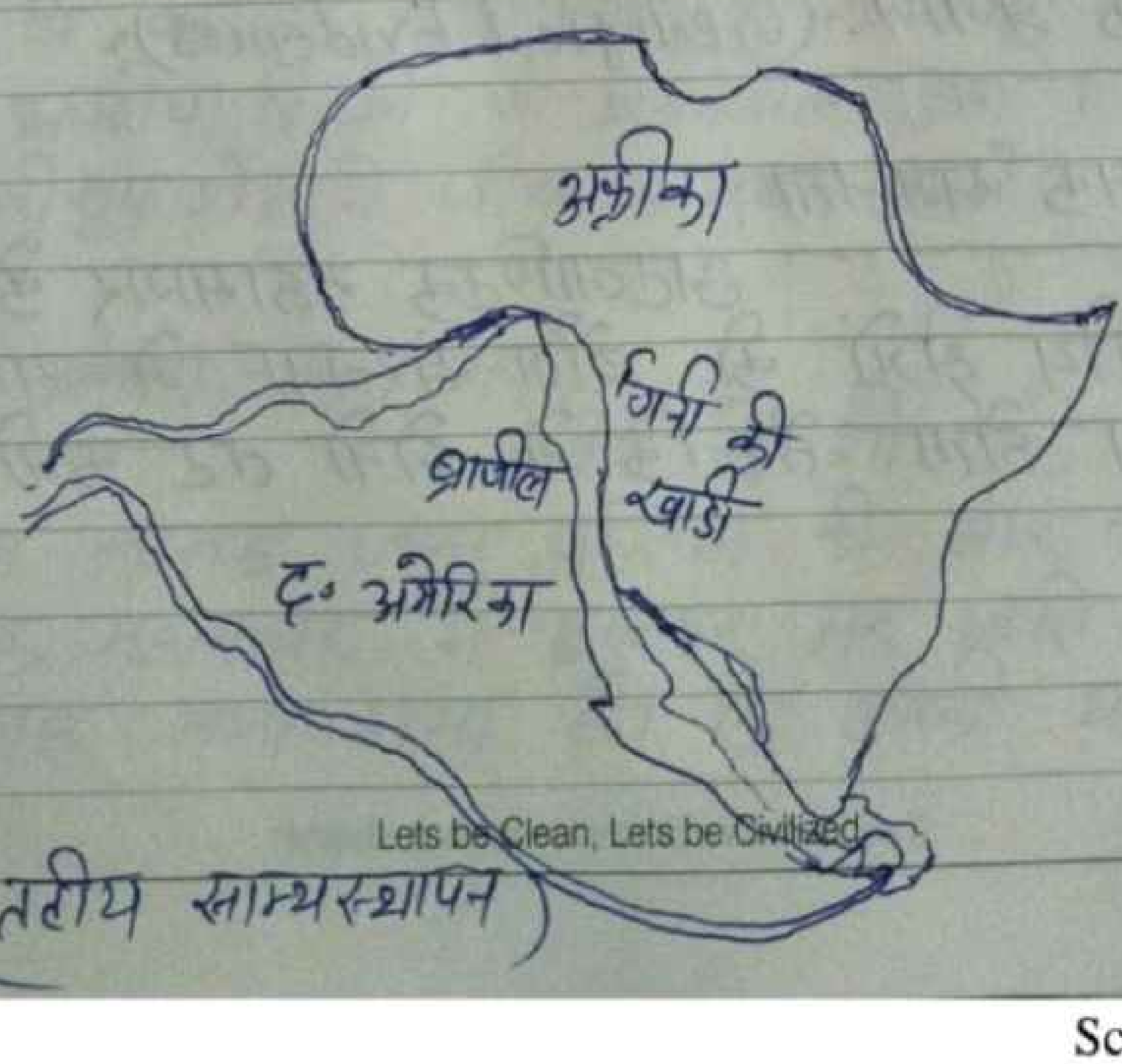

(तटीय साम्यस्थापन)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(ii) पर्वतों का संरेखन:- यदि विस्थापित महाद्वीपों को सटाकर देखा जाये तो सभी युग की पर्वतमालाओं के संरेखण में काफी समानता देखने को मिलती है। यह संरेखण केलेडियन, हर्सीनियन, अल्पाइन आदि सभी पर्वतमालाओं में देखने को मिलता है।

चित्र

(iii) नवीन मोड़दार पर्वतों की उत्पत्ति:- वेगनर ने रॉकीज, एण्डीज आल्पस, एवं हिमालय पर्वतों वाले स्थान पर भू-सन्नतियों के विद्यमान होने की कल्पना की है जिनमें जमा तलछट पर दबाव पड़ने से मोड़दार पर्वतों का उद्भव हुआ।

(B) भू-गर्भिक प्रमाण:-(Geological Evidences):-

(i) संरचनात्मक समानता:- अटलाण्टिक महासागर के दोनो ओर के तटीय क्षेत्रों की शैल संरचना में समानता से प्रमाणित होता है कि ये दोनो तट कभी सटे हुए थे।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(ii) स्तर विन्यास की समानता :- अटलाण्टिक महासागर के दोनों तटों की चट्टानों की विभिन्न परतों के क्रम में पाई जाने वाली समानता उनके कभी सटे हुए होने के प्रमाण है।

(C) भू - ज्यामितिय प्रमाण :- भू-ज्यामितीय अध्ययनों से ऐसे प्रमाण मिले हैं कि ग्रीनलैण्ड धीरे - धीरे कनाड़ा की ओर विस्थापित हो रहा है। जो महाद्वीप विस्थापन को प्रमाणित करता है।

(4) जैविक प्रमाण (Biological Evidences) :-

(i) पुराजीवाश्मीय प्रमाण :- अटलाण्टिक महासागर के दोनों तटों पर समान प्रजाति व प्रकार के जीवाश्म के प्रमाण यह प्रमाणित करते है कि दोनो तट कभी सटे हुए थे? फर्न तथा ग्लोसीप्टारिस वनस्पति के जीवाश्म अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, भारत तथा दक्षिणी अमेरिका में विस्तृत रूप से मिलते है। ये वनस्पति केवल उपध्रुवीय जलवायु में ही विकसित होती है। अवशेष मिलने से प्रमाणित हुआ। स्तनधारी सदृश सरीसृप थे। ये जीव स्थलचर थे।

(ii) जैविक ~~प्रमाण~~ :- (स्वभाव) जीवों के शोध के अनुसार नार्वे में लैमिंग नामक जन्तु पश्चिम की ओर चलते - चलते अटलाण्टिक महासागर में डूबकर मर जाते है। इसका कारण यह माना गया है कि उनकी यह आदत

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

उस काल की है जब उत्तरी अमेरिका यूरोप से सटा हुआ था वही आदत आज भी है इसलिए वे महासागर में गिर जाते है।

(5) पुराजलवायु के प्रमाण :- कार्बोनिफेरस युग के हिमानीकरण के प्रभाव भारत अमेरिका, अफ्रीका एवं ऑस्ट्रेलिया से प्राप्त होना। यह सम्भव हो सकता है जब ये एक रहे हों। अन्टार्कटिका में कोयले की उपस्थिति यह स्पष्ट करती है कि पूर्व में यहा वनावरण था। वर्तमान में हिमावरण है।

(6) पुराचुम्बकीय साक्ष्य :- (Palaeomagnetic Evidences) :

- वेगनर ने बताया कि प्रत्येक भूगर्भिक - युग में ध्रुवों की स्थिति बदलती रही है जिसे वेगनर ने ध्रुवीय प्रवाह या संचलन (Polar wandering) कहा है पुराचुम्बकीय आँकडो से पुराजीवी महाकाल में पैंजिया का अस्तित्व स्वीकार किया गया है।
- पृथ्वी के प्राचीन शैलों के ~~चुम्बकीय~~ चुम्बकीय साक्ष्यों के आधार पर महाद्वीपों की पूर्व स्थिति का आकलन किया जाता हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त की आलोचनाएँ :- निम्न है

(i) भौगोलिक आलोचना -
(ii) भूगर्भिक आलोचना -
(iii) भू-गणितीय आलोचना :-
(iv) जैविक आलोचना
(v) पुराजलवायु की आलोचना

(1) भौगोलिक आलोचना :- (Geographical Criticism) :-

(i) अटलाण्टिक तटों में साम्य स्थापन दोषपूर्ण हैं क्योंकि ब्राजिल के तट को गिनी की खाड़ी से मिलाने पर 15°C का अन्तर शेष रहता है।

(ii) 'मध्य अटलाण्टिक कटक' दोनो तटों को सटाने में बाधक है जिसका वेगनर ने कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया।

(iii) इस सिद्धान्त की दो प्रक्रियाएँ विस्थापन एवं वलन परस्पर विरोधाभासी है। एक और वेगनर के अनुसार सियाल रूपी महाद्वीप सीमा में तैर रहा है। जबकि दूसरी और उन्होंने बताया कि जमे हुए तलछट में विस्थापन के फलस्वरूप बढ़ते दबाव के कारण वलन पड़े।

(2) भू-गर्भिक आलोचना :- भू-गर्भशास्त्रियों के अनुसार अटलाण्टिक तटों पर संरचनात्मक व स्तर विन्यास की केवल आंशिक समानताएँ है। अतः इन्हें पूर्ण प्रमान नहीं माना जा सकता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) भू-गणितीय आलोचना :- (Geodesical Criticism) :-

- वैगनर के अनुसार पश्चिम की ओर विस्थापन सूर्य व चन्द्रमा के गुरूत्वाकर्षण बल के कारण होता है जबकि गणितज्ञों ने सिद्ध किया है कि अमेरिका को पश्चिम की ओर विस्थापन करने के लिये जितने गुरूत्वाकर्षण बल की आवश्यकता होगी वह वर्तमान बल से दस अरब गुना अधिक होना चाहिए। गणितज्ञों का मानना है कि इतने बल का होना असम्भव है तथापि यदि इसे सम्भव मान भी लिया जाए तो उतने अधिक बल के कारण पृथ्वी की परिभ्रमण गति ही बाधित हो जायेगी।

(4) जैविक आलोचना :-

समकालीन जीवाश्म के प्रमाण को आलोचक आंशिक प्रमाण ही मानते हैं।

(5) पुराजलवायु की आलोचना :-

स्टीयर्स ने बताया है। कि उत्तरी-पश्चिमी अफ्रीका, U.S.A, में बोस्टन क्षेत्र - जो उस समय भूमध्य रेखा पर था।) व अलास्का में टाइलाइट जैसे हिमयुगीन निक्षेप पाये जाते हैं वेगनर के अनुरूप महाद्वीपीय पुनर्गठन (Reconstruction) से स्टीयर्स द्वारा इंगित विसंगति का स्पष्टीकरण नहीं मिलता है।

⇒ अनेक कमियों के बावजूद, भी इस सिद्धान्त की महत्ता इस कारण है। कि इसने वैज्ञानिक सिद्धान्त प्लेट - विवर्तनिकी के लिए एक आधार प्रस्तुत किया जो महाद्वीपीय विस्थापन की पुष्टि करता है।

Clean India, Green India.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic :- (6) प्लेट विवर्तनिकी (Plate Tectonics)

March 2020

SATURDAY / FEBRUARY 2020 22

WEEK 08 / 053-313

प्रश्न -(1) प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त का वर्णन कीजिये (2020) (2014)

प्रश्न :- टिप्पणी लिखे
(i) प्लेट विवर्तनिकी (2022)

उत्तर :- वर्तमान समय में स्थलमण्डलीय परिवर्तन को प्लेट विवर्तनिक द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है इसे भू- विवर्तनिक (Geotectonic) मॉडल भी कहा जाता है

Tectonic :- ग्रीक भाषा • Taktomikos :- निर्माण या रचना

इसे आन्तरिक शक्तियों के परिणामस्वरूप होने वाले भू-पृष्ठ के विरूपण के लिए प्रयुक्त किया जाता है जो स्थल-मण्डल पर विभिन्न संरचनाओ का निर्माण करता है

⇒ प्लेट विवर्तनिक शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग - प्रो. टूजो विल्सन ने 1965 में किया था

⇒ 1967 मे मोर्गन (W. J Morgan) ने प्रथम बार सिद्धान्त रूप में प्रकाशित किया, यह सिद्धान्त (संकल्पना) हैरी - हैस (1960) के 'सागर नितल प्रसरण' के सिद्धान्त पर आधारित है इसलिए प्लेट टेक्टोनिक्स के सिद्धान्त का प्रतिपादक भी हैरी - हैस को ही माना जाता है यह सिद्धान्त वेगनर के महाद्वीपय प्रवाह सिद्धान्त के आधार पर सागर-नितल प्रसरण के सिद्धांतो का संश्लेषित रूप में परिष्कृत तथा व्यापक सिद्धान्त है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्लेट विवर्तनिक एक भू-मण्डलीय गतिकी सिद्धान्त है। जिसमें स्थलमण्डल को विभिन्न आकार की प्लेटों की एक श्रृंखला के रूप में निर्मित होना माना गया है। इन प्लेटों के किनारे भूगर्भिक क्रियाएँ होती हैं। - प्रवाह, संचलन, वलन, भ्रंशन, भूकम्प, ज्वालामुखी क्रियाएँ सम्पन्न होती है।

प्लेट-विवर्तनिक में दो प्रकार की विवर्तनिक प्रक्रियाएँ होती हैं। (महाद्वीपीय प्रवाह की संकल्पना)

(1) भू-पटल के आन्तरिक भाग से संवाहनिक धारा के रूप में जो पदार्थ ऊपर आता है। उसका शीतलन होता है। शीतलन होने पर व पदार्थ पुन: संकुचित तथा सघन होकर अधोगमित हो जाता है। यह सघन पदार्थ रचनात्मक प्लेट के किनारों के सहारे दुर्बलता-मण्डल से सृजित भू-स्तर को तरल रूप में प्राप्त होता है।

इस प्रकार प्रथम प्रक्रिया में शीतलन तथा पुन: चक्रण होता रहता है।

(2) इस विवर्तनिक स्वरूप में (सागर तली के प्रसार की संकल्पना):- इसमें महाद्वीप जहाँ मैंटिल एवं प्लेट के समीपवर्ती क्षेत्रों में क्रिया होती है। इन किनारों पर महाद्वीपीय भागों पर होने वाला अपरदन अवसादी त्रिपार्श्व को महाद्वीपीय किनारों से कायांतरण द्वारा बाँधने का कार्य करता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्लेटों का वितरण :- प्लेट स्थलमण्डल का एक बड़ा भाग होती है।
⇒ ला-पिकन ने 1968 में सम्पूर्ण पृथ्वी को '6' बड़ी तथा '9' छोटी प्लेटों में विभक्त किया,
⇒ मोर्गन के अनुसार 6 बड़ी तथा 20 लघु प्लेटें बताई है।
⇒ नेशनल ज्यॉग्राफिक सोसायटी, वाशिंगटन डी.सी के कार्टोग्राफिक विभाग के 1995 एवं टारबुक एवं लुटजेन (1999) के अनुसार वृहद प्लेटों की संख्या 7 है। तथा लघु प्लेटों की संख्या 16 है।
⇒ केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में शोध में भारतीय तथा आस्ट्रेलियन दोनों को प्रथक प्लेटें बताया है। निम्न प्लेटे है।

(Major Plates) :- (वृहद प्लेटे) :- (6)

(i) प्रशान्त प्लेट :
(ii) अमेरिकन प्लेट :- (i) उत्तरी अमरीकी (ii) दक्षिणी अमरीकी प्लेट
(iii) यूरेशियन प्लेट :
(iv) अफ्रीकन प्लेट :-
(v) इण्डो - ऑस्ट्रेलियन प्लेट :-
(vi) अन्टार्कटिका प्लेट :-

लघु प्लेटे :- (9)

(i) अरेबियन प्लेट
(ii) बिस्मार्क प्लेट
(iii) कैरीबियन प्लेट
(iv) केरीलोना प्लेट
(v) कोकोस प्लेट
(vi) जुआन-डी-फूका प्लेट
(vii) नज्का या पूर्वी प्रशान्त प्लेट
(viii) फिलीपिन्स प्लेट
(ix) स्कोशिया प्लेट

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(1) प्रशान्त प्लेट (The Pacific Plate):-
पूर्वी प्रशान्त कटक से पश्चिम की ओर सम्पूर्ण प्रशान्त महासागर पर फैली है। इसका विस्तार अलास्का से अण्टार्कटिका प्लेट तक प्रशान्त महासागर के नितल पर है।

(2) अमेरिकी प्लेट :- (American Plate):-
इसके अन्तर्गत उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका की महाद्वीपीय पर्पटी एवं पूर्व की ओर मध्य अटलाण्टिक कटक तक फैली महासागरीय पर्पटी सम्मिलित है। ये पश्चिमी तट तक विस्तृत है एवं प्रशान्त महासागरीय प्लेट से मिलती है। यह प्लेट पश्चिम की ओर गतिमान है। इसके पूर्वी भाग में कोई हलचल नहीं होती है।

(3) यूरेशियन प्लेट :-
इसकी पश्चिमी सीमा मध्य अटलाण्टिक कटक के ऊपरी भाग में 35° उत्तरी अक्षांश से प्रारम्भ होती है। जहाँ से उत्तरी अमेरिकी प्लेट की पूर्वी सीमा प्रारम्भ होती है। यह कटक इन दोनों प्लेटों की सीमा बनाता है। यूरेशिन प्लेट में उत्तरी हिमालय से लेकर सम्पूर्ण यूरेशियन भू-भाग सम्मिलित हैं।

(4) अफ्रीकन प्लेट :- (The African Plate):-
इसका विस्तार मध्य अटलाण्टिक कटक से 35° उत्तर से 55° दक्षिणी अक्षांशो के मध्य है। इसमें अफ्रीका महाद्वीप तथा मेडागास्कर

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

द्वीप सम्मिलित हैं। जो दक्षिण में अन्टार्कटिक प्लेट से तथा दक्षिण - पूर्व में आस्ट्रेलियन - भारतीय प्लेट से मिलती हैं।

(5) आस्ट्रेलियन - भारतीय प्लेट :- इसमें आस्ट्रेलिया तथा भारतीय उपमहाद्वीप (हिमालय के उत्तर से) दोनों सम्मिलित हैं। यह यूरेशियन प्लेट से हिमालय के पास तथा प्रशांत प्लेट से न्यूजीलैण्ड के पास मिलती है। न्यूजीलैण्ड भी हिमालय की तरह सीमा पर स्थित है।

(6) अन्टार्कटिक प्लेट :- अन्टार्कटिक प्लेट अन्टार्कटिका भू-भाग को सीमाबध्द करती हैं जो दक्षिणी महासागरों के मध्य स्थित है। यह उत्तर में आस्ट्रेलियन - भारतीय प्लेट, प्रशांत प्लेट, नज्का लघु प्लेट, दक्षिणी अमेरिका प्लेट, स्कोशिया लघु प्लेट तथा अफ्रीकन प्लेट से मिलती हैं।

~~लघु प्लेटें~~ :- प्लेट विवर्तनिकी सिध्दान्त में प्लेटों की प्रकृति के बारे में बताया गया है। कि पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल आन्तरिक रूप में ठोस है लेकिन धरातल में स्थित प्लेटें सापेक्षिक से पतली (100 - 150 Km) है। ये प्लेटें सतत रूप से परस्पर एक - दूसरे से तथा पृथ्वी के घूर्णन अक्ष के संदर्भ में गतिशील हैं। वास्तविक रूप से सभी विवर्तनीक क्रियाएँ प्लेट किनारो के सहारे अवस्थित हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

<u>प्लेटों का संचलन</u> :- (Movement of Plates) :- पृथ्वी की सभी स्थलमण्डलीय प्लेटों में संचलन होता रहता है जिसमें इनकी नियमित दिशाएं होती है। महाद्वीपीय प्लेटों के संचलन की गति 2 से.मी प्रतिवर्ष है। जबकि सागरीय प्लेटों की औसत गति 5 से.मी प्रतिवर्ष है। विश्व में ग्रीनलैण्ड गौण प्लेट सर्वाधिक गति (20 सेमी. प्रतिवर्ष से संचालित हो रही है। भारतीय प्लेट प्रतिवर्ष 0.6 ~~वर्ष~~ से.मी की गति से उत्तर-पूर्व में प्रवाहित हो रही है।

पृथ्वी की विभिन्न प्लेटों के मध्य निम्न तीन प्रकार की गतियाँ होती है।

(i) अपसरण या प्रसरण (Divergence or Spreading) :-
(ii) अभिसरण या टक्कर (Convergence or Collision)
(iii) पार्श्विक विस्थापन या घर्षण (Lateral Displacement or Friction)

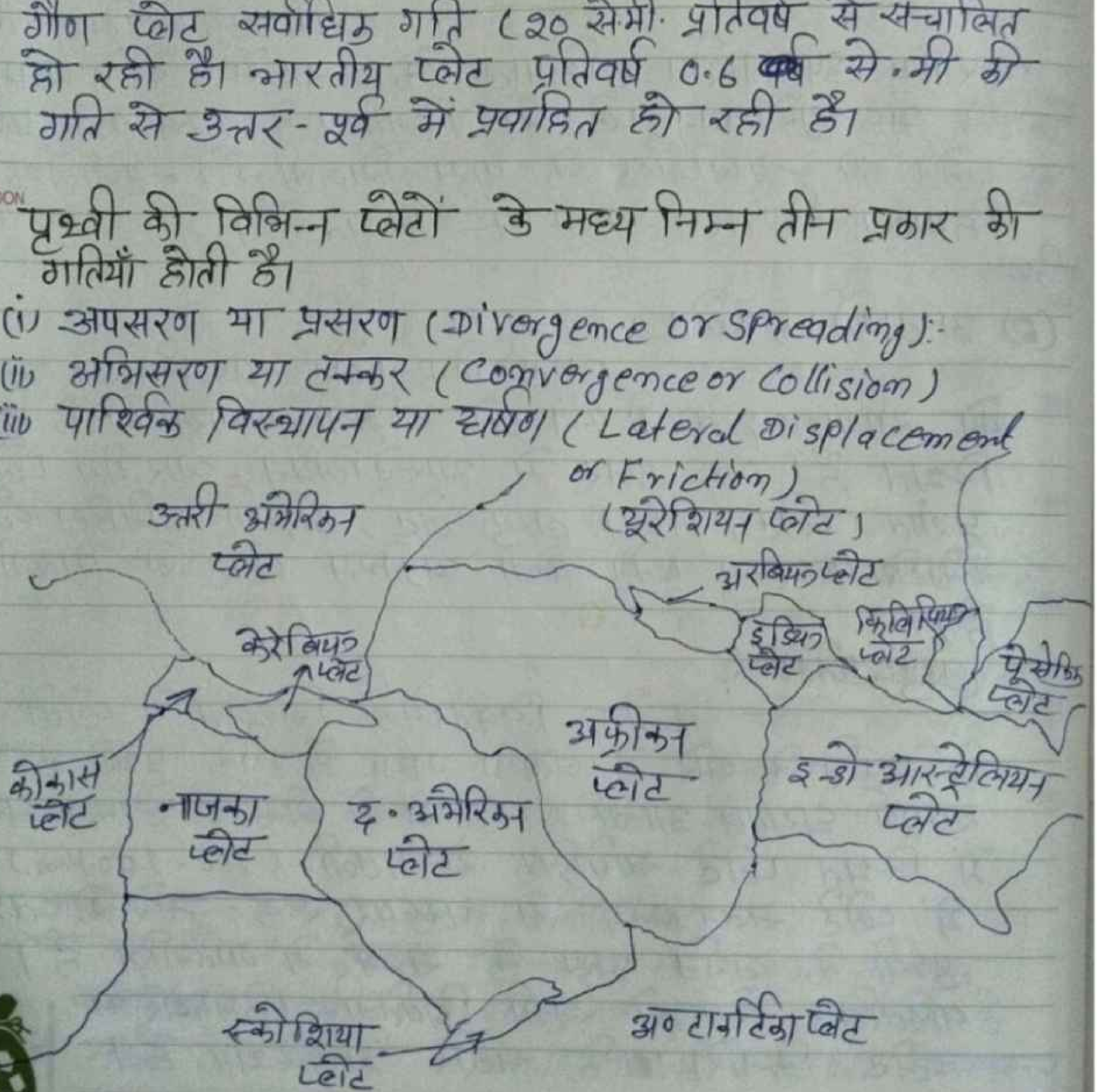

(विश्व की प्रमुख प्लेटें)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्लेट के किनारे (Plate Boundaries):- प्लेटों के संचलन द्वारा पृथ्वी पर भू-पृष्ठीय पदार्थों का पुनर्वितरण होता है जिसके फलस्वरूप महाद्वीपों तथा महासागरों की स्थिति, आकार तथा आकृति निर्धारित होती है
प्लेटों के तीन प्रकार के किनारे होते हैं
(i) अपसरित किनारे । रचनात्मक प्लेट किनारा:-
(ii) अभिसरित किनारा / विनाशात्मक किनारा:-
(iii) संरक्षी किनारे ।,

(i) अपसरित प्लेट सीमा या रचनात्मक प्लेट किनारे:- जब दो प्लेटें परस्पर विपरीत दिशा में संचलन करके एक-दूसरे से दूर जाती है तो इन्हें अपसरित प्लेट सीमाएँ कहते हैं। अपसरित प्लेट किनारे मध्य महासागरीय कटक के सहारे पाए जाते है अर्थात नवीन पृष्ठ की रचना करता है जिस कारण इन्हें रचनात्मक प्लेट किनारे भी कहते है कटक एक ऐसे क्षेत्र को प्रदर्शित करती है, जिसके सहारे दो प्लेटें गति करके एक-दूसरे से दूर जाती है लेकिन फिर भी ये एक-दूसरे से पृथक नही होती है क्योंकि प्रत्येक प्लेट के परस्पर दूर जाने के साथ-साथ नवीन पदार्थों का जमाव होता रहता है इसलिए मध्य-महासागरीय कटकों को रचनात्मक प्लेट किनारो के रूप में जाना जाता है क्योंकि यहां नवीन पदार्थों का सृजन होता रहता है ये किनारे तनाव प्रकृति के होते है तनाव से भ्रंश घाटी खुल जाती हैं। पूर्वी अफ्रीका की रिफ्ट घाटी ऐसे ही बनी है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) विनाशात्मक या प्लेट अभिसरित किनारे :- जब दो प्लेट परस्पर एक-दूसरे की ओर संचालित होकर अभिसरित (एक दूसरे ऊपर चढ़ जाना) या टकराती हो तो इन्हें विनाशात्मक किनारे कहते हैं ये किनारे महासागरीय गर्तों के सहारे मिलते हैं दो प्लेटों के टकराते समय भारी प्लेट हल्की प्लेट के नीचे डुबती हैं इस प्रक्रिया को अधोगमन कहते हैं इस प्रकार के संचलन में विशाल मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती हैं इस प्रकार ये क्षेत्र विश्व के सर्वाधिक खतरनाक भूकम्पीय क्षेत्र हैं

- 26 जनवरी 2001 को भुज में आए भूकम्प का कारण अरेबियन एवं भारतीय प्लेट का अभिसरण माना गया था।

→ इस प्रकार विभिन्न प्लेटों में तीन अभिसरण क्षेत्र होते हैं

(i) सागरीय - महाद्वीपीय प्लेट का अभिसरण - उदा. दक्षिणी अमेरिका-नज्का)
(ii) सागरीय - सागरीय प्लेट अभिसरण - पीरू - चिली ट्रेन्च, प्लेट Ring of Fire
(iii) महाद्वीपीय प्लेट का महाद्वीपीय प्लेट से अभिसरण - भारत - आस्ट्रेलियन प्लेट के मध्य'

(2) संरक्षणात्मक प्लेट किनारे :- (Conservative Plate Margines)

- ये ऐसे किनारे होते हैं। जहाँ प्लेट न तो नवीन सतही क्षेत्रों की रचना करती है तथा न ही भू-तल का ह्रास होता है क्योंकि इनमें पार्श्विक प्लेट सम्पर्क होता है इस क्रिया द्वारा पार्श्विक या रूपान्तर भ्रंश बनते हैं। इस प्रकार न

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Record the list of things you might want to do

तो भू-पृष्ठ का सृजन होता और न विनाश। परस्पर खिसकने से भूकम्प की सम्भावना अवश्य बनी रहती है। प्रशान्त प्लेट के पूर्वी सीमा के सहारे रूपान्तर अंश मिलता है।

प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त के आधार पर कुछ अनुमान लगाए गए हैं। प्रथम यह कि सागरीय नितल का प्रसरण हो रहा है।

प्लेटें:

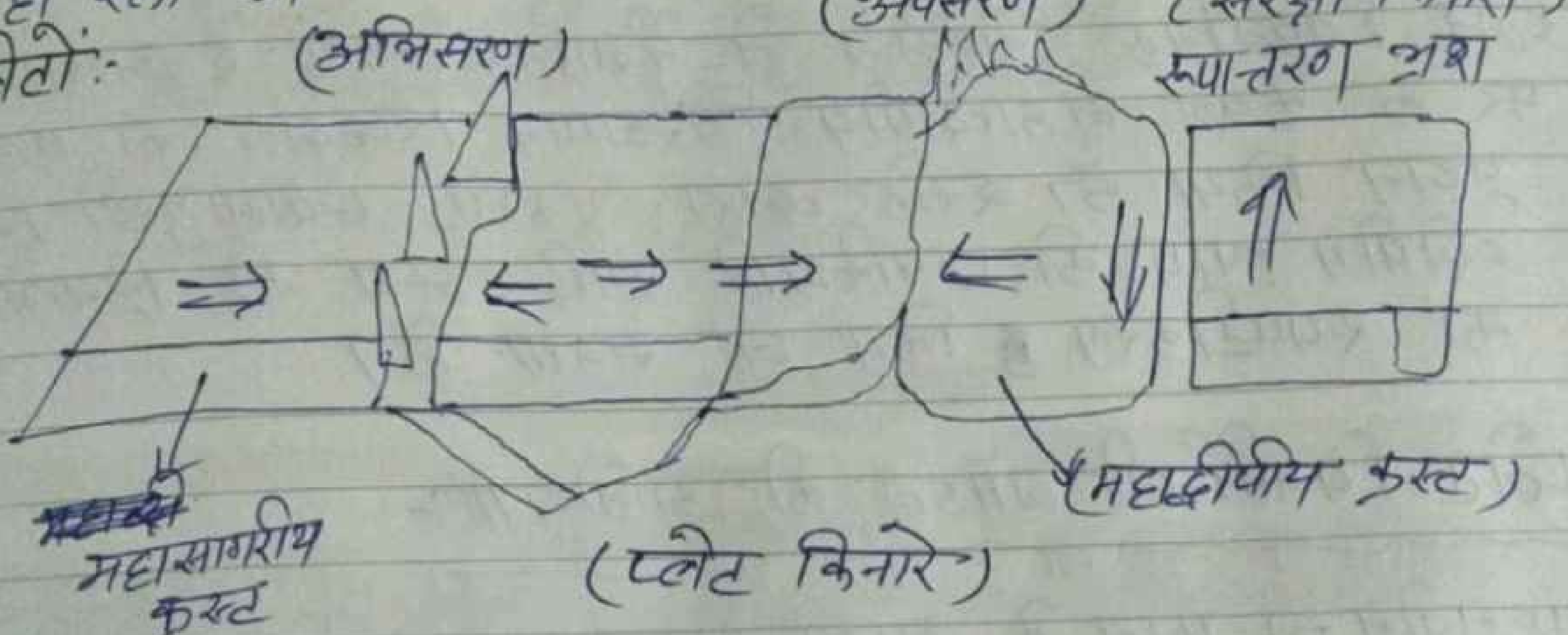

प्लेटों में गतियों के कारण :-

मुख्य कारण निम्न है)

(i) पृथ्वी का परिभ्रमण - (Rotation of the Earth) - (केन्द्रापसारी बल से)

(ii) संवहन धाराएँ (Convection Currents) ↑ ऊपर उठती

(iii) गुरुत्व :- (Gravity) :-

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

Record the list of things you might want to do

प्लेट विवर्तनिकी के साक्ष्य :-

(i) सागर नितल प्रसरण (Sea Floor Spreading) :-
(2) महाद्वीपीय विस्थापन (Continental Drift) :
(3) दरारी घाटियों का चौड़ा होना (Broadening of Rift valleys)
(लाल सागर, अदन की खाड़ी)
(4) अन्य प्रभाव :- भूकम्प, ज्वालामुखी, पर्वत निर्माण, आदि।

~~इनका~~

प्लेट विवर्तनिक सिद्धान्त ने वैज्ञानिक प्रमाणों के आधार पर न केवल महाद्वीपीय विस्थापन सिद्धान्त को बल प्रदान किया है इसके द्वारा भूकम्प, ज्वालामुखी क्रिया, द्वीपीय चाप की उपस्थिति आदि अन्य कई क्रियाओं का स्पष्टीकरण किया जा सकता है।

प्लेट विवर्तनिकी मॉडल की आलोचना :-

(i) नवीन भू-पटल के सृजन की दर भू-पृष्ठीय ह्रास की दर से अधिक है। अधोगमन से अधिक प्रसरण होता है।
(ii) अधोगमन या क्षेपण प्रशान्त तट तक ही सीमित क्यों है। जबकि प्रसरण सभी महासागरों में पाया जाता है।
(iii) पार्श्विक संचलन भूकम्प द्वारा स्पष्ट किया गया लेकिन इसकी सघनता को स्पष्ट नहीं किया गया है।
(iv) प्लेटों की संख्या बढ़ रही है।
(v) पर्वत निर्माण की प्रक्रिया को स्पष्ट करने में असफल रहा
(vi) एक हि प्लेट का विभिन्न विपरित दिशाओं में संचलन होना बताया गया जो असम्भव है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(Unit-II^nd)

Topic: Zoning of Earth's interior

(पृथ्वी की आन्तरिक संरचना)

प्रश्न:- (1) पृथ्वी की आन्तरिक संरचना की व्याख्या कीजिए रेखाचित्र भी बनाइये। (2023)

Q. Describe the Interior structure of the Earth Also draw the diagram).

प्रश्न. (2) पृथ्वी की आन्तरिक संरचना में विभिन्न परतें क्या हैं? भूकम्प विज्ञान की सहायता से आरेख बनाते हुए, इन परतों का वर्णन कीजिए (2019)

प्रश्न. (3) पृथ्वी के अभ्यन्तर की जानकारी प्रदान करने वाले कौन-2 से साक्ष्य (प्रमाण) है।

उत्तर:- पृथ्वी का आन्तरिक भाग अदृश्य व अगम्य है। मानव ने खनन एवं अन्य क्रियाओं के द्वारा पृथ्वी का कुछ ही भाग देखा है पृथ्वी की आन्तरिक संरचना के बारे में प्राप्त जानकारी पर विभिन्न मतों में वैचारिक भिन्नता रही है. पृथ्वी के आन्तरिक भागों में गहराई के साथ तापमान, दबाव तथा घनत्व में होने वाले परिवर्तन से विभिन्न तथ्यों का आकलन किया जाता है। इन्हे तीन भागों में विभक्त किया जाता है।

(I) अप्राकृतिक साधन (Artificial sources):-

(i) दबाव (Pressure):-
(ii) घनत्व (Density):-
(iii) तापमान (Temperature):-

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

(2) प्राकृतिक साधन (Natural Sources):-

8.00 (i) ज्वालामुखी क्रिया

9.00 (ii) भूकम्प विज्ञान

10.00 (3) पृथ्वी की उत्पत्ति से सम्बन्धित सिद्धान्तों के साक्ष्य

(4) उल्का पात :-

11.00 (5) रासायनिक संरचना साक्ष्य / पदार्थ -

(ब) अप्राकृतिक साधन :-

12 NOON (i) तापमान :- (Temperature):-

पृथ्वी की सतह से केन्द्र की ओर प्रति 32 मीटर की गहराई पर 1°C तापमान बढ़ता है। तापमान की इस वृद्धि दर के अनुसार भूगर्भ में सभी पदार्थ पिघली हुई अवस्था मे होने चाहिए। परन्तु वास्तव में ऐसा नही है। अधिक गहराई के साथ बढ़ते दबाव के कारण चट्टानों के पिघलने का तापमान बिन्दु उतना ही ऊँचा होता जाता है एवं धरातल के नीचे तापमान के बढ़ने की दर पृथ्वी के केन्द्र की ओर घटती जाती है। इस गणना के अनुसार पृथ्वी केन्द्र का तापमान लगभग 2000°C से अधिक है। जिस कारण चट्टाने तथा खनिज ठोस अवस्था में नहीं रह सकते अतः लावा के उद्गार के स्रोत इसी गहराई पर स्थित है। इस प्रकार पृथ्वी के आन्तरिक भागों में गहराई के साथ तापमान व दबाव में वृद्धि होती जाती है।

(2) दबाव (Pressure):-

भूगर्भ में मोटी परतों के बढ़ते दबाव के कारण केन्द्र की ओर घनत्व बढ़ता जाता है।

Clean India is our duty and right.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

अधिकतम घनत्व बढ़ते दबाव से न होकर अधिक भार एवं उच्च घनत्व वाले तत्वों के बने होने से है। दबाव के कारण वह द्रव रूप ठोस का आचरण करता है। अतः केन्द्र में अधिक दबाव व अधिक तापमान के कारण शैले प्लास्तिकनुमा ठोस है।

(3) घनत्व (Density) :-

प्रथ्वी के केन्द्र की ओर निरन्तर दबाव बढ़ने व भारी पदार्थों के होने के कारण उसकी परतों का घनत्व भी बढ़ता जाता है। न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण सिद्धान्त के अनुसार सम्पूर्ण प्रथ्वी का घनत्व 5.5 (धरातल का घनत्व 2.6 - 3.3 g/cm³ एवं केन्द्र का औसत घनत्व 11 g/cm) परिकलित किया गया है। इस प्रकार यह प्रमाणित होता है कि प्रथ्वी के अन्तरम का घनत्व सर्वाधिक है।

(II) उल्कापात :- (Meteorite shower) :-

उल्कापिण्ड सौर परिवार के ही अंग है ये ग्रहों की उत्पति के समय अलग होकर अन्तरिक्ष में फैल गये थे। कभी - 2 ये उल्काएँ धरातल पर गिरती है। उल्काओं की रचना में निकल और लोहा पाया जाता है। प्रथ्वी में चुम्बकत्व का गुण पाया जाता है. आन्तरिक भाग में निकल - मिश्रित लोहे के कारण प्रथ्वी में यह गुण उत्पन्न हुआ है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) प्राकृतिक साधन :- (Natural Sources) :-

(i) ज्वालामुखी उद्गार :- (Volcanic Eruption) :- ज्वालामुखी उद्गार से निकले तत्व व तरल मैग्मा से यह स्पष्ट होता है कि पृथ्वी के अन्दर का कुछ भाग तप्त व तरल मैग्मा अवस्था में है। इन पदार्थों की प्रकृति के आधार पर पृथ्वी की आन्तरिक संरचना के बारे में सामान्य जानकारी अवश्य प्राप्त होती है लेकिन कोई प्रमाणिक तथ्य नहीं मिलते है।

(ii) भूकम्प विज्ञान के साक्ष्य :- (Evidences of Seismology) :-

- भूकम्प भूपटल का आकस्मिक कम्पन है जो भूगर्भ में उत्पन्न होता है। भूकम्पीय तरंगे भूकम्प के समय भूकम्प की कम्पन द्वारा अपनाया गया मार्ग होती है। ये तरंगे तीन प्रकार की होती है।

(i) प्राथमिक (P) तरंगे सबसे तीव्र गति से चलती है एवं ठोस, तरल व गैस तीनों प्रकार के पदार्थों से गुजर सकती है।

(ii) द्वितियक (S) तरंगे केवल ठोस पदार्थों के माध्यम से चलती है।

(iii) (L) धरातलीय तरंगे धरातल पर ही चलती है एवं अधिकेन्द्र पर सबसे बाद में पहुँचती है व सर्वाधिक विनाशकारी होती हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भूकम्पीय छाया क्षेत्र :- भूकम्प अधिकेन्द्र से 105° व 140° के मध्य का क्षेत्र होता है जहां कोई भी भूकम्पीय तरंगे अभिलेखित नही होती है।

- भूकम्पीय तरंगो के भ्रमण पथ व गति के आधार पर पृथ्वी के आन्तरिक भाग के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। ये लहरे समान घनत्व वाले भाग में सीधी चलती हैं। परन्तु भूकम्प केन्द्रों पर इन लहरों के अंकन से ज्ञात होता है कि ये लहरें एक सीधी दिशा में न चलकर वक्राकार मार्ग का अवलम्बन करती है। भीतर के घनत्व में विभिन्नता से उनका मार्ग भी वक्राकार हो जाता है इस आधार पर पृथ्वी के आन्तरिक भाग कि तीन परतें निश्चित कि गई है।

(i) भूपर्पटी क्रस्ट :- 30Km मोटाई घनत्व 3 ग्राम प्रति घन सेमी (gcm)

(ii) अनुपटल :- 2900 km बेसाल्ट शैलों से निर्मित

(iii) अभ्यन्तर / भूक्रोड (The core) - 6371 Km की गहराई वाला आन्तरिक भाग। घनत्व - 11 gcm (ग्राम प्रति घन सेमी)

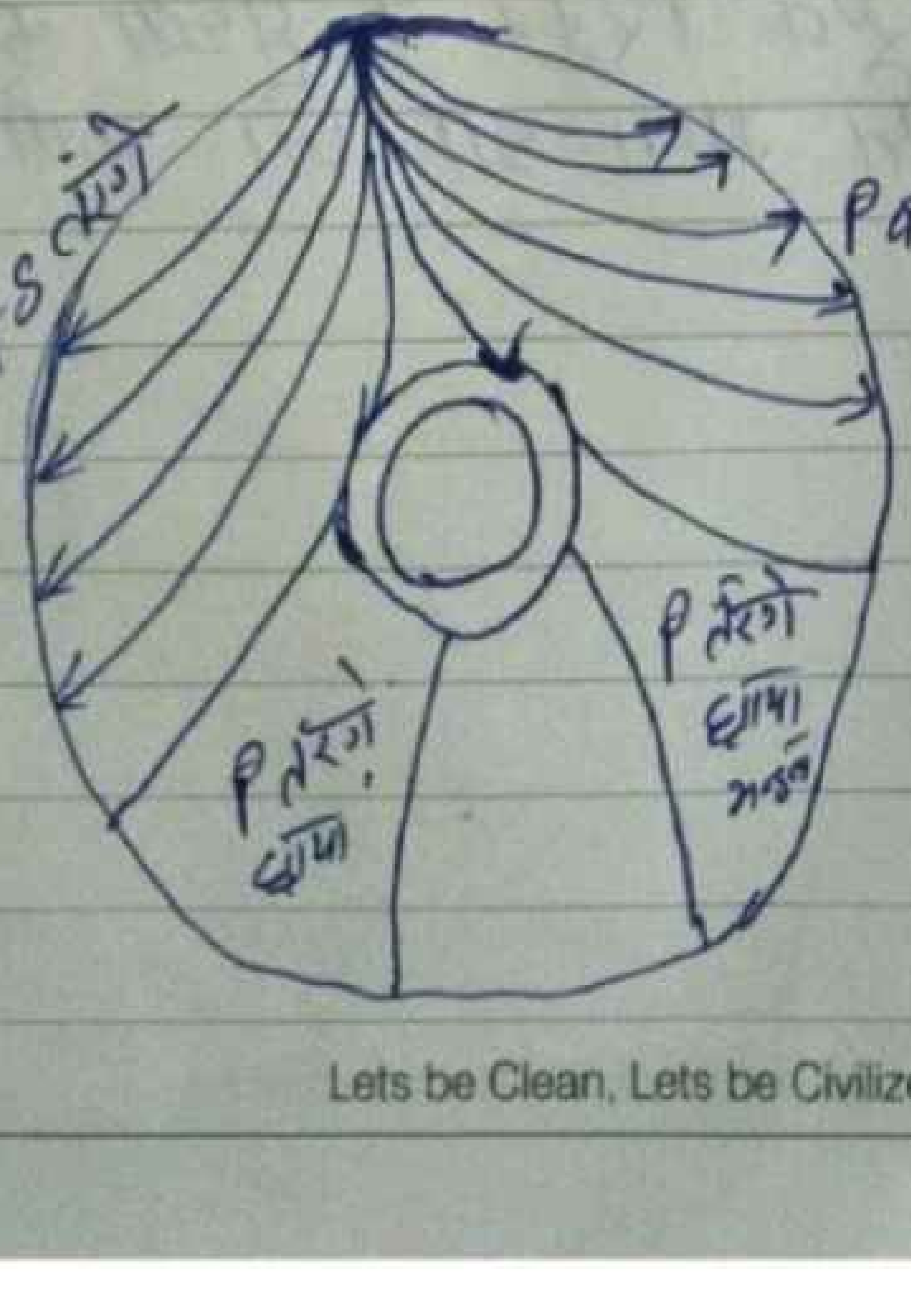

Lets be Clean, Lets be Civilized.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(4) प्रथ्वी की उत्पत्ति से सम्बन्धित सिद्धान्तों के साक्ष्य :- विभिन्न विद्वानों ने पृथ्वी की उत्पत्ति के बारे में ठोस, तरल, एवं वायव्य तत्वों का संगठन बताया गया है।

⇒ चैम्बरलिन तथा मोल्टन द्वारा प्रस्तुत ग्रहाणु परिकल्पना (1904) में पृथ्वी को ठोस ग्रहाणुओं के एकत्रीकरण के उपरान्त निर्मित होना बताया है। जिस आधार पर पृथ्वी ठोस होनी चाहिए।

⇒ जीन्स एवं जेफ्रे द्वारा प्रस्तुत ज्वारीय परिकल्पना में पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से निकले ज्वारीय पदार्थ से मानी है। जिस आधार पर पृथ्वी का आन्तरिक भाग तरल अवस्था में होनी चाहिए।

⇒ लाप्लास (1796) तथा काण्ट ने पृथ्वी की उत्पत्ति वायव्य राशि से होना बताया है। लाप्लास ने अपनी निहारिका परिकल्पना मे पृथ्वी की उत्पत्ति तो वायव्य निहारिका से मानी है लेकिन इसकी आन्तरिक संरचना तरल अवस्था से मानी है।

⇒ जबकि जीपपरिज एवं रिट्टर ने पृथ्वी के केन्द्रीय भाग को गैसों से निर्मित माना था जो अतार्किक सिद्ध हुआ।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(5) रासायनिक संरचना के आधार साक्ष्य :-

स्वैस के अनुसार भूपटल का ऊपरी भाग परतदार शैलों का बना है। इस भाग के नीचे स्वैस ने रासायनिक संघटन के आधार पर तीन परतों की स्थिति मानी है।

			घनत्व	गहराई
(i) सियाल - (Sial)	-	सिलिका + एल्यूमिनियम	2.9	50 - 300 Km
(ii) सीमा - (Sima)	-	सिलिका + मैग्नेशियम	2.9-4.7	1000 - 2000 Km
(iii) निफे - (Nife)	-	निकल + फेरीयम	11	(अंत तक)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्राप्त होती है लेकिन कोई प्रामाणिक तथ्य नहीं मिलते हैं।

प्रश्न (ii) **भूकम्प विज्ञान** (Seismology)—भूकम्प विज्ञान के अनुसार में भूकम्पीय तरंगों की क्रियाविधि तथा कारण-प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी में पृथ्वी की आन्तरिक संरचना की प्रकृति के बारे में वैचारिक भिन्नता एक बड़ा विवाद का विषय बन गई थी। इस बारे में हो रहा सैद्धान्तिक विकास प्रमाणों के अभाव में अवरुद्ध हो गया। 1906 में रिचार्ड ओल्डहम (R.D. Oldham) ने स्पष्ट किया कि सम्पीड़ित भूकम्पीय तरंगें (P. Waves) पृथ्वी के आन्तरिक भागों में अचानक धीमी हो जाती हैं तथा आगे तक प्रवेश नहीं कर पाती हैं। पृथ्वी के द्रवित आन्तरिक भाग के बारे में यह शक्तिशाली प्रमाण था। इसके तीन वर्ष उपरान्त एण्ड्रीजा मोहोरोविसिक ने पता लगाया कि पृथ्वी के अन्दर 60 किमी. की गहराई पर भूकम्पीय तरंगों की गति लगभग 7.2 से 8.0 किमी. प्रति सेकण्ड है। उन्होंने ही **'मोहो भूकम्पीय असम्बद्धता'** *(Moho Seismic Discountinuity)* की खोज की, जो भूपर्पटी एवं मेंटिल के मध्य का सीमांकन करती है। (बॉक्स 5.1) 1926 में बीनो गुटनबर्ग (Gutenberg, B.) ने भी भूकम्पीय असम्बद्धता के बारे में अनेक साक्ष्य खोजे। इसे **गुटनबर्ग असम्बद्धता** कहा गया तथा 1950 में परमाणु विस्फोटों से प्राप्त प्रमाणों के आधार पर विश्व-स्तर पर मान्यता मिली।

स्पष्ट है कि भूकम्पीय तरंगों द्वारा पृथ्वी की आन्तरिक संरचना के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त की जा सकती है। भूकम्पीय तरंगों (Seismic Waves) का अध्ययन भूकम्प लेखी (Seismograph) द्वारा किया जाता है।

पृथ्वी के आन्तरिक भाग में जहाँ भूकम्पीय हलचल आरम्भ होती है उसे **भूकम्पमूल** (Focus) कहते हैं तथा इसके ठीक ऊपर भू-सतह पर स्थित भाग को, **अधिकेन्द्र** (Epicentre) कहते हैं। भूकम्पमूल से मुख्यतः तीन प्रकार की भूकम्प तरंगें उत्पन्न होती हैं। पृथ्वी की विभिन्न परतों से प्रवाहित होने वाली इन भूकम्पीय तरंगों के व्यवहार से पृथ्वी के संगठन तथा संरचना के सम्बन्ध में सर्वाधिक प्रामाणिक साक्ष्य प्राप्त होते हैं। भूकम्पीय

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

बॉक्स 5.1 : मोहोरोविसिक असम्बद्धता

मोहोरोविसिक असम्बद्धता ऐसी सतही सीमा है जो भू-पर्पटी (Earth's crust) को मैंटिल से पृथक् करती है। इसका सीमांकन उस स्तर पर किया जाता है जहाँ पी-तरंगें (P-waves) तीव्रता से वेग परिवर्तित करती हैं। यह परिवर्तन 6.7 से 7.2 कि.मी./सेकण्ड (भूपर्पटी के नीचे) से 7.6 से 8.6 कि.मी./सेकण्ड (ऊपरी मेण्टल के शिखर पर) रहती है। इनकी गहराई सागरीय तली के नीचे 5 से 10 कि.मी. से महाद्वीपीय भागों के नीचे 32 कि.मी. तक रहती है। यह अधिकतम 60 कि.मी. की गहराई (पर्वतों के नीचे) तक पहुँच जाती है। इसकी मोटाई 0.2 से 3 कि.मी. तक मानी गई है। इसका नामकरण इसके खोजकर्ता एण्ड्रीजा मोहोरोविसिक (A. Mohorovicic, 1857-1936) नामक क्रोशियन भूकम्प वैज्ञानिक के नाम पर किया गया है जिन्होंने 1909 में इसे प्रस्तुत किया। संक्षिप्त में इसे मोहो (Moho) अथवा एम-असम्बद्धता भी कहते हैं।

हलचल के दौरान प्राथमिक तरंगें (Primary or P-Waves) द्वितीयक या गौण तरंगें (Secondary or S-Waves) तथा धरातलीय तरंगें (Surface Waves) उत्पन्न होती हैं—

(a) **प्राथमिक या लम्बवत् तरंगें** (Primary or Longitudinal Waves)—इन्हें सम्पीड़ित तरंगें (Compressional Waves) भी कहते हैं। ये तरंगें ध्वनि तरंगों के समान होती हैं जिसमें तरंग व कणों की गति सीधी रेखा में होती है। ये तरंगें अत्यधिक गतिमान वाली लघु तरंगदैर्ध्य तथा ठोस पदार्थों में तीव्रता से गति कर सकती हैं। साथ ही ये तरंगें ठोस भागों के अतिरिक्त भू-क्रोड (Core) में स्थित तरल भाग में भी प्रवाहित होती। तरल पदार्थों में इनकी गति धीमी हो जाती है। इन तरंगों के अध्ययन द्वारा हमें पृथ्वी की आन्तरिक संरचना के बारे में काफी जानकारी मिली है।

(b) **द्वितीयक या गौण तरंगें** (Secondary or S-waves)—इनकी प्रकृति जल व प्रकाश तरंगों के समान होती हैं। इन्हें **तिर्यक या आड़ी** (Transverse) तरंगें भी कहते हैं। इनमें कणों की गति तरंग की दिशा के समकोण पर होती है। द्वितीयक तरंग तरल पदार्थों में यात्रा नहीं कर सकती। ये तरंगें उच्च आवृत्ति तथा लघु तरंगदैर्ध्य (Short Wave Length) वाली होती हैं, जो भूकम्प मूल (Focus) से विभिन्न दिशाओं में घनत्व के अनुपात में विभिन्न तीव्रता से यात्रा करती हैं। ये द्रवावस्था में लुप्त होकर अत्यधिक गहराई तक प्रवेश कर जाती हैं। इनकी उत्पत्ति तनाव शक्ति के कारण मानी जाती है।

(c) **धरातलीय तरंगें** (Surface or L-waves)—इन्हें दीर्घ अवधि तरंगें भी कहा जाता है। ये सामान्यतः भू-सतह को प्रभावित करती हैं तथा कुछ गहराई पर जाकर समाप्त हो जाती है। धरातलीय तरंगें निम्न आवृत्ति तथा लम्बी तरंगदैर्ध्य वाली होती हैं, जो अधिकेन्द्र (Epicentre) के पास अचानक विकसित होती हैं। इन्हें भूकम्प के दौरान सर्वाधिक भयंकर तथा विनाशकारी माना जाता है। ये सभी तरंगों में सर्वाधिक लम्बी हैं।

जब भूकम्प उत्पन्न होता है, तो भूकम्पीय तरंगें अभिकेन्द्र के पास भूकम्पलेखी यंत्र द्वारा अंकित की जाती हैं। आरम्भ में लघु तथा कमजोर कम्पन (Tremor) होता है, जिसे प्राथमिक तरंग कहते हैं। एक छोटे अन्तराल के बाद अपेक्षाकृत तीव्र कम्पन होता है, जिसे द्वितीयक या गौण तरंग कहते हैं तथा अन्त में अधिक समय तक आने वाली तरंगों को धरातलीय तरंगें कहते हैं। इन भूकम्पीय तरंगों के वेग (Velocity) एवं मार्ग के आधार पर पृथ्वी की आन्तरिक संरचना तथा संघटन के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। भूकम्पीय तरंगें ध्वनि तरंगों के समान होने के कारण ठोस पदार्थों में तीव्रता से प्रवाहित होती हैं जबकि तरल पदार्थों में इनकी गति धीमी हो जाती है। एक शोध के उपरान्त पाया गया है कि समान प्रकृति वाली ठोस चट्टानों में भूकम्पीय

चित्र 5.3 : समान प्रकृति के पदार्थों से निर्मित होने पर पृथ्वी में भूकम्प तरंगें न तो परिवर्तित होती न ही अपरिवर्तित वरन् एक प्रवाह पथ पर सीधी रेखा के सहारे चलती हैं।

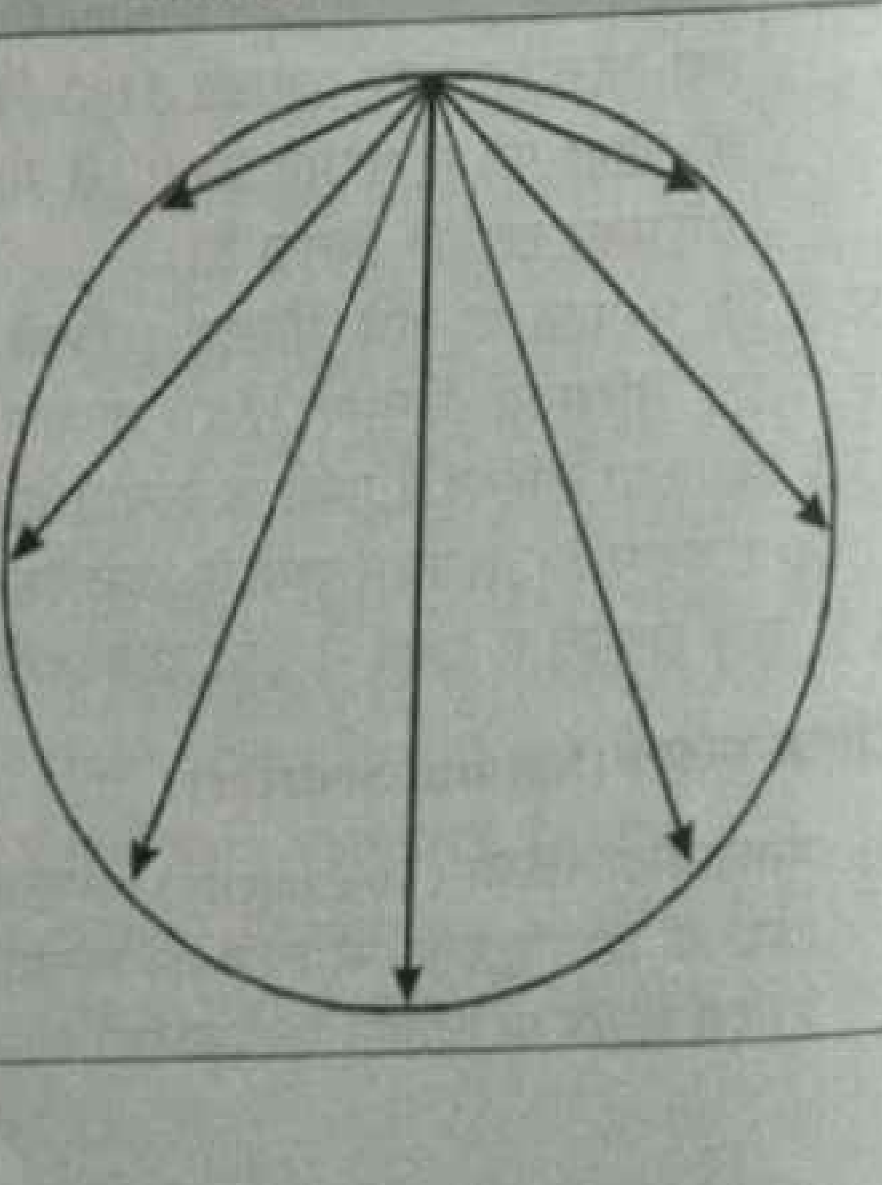

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चित्र 5.4 : पृथ्वी के आन्तरिक भागों की विषम दशा के कारण भूकम्पीय तरंगें वक्राकार मार्ग का अनुसरण करती हैं।

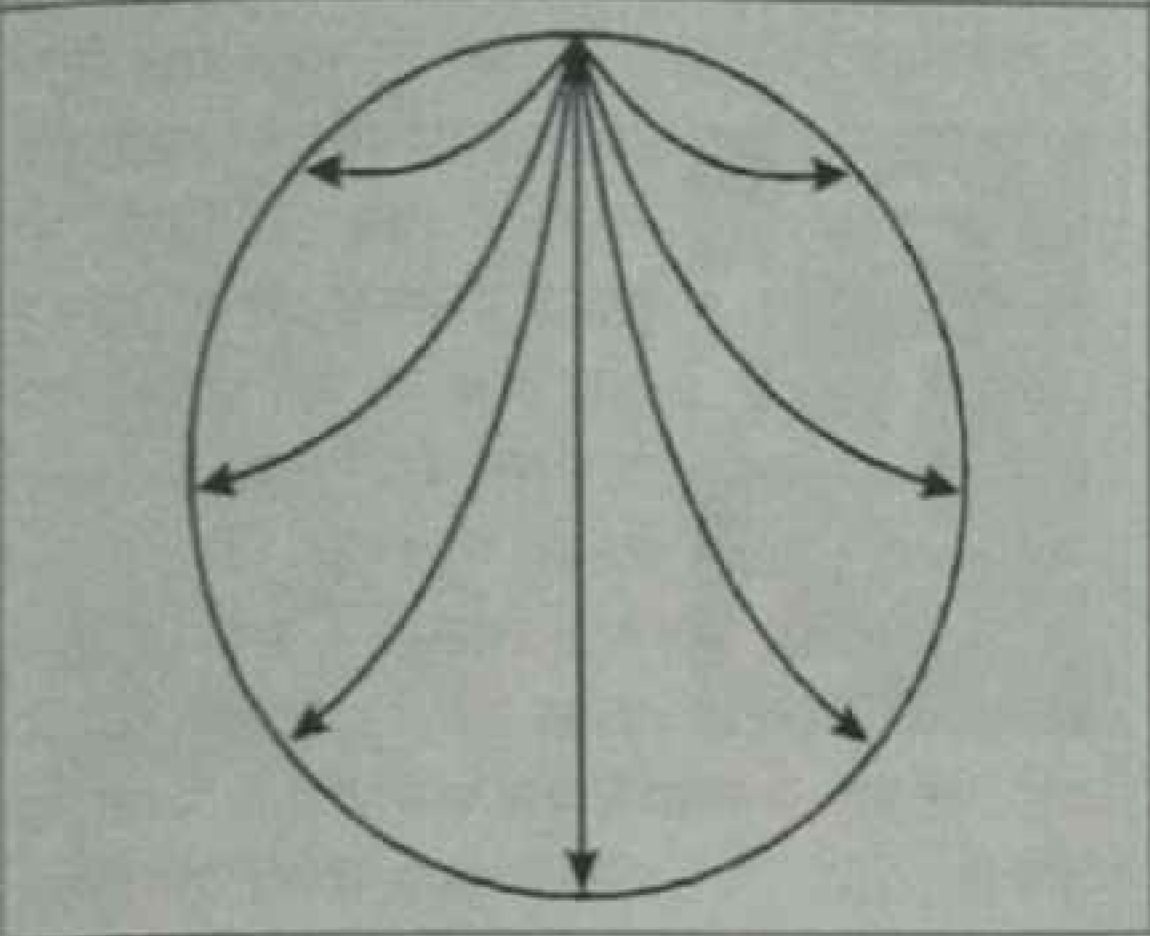

तरंगें सीधी चलती हैं जबकि चट्टानों की इस ठोस प्रकृति में घनत्व में परिवर्तन आते ही भूकम्पीय तरंगें तिरछी चलने लगती हैं। स्पष्ट है कि पृथ्वी के आन्तरिक भागों में चट्टानें विभिन्न प्रकृति एवं घनत्व वाली हैं जिनका स्पष्टीकरण इनसे प्रवाहित होने वाली भूकम्पीय तरंगों की दिशा एवं गति द्वारा हो जाता है। पृथ्वी के अन्दर घनत्व में भिन्नता के कारण ही भूकम्पीय तरंगें तिरछी चलती हैं। पृथ्वी के आन्तरिक भागों में घनत्व में वृद्धि हो जाती है। इन भागों में जहाँ दो भिन्न घनत्व की परतें मिलती हैं वहाँ इन तरंगों का अपवर्तन (Refraction) और परावर्तन (Reflection) हो जाता है। इस स्थिति में भू-गर्भ का कुछ भाग इन तरंगों के प्रभाव से दूर रह जाता है, जिसे **छाया प्रदेश** (Shadow Zone) कहते हैं। इसकी खोज वैज्ञानिकों ने 1966 में की थी (चित्र 5.5)।

यदि पृथ्वी समान प्रकृति के ठोस पदार्थों से निर्मित होती जिनका घनत्व भी भिन्न न होता तो भूकम्पीय तरंगें समान गति से एक सीधी रेखा के सहारे चलतीं। लेकिन पृथ्वी एक ही स्वभाव वाले ठोस पदार्थों (Homogeneous Solid) से निर्मित नहीं है, इसकी विभिन्न भौतिक दशाएँ हैं, जो गहराई के साथ परिवर्तित हो जाती हैं। पृथ्वी का घनत्व भी बदल जाता है, जिस कारण लहरें परावर्तित होकर वृत्ताकार हो जाती हैं जिसके फलस्वरूप उनका मार्ग भी वक्राकार (Curved Path) हो जाता है।

1906 में क्रोशिया की कल्पा घाटी में आए भूकम्प से दो अन्य भूकम्पीय तरंगों की पहचान की गई, जो भूकम्प के बाह्य केन्द्र से 1000 किमी. की दूरी पर P तथा S तरंगों के सदृश है। अत: इन्हें Pg तथा Sg तरंगों का नाम दिया गया। इनकी गति P व S तरंगों से धीमी है।

इनकी उपस्थिति भूकम्प मूल के निकट दर्ज की गई है। ये तरंगें P तथा S तरंगों की तुलना में देर से सतह पर पहुँचती हैं। भूकम्प केन्द्र Pg तथा Sg तरंगों से सर्वाधिक प्रभावित होता है।

भूकम्प में किसी स्थान विशेष पर (0° लेबल) 'पी' तरंगों का छायाक्षेत्र (Shadow Zone) नियत रूप से भूकम्प मूल

चित्र 5.5 : भूकम्पीय तरंगों (P-waves) के दौरान निर्मित छाया क्षेत्र, जो भूकम्प केन्द्र से 103° से 143° के मध्य रहता है।

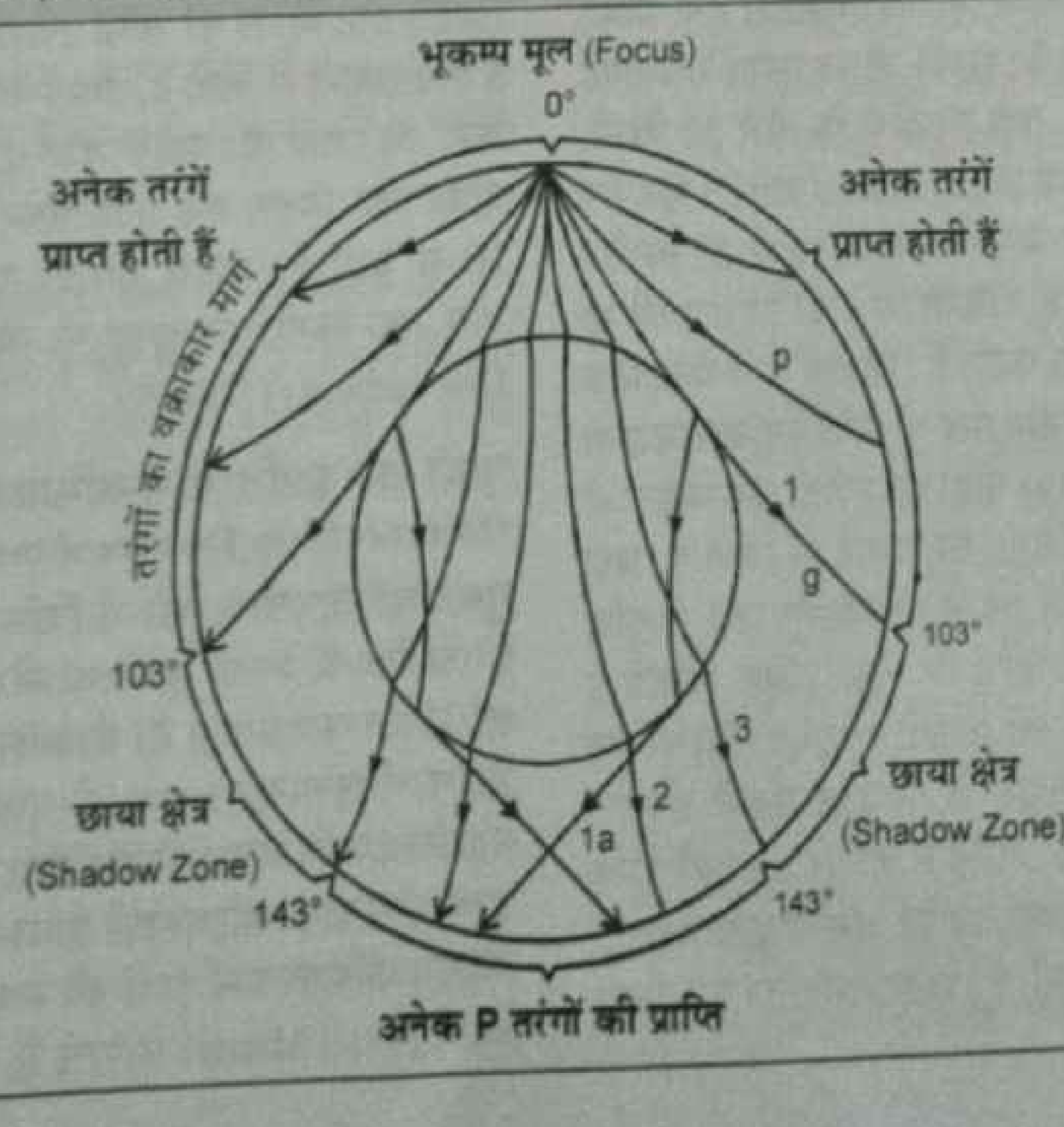

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(Focus) से 103° तथा 143° पर स्थित होता है। इसमें कुछ मात्रा में रेखीय प्रवाह में परिवर्तन हो जाता है। छाया क्षेत्र का सर्वोत्तम विश्लेषण यह है कि पृथ्वी में स्थित अन्तरतम (Core) में होकर 'पी' तरंगें सापेक्षिक रूप में धीमी गति से चलती हैं। भूकम्पीय तरंगें प्रावार (Mantle) के साथ एक वक्राकार मार्ग का अनुसरण करती हैं तथा भूकम्प मूल से भू-सतह पर 0° से तथा 103° के मध्य प्रकट होती हैं। चित्र 5.5 में किरण (Ray) 1 अन्तरतम को छोड़कर 103° पर प्रकट हो रही है। किरण 2 फिर भी 1 की तुलना में थोड़ी ढालू (Steeper) है तथा अन्तरतम की सीमा को भेद रही है जहाँ से यह मुड़कर पृथ्वी की विपरीत दिशा में पहुँचती है। किरण 3 भी इसी के समानान्तर मुड़ती हुई विपरीत भाग में फोकस से 143° पर पहुँच रही है। अन्य किरणें भी 1 से अधिक घुमावदार हैं तथा फोकस से अन्तरतम के पास मुड़कर 143° तथा 180° के मध्य प्रकट हो रही हैं। इस प्रकार 'पी' तरंगों के अन्तरतम (Core) तथा प्रावार (Mantle) के मध्य सीमा के सहारे मुड़ने के कारण भू-सतह के एक भाग पर छाया क्षेत्र बन जाता है। यह ऐसा क्षेत्र होता है जहाँ 'पी' तरंगें नहीं पहुँचती हैं। छाया क्षेत्र से भूकम्प वैज्ञानिकों ने यह गणना की है कि अन्तरतम की सीमा भू-सतह से 2900 किमी. नीचे है।

भूकम्पीय असम्बद्धताएँ (Seismic Discontinuities)

भूकम्पवेत्ताओं ने पृथ्वी के अन्दर दो प्रमुख परतों की पहचान की है, जो पृथ्वी को विभिन्न गुणों वाले कटिबन्धों (Zones) में विभक्त करती हैं। प्रथम बाहरी परत जिसे **मोहोरोविसिक या मोहो असम्बद्धता** कहते हैं जो भूपर्पटी (Crust) तथा प्रावार (Mantle) को पृथक् करती है। इसकी औसत गहराई महासागरों के नीचे 0.2 से 10 किमी. तथा महाद्वीपों के नीचे 32 किमी. तक मानी गई है। वी. कोनराड (V. Conrad, 1925) ने भूकंपीय ऊर्जा के ऊपरी एवं निचली क्रस्ट के मध्य (12 से 22 किमी.) तीव्रता के बदलाव (5.7 से 6.3 किमी./से.) की पहचान की थी जिसे **कोनराड असम्बद्धता** कहते हैं। वास्तव में ये ग्रेनाइटिक एवं बेसाल्टिक पदार्थों की सीमा मात्र थी। **लेहमेन असम्बद्धता** (Lehmann Discontinuity) **मोहो** एवं **रेपीटी** असम्बद्धताओं के मध्य करीब 220 ± 30 किमी. की गहराई पर स्थित है। जहाँ भूकंप की P एवं S तरंगों के वेग में आकस्मिक रूप से वृद्धि होती है। यह सामान्यतः महाद्वीपों के नीचे अधिक दिखती है जबकि महासागरों के नीचे नहीं दिखती। लेहमेन ने यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका में किए S लहरों के परावर्तन संबंधी अध्ययन करके इसकी पहचान की थी। मैंटिल से कोर (Core) को पृथक् करने वाली असम्बद्धता **गुटनबर्ग/विचर्ट असम्बद्धता** कहलाती है जिसकी गहराई 2900 किमी. है। इसका आकलन सन् 1914 में **बीनो गुटनबर्ग** नामक जर्मन भूकम्पवेत्ता ने किया था। इसी आधार पर गुटनबर्ग ने बताया कि पृथ्वी के अन्तरतम भाग (Inner Core) में ठोस पदार्थों की प्रधानता है। इस प्रकार कोर (core) तथा मैंटिल की सीमा 2900 किमी. पर बताई गई जहाँ S तरंगें समाप्त हो जाती हैं, तथा P तरंगों की गति में आकस्मिक कमी आ जाती है। बाहरी कोर (Outer Core) का निर्माण द्रवित लौह मिश्रण तथा कुछ हल्के तत्त्वों (Si, S, O, C तथा H) से हुआ है। बाहरी मेण्टिल एवं आन्तरिक मेण्टिल के बीच 700 किमी. की गहराई पर **रेपेटी असम्बद्धता** (Repitc Discontinuity) स्थित है।

> *लेहमेन (Dr. Inge Lehmann, 1888-1993)*
>
> डेनमार्क में जन्मी लेहमेन ने ऊपरी मैंटल एवं अन्तरतम में भूकंपीय तरंगों की प्रकृति का अध्ययन करके ऊपरी मैंटल
>
>
>
> (स्थलमण्डल एवं दुर्बलतामण्डल के मध्य) के पास 220 किमी. की गहराई में असम्बद्धता की पहचान की। साथ ही यहाँ उन्होंने निम्न तरंग वेग क्षेत्र (Low Velocity Zone) की पहचान की।
>
> लेहमेन ने सन् 1936 में बताया कि ठोस आंतरिक कोर के चारों ओर एक तरल बाहरी कोर पाया जाता है, उनका यह शोध सन् 1981 में इन दोनों अध्ययनों को प्रेम मॉडल (PREM, Preliminary Reference Earth Model) द्वारा जिवाँसकी एवं एण्डर्सन (Dziewonski and Anderson) ने सत्य सिद्ध किया। इस प्रकार वास्तव में लेहमेन असम्बद्धता 5150 किमी. की गहराई पर है लेकिन मैंटिल के प्रारंभिक अध्ययनों के बाद लेहमेन ने 220 किमी. की गहराई पर भी असम्बद्धता की पहचान की थी। लेहमेन को Discoverer of the Earth's Inner Core माना जाता है।

पृथ्वी की उत्पत्ति से सम्बन्धित सिद्धान्तों के साक्ष्य (Evidence from Theories of the Origin of the Earth)

पृथ्वी की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न विचार दिए हैं, जिनमें पृथ्वी को ठोस, तरल एवं वायव्य तत्त्वों का संगठन बताया गया है। चैम्बरलिन तथा मोल्टन द्वारा प्रस्तुत ग्रहाणु परिकल्पना (1904) में पृथ्वी को ठोस ग्रहाणुओं के एकत्रीकरण के उपरान्त निर्मित होना बताया है जिस आधार पर पृथ्वी ठोस होनी चाहिए। इसी प्रकार जीन्स एवं जेफ्रे द्वारा प्रस्तुत ज्वारीय परिकल्पना में पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से निकले ज्वारीय पदार्थ (Tidal Matter) से मानी है, जिस आधार पर पृथ्वी का

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic :- Earth Movements (भू-संचलन)

(बल)

प्रश्न :- (i) पृथ्वी के बल पर टिप्पणी लिखो। (2013)

प्रश्न (2) भ्रंश के प्रकारों को रेखाचित्र की सहायता से समझाइये (2023)

प्रश्न (3) भू-गतियाँ क्या है? भ्रंशन एवं वलन गतियों के परिणाम स्वरूप बनने वाली स्थलाकृतिक भू-आकृतियों की विवेचना कीजिए। (2015, 2020)

उत्तर :- भू-पटल को प्रभावित करने वाले बल

- (1) अन्तर्जात बल
  - (i) पटल विरूपणी बल
    - (i) महाद्वीपजनक बल → (i) उत्थान (उन्मज्जन), (ii) निमज्जन
    - (ii) पर्वत निर्माणकारी बल
      - (i) तनाव → भूपटल विभंग → (भ्रंशन)
      - (ii) सम्पीड़न → भूपटल बंकन → (वलन)
  - (ii) आकस्मिक अन्तर्जात बल
    - (i) भूकम्प
    - (ii) ज्वालामुखी
    - (iii) भूमि स्खलन
- (2) बहिर्जात बल
  - (i) अपक्षय
  - (ii) अपरदन :- जल, पवन, हिमनद
  - (iii) परिवहन

Every litter bit hurts our mother nature.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

ज्वालामुखी क्रिया द्वारा माना गया है।

भू-पटल को प्रभावित करने वाले बल
(Forces Affecting the Earth's Crust)

भू-पटल को प्रभावित करने वाले बलों की उत्पत्ति दो प्रकार से मानी जाती है। प्रथम, पृथ्वी के आन्तरिक भागों में उत्पन्न शक्तियों से तथा द्वितीय बाह्य शक्तियों से, जो सूर्यातप के आधार पर वायुमण्डलीय परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती हैं। पृथ्वी के आन्तरिक भागों में उत्पन्न होने वाले बल किसी प्रतिबल (Stress) के कारण पैदा होते हैं। पृथ्वी पर विवर्तनिकी क्रिया से तनाव (Tension), सम्पीड़न (Compression) तथा **अपरूपण** (Shearing)* का आभास होता है। इन स्थितियों को उत्पन्न करने वाले बलों को उत्पत्ति के आधार पर दो भागों में विभक्त किया गया है—

---

* जब प्रतिबल किसी भूखण्ड को विकर्ण की दो परस्पर विपरीत दिशाओं में बल डालकर प्रभावित (धकेलता) करता है, तो उसे अपरूपण (Shearing) कहते हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

1. अन्तर्जात बल (Endogenetic Forces);
2. बहिर्जात बल (Exogenetic Forces)।

इन बलों को थार्नबरी ने **भू-आकृतिक प्रक्रम** (Geomorphic Process) कहा है।

अन्तर्जात बल (Endogenetic Forces)

पृथ्वी के आन्तरिक भाग में उत्पन्न होने वाले ये बल भू-पटल पर विषमता उत्पन्न करते हैं। इनकी उत्पत्ति चट्टानों के प्रसरण (Tension) तथा सिकुड़न या सम्पीड़न (Compression) के परिणामस्वरूप होती है। इन बलों को निर्माणकारी शक्तियाँ (Constructional Forces) भी कहा जाता है। इनकी उत्पत्ति पृथ्वी के आन्तरिक भाग में होने से प्रत्यक्ष रूप से इनके बारे में पर्याप्त भौगोलिक जानकारी प्राप्त नहीं हो पाती है। आन्तरिक शक्तियों के रूप में इन बलों की उत्पत्ति उष्ण पृथ्वी के ठण्डे होने से संकुचित होने, परिभ्रमण गति में ह्रास तथा पृथ्वी के आन्तरिक भाग में रेडियोधर्मी पदार्थों के विघटन से उत्पन्न उष्मा एवं संवाहनिक धाराओं के कारण मानी जाती है। भू-वैज्ञानिकों के अनुसार भू-पटल के नीचे विद्यमान तापीय अन्तर के कारण चट्टानों में सम्पीड़न एवं प्रसरण होता है। ये आन्तरिक क्रियाएँ मैग्मा द्वारा संचालित होती हैं। मैग्मा के साथ गैस, वाष्प आदि भी मिश्रित रहते हैं, जिनके सामूहिक प्रभाव से मैग्मा पृथ्वी के बाहरी भाग में प्रवाहित होता है। यदि यह मैग्मा अन्य पदार्थों के साथ पृथ्वी की आन्तरिक परतों में जमा हो जाता है, तो इसे **अन्तर्वेशन** (Intrusion) कहते हैं, जबकि मैग्मा के भू-सतह पर जमाव को **बहिर्वेधन** (Extrusion) कहते हैं।

आन्तरिक शक्तियों की उत्पत्ति में भू-वैज्ञानिकों ने उपर्युक्त वर्णित सभी कारणों को संश्लेषित कर निम्नलिखित चार कारण स्पष्ट बताए हैं—

1. **ज्वारीय शक्ति** (Tidal Stress)—सूर्य और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति के कारण भू-पटल में खिंचाव उत्पन्न होता है। पृथ्वी का महाद्वीपीय भाग दृढ़ एवं प्रतिरोधी होने के कारण कम प्रभावित होता है, लेकिन सागरीय जल तरल होने के कारण अधिक प्रभावित होता है। इस प्रकार पृथ्वी पर ज्वारीय शक्ति के कारण सागर एवं स्थल में परिवर्तन होने से भू-सतह में सन्धियाँ उत्पन्न होने से आन्तरिक शक्तियाँ प्रभावी हो जाती हैं।
2. **गुरुत्वीय प्रतिबल** (Gravitational Stress)—सम्पूर्ण पृथ्वी गुरुत्व बल से सन्तुलित एवं प्रभावित होती है। पृथ्वी तल पर विभिन्न वस्तुएँ आकर्षित रहती हैं जिनके आकर्षण पृथ्वी के केन्द्र की ओर रहते हैं। इस बल से तनाव एवं सम्पीड़न की क्रिया को बल मिलता है तथा अनेक स्थलाकृतियाँ बनती हैं।
3. **सागरीय तली में प्रसरण का बल** (Sea Floor Spreading Force)—सागरीय कटकों के समीप नवीन महासागरीय धरातल का निर्माण हो रहा है। प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त से इस तथ्य की पुष्टि हुई है कि अमरिकन प्लेट

बॉक्स 8.1 : भू-पटलीय निर्माण एवं विरूपण प्रक्रियाएँ

पृथ्वी पर भू-पटल (Crust) लगभग 8 से 65 कि.मी. मोटा है। इसकी अधिकतम मोटाई महाद्वीपों पर तथा न्यूनतम महासागरों पर मिलती है। यह पृथ्वी के कुल व्यास का 1 प्रतिशत से भी कम है। भू-पटलीय निर्माण में विवर्तनिक गतिविधियों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। अवशिष्ट पर्वत एवं महाद्वीपीय अन्तरतम (Cores), जिन्हें शील्ड (Shields) कहते हैं प्राचीनकाल में हुई विवर्तनिक घटनाओं के परिणाम है। वर्तमान में सक्रिय वलन एवं भ्रंशन (Folding and Faulting) द्वारा पर्वतों तथा अन्य भू-आकारों का निर्माण हो रहा है। अधःसतही पदार्थों (Sub Surface Materials) के उद्गार से प्राप्त पिघली शैलों के सतही संचयन से भी भू-पटलीय भू-दृश्यों का निर्माण होता है। इसमें ज्वालामुखी क्रिया की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। इस प्रकार विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा भू-पटल का निर्माण होता रहता है। महाद्वीपीय भू-पटल के निर्माण में सागर नितल के प्रसरण तथा सागरीय पर्पटी (Oceanic Crust) के निर्माण का भी योगदान रहता है। सागरीय पर्पटी का अधोगमन (Subduction) होने से यह पुनः पिघलकर मैग्मा के रूप में धरातल पर आती है। दुर्बलता-मण्डल से मैग्मा मध्य महासागरीय कटक के सहारे ऊपर आता है। इसमें सिलिका, लोहा तथा मैग्निशियम की अधिकता होती है। यह पदार्थ प्रसरण केन्द्रों के सहारे ऊपर उठता है तथा ठण्डा होकर सागर तल का रूप ले लेता है। इसी प्रकार सिलिका प्रधान मैग्मा विस्फोटक ज्वालामुखी उद्गार द्वारा भू-सतह पर पहुँचता है तथा ठण्डा होकर भू-पृष्ठ निर्माण में सहभागी होता है।

भूपटलीय विरूपण की प्रक्रिया में शैलें विवर्तनिक बलों, गुरुत्व तथा उनके ऊपर स्थित शैलों के भार से पड़ने वाले बल (Stress) से प्रभावित होती हैं। इन बलों में तीन प्रमुख हैं—प्रथम, सम्पीड़न (Compression), द्वितीय, तनाव (Tension) तथा तृतीय, अपरूपण (Shearing)। इन बलों के परिणामस्वरूप भूपटल पर वलन एवं भ्रंशन की क्रिया होती है। स्पष्ट है कि भूपटल पर एक ओर निर्माणकारी प्रक्रियाशील है तो दूसरी ओर इसे परिवर्तित करने वाले बल भी सक्रिय हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

के प्रशांत सागरीय प्लेट की ओर प्रसरण से मध्य अटलाण्टिक कटक के सहारे नवीन धरातल का निर्माण हो रहा है। इस कारण भू-पटल पर भ्रंशन एवं वलन की क्रिया को गति मिलती है।

4. **विवर्तनिक शक्तियाँ** (Tectonic Forces)—सम्पूर्ण पृथ्वी 7 बड़ी तथा 14 छोटी भू-प्लेटों में विभक्त हैं। ये प्लेटें गतिशील रहते हुए भू-पटल पर विभिन्न प्रकार के रचनात्मक (Constructive) तथा विध्वंसात्मक (Destructive) प्रभाव दिखाती हैं। इनमें संचलन का एक कारण रेडियोधर्मी तत्त्वों को भी माना गया है।

अन्तर्जात बलों को निम्नलिखित दो भागों में विभक्त किया गया है—

आकस्मिक अन्तर्जात बल
(Sudden Endogenetic Forces)

भू-पटल को प्रभावित करने वाले आकस्मिक अन्तर्जात बलों में ज्वालामुखी एवं भूकम्प प्रमुख हैं। ज्वालामुखी क्रिया से नि:सृत विभिन्न प्रकार के पदार्थों के पृथ्वी के आन्तरिक तथा बाहरी भागों में जमा होने से अनेक भू-आकारों का निर्माण होता है, जिनमें पर्वत (किलीमंजारो तथा फ्यूजीयामा पर्वत) पठार, (कोलम्बिया तथा दक्कन का पठार) तथा मैदान (फ्रांस, न्यूजीलैण्ड तथा आइसलैण्ड के मैदानी भाग) प्रमुख स्थलाकृतियाँ हैं। भूकम्प द्वारा भी भू-सतह पर परिवर्तन होते हैं। नदियों के मार्ग बदल जाते हैं। (1950 में असम भूकम्प के समय ब्रह्मपुत्र नदी में अवरोध आ गया था।) झीलें बन जाती हैं। 1811-12 में पश्चिमी टेन्नेसी प्रांत (U.S.A.) में रीलफुट झील बन गई थी। अनेक स्थानों पर दरारें व गहरे गर्तों की रचना हो जाती है। रचनात्मक कार्यों के साथ ही भूकम्प द्वारा एक लम्बी अवधि में स्थापित सांस्कृतिक पर्यावरण (सांस्कृतिक भू-दृश्य) की सांत्यता क्षणभर में ही टूट जाती है तथा उसका विनाश हो जाता है।

भू-पटलीय विरूपण प्रक्रियाएँ या पटल विरूपणी बल (Crustal Deformation Processes or Diastrophic Forces)

ये बल भू-गर्भ में लम्बवत् एवं क्षैतिज रूप से उत्पन्न होते हैं तथा मंद गति से लम्बे समय तक कार्यरत रहते हैं। इनका प्रभाव हजारों-लाखों वर्षों के उपरान्त दृष्टिगत होता है।* पटल विरूपणी शक्तियों द्वारा भू-पटल पर बड़े भू-आकारों का निर्माण होता है। क्षैतिज बल के कारण धरातल पर तनाव (Tension), सम्पीड़न (Compression) तथा अपरूपण (Shearing) होता है। तनाव से भ्रंश तथा सम्पीड़न से वलन पड़ते हैं। इसी प्रकार सागर तटीय भागों में निमज्जन (Submergence) तथा उन्मज्जन (Emergence) की क्रियाएँ होती हैं।

पटल विरूपणी घटना दीर्घकालीन होने के साथ ही इसका प्रभाव भी स्थानीय न होकर प्रादेशिक होता है, अत: इनके प्रभाव के क्षेत्रीय विस्तार की दृष्टि से दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—

1. महादेशजनक संचलन (Epeirogenetic Movements);
2. पर्वत निर्माणकारी संचलन (Orogenetic Movements)।

1. महादेशजनक संचलन (Epeirogenetic Movements)

महादेशजनक शब्द ग्रीक भाषा के *एपीरो (Eperio)* शब्द से बना है, जिसका अर्थ होता है, *मुख्य भूमि (Main land)* अथवा *महाद्वीप (Continent)*। *Genetic* शब्द *Genesis* से बना है जिसका अर्थ होता है *उत्पत्ति*। अर्थात् महाद्वीपों की उत्पत्ति (अवतलन तथा उत्थान) से सम्बन्धित बल को महादेशजनक बल कहते हैं। जी.के. गिल्बर्ट ने महाद्वीपों के निर्माण की प्रक्रिया को *महादेशजनक क्रिया (Epeirogeny)* कहा है तथा पर्वत निर्माणकारी प्रक्रिया को *पर्वत निर्माण क्रिया (Orogeney)* कहा है। साथ ही दोनों प्रक्रियाओं के सम्मिलित प्रभाव को पटल विरूपण बताया है। (The process of mountain formation is orogeny, the process of continent formation is epeirogeny and the two collectively are diastrophism)।

एच. हाउसिंग ने भू-पटल पर वलनकारी प्रभावों को इस श्रेणी में सम्मिलित किया है, जिन्हें सूक्ष्म स्तर पर अनुभव करना कठिन कार्य है। अत: स्पष्ट है कि किसी भी विस्तृत क्षेत्र में तनाव एवं सम्पीड़न के दौरान चट्टानों के मुड़े अथवा टूटे बिना उत्थान (Upliftment) या अवतलन (Subsidence) हो, तो इसे महाद्वीपीय रचना सम्बन्धी बल कहते हैं।

"Crustal movements of the shields in later geological time have been of a type known as epeirogenic movements; that is, rising or sinking of the crust over broad areas without appreciably breaking or bending the rocks."

(i) अधोगमन अथवा निमज्जन (Depression or submergence);
(ii) भू-उत्थान अथवा उन्मज्जन (Uplift of Land or Emergence)।

जब महादेशजनक संचलन ऋणात्मक होता है, तो एक बड़ा भू-भाग अवतलित हो जाता है तथा उथला सागर एवं महाद्वीपीय मग्न तट का आविर्भाव होता है, इसके बाद जब धनात्मक संचलन अथवा उत्थान होता है तो सागर तल पर एक बड़ा अवसादी आवरण उत्पन्न होता है। इस प्रकार जब कोई भू-भाग अपने प्रादेशिक विस्तार में समीपवर्ती भाग से धँसाव के

* बाल्टिक सागर का तट प्रति 1000 वर्षों में लगभग 1.3 मीटर तक ऊपर उठ रहा है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

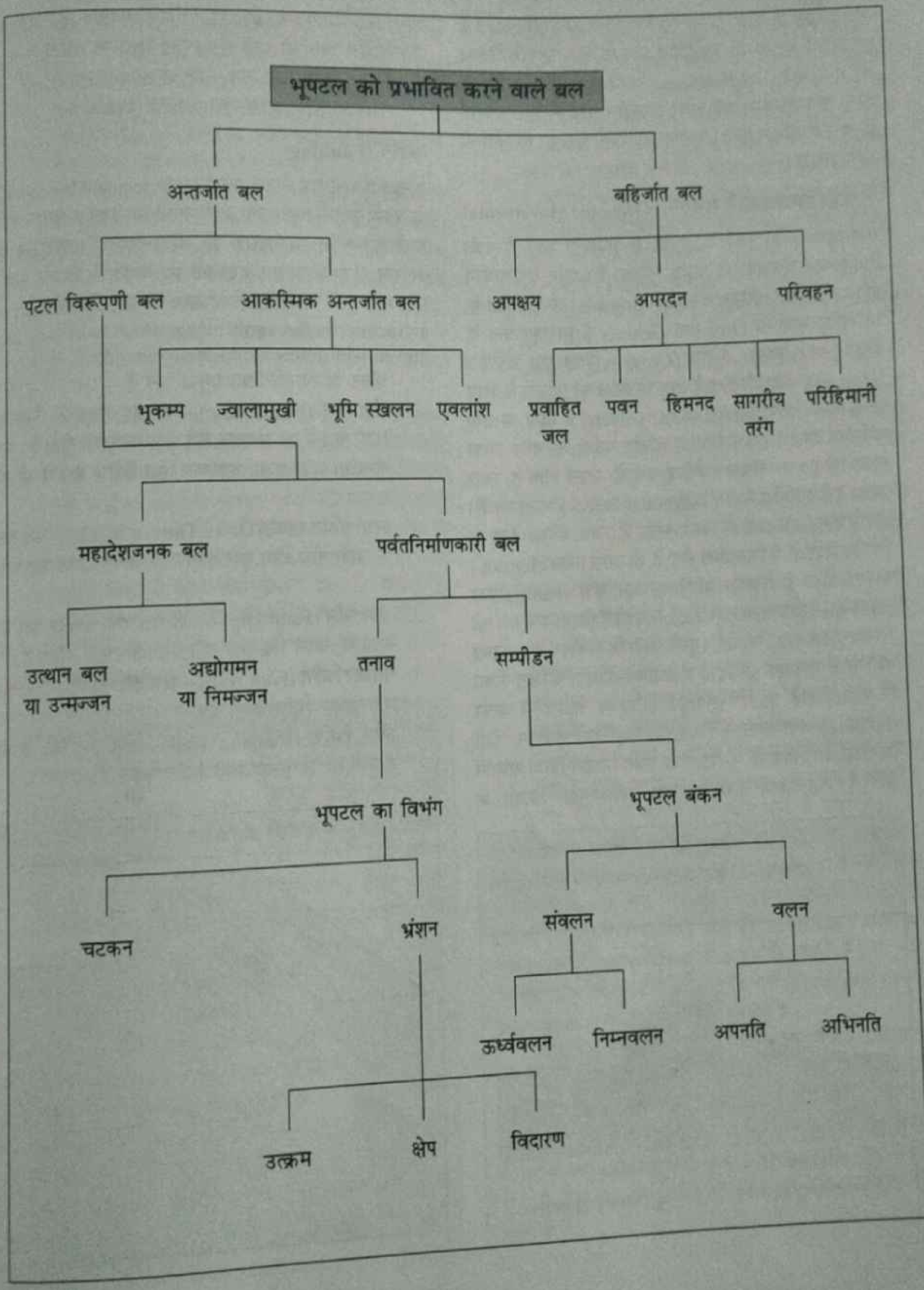

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

कारण नीचा हो जाता है, तो इस क्रिया को अधोगमन कहते हैं तथा दूसरी ओर किसी महाद्वीपीय भाग के ऊपर उठने की क्रिया को भू-उत्थान (Uplift of Land) कहते हैं। भारत का गंगा का डेल्टा तथा मुम्बई व पाण्डिचेरी के तटीय भागों में ऐसे संचलन हो चुके हैं लेकिन इनका प्रभाव महादेशीय न होकर स्थानीय ही माना जाएगा।

2. पर्वत निर्माणकारी संचलन (Orogenic Movements)

स्थलाकृतियों की रचना की दृष्टि से अन्तर्जात बलों में पर्वत निर्माणकारी संचलन की प्रमुख भूमिका है। पर्वत निर्माणकारी प्रक्रिया के लिए अंग्रेजी भाषा में 'Orogenic' शब्द प्रयुक्त है, जो लैटिन भाषा के *Oros* तथा *Genesis* से मिलकर बना है, जिनका अर्थ क्रमशः *ओरोज (Oros) = पर्वत* तथा *जेनेसिस (Genesis) = उत्पत्ति* होता है। पर्वत निर्माण की प्रक्रिया के लिए *'Orogeny'* शब्द गिलबर्ट (G.K. Gilbert) ने दिया था तथा सर्वप्रथम इन्होंने ही भ्रंशोत्थ व वलित पर्वतों के मध्य अन्तर स्पष्ट किया। यह संचलन क्षैतिज रूप में उत्पन्न होता है, जिस कारण इसे **स्पर्शीय बल** (Tangential Forces) भी कहते हैं। यह संचलन दो रूपों में कार्य करता है। जब क्षैतिज बल दो विपरीत दिशाओं से क्रियाशील होता है, तो उससे तनाव (Tension) उत्पन्न होता है जिसके परिणामस्वरूप भ्रंश (Fault), दरार (Fracture) तथा चटकन (Cracks) पड़ते हैं। अतः इस बल को *'तनावमूलक बल'* कहते हैं। दूसरे प्रकार के संचलन में भू-खण्ड पर क्षैतिज बल एक ही दिशा में (आमने-सामने) केन्द्रित होकर क्रियाशील होते हैं, तो सम्पीड़न क्रिया से चट्टानों में वलन (Folding) तथा संवलन (Warps) पड़ जाते हैं। इन दोनों क्रियाओं के प्रभाव से भू-पटल पर पर्वत निर्माण क्रिया सम्पन्न होती है। यह क्रिया कुछ स्थितियों (ज्वालामुखी क्रिया) के अतिरिक्त आकस्मिक न होकर दीर्घकालीन क्रिया है। अतः ये क्षैतिज बल निम्न दो वर्गों में विभक्त किए जा सकते हैं—

(i) तनावमूलक बल—भ्रंश (Faults);

(ii) सम्पीड़नमूलक बल—वलन (Folds)।

चित्र 8.1 : अन्तर्जात (विवर्तनिक) एवं बहिर्जात (भ्वाकृतिक) प्रक्रियाएँ, जो एक पर्वतोत्पत्ति स्थल को आकार प्रदान करती हैं।

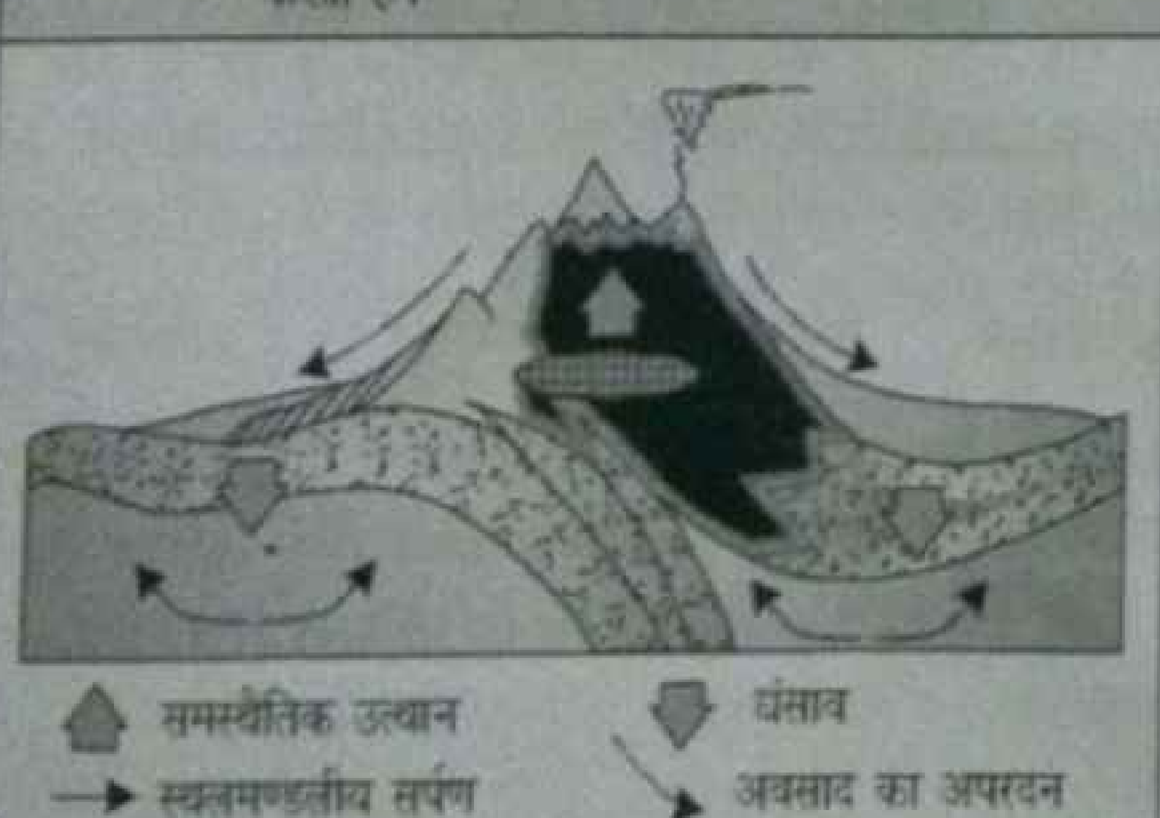

भ्रंशन (Faulting)

अन्तर्जात बलों द्वारा क्षैतिज संचलन (Horizontal Movement) के कारण उत्पन्न तनाव तथा कभी-कभी सम्पीड़न के कारण होने वाले चट्टानों के स्थानान्तरण को भ्रंशन कहते हैं। वर्सेस्टर के अनुसार, "पृथ्वी के एक दरार को भ्रंश कहते हैं, जिसके सहारे एक भाग दूसरे भाग की अपेक्षा सरक जाता है।" (A fault is a fracture in the earth along which one side has moved with reference to the other side.)

भ्रंशन के निम्नलिखित प्रमुख अंग हैं—

1. **भ्रंश तल** (Fault Plane)—यह वह सतह है, जिसके सहारे चट्टानों का संचलन होने से स्थानान्तरण होता है। यह लम्बवत् झुका हुआ, वक्राकार तथा क्षैतिज रूप में भी हो सकता है।
2. **अध:क्षेपित खण्ड** (Down Thrown Block)—भ्रंश तल के सहारे नीचे धँसा हुआ भाग अध:क्षेपित खण्ड कहलाता है।
3. **भ्रंश नति** (Fault Dip)—भ्रंश तल तथा क्षैतिज तल के मध्य के कोण को *भ्रंश नति (Fault Dip)* कहते हैं।
4. **आधारभित्ति** (Foot Wall)—भ्रंश तल की निचली दीवार को आधार भित्ति कहते हैं।
5. **शीर्ष भित्ति** (Hanging Wall)—भ्रंश तल की ऊपरी दीवार को शीर्ष या ऊपरी भित्ति कहते हैं।

चित्र 8.2 : एक साधारण भ्रंश के भाग

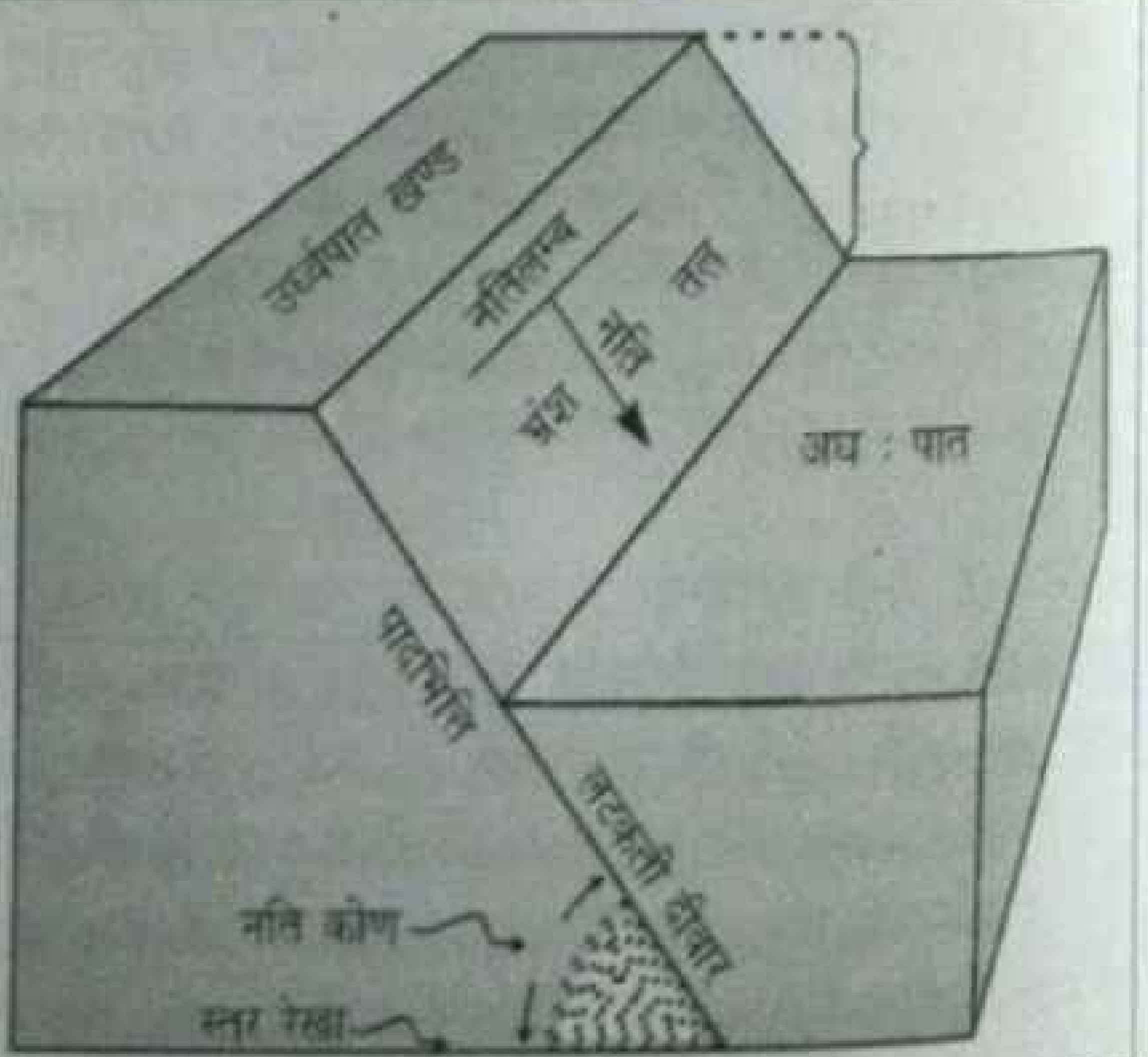

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चित्र 8.3 : भ्रंशों के प्रकार

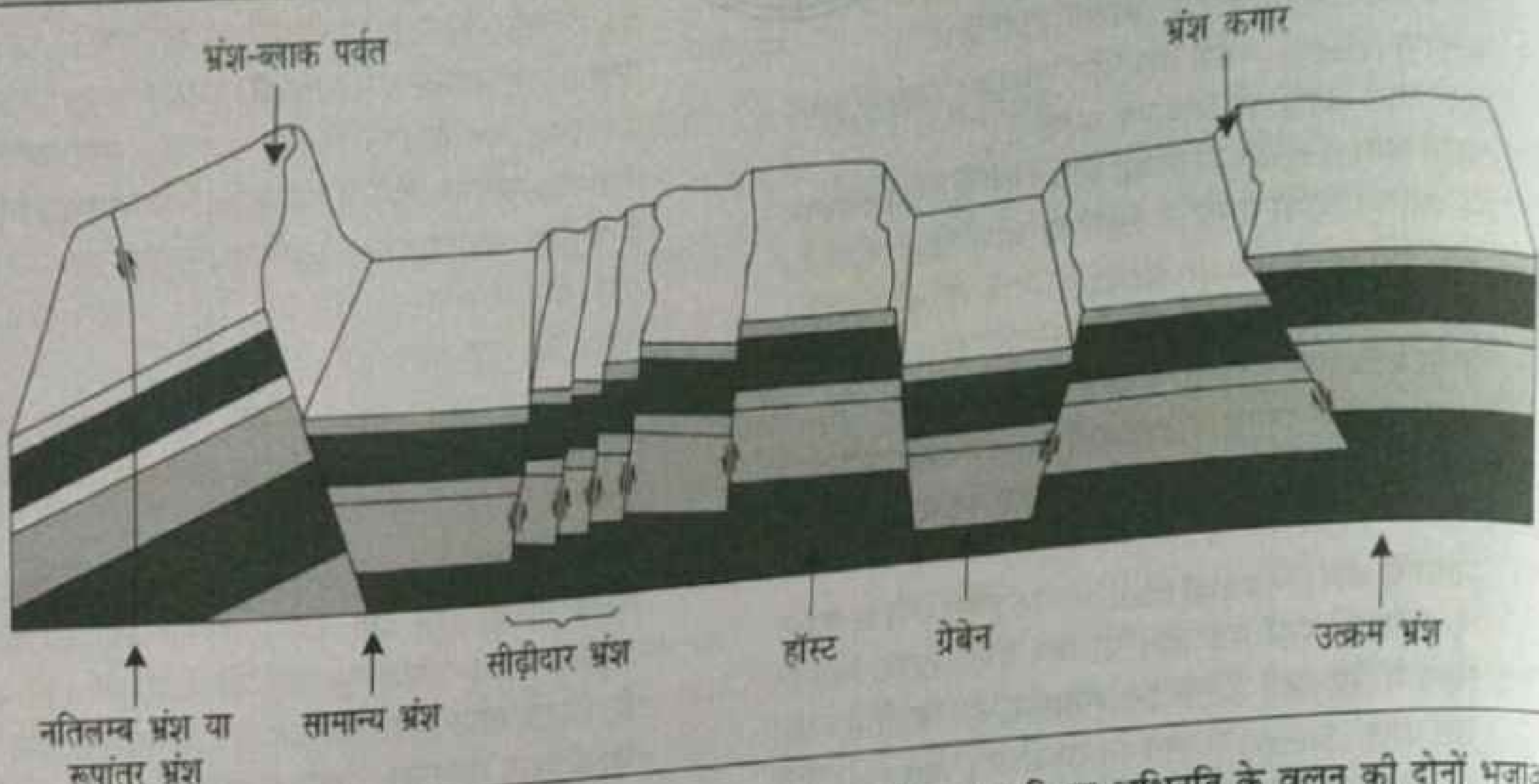

वलन
(Folding)

पृथ्वी के अन्तर्जात बलों के कारण क्षैतिज संचलन की क्रिया से चट्टानों में सम्पीड़न (Compression) से लहरदार मोड़ पड़ जाते हैं, जिन्हें वलन कहते हैं। फिंच के अनुसार, *"समतल परतदार चट्टानों के अधिक मात्रा में मुड़ जाने को ही वलन कहते हैं।"* वलन के दौरान बनने वाला झुकाव (Flexure) एक माप का रूप ले लेता है। इस चाप का ऊपरी पीठनुमा घुमावदार भाग अपनति (Anticline or Antiform) तथा द्रोणीनुमा भाग अभिनति (Syncline or Synform) कहलाता है। प्लेट विवर्तनिकी के अनुसार जब दो विवर्तनिक प्लेटों का अभिसरण (Convergence) होता है, तो प्रावार (Mantle) में संवाहनिक तरंगों द्वारा एक-दूसरे पर पार्श्विक रूप में बल डालती है तथा वलन पड़ जाते हैं।

वलन के निम्नलिखित अंग होते हैं—

1. **चट्टान परत** (Bed)—प्रत्येक वलन का निर्माण शैल परतों से होता है।
2. **अधिकतम चक्र** (Hinge)—शैल परतों में जहाँ अधिकतम लहर होती है, उसे अधिकतम चक्र कहते हैं तथा ऐसी रेखा जिस पर नति की दिशा तथा परिवर्तन की मात्रा स्पष्ट होती है, अधिकतम चक्र रेखा (Hinge Line) कहते हैं। इस रेखा के सहारे स्थित क्षेत्र अधिकतम चक्र क्षेत्र (Hinge Area) तथा वलन का नाक (Nose of the Fold) कहलाता है।
3. **अक्षीय तल** (Axial Plane)—यह ऐसी सतह होती है, जहाँ पर अधिकतम वक्र की समस्त रेखाएँ मिलती हैं। प्रत्येक अपनति या अभिनति के वलन की दोनों भुजाओं के मध्य के कोण आदि की आर्दिक रेखा अक्षीय तल कहलाती है।
4. **वलन की भुजाएँ** (Limbs of the Folds)—प्रत्येक वलन में दोनों ओर के भागों को वलन की भुजाएँ कहते हैं। यह दो अधिकतम चक्रों (Hing) के मध्य स्थित होती है।
5. **द्रोणी रेखा** (Trough Line)—यह प्रत्येक परत के सबसे निचले बिन्दुओं को जोड़ने वाली रेखा होती है।
6. **शीर्ष रेखा** (Crest Line)—किसी भी वलन के सर्वोच्च बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा को शीर्ष रेखा कहते हैं।
7. **अपनति एवं अभिनति** (Anticlines and Synclines)—वलन के दौरान ऊपर उठे उत्तल (Convex) प्रकार के ऊपरी भाग को अपनति तथा निम्नतम द्रोणीनुमा भाग को अभिनति कहते हैं।

वलनों के प्रकार (Types of Folds)

चट्टानों की प्रकृति के सम्पीड़न की अवस्था के आधार पर वलन निम्न प्रकार के होते हैं—

1. **सममित वलन** (Symmetrical Folds)—ये वलन साधारण प्रकार के होते हैं, जिनकी भुजाएँ (Limbs) दोनों ओर समान झुकी होती हैं, इसे सरल वलन भी कहते हैं। फ्रांस एवं स्विट्जरलैण्ड के जूरा पर्वत में सममित वलन मिलते हैं। आल्पस के संघट्ट पर्वत के उत्तर में जूरा वलन पाये जाते हैं इसीलिए सममित वलनों को अग्रभूमि वलन (Foreland Fold) भी कहते हैं। दक्षिणी-पश्चिमी

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न:- (2) भू-गतियाँ क्या है। भ्रंशन एवं वलन गतियों के परिणाम स्वरूप बनने वाली स्थलाकृतिक भू-आकृतियों की विवेचना कीजिए। (2015), (2020)

उत्तर:- पृथ्वी का धरातलीय भाग न तो सर्वत्र एक सा है और न ही सदैव एक सा स्थिर रहता है, भू-पटल पर विभिन्न भू-आकार बनते और बिगड़ते रहते है। पृथ्वी के उत्पत्ति काल से ही धरातल का रूपान्तरण होता रहा है।
- भू-पटल के प्राचीन उच्चतम पर्वत घिसकर पठार या मैदान बन गये है। तथा जहाँ कभी समुन्द्र था, वहाँ आज उच्चत्तम वलित पर्वत श्रेणियाँ है।

- धरातल पर होने वाले इन सभी परिवर्तनों के पीछे कुछ विशेष शक्तियाँ सक्रिय है, जिन्हें दो वर्गों में बाटा गया है।
(i) अन्तर्जात बल / गतियाँ
(ii) बहिर्जात बल / गतियाँ

भ्रंशन:- (Faulting):- वरसेस्टर के अनुसार:- "पृथ्वी के एक दरार को भ्रंश कहते हैं, जिसके सहारे एक भाग दूसरे भाग की अपेक्षा सरक जाता है।"

- जब भू-पटल पर किसी एक स्थान में सम्पीड़न होता है तो दूसरे स्थान में तनाव उत्पन्न होता है। सम्पीड़न के कारण भू-पटल वलन और

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

तनाव के कारण भ्रंशन की उत्पत्ति होती है,

होम्स के अनुसार :- " भ्रंश वह विभंजित धरातल है जिसके विरुध्द चट्टाने आपेक्षित रूप से ऊपर नीचे हो गयी है,

भ्रंशन द्वारा निर्मित स्थलरूप :-
(अंग भ्रंश में)

(i) भ्रंश तल :-
(ii) भ्रंश नति :-
(iii) आधार भित्ति -
(iv) शीर्ष भित्ति :-
(v) भ्रंश कगार :-
(vi) भ्रंश नति लम्ब -
(स्थल रूप) :-
(i) होर्स्ट (horst)
(ii) ग्राबेन (द्रोणिका) रिफ्ट घाटी (भ्रंश घाटी):
(iii) भ्रंश कंगार
(iv) भ्रंश कटक

(i) भ्रंश तल :- यह वह सतह है, जिसके सहारे चट्टानों का संचलन होने से स्थानान्तरण होता है, यह लम्बवत झुका हुआ, वक्राकार तथा क्षैतिज रूप में भी हो सकता है

(ii) भ्रंश नति :- भ्रंश तल तथा क्षैतिज तल के मध्य के कोण को भ्रंश नति कहते है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) आधार भित्ति :- भ्रंश तल को निचली दीवार को आधार भित्ति कहते है,

(4) शीर्ष भित्ति :- भ्रंश तल की ऊपरी दीवार को शीर्ष या ऊपरी भित्ति कहते है।

(5) भ्रंश कगार :- भ्रंश तल द्वारा बनी असमतल सतह रेखा को भ्रंश कगार कहते हैं

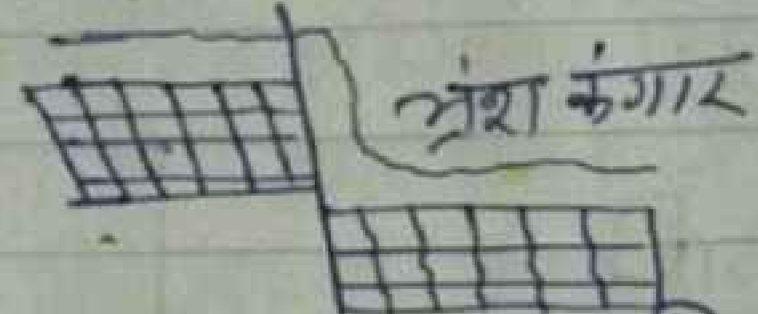

(6) भ्रंश नति लम्ब :- नति (DIP) के साथ समकोण बनाने वाली रेखा को नतिलम्ब कहते हैं। ये नति के साथ 90° का कोण बनाती है।

स्थल रूप :- (स्थलाकृतियाँ) :-

(1) हॉर्स्ट :- जब किसी क्षेत्र में दो सामान्य भ्रंश के मध्य का भाग ऊपर उठ जाता है। इस ऊंचे उठे भाग को ही हॉर्स्ट कहा जाता है। दो सामान्य भ्रंश के मध्य के भाग के नीचे धस जाने से निर्मित रिफ्ट घाटी के किनारों पर उठे भागों को भी ब्लाक पर्वत या हॉर्स्ट कहते है।

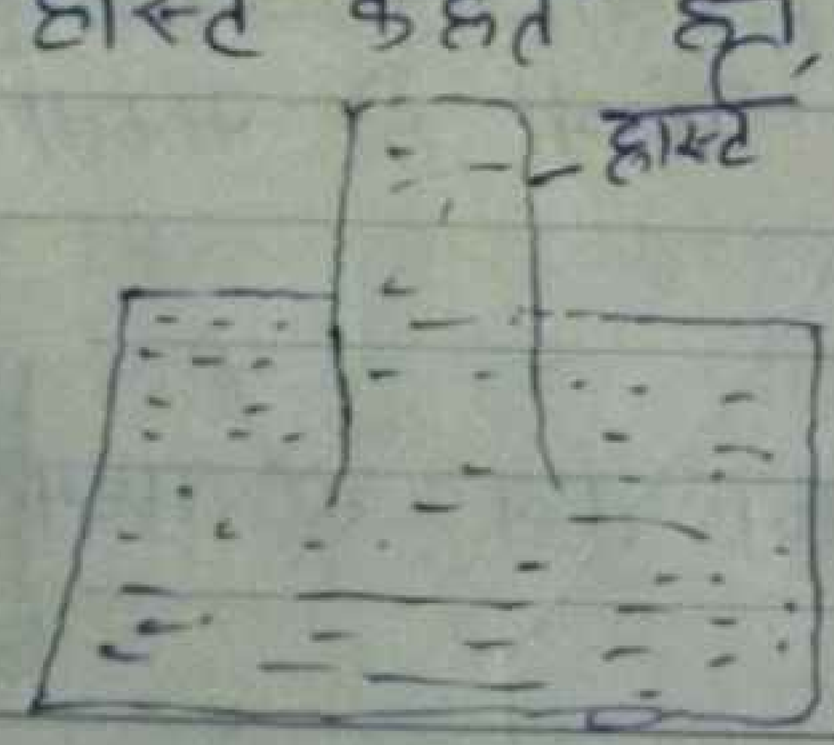

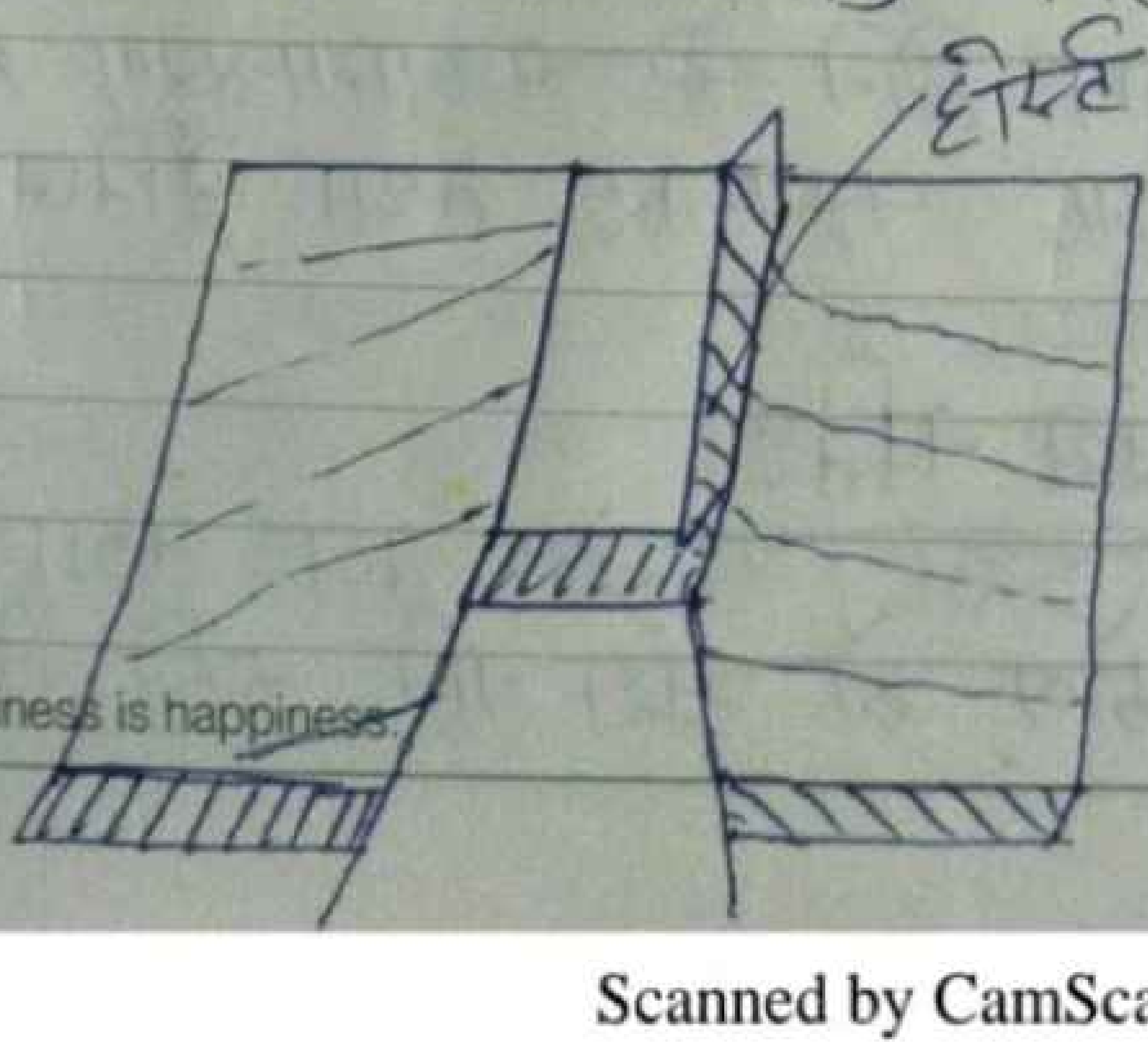

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) ग्रेबेन या रिफ्ट घाटी :- (द्रोणिका) :- किसी स्थान पर जो सामान्य भ्रंश कई किलोमीटर की लम्बाई में इस प्रकार पड़ते है कि उनके मध्य का भाग धँस जाता है और एक बेसिन या घाटी का निर्माण हो जाता है, इसे रिफ्ट घाटी कहते है

- रिफ्ट घाटी का निर्माण उस समय भी होता है जब मध्य का भाग स्थिर रहे और अगल-बगल वाले भाग ऊपर उठ जायें।, रिफ्ट घाटी लम्बी, संकरी, अत्यधिक गहरी होती है।
- राइन नदी की रिफ्ट घाटी लम्बी तथा संकरी एक प्रमुख रिफ्ट घाटी या ग्रेबेन है, जोर्डन नदी घाटी-की रिफ्ट घाटी

(3) भ्रंश कटक :- कभी-कभी तनाव द्वारा भू-पटल पर गहरे भ्रंश बन जाते है जब दो समानान्तर भ्रंशो का मध्यवर्ती भाग उद्गति द्वारा ऊपर उठ जाता है

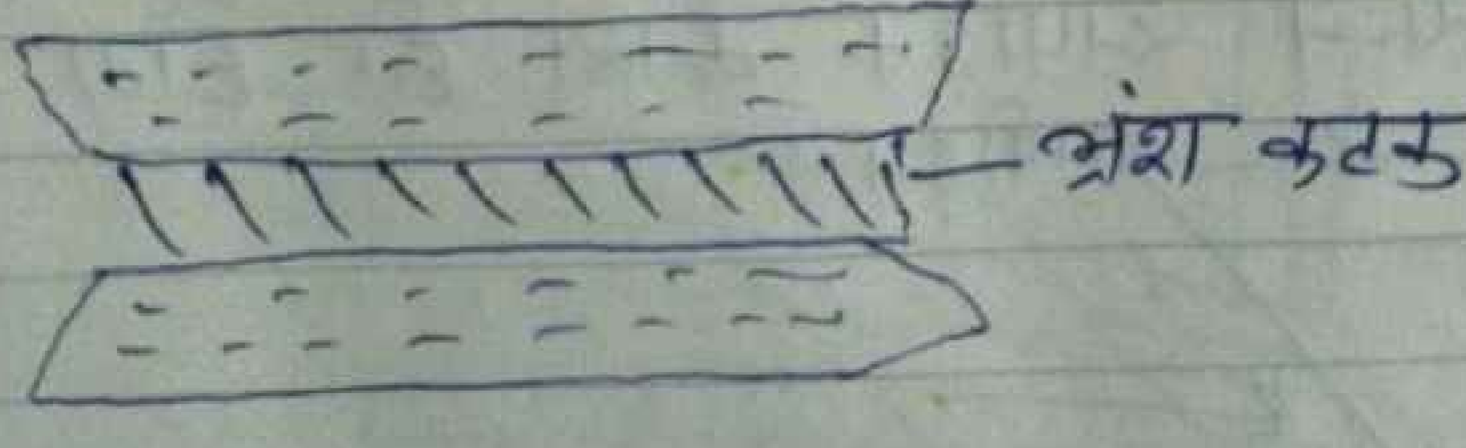

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भ्रंश के प्रकार :- (i) सामान्य भ्रंश :-
(ii) व्युत्क्रम भ्रंश :-
(iii) पार्श्वीय या नतिलम्बी भ्रंश -
(iv) सोपानी भ्रंश :-

(i) सामान्य भ्रंश :- (Normal fault) :- चट्टानों में दरार पड़ जाने के कारण उसके दोनो खण्ड जब विपरीत दिशाओं में सरक जाते हैं तो उसे 'सामान्य भ्रंश' कहते हैं। (तथा एक भाग कभी-कभी निचे खिसक जाता है)

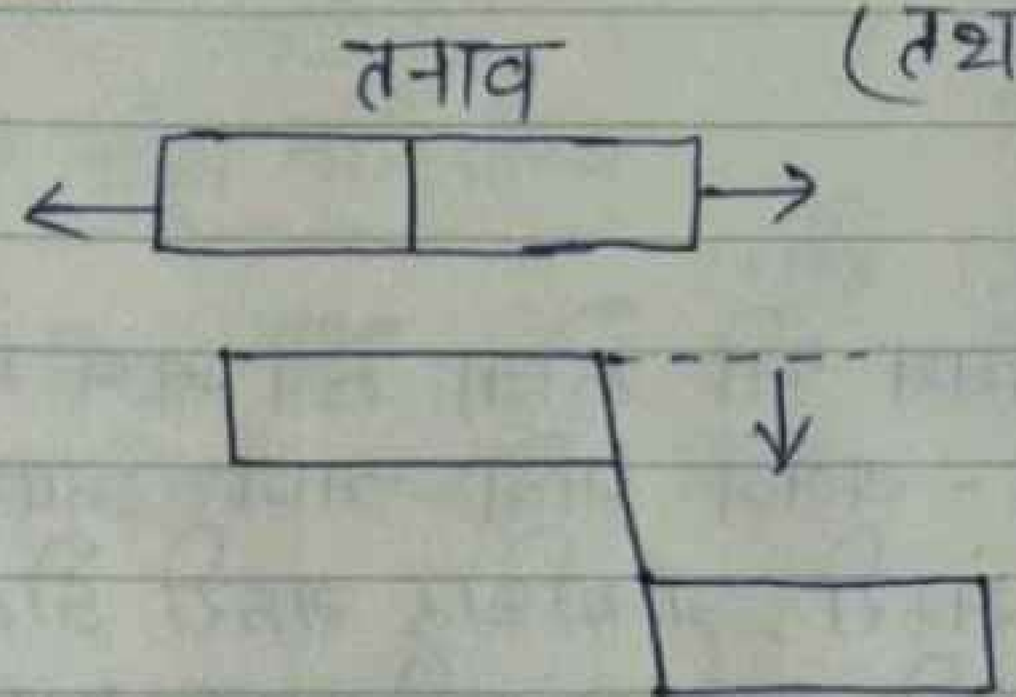

(सामान्य भ्रंश)

(ii) व्युत्क्रम भ्रंश (Reverse Fault) :- जब चट्टानों में दरार पड़ने से चट्टान के दोनों खण्ड आमने - सामने खिसकते हैं। तो निर्मित भ्रंश को व्युत्क्रम भ्रंश कहते है। इस तरह के भ्रंश मे चट्टान का खंड दूसरे पर चढ़ जाता है।

- व्युत्क्रम भ्रंश का निर्माण मुख्य रूप से क्षैतिज संचलन के द्वारा उत्पन्न संपीड़न द्वारा ही होता है।

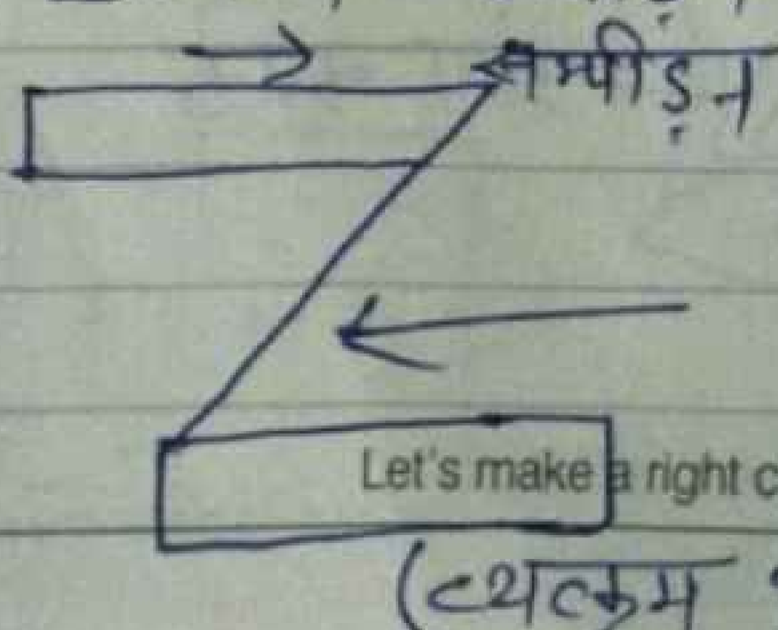

Let's make a right choice and use dustbin.

(व्युत्क्रम भ्रंश)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) पार्श्वीय या नतिलम्बी भ्रंश :- क्षैतिज दिशा में संचलन होने से जब भ्रंश तल के सहारे क्षैतिज गति होती है तो उसे पार्श्वीय भ्रंश या नतिलम्बी भ्रंश कहते हैं। इस तरह के भ्रंश में कगारों की रचना या तो होती नहीं है यदि होती है तो बहुत कम होती है

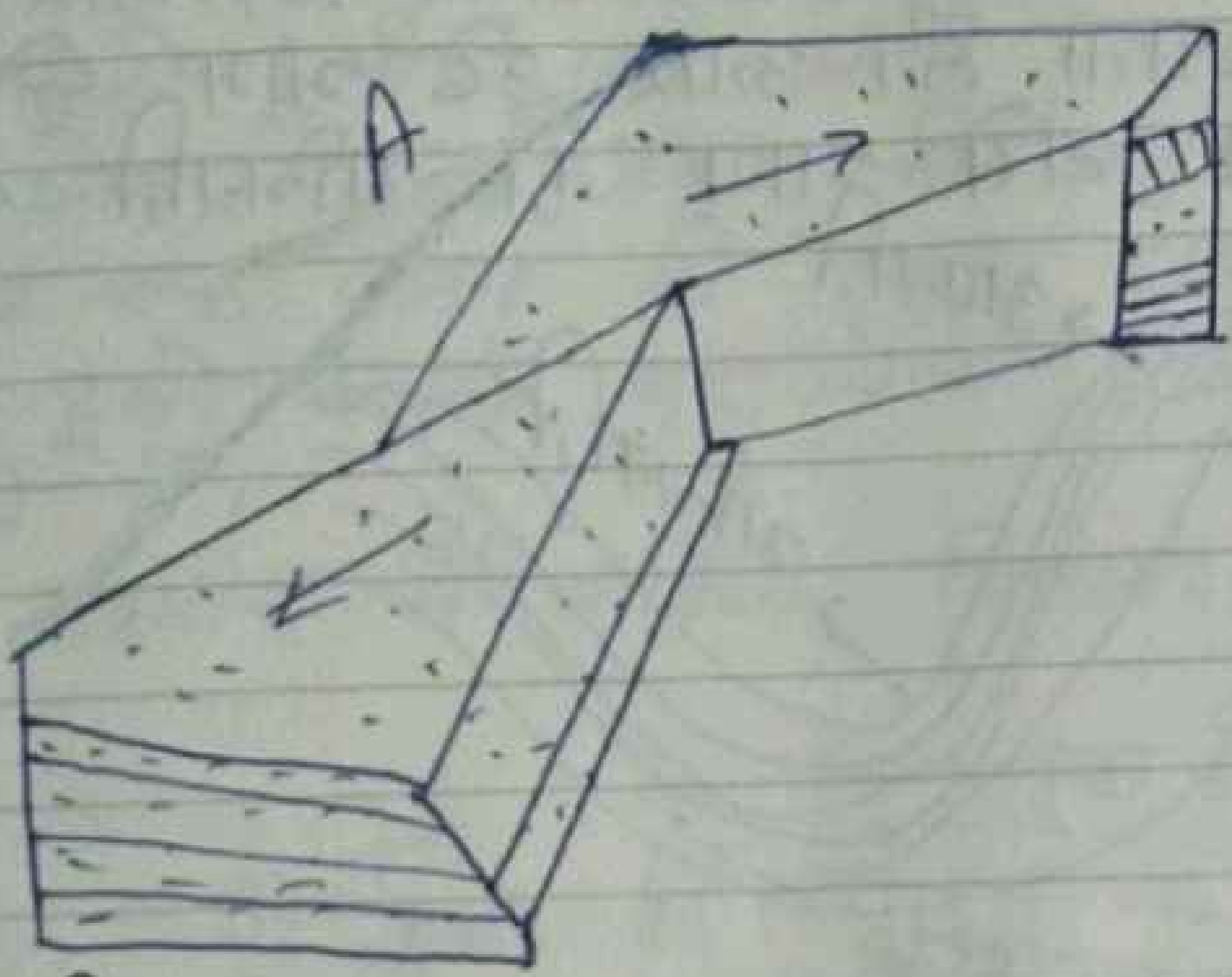

(4) सोपानी भ्रंश :- जब किसी भू-भाग में कई भ्रंशन का इस तरह निर्माण होता है कि सभी भ्रंश तल के ढाल एक ही दिशा में हो तो उसे 'सोपानी या सीढ़ीदार भ्रंश कहते हैं

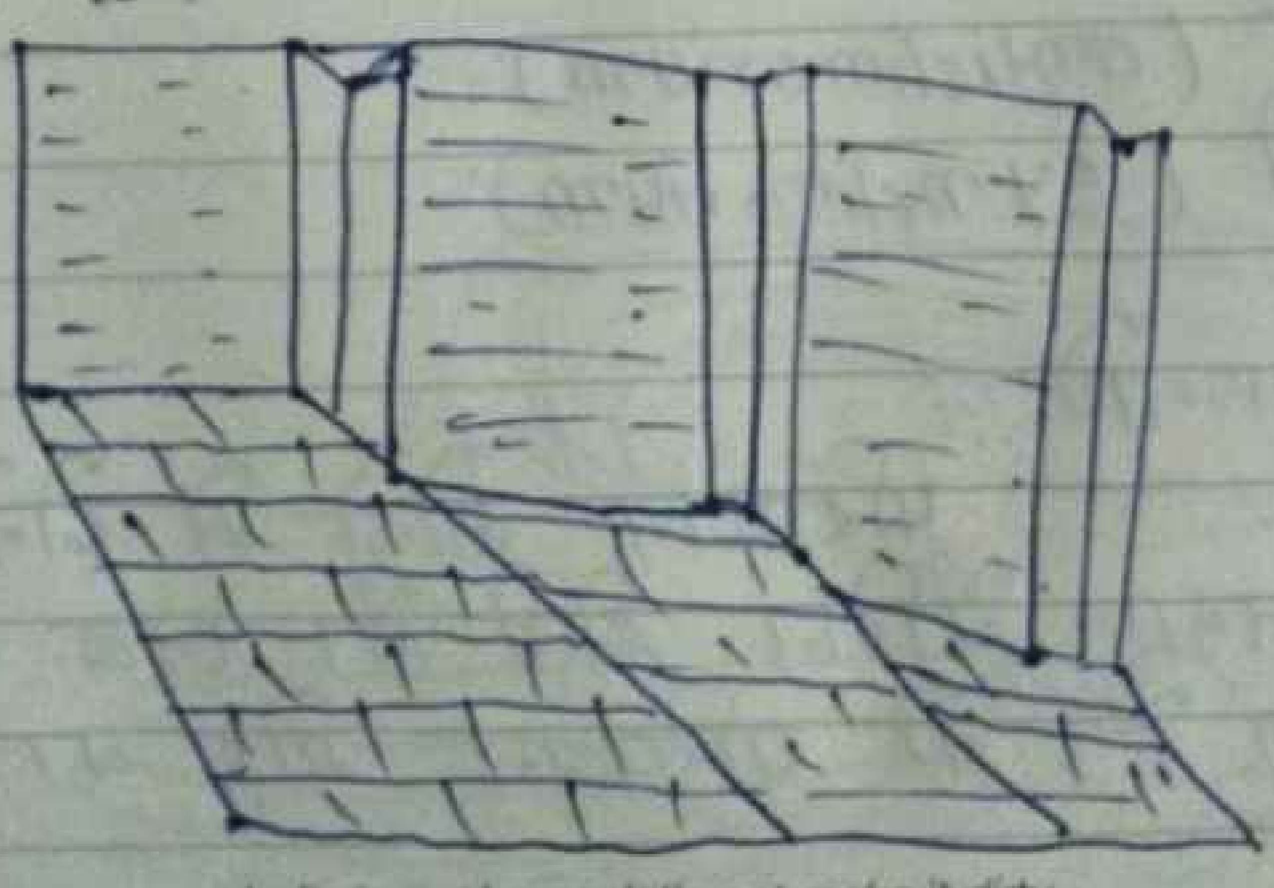

India is our home, let's not make it dirty.

(सोपानाकार भ्रंश)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(II) वलन :- (folding) :- पृथ्वी के अन्तर्जात बल द्वारा उत्पन्न क्षैतिज संचलन द्वारा जब भू-पटलीय चट्टानों में संपीड़न की स्थिति उत्पन्न होती है तो चट्टानों में लहरनुमा मोड़ पड़ जाते है इस तरह के मोड़ो को 'वलन' कहा जाता है।

- वलन में कुछ भाग ऊपर उठ जाता है और कुछ भाग नीचे धँस जाता है ऊपर उठे भाग को अपनति तथा नीचे धँसे भाग को अभिनति कहते है।

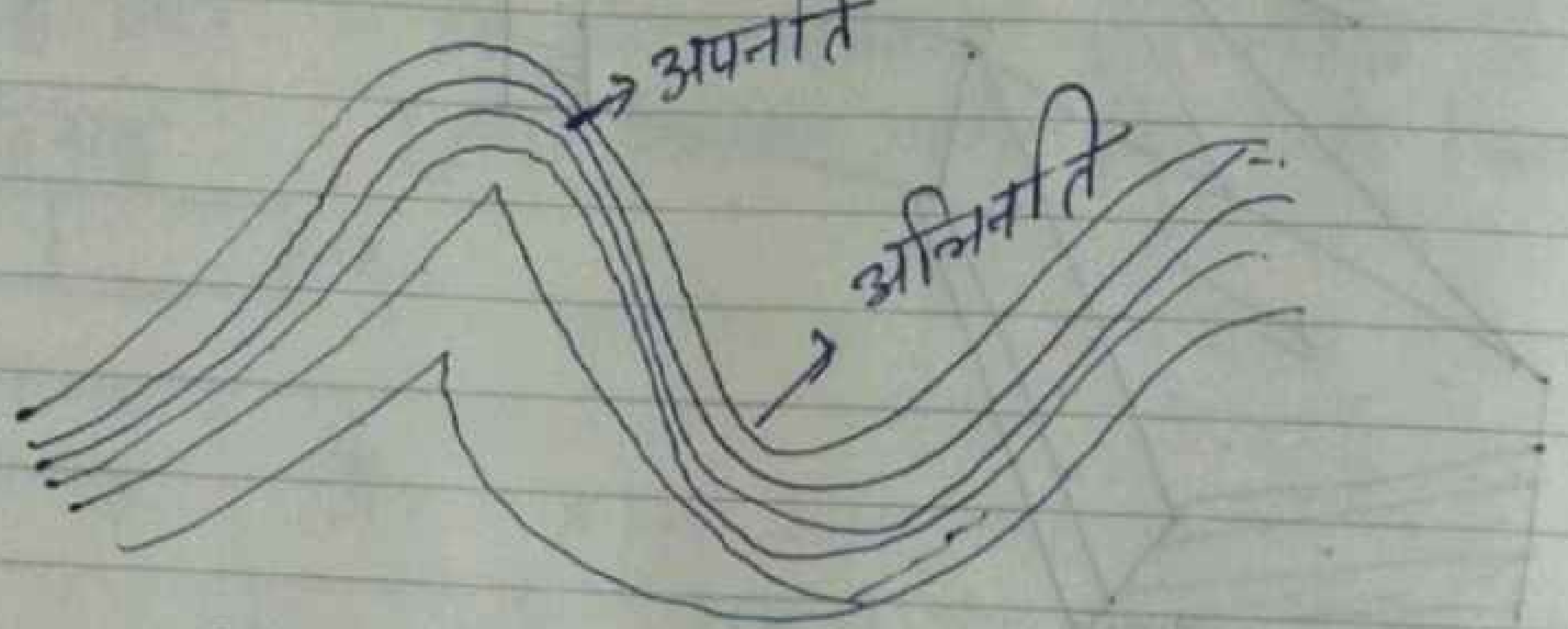

वलन से सम्बन्धित स्थलाकृतियाँ :-

(i) ग्रीवा खण्ड या नॉपे - (nappes) :-
(ii) अपनति (Anticlines) :
(iii) अभिनति (Syncline) :-
(iv) समपनति (anticlinorium) :-
(v) समभिनति (Synclinorium) :-

(i) ग्रीवाखण्ड या नॉपे :-

परिवलन मोड़ो में दोनों भुजायें समानान्तर तथा क्षैतिज होती है, जब संपीड़न अधिक होने लगता है तो परिवलन मोड़ का एक खण्ड

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

खिसक कर दूसरे खण्ड पर चढ़ जाता है। ~~[illegible]~~ जब संपीड़न अधिक तीव्र हो जाता है तो वलन की भुजा इतनी अधिक मुड़ जाती है कि वह वलन के अक्ष पर टूट जाती है तथा निचली परतें ऊपर की ओर आ जाती है। इस तरह वलन की संरचना उल्टी हो जाती है

- क्षैतिज संचलन तथा संपीड़न के जारी रहने पर वलन की टूटी हुयी भुजा अपने स्थान से कई किलोमीटर दूर जाकर अन्य प्रकार की चट्टान पर चढ़ जाती है

जब एक वलन की भुजा उपर्युक्त दशाओं में टूट कर दूसरे स्थान पर चली जाती है उसे ग्रीवाखण्ड कहते हैं

Eg: कश्मीर में वाड़िया, शिमला क्षेत्र में पिलीग्रिम,

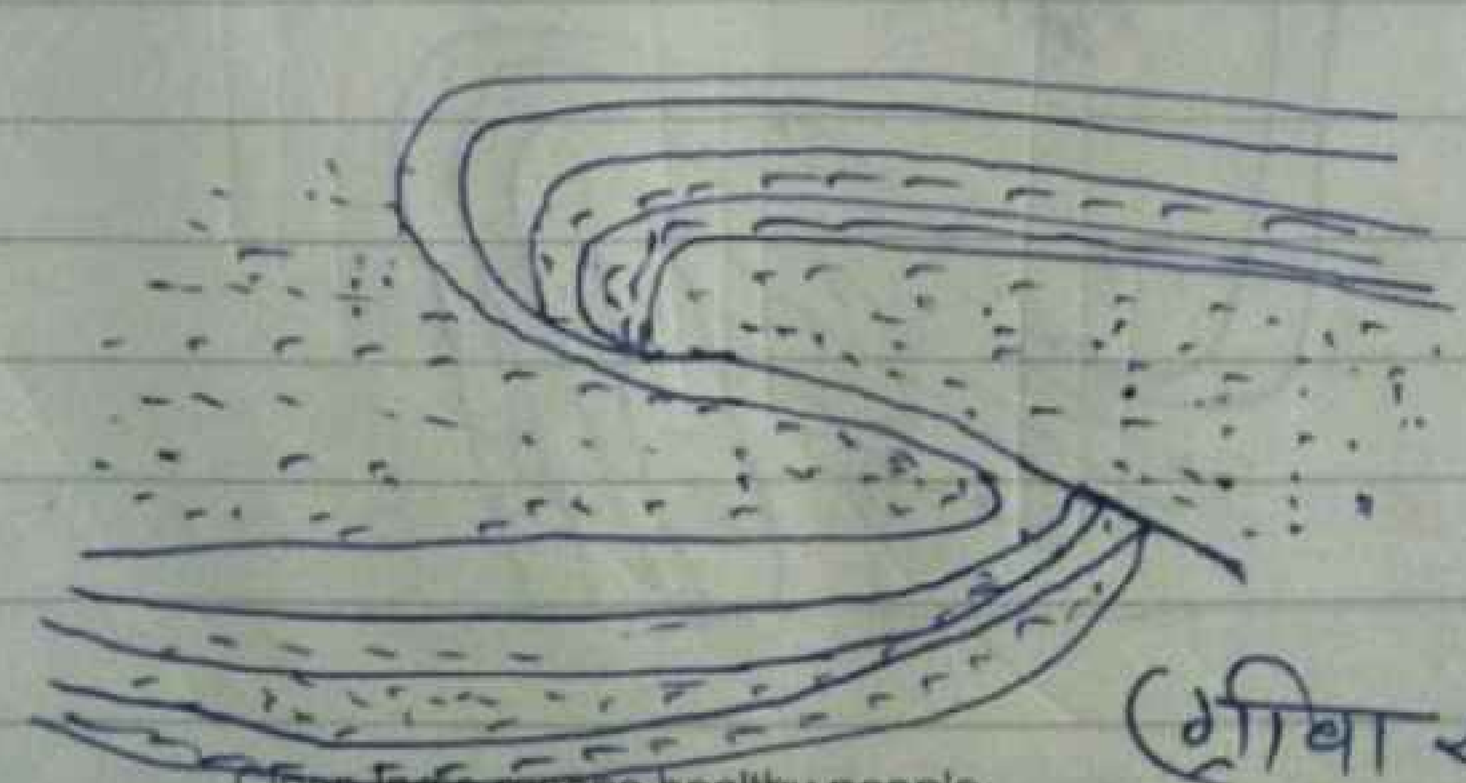

(ग्रीवा खण्ड)

Clean India means healthy people.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(ii) अपनति (anticlines) :- अन्तर्जात बल के कारण क्षैतिज संचलन द्वारा चट्टानों के स्तरों में सिकुड़न के कारण उत्पन्न वलन का जो भाग ऊपर उठ जाता है, उसे 'अपनति' कहते हैं

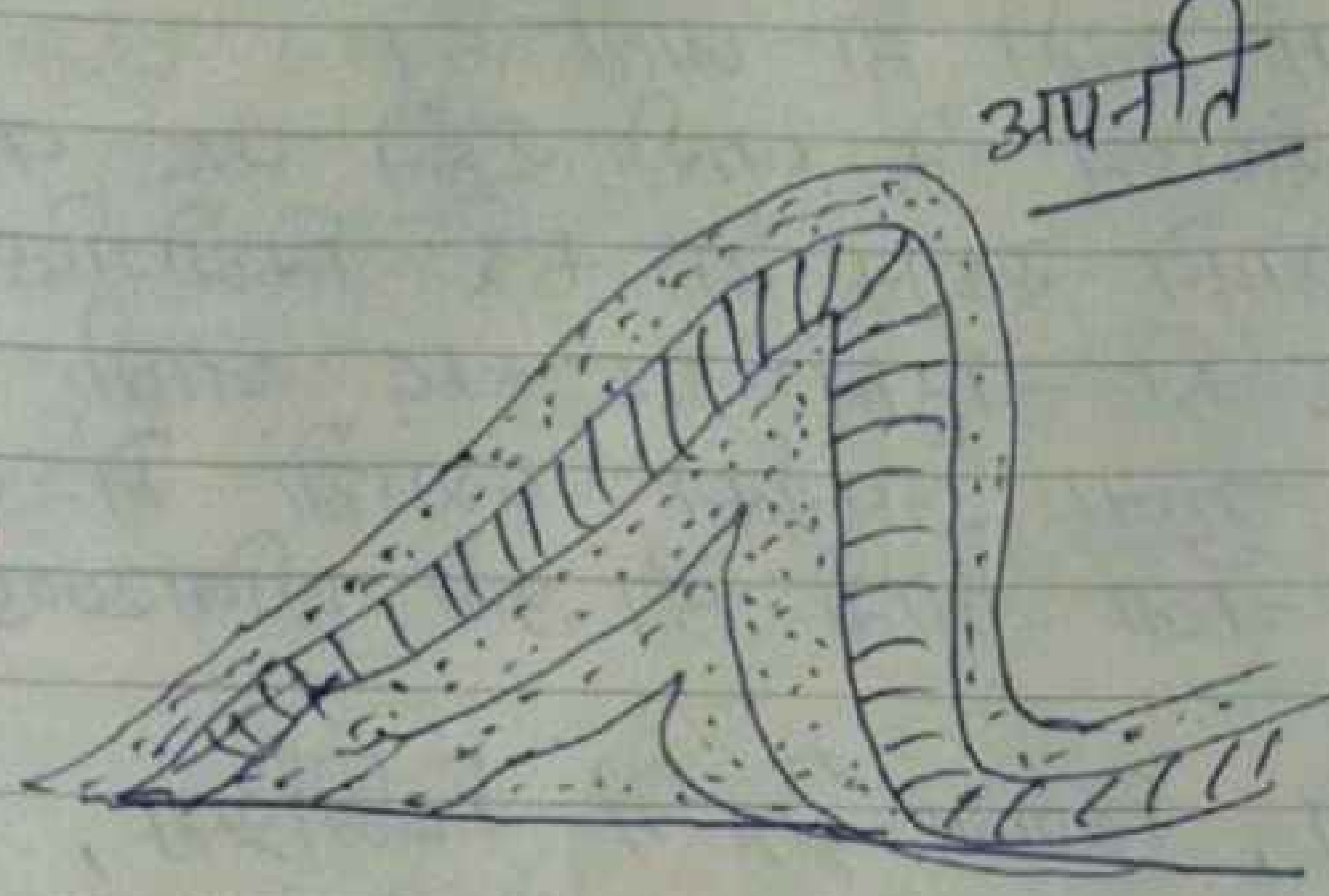

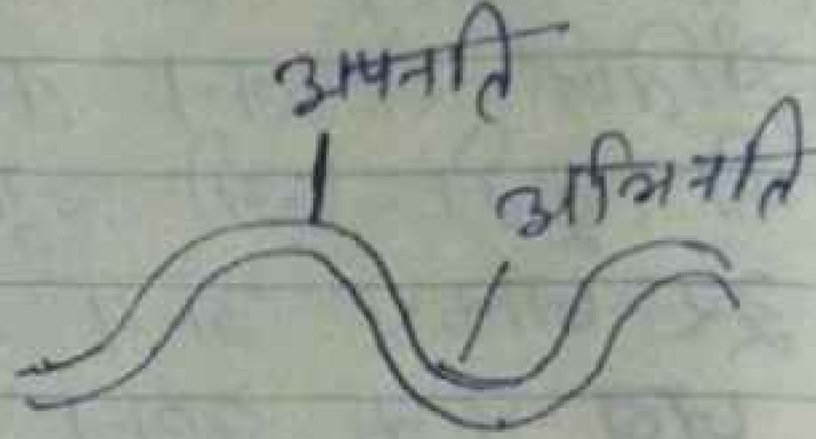

(iii) अभिनति :- (syncline) :- क्षैतिज संचलन द्वारा उत्पन्न वलन का जो भाग नीचे मुड़कर धंस जाता है उसे अभिनति कहते हैं

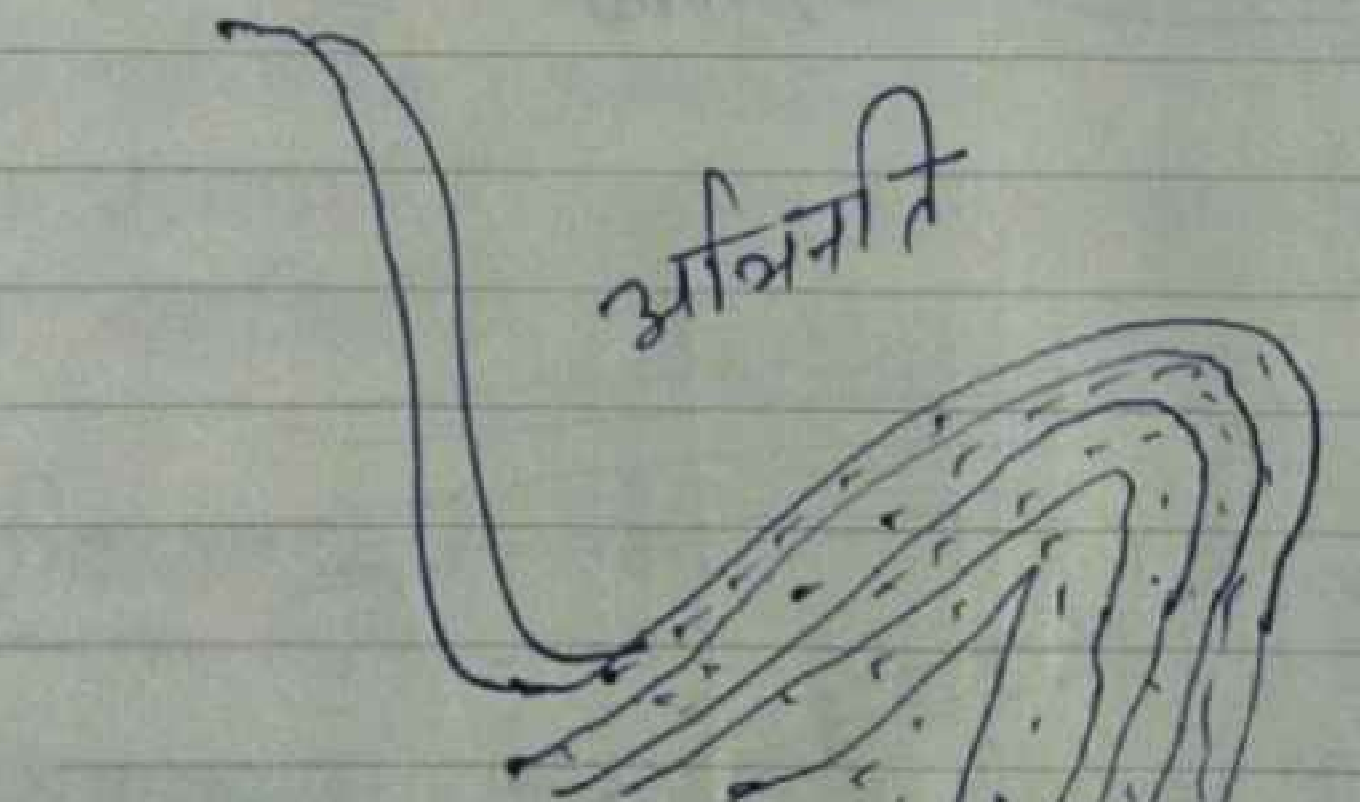

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(iv) समपनति :- वलित पर्वतीय क्षेत्रों में समपनति (सम + अपनति) जब एक वृहद अपनति के अन्तर्गत कई छोटी - छोटी अपनतियाँ ~~मि~~ और अभिनतियाँ मिलती है तो उस आकृति को समपनति कहा जाता है

कारण:- विभिन्न स्थानों पर संपीडन में भिन्नता के कारण इस तरह की आकृति का निर्माण होता है इसे पंखा वलन भी कहते है

(v) समभिनति :- असमान संपीड़न के कारण जब एक वृहद अभिनति के अन्तर्गत कई छोटी - छोटी अपनतियाँ तथा अभिनतियाँ बन जाती है तो उसे अभिनति को समभिनति कहते है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

वलन के प्रकार :- (Types of folds):-

(i) सममित वलन -
(ii) असमित वलन -
(iii) एक दिग्नत वलन -
(iv) समनत वलन -
(v) परिवलित वलन -
(vi) प्रतिवलन -
(vii) अवनमन वलन -
(viii) पंखा वलन -
(ix) खुला वलन -
(x) बन्द वलन :-

(i) सममित वलन :-

इस वलन की दोनो भुजाओं का झुकाव बराबर होता है जिसे खुला वलन भी कहते है।

(ii) असममित वलन :-

इस तरह के वलन की दोनों भुजाओं में असमानता होती है एक अधिक झुकाव वाली भुजा व एक छोटी झुकाव वाली भुजा होती है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) **एकदिग्नत वलन:-** जब किसी वलन की एक भुजा का झुकाव साधारण तथा ढाल क्रमशः होता है और दूसरी भुजा का झुकाव समकोण बनाते हुए होता है तथा ढाल एकदम खड़ा होता है तो उसे एकनति वलन कहते है।
इसमें क्षैतिज व लम्बवत संचलन के कारण होता है।

(4) **समनत वलन:-** दोनों दिशाओं से क्षैतिज संचलन के कारण समान संपीडन के कारण वलन की दोनों भुजाए समान रूप से झुक जाती है तथा दोनों एक दूसरे के इतने समीप आ जाती हैं कि दोनो भुजायें समानान्तर हो जाती हैं। इस तरह के समानान्तर भुजा वाले वलन को 'समनत वलन' कहते है।

(5) **परिवलित (शयान) वलन:-** जब क्षैतिज संचलन अत्यधिक तीव्र होता है तो अत्यधिक संपीडन के कारण इतना अधिक वलन हो जाता है कि वलन की दोनों भुजाएं परस्पर समानान्तर होती हुई क्षैतिज दिशा में हो जाती है।

(6) **प्रतिवलन:-** अत्यधिक संपीडन के कारण जब वलन की एक भुजा दूसरे पर उलट जाती है तो उसे प्रतिवलन कहते है।

Every litter bit hurts our mother nature.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(7) अवनमन वलन :- जब किसी वलन की अक्ष (Axis) क्षैतिज तल के समानान्तर न होकर उसके साथ कोण बनाती है तो उसे 'अवनमन वलन' कहते है।

(8) पंखा वलन :- जब एक वृहद वलन में अपनति तथा अभिनति में कई छोटी - छोटी अपनतियाँ व अभिनतियाँ मिलती है तो उसे पंखा वलन कहते है।

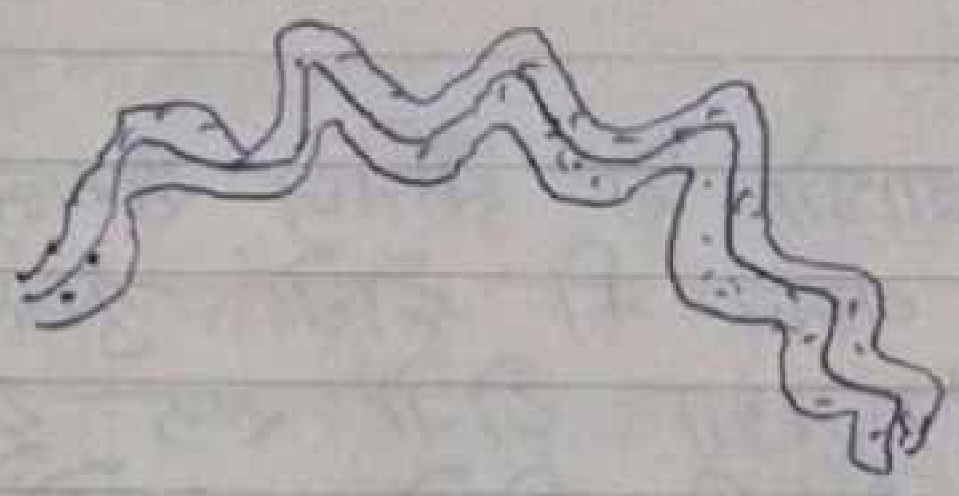

(9) खुला वलन :- जब किसी वलन की दो भुजाओं के मध्य का कोण 90° से अधिक परन्तु 180° से कम होता है तो उस वलन को 'खुला वलन' कहते है।

(10) बन्द वलन :- जब किसी वलन की दो भुजाओं के मध्य का कोण न्यून कोण होता है तो उस वलन को 'बन्द वलन' कहते है। इसका निर्माण अत्यधिक संपीड़न के कारण होता है।

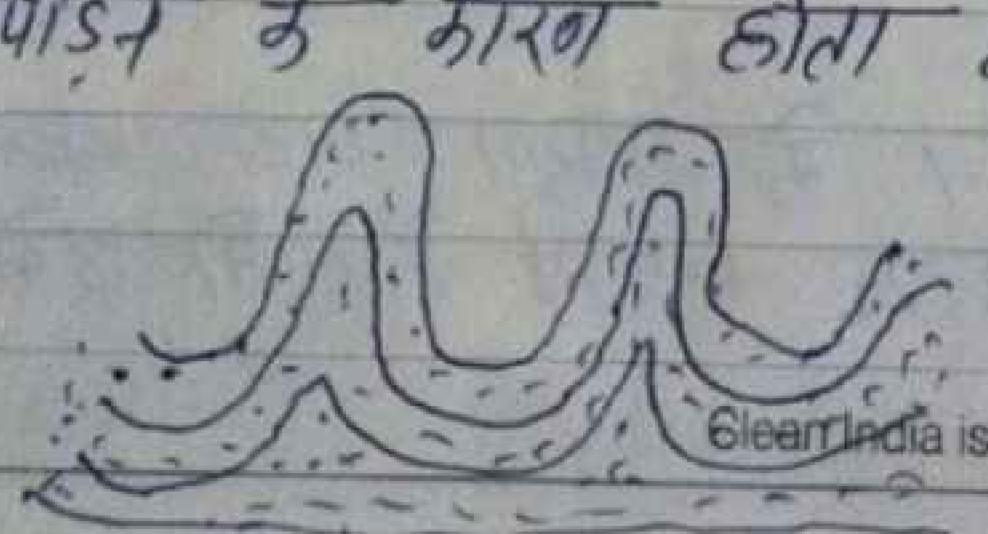

(बन्द वलन)

Clean India is our duty and right.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic-(i) Concept of Isostasy: views of Airy, Pratt

(संतुलन की संकल्पना : सर जार्ज एयरी, प्राट के अनुसार)

प्रश्न :- (1) 'समस्थिति' संक्षिप्त टिप्पणी लिखें (2022)

प्रश्न :- (2) भू-संतुलन के सिद्धान्त को परिभाषित कीजिए। सर जार्ज एयरी तथा प्राट के विचारों का भू-संतुलन के सिद्धान्त एक तुलानात्मक विवरण प्रस्तुत कीजिए। (2018)

प्रश्न (3) समस्थिति से क्या तात्पर्य है, प्रॉट एवं ऐयरी के समस्थिति सिद्धान्त को समझाइये। (2016)

उत्तर :- भू-सन्तुलन (Isostasy) 'आइसोस्टेसी' शब्द ग्रीक शब्द 'आइसोस्टेसियस' से लिया गया है।

भू-सन्तुलन (Isostasy) शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अमरीकी भू-वैज्ञानिक - सी. ई. डटन ने 1889 में किया

इन्होंने (डटन) :- बताया कि : "भू-पटल में दबाव की समानता के कारण पाई जाने वाली स्थिरता या सन्तुलन को ही समस्थिति कहते है।"

- पृथ्वी तल से ऊपर उठे भागों तथा नीचे धँसे भागों में सन्तुलन पाया जाता है। ऊँचे उठे भाग का घनत्व कम है तथा नीचे धँसे भागों का घनत्व अधिक। सन्तुलन की इस व्यवस्था में सभी का भार एक रेखा के सहारे समान होगा, जिसे समस्थिति तल या समदाब तल के रूप में जाना जा सकता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

परिभाषा :- आर्थर होम्स के अनुसार - " समस्थिति सन्तुलन की वह दशा है, जो भू-पटल पर स्थित विशाल पर्वतमालाओं, पठारों तथा मैदानों के मध्य पाई जाती है।"

एल. यू. डिसिटर :- के अनुसार

" समस्थिति से अभिप्राय, महाद्वीप, महासागर, पर्वत, पठार, तथा मैदान की परत भू-पटल के विभिन्न घटकों एवं नीचे धँसे भागों के मध्य स्थित सन्तुलन की दशा से है, जो आन्तरिक भाग में क्षतिपूर्ति तल के सहारे स्थित है।"

सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त की उत्पत्ति का श्रेय भारत की मुख्य भूमि को दिया जाता है। सन् 1859 में गंगा - सिन्धु के मैदान में अक्षांशों के निर्धारण के लिए भू-सर्वेक्षण ~~कार्य~~ी के मुख्य निर्देशक सर जार्ज एवरेस्ट के निर्देशन मे हो रहा था। त्रिभुजीकरण विधि द्वारा। इस कार्य हेतु देश के कुछ क्षेत्रों को आधार बिन्दु बनाया गया था। जिनके अक्षांश एवं देशान्तर निर्धारित करने थे। इन क्षेत्रों में अक्षांश का निर्धारण खगोलीय निरीक्षण तथा त्रिभुजीकरण विधियों द्वारा किया गया। कल्याण तथा कल्याणपुर के अक्षांशीय अन्तर दोनों विधियों में समान नहीं मिले तथा दोनो मापों में 5.236" का अन्तर आया। कल्याण हिमालय से मात्र 96 Km दूर स्थित था।

अतः दोनों मापों में अन्तर का कारण स्पष्ट करते हुए सर जार्ज एयरी महोदय ने बताया कि यह क्षेत्र हिमालय के समीप स्थित है। जिस कारण

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

पेण्डूलम हिमालय की आकर्षण शक्ति से प्रभावित होता है.

प्राट महोदय ने बताया कि हिमालय के आकर्षण के कारण हुआ लेकिन हिमालय पर्वत कम घनत्व वाले सियाल पदार्थ से निर्मित है, जिसका घनत्व 2.75 माना गया है यदि इस घनत्व के आधार पर गणना करते हैं तो यह अन्तर 15.885 होना चाहिए था, अर्थात हिमालय पेण्डुलम को और अधिक आकर्षित करना चाहिए, लेकिन हिमालय अपनी आकर्षण शक्ति का पूरा प्रभाव स्पष्ट नहीं कर पा रहा है।

एयरी एवं प्राट ने इस समस्या के निराकरण के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए:-

(1) हिमालय में आधार शैलों के ऊपर स्थित पदार्थ का सन्तुलन निम्नवर्ती पदार्थों से होता है जिनका घनत्व कम है, इस आधार पर कह सकते हैं कि हिमालय का भार कम है जिस कारण ही इसकी गुरुत्वाकर्षण शक्ति कम है

(2) हिमालय का आन्तरिक भाग भारी न होकर खोखला है जिसके अन्दर चट्टानी संरचना न होकर बुलबुले के समान रचनात्मक कण है जिनका भार तथा घनत्व दोनो कम है जिस कारण गुरुत्वाकर्षण शक्ति कम हो गई।, मिथ्या प्रतीत होता है

(3) जिन चट्टानों से हिमालय की रचना हुई है उनका घनत्व स्वयं कम होगा।, जिससे इस पर्वतीय खण्ड का भार एवं आकर्षण दोनों में कमी होगी।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(4) प्राट एवं एयरी ने पृथ्वी के अन्दर एक ऐसे तल की कल्पना की जिसके नीचे चट्टानों का घनत्व समान रहता है तथा ऊपरी भाग में विभिन्नता पाई जाती है। इस आधार पर यह कल्पना की गई कि "जितना उच्च भाग कम घनत्व तथा जितना छोटा भाग उसका उच्च घनत्व होगा"

"Bigger the column, lesser the density, and smaller the column greater the density".

(I) सर जार्ज एयरी की संकल्पना:- (1801-1892) अमरिकी विद्वान

- इनके अनुसार हिमालय का आन्तरिक भाग खोखला नहीं हो सकता है। इन्होंने बताया कि कम घनत्व वाली भू-पपर्टी संचन शैलों वाले अधःस्तर के ऊपर तैरता है और इस आधार पर हिमालय भारी मैग्मा में तैर रहा है। एयरी की संकल्पना का आधार प्लवनशीलता का सिद्धान्त भी रहा है।

इनके अनुसार भू-पटल पर उपस्थित सभी प्रकार के उच्चावच स्थिर एवं संन्तुलित अवस्था में स्थित हैं। जिसके दो कारण हैं

(i) सभी उच्चावच समान घनत्व की चट्टानों से निर्मित है परन्तु सभी का आकार भिन्न-2 होने के कारण भार में भिन्नता पाई जाती है,

(ii) सभी प्रकार के उच्चावच अपने आकार के अनुसार भू-पटल के निचे भिन्न-2 गहराई में उपस्थित है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

अधिक विशाल उच्चावच को सन्तुलित अवस्था प्राप्त करने के लिए अधिक गहराई धारण करनी पड़ेगी, इसी कारण विशाल पर्वत सर्वाधिक गहराई को धारण करते है। जबकि समुन्द्र की गहराई कम होती है,

उदा॰ (i) जिस प्रकार एक नाव पानी में तैरती है। उसका अधिकांश भाग जल में डुबा रहता है, उसी प्रकार हिमालय भी अधिक घनत्व वाले मैग्मा में तैर रहा है।

(2) जिस प्रकार बर्फ का टुकड़ा जब जल में तैरता है। 1/9 भाग जल में (यानी 1 भाग जल के ऊपर और 9 भाग जल में रहता है।)

- यदि तैराव सिद्धान्त को एयरी के सिद्धान्त में प्रयुक्त किया जाये तो हिमालय जितना ऊपर है। उसका नौ गुना नीचे की तरफ होना चाहिए।

8848 M ↑ ⇒ 9 × 8848 = 79,632 मी ↓

अत: घनत्व में समानता परन्तु गहराई में भिन्नता भू-संन्तुलन सिद्धान्त का प्रमुख आधार है,

→ एयरी ने कहा ' विभिन्न स्तम्भों का घनत्व बराबर होता है। तथा उनकी गहराई में परिवर्तन होता है। महाद्वीपीय भाग एक ही प्रकार के घनत्व वाले शैलों का बना है। परन्तु उसके विभिन्न भागों की गहराई में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है।

एयरी ने बताया जैसे - लकड़ी के विभिन्न

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

आकार तथा लम्बाई वाले टुकड़े लिए तथा उन्हें जल से भरे बेसिन में डुबो दिया ये टुकड़े अपने आकार के अनुसार भिन्न-2 गहराई तक डूबते गये।

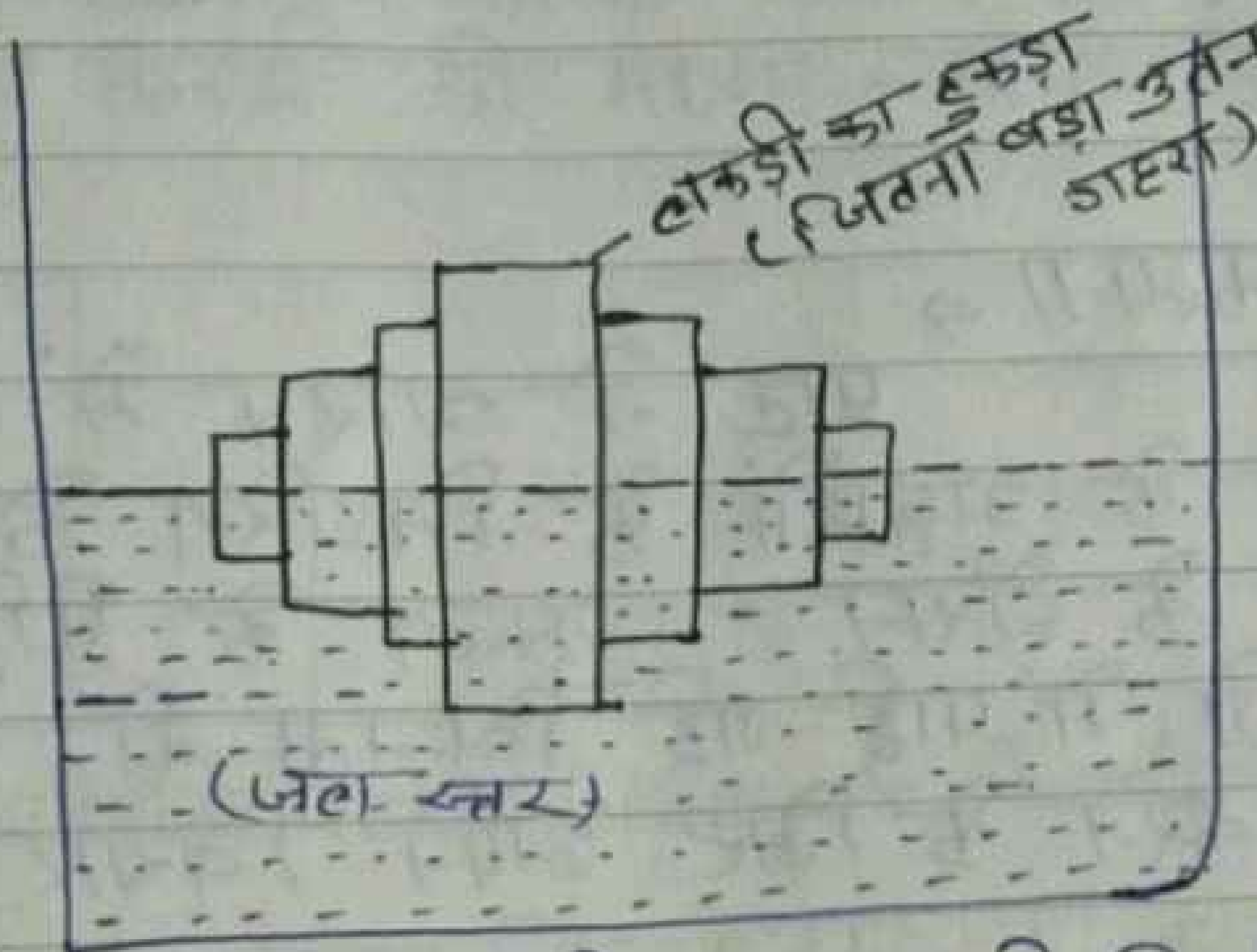

(एयरी सन्तुलन की स्थिति)

- इस प्रकार ऊँचे उठे भाग तथा निचले भाग एक साथ सन्तुलित होकर खड़े रहते हैं। प्रत्येक भाग संतुलन तल या सन्तुलन रेखा पर बराबर भार रखते हैं।

* यद्यपि वर्तमान समय में एयरी के मत को सबसे अधिक समर्थन प्राप्त है लेकिन इसमें भी कुछ दोष है, निम्न हैं।

(i) हिमालय जैसे पर्वत भू-पृष्ठ के निचे $9 \times 8848 = 79,632$ मी. (नौ गुना) तक गहराई में अवस्थित है। पर नीचे जाने पर 32 मीटर ↓ 1°C तापमान बढ़ जाता है, इस प्रकार हिमालय की लम्बी जड़ अत्यधिक ताप पर पिघल जानी चाहिए।

India is our home, let's not make it dirty.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) भू-पटल पर सभी उच्चावच समान घनत्व की चट्टानों से निर्मित नहि है। क्योंकि पर्वत, पठार, मैदानो का निर्माण ग्रेनाइट चट्टानों से हुआ है, जबकि महासागरीय चट्टानों का निर्माण बेसाल्ट चट्टानों से हुआ है,

(II) प्रॉट की संकल्पना ⇒

प्राट ने भारत में सिन्धु नदी के मैदान के अक्षांशों के निर्धारण के लिए भू-सर्वेक्षण के दौरान ∴ गुरुत्व के प्रेक्षित और अवकलित आकड़ों में पाई गई भिन्नता की समस्या का निराकरण करने के लिए अपने विचार प्रस्तुत किये।

- प्राट ने हिमालय की चट्टानों तथा समीपवर्ती मैदानों की चट्टानों के अध्ययन के आधार पर बताया कि "पर्वतों का घनत्व पठारों से कम, पठारों का घनत्व मैदानों से कम, तथा मैदानों का घनत्व समुद्री तली से कम होता है।"

अर्थात ऊँचाई एवं घनत्व में उल्टा अनुपात होता है। प्राट के अनुसार एक क्षतिपूर्ति तल होता है। जिसके ऊपर घनत्व में अन्तर पाया जाता है तथा नीचे समान घनत्व होता है।

एक स्तम्भ में घनत्व नहीं बदलता है, परन्तु एक स्तम्भ से दूसरे स्तम्भ में घनत्व में अन्तर पाया जाता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- इस प्रकार प्राट ने अपने प्रमुख मत :- समान गहराई किन्तु भिन्न घनत्व वाले स्तम्भ का प्रतिपादन किया साथ हि • क्षतिपूर्ति रेखा की उपस्थिति को भी बताया इस क्षतिपूर्ति रेखा के सहारे समान धरातलीय क्षेत्रों के नीचे पदार्थ की मात्रा समान होनी चाहिए।

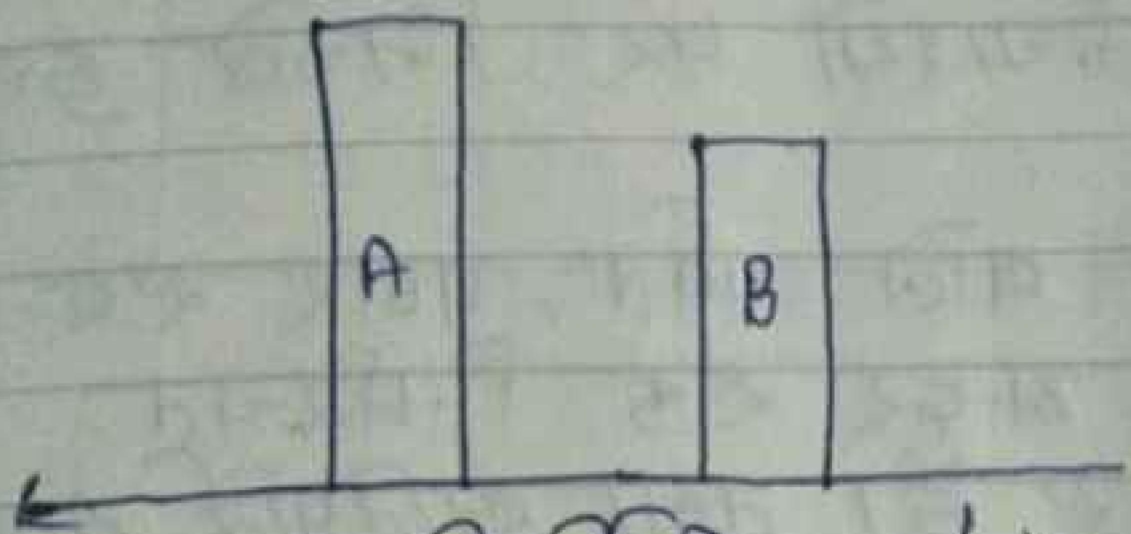

(क्षतिपूर्ति रेखा Lime ob Compemsatiom)

- इस प्रकार प्राट ने इस मत का प्रतिपादन किया कि ऊँचाई तथा घनत्व का उल्टा अनुपात होगा :- ऊँचा स्तम्भ, कम घनत्व, नीचा स्तम्भ - अधिक घनत्व "
प्राट के अनुसार घनत्व में अन्तर केवल स्थलमण्डल में होता है पाइरोस्फीयर में नही होता है।

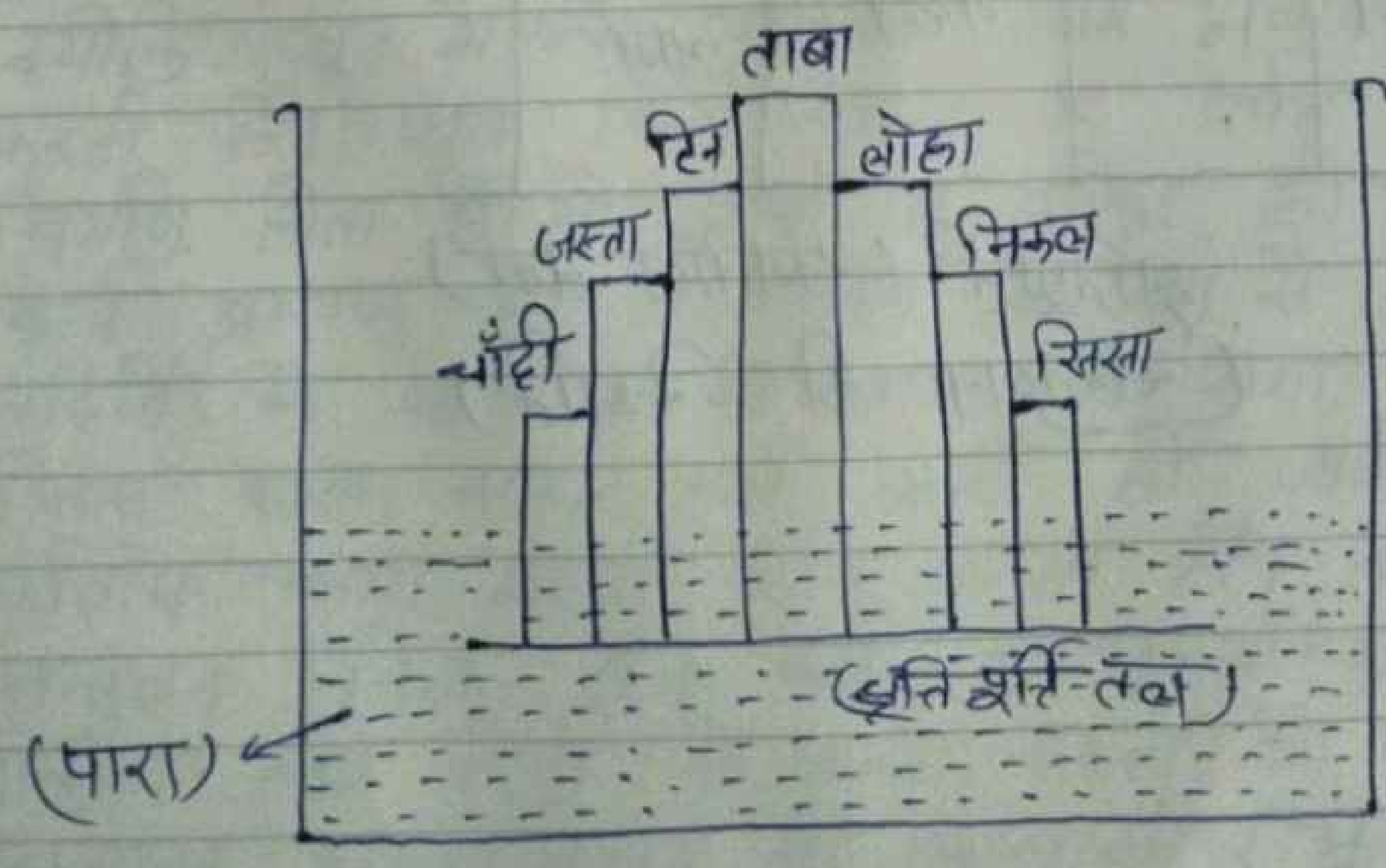

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्राट ने विभिन्न प्रकार एवं घनत्व की धातुओं-लोहा, सीसा, ताबा, जस्ता, टिन चाँदी आदि के टुकड़ों को पारे से भरे बर्तन में तैराया तथा बताया कि उनका भार इसलिए एक समान गहराई तक पारे में डूबे हुए हैं लेकिन जस्ते का घनत्व कम (7.1) तथा सीसे का घनत्व (11.5) अधिक होने के कारण पारे की सतह से भिन्न ऊँचाइयों पर निकले हुए हैं

- इस प्रकार भिन्न घनत्व वाले पर्वत, पठार एवं मैदान, आदि भू-भाग के अन्दर एक निश्चित समान गहराई तक धँसे हुए हैं तथा क्षतिपूर्ति तल पर समान भार रखते हैं इसी प्रकार भू-तल पर अलग-अलग ऊचाईयों पर निकले हुये हैं

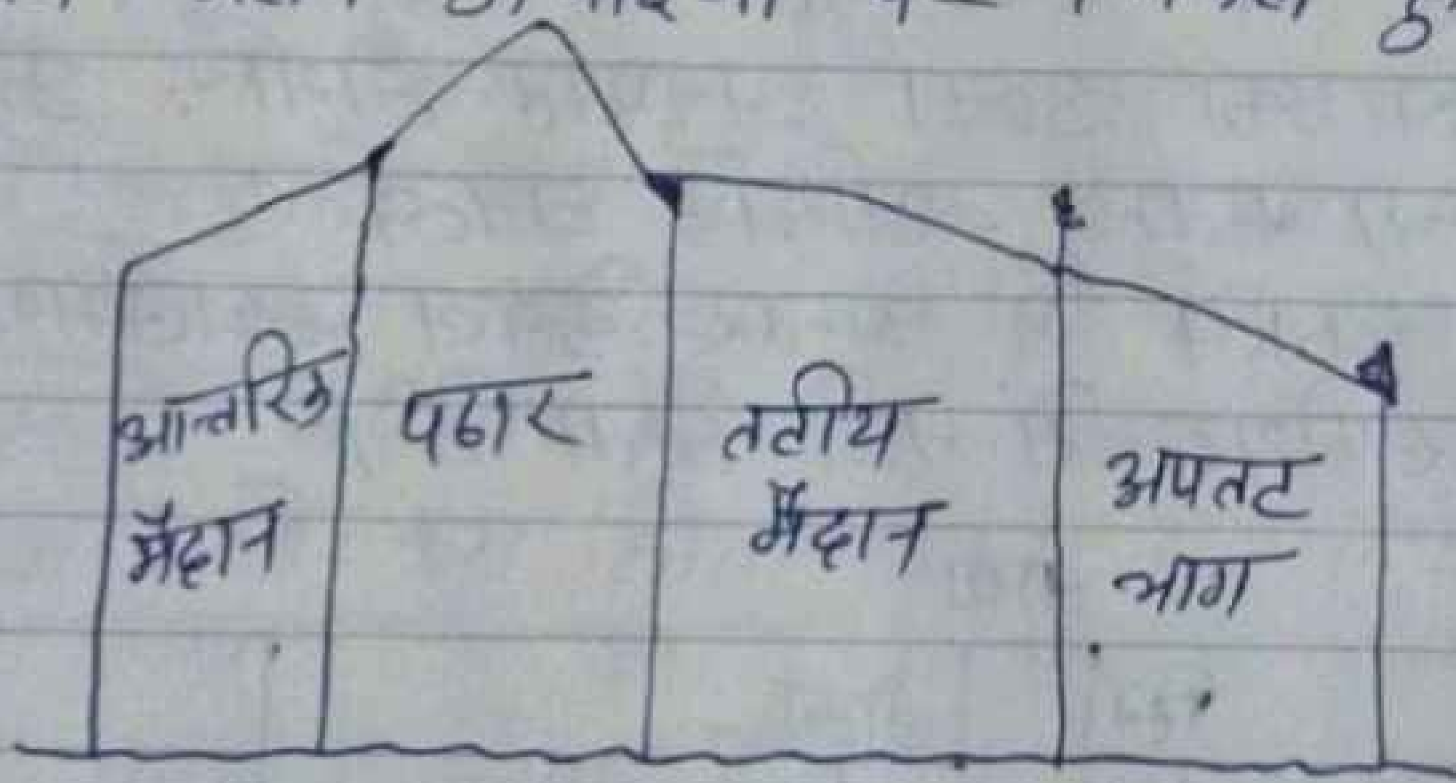

क्षतिपूर्ति (समतोल तल)
(संन्तुलन की स्थिति)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भूतल पर संन्तुलन की व्यवस्था :

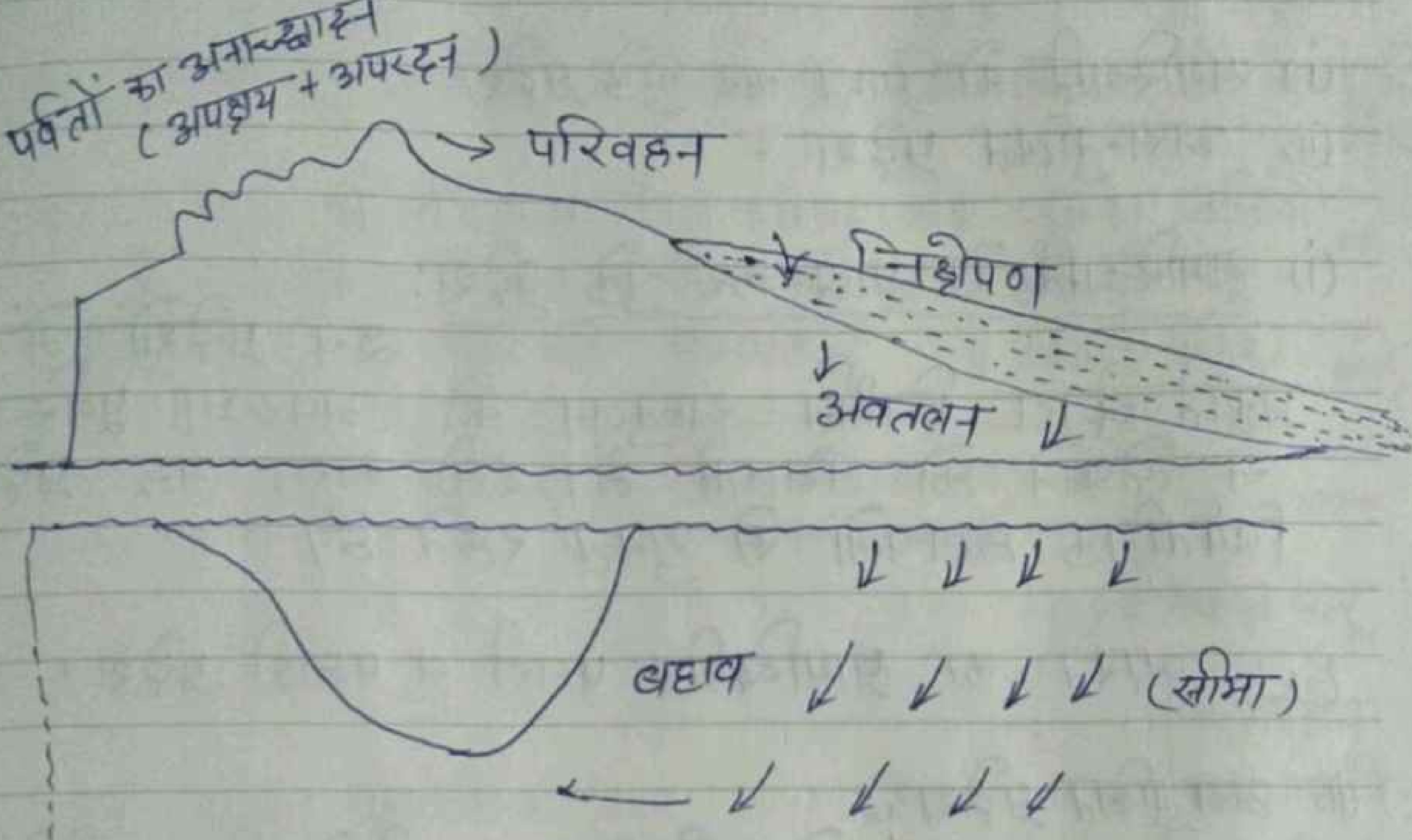

- भूतल पर सन्तुलन पूर्ण रूप से नहीं देखा जाता है क्योंकि भू-गर्भिक शक्तियाँ इसमें अव्यवस्था स्थापित करती है जब किसी स्थान पर पर्वत श्रेणी का निर्माण होता है तो उस पर शीघ्र ही अपरदन का कार्य प्रारम्भ हो जाता है अपरदन से क्षयित पदार्थ नदियों के माध्यम से सागर में जमा होने लगता है जिस कारण सागर तली भारी हो जाती है इस प्रकार पर्वतीय भाग हल्का होने लगता है, तथा दोनों में सन्तुलन होता है कभी-2 भू-गर्भिक शक्तियाँ इतनी शीघ्रता तथा तेजी से कार्य करती है कि संन्तुलन अचानक अव्यवस्थित हो जाता है (भूकम्प, ज्वालामुखी)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

8.00 वर्तमान मे पृथ्वी पर दो प्रकार के क्षेत्र पाये जाते है

9.00 (i) समस्थिति को प्राप्त कर चुके प्रदेश :-
(ii) असन्तुलित प्रदेश -

10.00 (i) समस्थिति को प्राप्त कर चुके प्रदेश:-
इन प्रदेशों में
11.00 प्रकृति द्वारा निर्मित संन्तुलन की अवस्था पूर्णरूप से देखने को मिलती है। इसी कारण यह प्रदेश
12 NOON विर्वतनिक हलचलों से मुक्त रहते है।

1.00 Ex:- भारत का प्रायद्विपीय पठारी व पहाड़ी प्रदेश।,

2.00 (ii) अंसतुलित प्रदेश:- ये प्रदेश प्राय: लीथोस्फीयर प्लेटों
3.00 के सीमावृन्ती प्रदेश होते है। जहाँ विर्वतनीक शक्तियाँ सक्रिय रहती है।
4.00 Ex - भारत का हिमालय पर्वतीय प्रदेश ।

5.00

6.00

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic :- (Isostasy - संतुलन)

प्रश्न :- भू - संतुलन के सिद्धान्त को परिभाषित कीजिए। सर जार्ज एयरी तथा प्राट के विचारों का भू-सन्तुलन के सिद्धान्त एक तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत कीजिए। (2018)

प्राट	एयरी
(1) प्राट ने विभिन्न भू-आकृतियों - पर्वत, पठार, मैदान, समुन्द्र तली आदि का अलग-सापेक्षिक घनत्व माना है।	(1) एयरी ने इनको समान घनत्व वाला माना है।
(2) प्राट का विश्वास तैराव के नियम में न होकर क्षतिपूर्ति तल नियम में था।	(2) एयरी का विश्वास तैराव के नियम में था।
(3) प्राट ने बताया की एक समान गहराई में घनत्व में अन्तर होता है।	(3) एयरी के अनुसार विभिन्न स्तम्भों का घनत्व बराबर होता है केवल उनकी गहराई में अन्तर होता है।

(4)

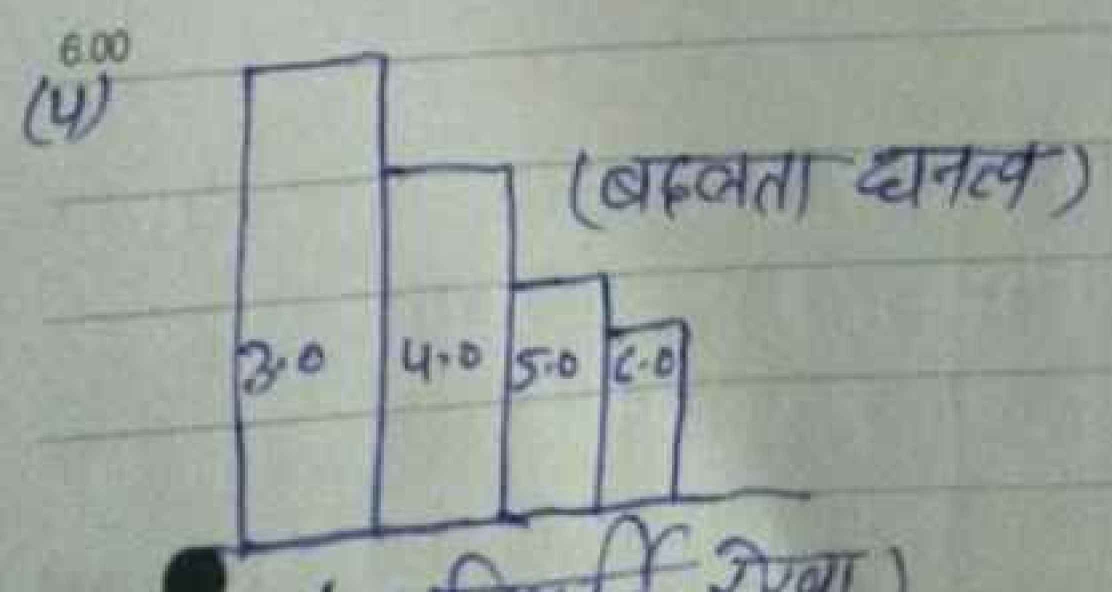

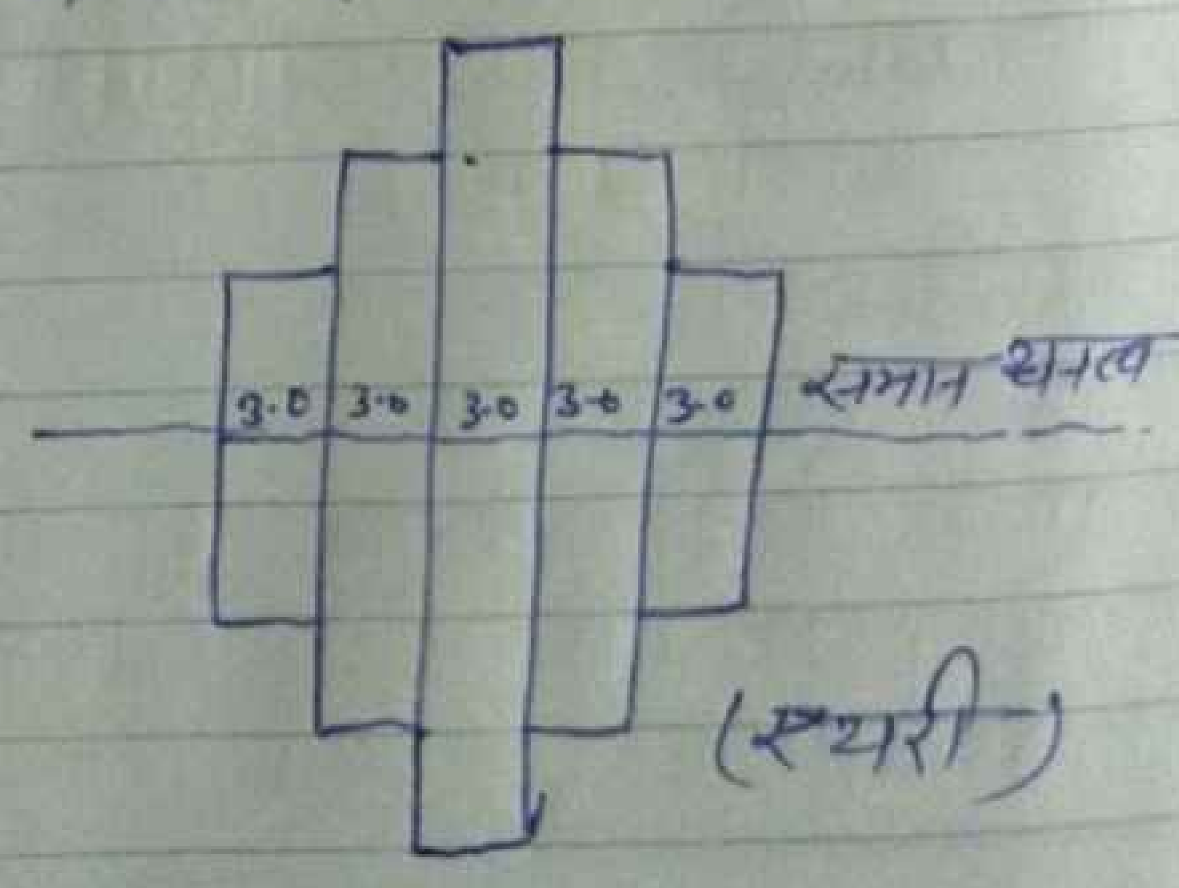

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(5) प्राट ने बताया - ऊँचा स्तम्भ कम घनत्व, नीचा स्तम्भ अधिक घनत्व बताया	(5) एयरी ने बताया कि ऊँचा स्तम्भ अधिक घनत्व, नीचा स्तम्भ कम घनत्व
(6) प्राट ने बताया कि पृथ्वी के विभिन्न उच्चावच इसलिए रुके है कि उनके घनत्व में अन्तर पाया जाता है	(6) एयरी ने बताया कि विभिन्न उच्चावच धरातल पर जितना ऊँचा है उस का नौ गुना धरातल के अन्दर स्थित है
(7) प्राट ने बताया की महाद्विपीय भाग अलग-2 घनत्व वाले पदार्थों से बने है	(7) एयरी ने बताया की महाद्विपीय भाग एक ही प्रकार के घनत्व वाले शैलों से बना है,
(8) प्राट ने सिद्धान्त का आधार हिमालय अपनी आकर्षण शक्ति का सहि उपयोग नही कर रहा है माना क्योंकि अन्तर 15.885 होना चाहिए	(8) एयरी ने सिद्धान्त का आधार पृथ्वी की क्रस्ट पपड़ी अधिक घनत्व वाले अधः स्तर में तैर रही है अर्थात 'सियाल' सीमा पर तैर रहा है को माना
(8) प्राट नें अंक्षाशीय अन्तर का कारण हिमालय को माना लेकिन इन्होने बताया कि हिमालय अपनी आकर्षण शक्ति का सही उपयोग नही कर रहा है	(8) एयरी ने अक्षांशीय अन्तर का कारण हिमालय को बताया कि हिमालय अपनी आकर्षण शक्ति से पेण्डुलम को आकर्षित कर रहा है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न :- (i) टिप्पणी लिखे
भूकम्प के कारण (2022)

उत्तर :- भूकम्प :- (EARTHQUAKES)
भू-पटल में उत्पन्न होने वाला वह आकस्मिक कम्पन्न है जिससे भू-पटल में परिवर्तन उत्पन्न होता है।

⇒ भूकम्प की तीव्रता 'सीस्मोग्राफ' यंत्र के द्वारा मापी जाती है। (चार्ल्स रिक्टर ने विकसित किया)

भूकम्प उत्पत्ति के कारण :-
भूकम्प मुख्यत: पृथ्वी की विवर्तनिक गतियों के कारण उत्पन्न होते है।
विवर्तनिक गतियों में प्लेटों का प्रवाह भूकम्प का कारण बनता है।
- मुख्य कारण धरातल पर सन्तुलन में अव्यवस्था का उत्पन्न होना है। शैलों में सम्पीडन व तनाव से शैलों में उथल-पुथल होती है। जिससे भूकम्प उत्पन्न होते है।

मुख्य कारण निम्न है।
(i) ज्वालामुखी क्रिया
(ii) विवर्तनिक कारण
(iii) समस्थितिक समायोजन
(iv) स्थानीय कारण
(v) भू-पटल सिकुड़न
(vi) प्लेट - विवर्तनिकी
(vii) मानव-जनित कारक

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भूकम्प के प्रमुख वैज्ञानिक कारण :-

(1) ज्वालामुखी क्रिया (Volcanic Activity) :-

ज्वालामुखी क्रिया मे जब तीव्र एवं वेगवती गैसें एवं वाष्प बाहर आने के लिए धक्के लगाती है तो भू-पटल में कम्पन्न होने लगता है इस कम्पन से भयंकर भूकम्प महसूस किया जाता है (क्राकाटाओ ज्वालामुखी के समय भूकम्प आया (जावा व सुमात्रा के मध्य)

(→ज्वालामुखी क्रिया भूकम्प का केवल स्थानीय कारण ही है क्योकि संसार मे कई ऐसे स्थान भी है जहाँ ज्वालामुखी क्रिया नहीं होती फिर भी वहाँ भूकम्प आते रहते है)

(2) विवर्तनिक कारण :-

भू-गर्भिक हलचलों के परिणामस्वरूप तनाव एवं सम्पीड़न से भू-पृष्ठ पर भ्रंशन एवं वलन क्रिया होती है जिनसे कम्पन्न उत्पन्न होते है भ्रंशन से दरार व वलन से मोड़ पड़ जाते है यह क्रिया तीव्रता से सम्पन्न होने से भूकम्प का अनुभव होता है

हिमालय, आल्पस, रॉकीज, एण्डीज पर्वत श्रृंखलाओं मे आते है

(3) समस्थितिक समायोजन :-

भू-तल के ऊपर उठे एवं नीचे धँसे भागों मे प्राय : सन्तुलन की व्यवस्था कायम रहती है लेकिन कभी-कभी इस व्यवस्था में अचानक व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो भूकम्प का अनुभव किया जाता है पर्वतीय भाग ऊपर उठने लगते है तथा सागर तली नीचे की ओर धँसने लगती है इस क्रिया के तीव्रता से होने पर भूकम्प उत्पन्न होते है

Clean India means healthy people.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(4) <u>स्थानीय कारण</u> :- इनका प्रभाव सीमित क्षेत्र में ही होता है। जैसे - चूना प्रदेश में अपरदन द्वारा निर्मित कन्दराओं की छत के धँसकने तथा महाद्वीपीय मग्नतट के किसी भाग के अचानक टूटने एवं पर्वतीय भागों में भू-स्खलन व शिला खिसकन द्वारा भूकम्प आते हैं।

(5) <u>भू-पटल सिकुड़न</u> :- पृथ्वी अपनी उत्पत्ति के बाद से ही लगातार ठण्डी होती जा रही है। इस प्रकार विकिरण द्वारा ताप ह्रास से पृथ्वी की पपड़ी में सिकुड़न आ जाती है। जब संकुचन अथवा सिकुड़न शीघ्रता से होता है तो भूकम्प अनुभव किए जाते हैं।

(6) <u>प्लेट - विवर्तनिकी</u> :- नवीन मान्यता के अनुसार भूकम्पों की उत्पत्ति को प्लेट - विवर्तनिकी द्वारा समझाया जा सकता है। भूकम्प प्लेट किनारों के सहारे घटित होती है। प्लेटों के किनारे एक दूसरे के अगल-बगल में सरकते हैं। जिससे भूकम्प का अनुभव होता है।

(7) <u>मानव जनित कारक</u> :- मानव द्वारा प्रगति के साथ अनेक कार्य में प्रकृति को कम्पित करता है - परमाणु विस्फोटों, सुरंग एवं खान खोदने में बाधों से - आदि से भूकम्प उत्पन्न होते हैं।

Clean India, Green India.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

8.00 भूकम्प मूल (Seismic Focus):- पृथ्वी की सतह के नीचे भू-पटल में स्थित वह केन्द्र जहाँ भूकम्प की उत्पत्ति
9.00 होती है, भूकम्प मूल कहलाता है,

10.00 भूकम्प अधिकेन्द्र :- (Seismic Epicentre):- भूकम्प में
11.00 ठीक ऊपर, भू-तल पर स्थित वह बिन्दु, जहाँ सर्वप्रथम भूकम्पीय तरंगे महसूस की जाती है।
12 NOON अधिकेन्द्र कहलाता है।

1.00 समभूकम्प रेखाएँ :- (Isoseismal Lines):- समान
2.00 भूकम्पीय तीव्रता वाले स्थानों को मिलाने वाली रेखाओं को समभूकम्प रेखाएँ कहते है।
3.00

भूकम्पमापी या लेखी :- जिस यंत्र से भूकम्प की तरंगों
4.00 का अंकन करते हैं। उसे भूकम्पमापी कहते है।
5.00

6.00

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

ज्वालामुखी

(VOLCANOES)

प्रश्न :- ज्वालामुखी किसे कहते हैं, ज्वालामुखी के प्रकार व उद्‌गार के कारण बताइये।
प्रश्न - ज्वालामुखी क्रिया द्वारा निर्मित स्थलाकृतियों को समझाइये।

ज्वालामुखी विस्फोट अचानक घटित होने वाली एक विनाशकारी घटना है। पृथ्वी के आन्तरिक भाग में उपस्थित पिघली शैलें, तप्त लावा एवं गर्म गैसें उन स्थानों से निःसृत होते हैं जो दुर्बल हैं। इन दुर्बल स्थानों से जब ये पदार्थ निकलते हैं तो विस्फोट होता है जिससे आस-पास का धरातल कम्पित होता है। गड़गड़ाहट के साथ आकाश की ओर पिघली शैलें, लावा तथा गैसें बादल के रूप में ऊपर उठते हैं। ये जलते पदार्थ जब नीचे गिरते हैं तो कुछ ही क्षण, में आस-पास का क्षेत्र नष्ट हो जाता है तथा जन-धन की अपार क्षति होती है।

भू-पृष्ठ में स्थित वह छिद्र, जिससे होकर तरल लावा, शैल खण्ड, गैसें, राख, जल आदि निकलते हैं, ज्वालामुखी कहलाते हैं। ज्वालामुखी छिद्र का सम्बन्ध एक नली द्वारा भू-गर्भ से होता है जिसे **ज्वालामुखी नली** (Volcanic Pipe) कहते हैं। ज्वालामुखी एक संयुक्त प्रक्रम है जिसके अन्तर्गत भू-गर्भ में लावा की उत्पत्ति से लेकर उसके धरातल पर प्रकट होने तथा निःसृत पदार्थों के ठोस होने तक की समस्त प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं।

वरसेस्टर ने ज्वालामुखी क्रिया हेतु **'वल्केनिज्म'** (Vulcanism) शब्द का प्रयोग करते हुए कहा कि, *''ज्वालामुखी वह क्रिया है, जिसमें गर्म पदार्थ के भूगर्भ से धरातल की ओर अथवा धरातल पर आने की सभी क्रियाएँ सम्मिलित की जाती हैं।''*

''Vulcanism includes all phenomena connected with movement of heated material from the interior to or towards the surface of the earth.''

वुलरिज एवं मार्गन के अनुसार, ''ज्वालामुखी के अन्तर्गत वे समस्त प्रक्रियाएँ शामिल हैं जिनमें द्रवित शैल, पदार्थ या लावा भू-सतह के भीतर अथवा ऊपर प्रकट होकर रवेंदार (Crystalline) अथवा अर्द्ध क्रिस्टलीय चट्टान के रूप में ठोस हो जाता है।''

ऑर्थर होम्स के शब्दों में, ''ज्वालामुखी मुख्य रूप से एक दरार (Fissures) या केन्द्र-द्वार या नली (Vent) होता है जो पृथ्वी के आन्तरिक भागों से जुड़ा रहता है तथा इसमें से लावा प्रवाह तप्त जल का फव्वारा या गैसों का विस्फोट आकस्मिक उद्‌गार या ज्वालामुखी धूल एवं राख द्वारा होता है।''

इन दोनों परिभाषाओं से एक बात स्पष्ट होती है कि ज्वालामुखी क्रिया दो रूपों में होती है—प्रथम भू-पृष्ठ के नीचे (अभ्यान्तरिक) तथा द्वितीय भू-पृष्ठ के ऊपर। प्रथम प्रक्रिया में लावा धरातल के नीचे वाले भाग में विभिन्न गहराइयों पर ठण्डा होकर बैथोलिथ, फैकोलिथ, लैकोलिथ, लोपोलिथ, सिल, डाइक आदि के रूप में जम जाता है। द्वितीयक प्रक्रिया के दौरान गर्म पदार्थ धरातल पर प्रकट होते हैं। इसके अन्तर्गत ज्वालामुखी धरातलीय प्रवाह, गर्म जल के सोते, गैसर धुँआरे आदि शामिल किए जा सकते हैं।

ज्वालामुखी की रचना
(Structure of a Volcano)

ज्वालामुखी वास्तव में एक छिद्र अथवा अनेक छिद्रों का समूह होता है। इसके तीन प्रमुख भाग होते हैं। पृथ्वी के अन्दर से तप्त पदार्थ निकलकर शंकुनुमा रूप में जम जाते हैं, जिसे 'ज्वालामुखी पर्वत' कहा जाता है। इसके ऊपर मध्य भाग में एक छिद्र होता

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चित्र 11.1 : ज्वालामुखी के अंग

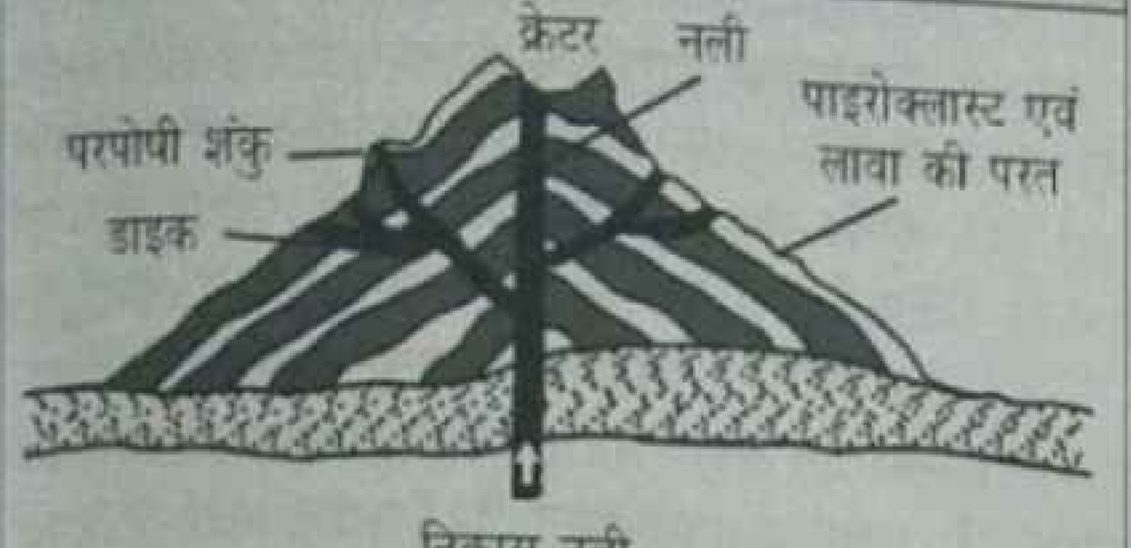

है। इसको ज्वालामुखी **विवर** (Crater) कहते हैं। लगभग गोलाकार क्रेटर को जर्मन भाषा में **मार** (Maar) कहते हैं जो ढालू भागों से 1 किमी. दूर तक विस्तृत होता है। इस छिद्र के ठीक नीचे जिस भाग से लावा निकलता है उसे **निकास** (Vent) कहा जाता है। ज्वालामुखी विवर तथा निकास का सम्बन्ध एक नली द्वारा बना रहता है जिससे होकर लावा निकास से निकलकर छिद्र तक पहुँचता है। इस नली को ज्वालामुखी नली कहते हैं। धँसाव अथवा अन्य कारण से ज्वालामुखी विवर का विस्तार अत्यधिक होने पर इसे **काल्डेरा** (Caldera) कहते हैं। ज्वालामुखी के शांत हो जाने पर ज्वालामुखी नली बंद हो जाती है और काल्डेरा में जल भर जाता है जिससे ज्वालामुखी झील बन जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका की **क्रेटर झील** तथा इण्डोनेशिया की टोबा झील (Toba Lake) इसके उदाहरण हैं।

ज्वालामुखी द्वारा निःसृत पदार्थ
(Material Ejected from a Volcano)

ज्वालामुखी उद्गार छिद्र अथवा दरार के रूप में होता है। ज्वालामुखी से ठोस, द्रव तथा गैस तीनों ही प्रकार के पदार्थ निकलते हैं। तीनों ही प्रकार के पदार्थ उच्च तापमानयुक्त होते हैं तथा निकलने के बाद धीरे-धीरे ठण्डे होते हैं। ज्वालामुखी विस्फोट के समय

चित्र 11.2 : ज्वालामुखी बॉम्ब, सिंडर, राख व झामक

सर्वप्रथम गैस निकलती है जिसमें 90 प्रतिशत तक जल वाष्प होती है। ज्वालामुखी उद्गार से निम्नांकित पदार्थ निःसृत होते हैं—

(i) ठोस (Solid), (ii) तरल (Liquid), (iii) गैस (Gases)।

(i) **ठोस पदार्थ** (Solid Material)—ज्वालामुखी उद्गार के दौरान मैग्मा के साथ विभिन्न ठोस पदार्थ भी निःसृत होते हैं। सामान्यतः इन ठोस पदार्थों में शैलों के टुकड़े, ज्वालामुखी बम्ब, स्कोरिया, झामक (Pumice), लेपिली (Lappili), धूल एवं राख मुख्य हैं। ज्वालामुखी से निकले द्रवित पदार्थ ऊपर उठकर पुनः नीचे आते हैं तो ठोस हो जाते हैं। 4 मि.मी. से 32 मि.मी. व्यास के ठोस टुकड़ों को **सिंडर** (Cinder) कहते हैं। 32 मि.मी. से अधिक व्यास वाले टुकड़ों को **ज्वालामुखी बम** (Volcanic Bombs) कहते हैं। अत्यन्त बारीक कणों को **ज्वालामुखी राख** (Ash) कहा जाता है।

(ii) **तरल पदार्थ** (Liquid Material)—द्रव पदार्थों में मुख्य रूप से **मैग्मा** (Magma) होता है। बाहर निकलने पर मैग्मा को **लावा** (Lava = to wash) कहते हैं। लावा लाल या तप्त श्वेत (White Hot) उच्च तापमान वाला होता है। निकलते समय लावा का तापमान 500° सेल्सियस से 1400° सेल्सियस के मध्य होता है। ज्वालामुखी उद्गार से निःसृत लावा ठण्डा होकर मटमैला दिखाई देता है। लावा को सिलिका की मात्रा के आधार पर दो वर्गों में विभक्त करते हैं। प्रथम, आम्लिक लावा (Acid Lava) तथा द्वितीय, पैठिक लावा (Basic Lava) **आम्लिक लावा** में सिलिका की मात्रा 40 से 75 प्रतिशत तक होती है तथा यह अधिक संगठित होता है। इसका रंग पीला व भार हल्का होता है। आम्लिक लावा विस्तृत होते ही बाहरी पर्यावरणीय दशाओं में आते ही जम जाता है। यह लगभग 800°C पर पिघलता है। विश्व के ज्वालामुखी पर्वत आम्लिक लावा से ही बने हैं, क्योंकि यह अधिक गाढ़ा होने के कारण दूर तक नहीं फैलता है। जब कभी बेसाल्टिक लावा केवल 100 मी. की गहराई पर नली से मन्द गति से बाहर निकलकर पिलो (Pillow) की आकृति में ठण्डा होता है, तो इसे **पिलो लावा** कहते हैं। सिलिका मात्रा के आधार पर इसे भी तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है—

- **रायोलाइट** (Rhyolite)—**इसमें सिलिका की मात्रा 65 से 75 प्रतिशत तक होती है।** उद्गार के दौरान इसका तापमान 700-800°C होता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- **एंडेसाइट** (Andesite)—इसमें सिलिका 55 से 65 प्रतिशत के मध्य पाई जाती है। पर्याप्त सिलिका युक्त (60-65%) धुँधली ज्वालामुखी शैलों को **डेसाइट** (Dacite) कहते हैं। जिनका तापमान उद्गार के दौरान लगभग 800-900°C तक होता है। धूसर रंग की धुँधली ज्वालामुखी शैलों को **ट्रेचाइट** (Trachyte) कहते हैं, जिनमें पर्याप्त सिलिका (65%) सोडियम एवं पोटेशियम होते हैं।
- **बेसाल्ट** (Basalt)—इसमें सिलिका की मात्रा सबसे कम होती है। सिलिका 40 से 50 प्रतिशत के मध्य होती है।

पैठिक लावा (Basic Lava)—यह बेसिक लावा होता है जिसमें सिलिका की मात्रा लगभग 40 प्रतिशत होती है। यह तरल भार युक्त तथा काले रंग का होता है। इसका तापमान 1200°C तक होता है। तरल होने के कारण यह दूर तक फैल जाता है। विश्व के ज्वालामुखी पठारों का निर्माण पैठिक लावा से होता है। सोडियम एवं पोटेशियम युक्त धुँधली ज्वालामुखी शैलों को **फोनोलाइट** (Phonolite) कहते हैं जिनमें सिलिका कम होता है। इनसे गुम्बदाकार आकृति बनती है।

(iii) **गैसें** (Gases)—भार के अनुसार कुल उद्गीर्ण पदार्थों का 1 प्रतिशत भाग गैसीय पदार्थों का होता है। ज्वालामुखी उद्गार के दौरान सर्वाधिक सल्फर एवं हाइड्रोजन का मिश्रण निकलता है जिसके साथ कार्बन-डाइ-ऑक्साइड भी होती है। उद्गार के समय इन गैसों का तापमान लगभग 1000°C होता है। अन्य गैसों में नाइट्रोजन, सल्फर-डाइ-ऑक्साइड तथा क्लोरीन प्रमुख है। इन सभी मिश्रणों में सर्वाधिक (90%) जलवाष्प होती है। विस्फोट लावा के प्रवाह व उद्गार की प्रकृति, गैसों की मात्रा तथा उनके ताप व दाब पर निर्भर करती है।

राख की बौछारें (Ash Showers)

राख वल्केनियन तथा पिलियन प्रकार के उद्गारों का प्रमुख उत्पाद है। प्राचीन काल में राख की बौछारों ने पृथ्वी के बड़े भाग को ढक लिया था। न्यूजीलैण्ड में 1886 के **टारवारा बौछारों** (Tarwara Shower) द्वारा 85 किमी. व्यास वाले क्षेत्रों को आवृत्त कर लिया था जिसमें लेपिली तथा झामक की अधिकता थी। 1883 का क्राकाटाओ उद्गार विश्व प्रसिद्ध है। यहाँ 26 अगस्त, 1883 को हुए विध्वंसक उद्गार में वायुमण्डल में धूल आवरण से एक काले बादलों की घनी परत बन गई थी जिसको ऊपरी वायु प्रवाह प्रणाली द्वारा वायुमण्डल के विभिन्न भागों में

सारणी 11.1 एक विस्फोटक ज्वालामुखी उद्गार के प्रमुख उत्पाद

नाम	विवरण
धुँवारे (Fumaroles)	ज्वालामुखी के एक तरफ भूमि पर स्थित एक छिद्र जिसमें से भाप एवं गैसें निकलती हैं।
लहर (Lahar)	ज्वालामुखी लावा का भू-स्खलन जो पिघली हिम (Melting Snow) वर्षा या ज्वालामुखी भाप से बने जल के कारण होता है।
रज्जुक लावा (Ropy Lava)	जब बैसाल्टी लावा मंद गति से बहता है तो उसमें रस्सी जैसी ऐंठन पड़ जाती है। ऐसा प्रवाह सागरों में होता है।
पाओएहोए (Pahoehoe)	समतल एवं सामान्य बेसाल्ट लावा प्रवाह के लिए प्रयुक्त हवाइन शब्द। दूसरी ओर लावा के विषम प्रवाह (Rough Flow) एवं कोणीय सतह को हवाइन भाषा में **आ** (aa) कहते हैं।
लेपिली (Lapilli)	सिंडर या लावा के छोटे पिण्ड जो ज्वालामुखी उद्गार द्वारा बाहर फेंके जाते हैं।
नुई आर्डेण्ट (Nuee Ardente)	यह एक उद्दीप्त बादल (Glowing Cloud) होता है जो एक ज्वालामुख से निःसृत ज्वलन्त राख के उष्ण बादलों, गैसों, भाप तथा शैलों के जलने से उत्पन्न होता है।
टेफ्रा (Tephra)	विस्फोट उद्गार से निःसृत ज्वालामुखी राख (Volcanic Ash)
पायरोक्लास्ट (Pyroclasts)	ज्वालामुखी उद्गार के द्वारा निःसृत शैलों के विखण्डित टुकड़े होते हैं इनमें लेपिली, झामक, ज्वालामुखी राख तथा ज्वालामुखी बम प्रमुख हैं। • *टफ (Tuff)*—राख के संगठन से निर्मित बड़े टुकड़े, जो लावा प्रवाह के गर्म पदार्थों के आपस में मिलने से बनते हैं। उत्तरी न्यूजीलैण्ड में ऐसे टफ को **इग्निम ब्राइट** कहते हैं। • *झामक (Pumice)*—ब्रेसिया के साथ गैसीय बुलबुलों से निर्मित छिद्रदार पत्थर के टुकड़े। • *स्कोरिया (Scoriae)*—एक तरफ चने की तरह नुकीले पत्थर के टुकड़े। • *ब्रेसिया (Brecia)*—स्कोरिया का बड़ा रूप। • *ज्वालामुखी बम (Volcanic Bomb)*—कई मीटर व्यास के बड़े पत्थर।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

वितरित किया गया। फलस्वरूप अनेक स्थानों पर सूर्यास्त जैसा दृश्य बन गया था। इसका विस्तार दक्षिणी भारत, पश्चिमी यूरोप तथा अमेरिका तक हो गया था। राख की बौछारें सामान्यतया ठण्डी होती हैं लेकिन **नुई अर्डेण्ट** (Nuee Ardente) उष्ण होती है, 1902 के माउण्ट पीली (पश्चिमी द्वीप समूह) तथा 1912 में माउण्ट कटमाई (अलास्का) उद्गारों में नुई अर्डेण्ट काँच को पिघला देने वाली उष्णता के साथ निःसृत हुई थी।

ज्वालामुखी क्रिया में अनेक धातुएँ भी निकलती हैं इन धातुओं में लोहा, जस्ता, ताँबा, आर्सेनिक, एंटीमनी, मोलिब्डेनम, चाँदी, टिन आदि प्रमुख हैं। ज्वालामुखी से निकले ठोस टुकड़ों का सर्वाधिक विस्तार इण्डोनेशिया में पाया जाता है।

ज्वालामुखी का वर्गीकरण
(Classification of Volcanoes)

विभिन्न ज्वालामुखियों के विस्फोट के समय एवं प्रक्रिया में काफी अन्तर होता है। कुछ ज्वालामुखी शांत रूप से दरारी उद्गार द्वारा प्रकट होते हैं जबकि अन्य तीव्र विस्फोट के साथ प्रकट होते हैं। कुछ ज्वालामुखी एक बार टूटने के बाद सदा के लिए शांत हो जाते हैं जबकि कुछ लम्बे समय तक लावा उगलते रहते हैं। इस प्रकार ज्वालामुखियों को उनके लक्षणों के अनुसार विभिन्न आधारों पर अनेक प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

I. क्रियाशीलता के आधार पर वर्गीकरण
(Classification According to Activeness)

क्रियाशीलता के आधार पर ज्वालामुखी को तीन भागों में बाँटा जा सकता है—

1. **सक्रिय ज्वालामुखी** (Active Volcanoes)—विश्व के वे ज्वालामुखी जिनसे निरन्तर लावा, गैसें आदि निःसृत होते रहते हैं, सक्रिय ज्वालामुखी कहलाते हैं। इनसे तप्त पदार्थ अनवरत निकलते हैं। विश्व में लगभग 500 सक्रिय ज्वालामुखी हैं। इटली के एटना, सेंट हेलेना (U.S.A.), स्ट्राम्बोली *(भूमध्य सागर का प्रकाश स्तम्भ)* पिनाट्बो (फिलीपिन्स) प्रमुख सक्रिय ज्वालामुखी हैं। **एटना** विश्व का प्राचीनतम सक्रिय ज्वालामुखी है, जिसमें प्रथम उद्गार 1500 ईसा पूर्व (1500 B.C.E.) हुआ था तब से सन् 1993 तक कुल 190 उद्गार हो चुके हैं। यह विश्व का सबसे विस्तृत महाद्वीपीय ज्वालामुखी भी है तथा विश्व के विस्तृत ऐतिहासिक उद्गार के लिए भी जाना जाता है। विश्व का सबसे ऊँचा सक्रिय ज्वालामुखी **कोटोपेक्सी** (5897 मी.) है जो इक्वेडोर में क्वीटो के दक्षिण में स्थित है, इसे **चमकती चोटी** (Shining Peak) कहते हैं।
2. **प्रसुप्त ज्वालामुखी** (Dormant Volcanoes)—इन ज्वालामुखियों में पहले कभी उद्गार हुआ था लेकिन वर्तमान में शांत दिखाई देते हैं एवं भविष्य में कभी भी उद्गार हो सकता है, अर्थात् दो उद्गारों के मध्य सुसुप्त अवस्था की लम्बी अवधि रहती है। विसुवियस (इटली), फ्यूजियामा (जापान) तथा क्राकाटाओ (इण्डोनेशिया) प्रसुप्त ज्वालामुखी हैं। विसुवियस का प्रथम उद्गार 79 ईसवीं में हुआ था, इसके बाद दूसरा उद्गार 1631 में हुआ। पुनः अगला उद्गार 1803 में हुआ। इसमें 1929 तक कुल 7 बार ज्वालामुखी क्रिया हो चुकी है। इसी तरह 28 अक्टूबर, 2010 को सुमात्रा में माउण्ट सिनबंग में 400 साल बाद उद्गार हुआ।
3. **मृत ज्वालामुखी** (Extinct Volcanoes)—**वह ज्वालामुखी जिसमें एक बार उद्गार होने के बाद कभी भी पुनः उद्गार नहीं होता है। इनके मुख में वर्षा जल भरने से क्रेटर झीलें बन जाती हैं। ऐसे ज्वालामुखी 'मृत' या**

सारणी 11.2 विश्व के प्रमुख सक्रिय ज्वालामुखी

नाम	देश	ऊँचाई (मीटर में)
1. कोटोपेक्सी	इक्वेडोर	5897
2. क्लूचेवस्काया	रूस	4750
3. वेंग्रेल	अलास्का	4270
4. मोनोलोआ	हवाई द्वीप (U.S.A.)	4170
5. केमरून	केमरून	4070
6. एरेबस	अण्टार्कटिका	3795
7. निरागोंगो	जायरे	3520
8. इलिआम्ना	अलेततुआन श्रेणी (U.S.A.)	3350
9. एटना	सिसली (इटली)	3340
10. बार	कास्केड श्रेणी (U.S.A.)	3285
11. चिल्लन	चिली	3200
12. न्यामुरागिरा	जायरे	3090
13. विललाटिका	चिली	2842
14. रूहापेहू	न्यूजीलैण्ड	2797
15. पारीकटिन	मैक्सिको	2770
16. अनामा	जापान	
17. सेंट हेलेस पर्वत	संयुक्त राज्य अमेरिका (U.S.A.)	2540
18. न्याऊरूहोए	न्यूजीलैण्ड	2530
19. हेक्ला	आइसलैण्ड	2291
20. विसुवियस	इटली	1491
21. किलाउएआ	हवाई द्वीप (U.S.A.)	1277
22. स्ट्राम्बोली	इटली	1247

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

'शांत ज्वालामुखी' कहलाते हैं। आर्थर्स सीट (एडिनबर्ग, स्कॉटलैण्ड), माउण्ट पोपा (म्याँमार), देवमंद व कोहसुल्तान (ईरान) आदि शांत ज्वालमुखियों के उदाहरण हैं।

2. उद्गार के आधार पर वर्गीकरण (Classification According to Eruption)

केन्द्रीय उद्गार वाले ज्वालामुखी (Central Eruption Type Volcanoes)

इनमें उद्गार एक सँकरी नली द्वारा होता हुआ छिद्र से बाहर प्रकट होता है। यह उद्गार तेज गति एवं विस्फोट के साथ प्रकट होता है। अत: ये ज्वालामुखी अधिक विनाशकारी सिद्ध होते हैं। उद्गार वाले ज्वालामुखियों को 6 श्रेणियों में बाँटा गया है—

(i) **हवाई प्रकार के ज्वालामुखी** (Hawaian Type Eruption)—इस प्रकार के ज्वालामुखी में विस्फोट क्रिया कम तीव्रता के साथ सम्पन्न होती है। इसके द्वारा नि:सृत पदार्थों में मुख्य लावा होता है। निकलने वाला लावा पतला होता है। उद्गार के समय लावा के छोटे-छोटे पिण्ड वायु द्वारा रोक लिए जाते हैं। वायुमण्डल में गैस के कारण ऊपर स्थित लाल रंग का लावा आकाश में ऐसा दिखाई देता है, जैसे केश राशि हो। हवाई द्वीप के निवासी इस तरह वायुमण्डल में फैले लावा को अपनी पूज्य अग्निदेवी पीली की केशराशि मानते हैं। इस तरह के ज्वालामुखी ज्यादातर हवाई द्वीप पर आते हैं। अत: इसी कारण ऐसे उद्गार वाले ज्वालामुखियों को हवाई तुल्य ज्वालामुखी कहते हैं। हवाई द्वीप के **मोना लोआ** एवं **किलुआ** आदि इसके उदाहरण हैं।

(ii) **स्ट्राम्बोली प्रकार के ज्वालामुखी** (Strombolian Type Eruption)—इसमें उद्गार के समय मामूली विस्फोट होता है तथा गैसें रुक-रुककर अथवा लगातार निकलती रहती हैं। निकलने वाला लावा कम पतला

चित्र 11.3 : पिलो लावा का निर्माण

चित्र 11.4 : ज्वालामुखी उद्गार के विभिन्न प्रकार एवं सम्बन्धित दृश्य भूमि

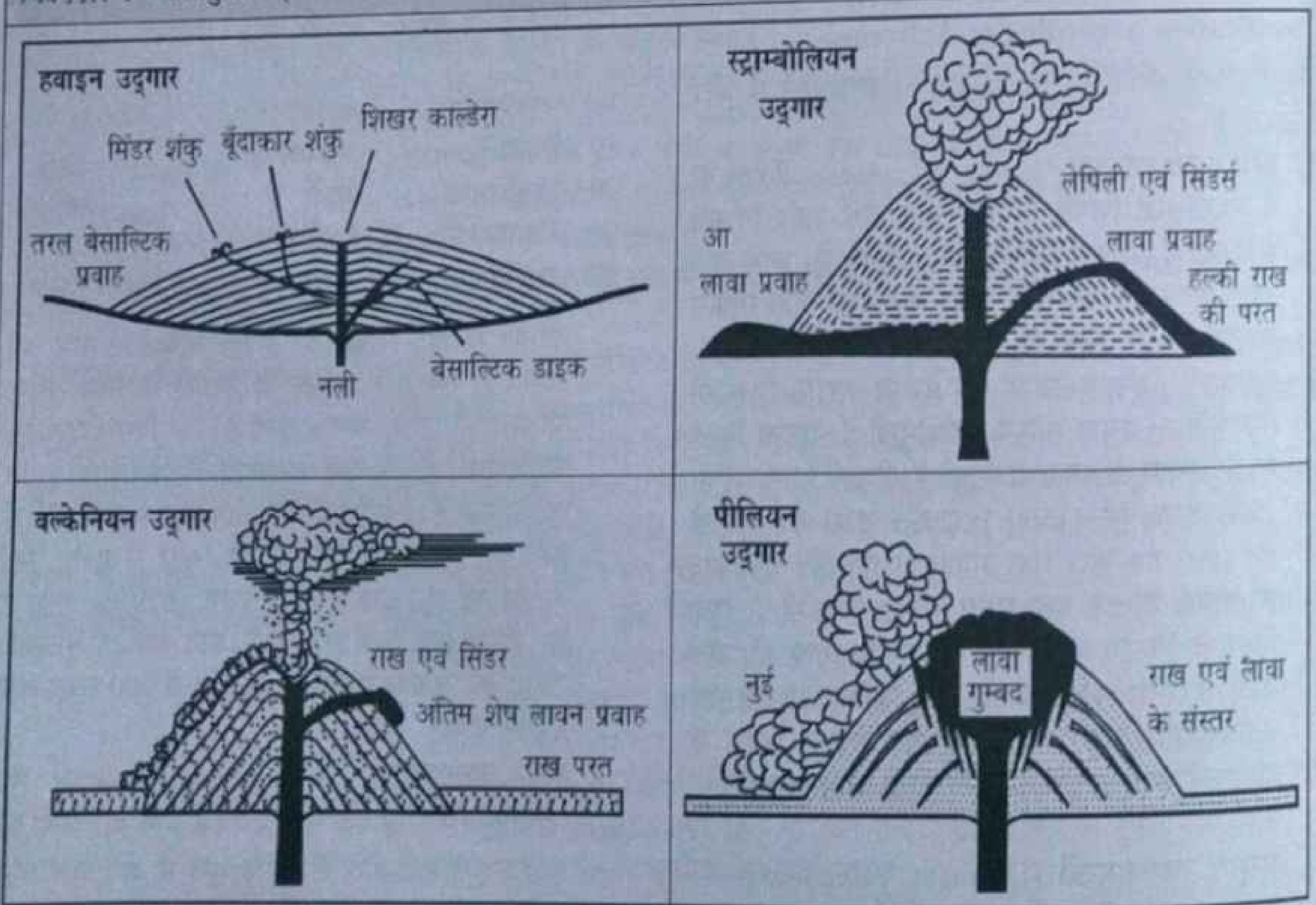

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Continued...

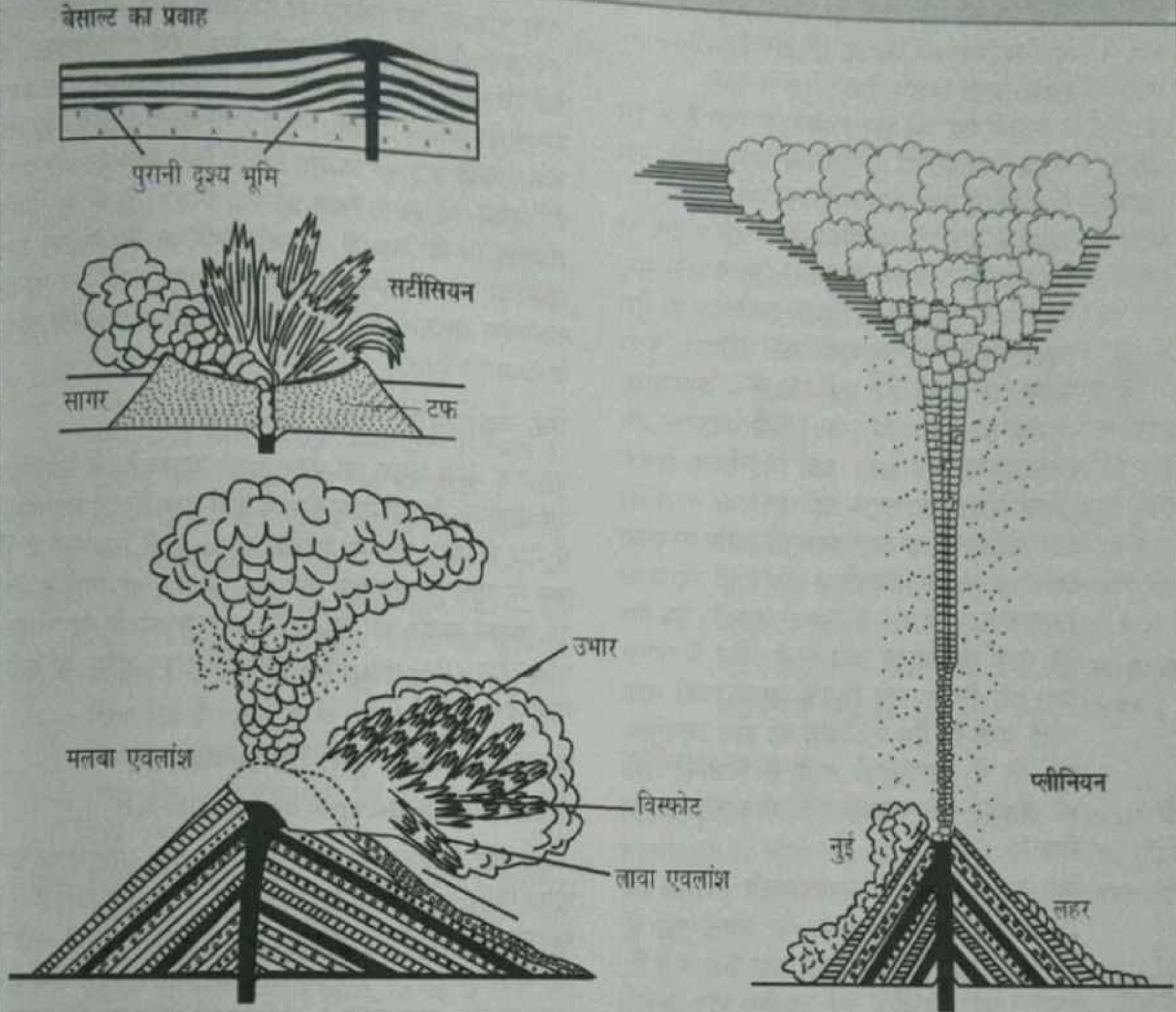

होता है। लावा के साथ-साथ ज्वालामुखी-धूल, झामक (Pumice), ज्वालामुखी बम आदि भी निकलते हैं। इस प्रकार का उद्गार भूमध्य सागर के सिसली द्वीप के उत्तर में स्थित स्ट्राम्बोली ज्वालामुखी में पाया जाता है। इसमें निरन्तर उद्गार के साथ प्रकाश छाया रहता है। इसे **भूमध्य सागर का प्रकाशगृह** कहते हैं।

(iii) **वल्केनियन प्रकार के ज्वालामुखी** (Vulcanian Type Eruption)—इस प्रकार के ज्वालामुखी में नि:सृत पदार्थों की तीव्रता अधिक होती है तथा उद्गार के समय तेज विस्फोट होता है। इसमें विस्फोट के बाद राख एवं धूलयुक्त गैसों का बादल बनकर ऊपर उठता है जो फूल गोभी के समान प्रतीत होता है। इससे निकलता लावा लसलसा एवं चिकना होता है जो क्रेटर के ऊपर गिरकर ज्वालामुखी के मुख पर जमा हो जाता है जिसके कारण गैस एवं लावा इकट्ठा होता रहता है। जब इनकी मात्रा अत्यधिक हो जाती है तो भयंकर आवाज के साथ तीव्र विस्फोट होता है। गैस अधिक मात्रा में इकट्ठी होने पर इस ढक्कन को तोड़कर अचानक बाहर निकलती है। इसका नामकरण इटली के लिपारी द्वीप पर स्थित वल्केनो ज्वालामुखी के आधार पर किया गया है। ऐसे ज्वालामुखी का अगला उद्गार पिछले उद्गार के कारण निर्मित लावा परत को तोड़कर होता है।

(iv) **पीलियन प्रकार के ज्वालामुखी** (Pelean Type Eruption)—इस प्रकार के ज्वालामुखी में उद्गार अत्यधिक विस्फोट के साथ होता है। इससे नि:सृत लावा अधिक चिपचिपा होता है जिसके क्रेटर पर गिरकर जम जाने पर मोटी डाट लग जाती है। अत: पीलियन तुल्य ज्वालामुखी सबसे अधिक विनाशशील होते हैं तथा इनका विस्फोट भयंकर एवं तेज आवाज

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

के साथ होता है। इनके उद्गार के कारण सर्वाधिक जन-धन की हानि होती है। इसकी प्रमुख विशेषता **नुई अर्डेण्ट** (Nuee Ardentes or Glowing Cloud) का निर्माण है।

जब गैसों का दाब अधिक हो जाता है तो इसे तोड़कर भयंकर रूप से गैसें एवं अन्य पदार्थ बाहर निकलते हैं तथा काफी ऊँचाई तक उछलते हैं। 1902 में पश्चिमी द्वीप समूह के मार्टिनिक द्वीप पर स्थित माउण्ट पीली ज्वालामुखी के विस्फोट से सेन्ट पियरे नगर नष्ट हो गया। इसी के आधार पर ऐसे उद्गार वाले ज्वालामुखियों को पीलियन तुल्य ज्वालामुखी कहते हैं। सन् 1883 में क्राकाटाओ (सुण्डा जलडमरूमध्य), 1911 में माउण्ट ताल (फिलीपिन्स) एवं सन् 1851 में हिबक-हिबक (फिलीपिन्स) में हुए उद्गार पीलियन प्रकार के ही थे।

पीलियन प्रकार के ज्वालामुखी उद्गार का लावा अत्यधिक गाढ़ा एवं चिपचिपा होता है जो उद्गार के समय ज्वालामुखी नली में जमा हो जाता है। जब गैस एवं लावा ज्वालामुखी नली के बंद होने के कारण बाहर नहीं निकल पाते जिसके कारण इनकी मात्रा बढ़ती जाती है। गैस एवं लावा की मात्रा अत्यधिक होने पर ये ज्वालामुखी नली में निक्षेपित डाट को तोड़कर भयंकर आवाज के साथ तीव्र उद्गार होता है।

(v) **विसुवियस प्रकार के ज्वालामुखी** (Visuvius Type Eruption)—इस तरह के ज्वालामुखी में भयानक विस्फोट के साथ पदार्थ बाहर फेंके जाते हैं। निकलने वाले पदार्थों में गैसों का बड़ा भाग होता है जिसके कारण ये आकाश में काफी ऊँचाई तक उछलते हैं तथा बादल का रूप ग्रहण कर लेते हैं। इटली के विसुवियस (1200 मी.) में इस प्रकार के उद्गार होते रहते हैं। सर्वप्रथम प्लिनी महोदय ने ऐसे उद्गार वाले ज्वालामुखी के बारे में जानकारी दी थी।

दरारी उद्गार वाले ज्वालामुखी (Volcanoes of Fissure Eruption)

इस प्रकार के ज्वालामुखी उद्गार में लावा एक छिद्र से न निकलकर लम्बी दरार से निकलता है। दरारी उद्गार वाले ज्वालामुखी में लावा के साथ गैस की मात्रा अत्यधिक कम पाई जाती है जिसके कारण लावा एक छिद्र से न निकलकर एक लम्बी दरार के द्वारा धीरे-धीरे निकलता है। यह लावा विस्तृत क्षेत्र में फैल जाता है जिसके कारण लावा मैदान एवं लावा पठार का निर्माण होता है। ज्वालामुखियों का दरारी उद्भेदन अधिकतर क्रिटेशियस युग में हुआ था।

सन् 1783 में आइसलैण्ड में हुआ दरारी उद्गार लगभग 17 मील लम्बी दरार के द्वारा हुआ था जिसके कारण लावा लगभग 218 वर्ग मील क्षेत्र में फैल गया था तथा अपार जन-धन की हानि हुई थी। दरारी उद्गार वाले ज्वालामुखियों में गैसें एवं लावा विस्फोट के साथ नहीं निकलता बल्कि शांत प्रकार का उद्गार होता है। निःसृत लावा प्रायः पतला होता है तथा शंकु रूप में जमा न होकर विस्तृत क्षेत्र में फैल जाता है। इस प्रकार के उद्गार वर्तमान में देखने को नहीं मिलते। इनके भू-गर्भिक इतिहास में भी कम ही उदाहरण उपस्थित हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका का कोलम्बिया पठार, प्रायद्वीपीय भारत का दक्कन पठार तथा आइसलैण्ड में सन् 1783 में हुआ उद्गार दरारी उद्गार के उदाहरण हैं।

पंक ज्वालामुखी (Mud Volcanoes)

यह एक भिन्न प्रकार का ज्वालामुखी उद्गार है जो पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस उत्पादक क्षेत्रों में पाया जाता है। इस ज्वालामुखी में गैस के साथ रेत एवं मृत्तिका (Clay) भी निकलती है जो जल के साथ घुलकर पंक बना लेती है। यह पंक मिट्टी के टीले पर जमकर कठोर हो जाती है। पंक ज्वालामुखी का उदाहरण बोग-बोगा (Bog-Boga) है, जो कैस्पियन सागर के समीप बाकू तेल क्षेत्र में है।

ज्वालामुखी क्रिया द्वारा निर्मित स्थलरूप (Volcanic Landscapes or Landforms)

ज्वालामुखी विस्फोट के समय निकले पदार्थ धरातल पर जमा होकर विभिन्न आकार वाले स्थल-रूपों का निर्माण करते हैं। इन स्थलाकृतियों का रूप स्थायी न होकर परिवर्तित होता है, क्योंकि प्रत्येक बार उद्गार के समय पदार्थों की अधिक मात्रा जमा होने से इनका रूप बदल जाता है। ज्वालामुखी क्रिया का क्षेत्र धरातल के नीचे एवं ऊपर दोनों ओर होता है। अतः स्थलाकृतियाँ भी मुख्यतः आन्तरिक एवं बाह्य दो प्रकार की होती हैं। दरारी उद्गार वाले ज्वालामुखी से निःसृत लावा पतला होने के कारण अधिक क्षेत्र में फैलकर पठार अथवा मैदान जैसी स्थलाकृति को जन्म देता है। उपर्युक्त आधार पर ज्वालामुखी क्रिया से निर्मित स्थलाकृतियों को निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. बाह्य स्थलाकृति (Extrusive Topography)

शंकु (Cones)

ज्वालामुखी शंकु का आकार छोटे से लेकर बड़े पर्वत के सदृश होता है। इनका निर्माण ज्वालामुखी लावा, राख, धूल व विखण्डित पदार्थों से होता है। जमाव की प्रकृति सिलिका पर निर्भर करती है। केन्द्रीय उद्गार वाले ज्वालामुखी से निःसृत पदार्थ धरातल पर शंकुनुमा रूप में जमा हो जाते हैं। विस्फोट की प्रकृति और

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

निकलने वाले पदार्थों के आधार पर विभिन्न प्रकार के शंकु निर्मित होते हैं। प्रमुख लावा शंकु निम्नलिखित है—

(i) **राख शंकु** (Cinder or Ash Cone)—राख शंकु ऐसे क्षेत्रों में बनते हैं जहाँ उद्गार विस्फोटक होते हैं तथा ज्वलनखण्डाश्म (Pyroclastic) पदार्थों की प्रधानता होती है। इनका निर्माण ज्वालामुखी धूल, राख तथा छोटे-छोटे टुकड़ों से होती है। इसकी ऊँचाई कम तथा ढाल अवतल (Concave) होता है। *कैमग्विन* (फिलीपिन्स), *पराकुटिन* व *जोरल्लो* (मैक्सिको) डी फायों ज्वालामुखी (मध्य अमेरिका) आदि राख शंकु के उदाहरण हैं। राख शंकु के निर्माण में लावा की मात्रा कम होती है। इनका निर्माण तीव्र गति से होता है। इनके ढाल खड़े होते हैं तथा कभी-कभी इनकी ऊँचाई मुख्य द्रोणी में फटन हो जाने के कारण 400 फीट तक पाई जाती है। राख या सिण्डर शंकु के निर्माण में प्रयुक्त पदार्थ असंगठित एवं बड़े-बड़े चट्टानी टुकड़ों के रूप में पाए जाते हैं।

(ii) **अम्लीय लावा शंकु** (Acid Lava Cone)—जब उद्गार से निकलने वाले लावा में सिलिका की मात्रा अधिक होती है तो निर्मित शंकु ऊँचा एवं तीव्र ढाल वाला होता है। इसमें लावा चिपचिपा एवं गाढ़ा होने के कारण धरातल पर निकलने के बाद शीघ्रता से ठण्डा होता है। क्राकाटाओ एवं स्ट्राम्बोली के शंकु इसी प्रकार के हैं।

(iii) **शील्ड शंकु** (Shield or Basic Lava Cone)—जब नि:सृत लावा में सिलिका अल्प मात्रा में पाई जाती है तब यह पतला एवं कम चिपचिपा होने के कारण दूर तक फैलकर शील्ड या बेसिक शंकु का निर्माण करता है। नीचे इसका ढाल लगभग 2° से 4° तथा ऊपर शिखर के पास 5° से 6° तक होता है। जमोनालोआ (हवाई द्वीप) शील्ड शंकु के निर्माण में प्रयुक्त लावा बेसिक या बेसाल्ट लावा होने के कारण इसे बेसिक या पैठिक लावा शंकु भी कहते हैं। हवाई द्वीप का मोनालोआ व मौना की (Mauna Kea) तथा इटली का माउण्ट एटना इसके उदाहरण हैं। इनकी ऊँचाई काफी अधिक होती है। मोनोलोआ की ऊँचाई 4219 मीटर है।

(iv) **शंकु में शंकु** (Cone in Cone)—जब लम्बे अन्तराल के बाद प्रसुप्त ज्वालामुखी में उद्गार होता है तो शंकु के अन्तर्गत छोटे शंकु निर्मित हो जाते हैं। फ्यूजीयामा (जापान) में इस प्रकार के शंकु मिलते हैं।

(v) **मिश्रित शंकु** (Composite or Strato Cones)—ज्वालामुखी से निकलने वाले पदार्थ (Pyroclastic Materials) जब परत-दर-परत जमा होते रहते हैं तो ऐसे शंकु का निर्माण होता है। इन्हें **परतदार शंकु** (Strato Cones) भी कहा जाता है। ये शंकु सर्वाधिक ऊँचे होते हैं। इनका ढाल धरातल से 35° से 40° तक होता है। इसमें ज्वालामुखी उद्गार के दौरान लावा डाईक (Dyke) के रूप में जमा हो जाता है। मेयन (फिलीपिन्स) विसुवियस एवं एटना (इटली) फ्यूजीयामा (जापान), पोपोकेट्टीटेटल (मैक्सिको), कोटोपेक्सी (इक्वेडोर) आदि इसके उदाहरण हैं। विश्व में पाए जाने वाले ऊँचे ज्वालामुखी पर्वतों का निर्माण मिश्रित शंकुओं के द्वारा ही होता है। लावा की परत एवं विखण्डित पदार्थों के क्रमश: जमते रहने के कारण इस शंकु में विभिन्न परतें पाई जाती हैं।

(vi) **परिपोषित शंकु** (Parasitic Cone)—जब मुख्य द्रोणी में फटन हो जाने के कारण ज्वालामुखी नली से छोटी-छोटी उपशाखाएँ निकल आती हैं तो इनसे निकलने वाले लावा द्वारा शंकु के विभिन्न भागों पर छोटे-छोटे शंकु निर्मित हो जाते हैं। इनको परिपोषित शंकु कहा जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका का माउण्ट शस्ता इसी प्रकार का शंकु है। इन्हें **लेटरल** अथवा **एडवेंटिव शंकु** (Adventive Cone) भी कहते हैं।

हॉर्निटो (Hornito)

एक लघु शंकु या बूँदाकार टीला (Spatter Mound) जो सामान्यतया 10 मीटर का होता है। यह अधिकतम 100 मीटर तक भी ऊँचा तथा तेज ढालू होता है। यह एक स्पेनिश शब्द है। किलुआ (हवाई द्वीप) इसका उदाहरण है।

चित्र 11.5 : बूँदाकार शंकु

लावा डाट (Lava Plug)

मिश्रित प्रकार के शंकु निर्मित करने वाले ज्वालामुखी जब शांत हो जाते हैं तब उनकी नली में ठोस लावा जम जाता है। अपरदन द्वारा शंकु का बाहरी भाग जब नष्ट हो जाता है तो यह लावा दीवार की तरह दिखाई देता है जिसे लावा डाट कहते हैं। फ्रांस में एवर्न (Avergne) तथा USA में ब्लेक हिल्स एवं डेविल टावर इसके उपयुक्त उदाहरण हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

थोलायड (Tholoids)

जब पहले से उपस्थित क्रेटर में गुम्बद का निर्माण होता है तो उसे थोलायड कहते हैं।

लावा गुम्बद (Lava Dome)

शील्ड शंकु जब विशाल आकार युक्त होता है तो वह विस्तृत गुम्बद के रूप में दिखाई देता है जिसको लावा गुम्बद कहते हैं। इसका निर्माण ज्वालामुखी छिद्र के चारों ओर लावा के जमाव से होता है।

दरारी उद्गार वाले ज्वालामुखी द्वारा निर्मित स्थलाकृति

इस प्रकार के उद्गार में लावा एक लम्बी दरार से निकलता है, साथ ही लावा पतला होने के कारण शीघ्रता से काफी दूरी तक फैल जाता है। इस तरह लावा क्षैतिज रूप में फैलकर धरातल पर एक परत के रूप में बिछा दिया जाता है। लावा परत की गहराई लावा की मात्रा एवं गाढ़ेपन के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है।

चित्र 11.6 : ज्वालामुखी शंकु का अनाच्छादन

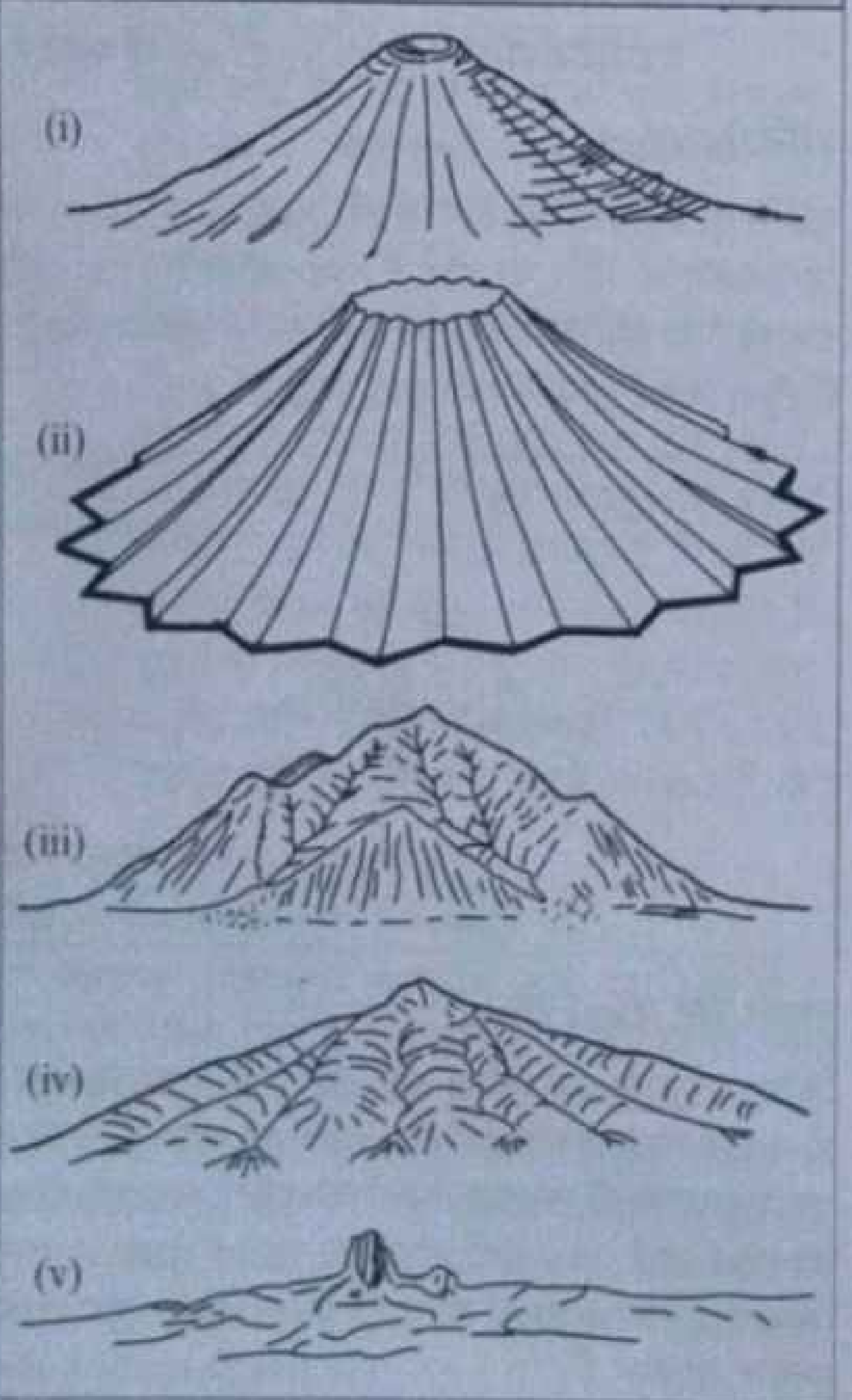

परतों में लावा के जमते जाने से लावा मैदानों एवं लावा पठारों में निर्माण होता है।

उद्गार के उपरान्त ज्वालामुखी भू-दृश्य में परिवर्तन (Post Eruption Modification of Volcanic Landscapes)

ज्वालामुखी उद्गार के उपरान्त निर्मित भू-दृश्यों में उद्गार के उपरान्त अनाच्छादन क्रिया द्वारा परिवर्तन हो जाता है। अपरदन क्रिया द्वारा ज्वालामुखी (Volcano) की परिवर्तित अवस्थाएँ निम्नांकित हैं—

(i) *अक्षुण्ण शंकु (Intact Cone),*
(ii) *छाता क्रमनिहित (Parasol Ribbing),*
(iii) *प्लानीज अवस्था (Planeze Stage),*
(iv) *अवशिष्ट ज्वालामुखी (Residual Volcano),*
(v) *ज्वालामुखी का अवशेष ढाँचा (Volcanic Skeleton)*। (संख्या चित्र 11.6 के अनुसार है।)

सर्वप्रथम उद्गार के दौरान निर्मित शंकु पर अपरदन प्रारम्भ होता है जिस पर धीरे-धीरे नवीन सरिताएँ विकसित होने लगती हैं तथा छातानुमा आकृति (Parasol Shape) बन जाती है जिस पर क्रमनिहित लघु सरिताएँ विकसित होती हैं। कालान्तर में इनका अपवाह क्षेत्र विस्तृत हो जाता है तो प्लानीज अवस्था में आ जाती है। **प्लानीज** (Planeze) फ्रेंच भाषा का शब्द है जिसे सामान्यतः **मेसा** (Mesa) भी कहते हैं। इसे विशेष रूप से फ्रांस के पेज डी डोम (Puys De Dome) जिले के लिए प्रयुक्त किया गया जो पूर्व में सिंडर शंकु था लेकिन बाद में अनाच्छादन द्वारा कट गया तथा अब केवल लावा प्रवाह से सुरक्षित क्षेत्र ही शेष बचे हैं। इस प्रकार प्लानीज अवस्था में सिंडर शंकु अनाच्छादित हो जाता है (चित्र 11.5)। इसके उपरान्त ज्वालामुखी अवशिष्ट रूप में मिलता है। इस अवस्था में जल विभाजक भी कटने लगते हैं तथा अन्त में ज्वालामुखी भू-दृश्य सम्प्राय मैदान सदृश बन जाता है जिसमें केवल ज्वालामुखी ढाँचा मात्र बचता है।

इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में कम-से-कम 10 मिलियन वर्ष लग जाते हैं। फ्रांस में सेण्ट्रल मेसिफ के पेज (Puys) में तथा एडिनबर्ग के आर्थर्स सीट में विस्तृत पैमाने पर ऐसा अनाच्छादन हुआ है।

ज्वालामुखी क्रेटर (Volcanic Craters)

ज्वालामुखी शिखर या किनारों पर नली (Vent) के चारों ओर स्थित कीपाकार बेसिन को क्रेटर कहते हैं। इनका निर्माण विस्फोटक एवं धँसाव दोनों से होता है। इसके चारों ओर भृगुनुमा तीव्र ढाल होता है। इस प्रकार के ज्वालामुखी गर्त (Volcanic Depressions) तीन प्रकार के होते हैं—(i) क्रेटर (Crater), (ii) केल्डेरा (Caldera), तथा (iii) ज्वालामुखी विवर्तनिक गर्त (Volcanic-Tectonic Depressions)।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(i) **क्रेटर** (Crater)—ज्वालामुखी के प्रमुख मुख के ऊपर गर्तनुमा बनी हुई आकृति को क्रेटर कहते हैं। इनका निर्माण विस्फोटक धँसाव होने से होता है। क्रेटर की आकृति एवं आकार शंकु के निर्माण पर आधारित होता है, लेकिन अधिकतर क्रेटरों की आकृति कीपाकार होती है एवं ढाल सामान्यतया 25° से 40° के मध्य पाया जाता है। क्रेटर की सामान्य गहराई लगभग 1000 फीट एवं विस्तार भी लगभग 1000 फीट तक पाया जाता है। कभी-कभी मुख्य क्रेटर के अन्दर ज्वालामुखी के हल्के उद्गार के कारण छोटे-छोटे क्रेटर बन जाते हैं। ऐसे छोटे क्रेटरों से युक्त मुख्य क्रेटर को घोंसलादार या **सामूहिक क्रेटर** कहते हैं। माउण्ट ताल (फिलीपाइन) ज्वालामुखी के मुख्य क्रेटर के अन्दर तीन क्रेटर पाए जाते हैं। फिलीपाइन के माउंट पिनाटूबो में 15 जून, 1991 में हुए ज्वालामुखी उद्गार के बाद बने क्रेटर में पिनाटूबो झील का निर्माण हुआ है यह लूजोन द्वीप पर स्थित है जो सन् 1993 के बाद शांत है।

चित्र 11.7 : घोंसलेदार क्रेटर

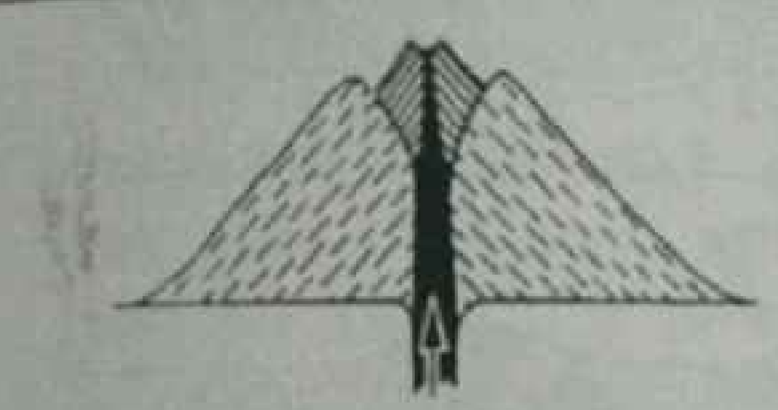

घोंसलेदार क्रेटर

चित्र 11.8 : अवतलन द्वारा काल्डेरा का निर्माण (i) प्रारम्भिक ज्वालामुखी, (ii) विस्फोट, (iii) ध्वस्त (After A. Goudie, 1993)

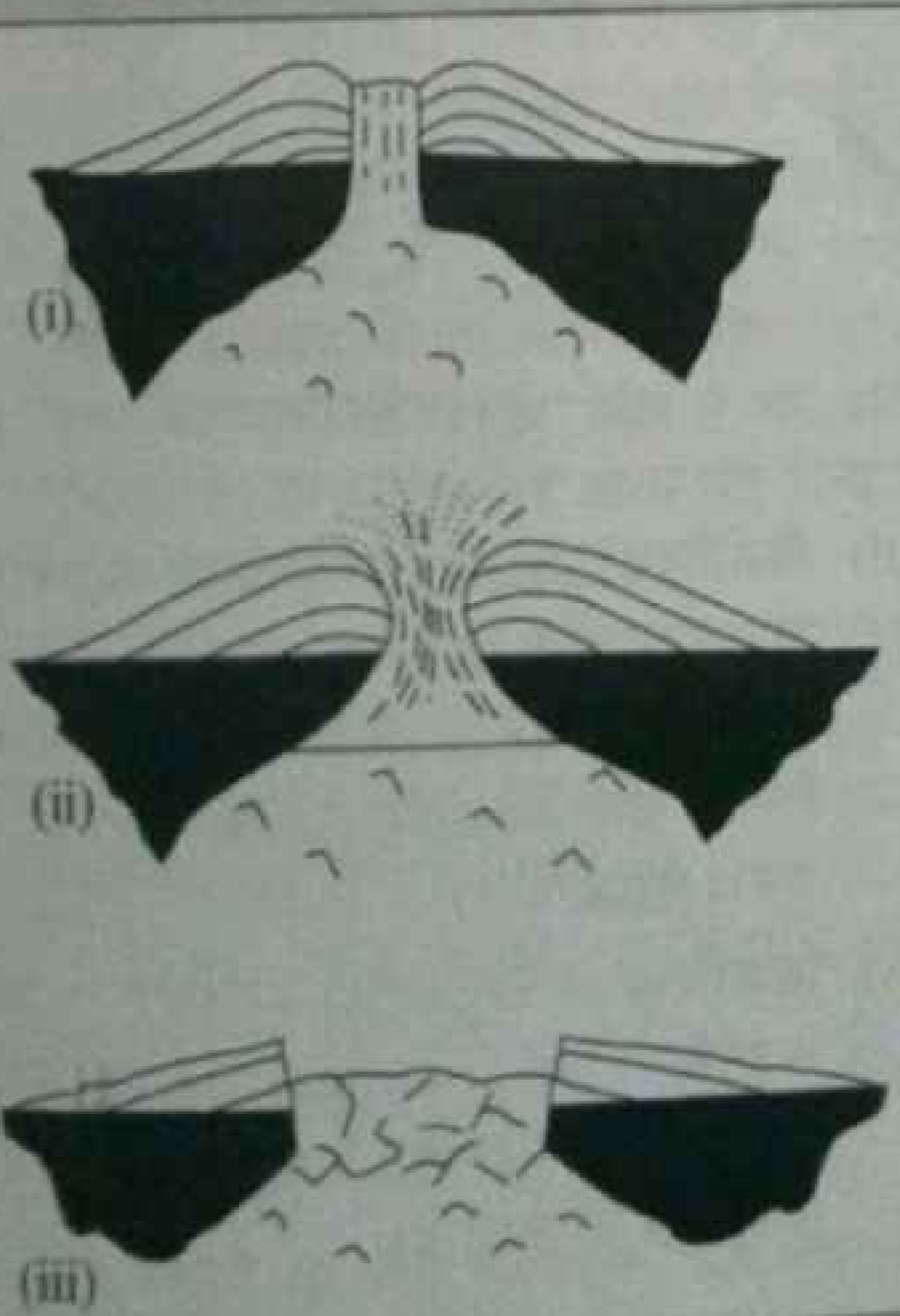

(ii) **काल्डेरा** (Caldera)—जब ज्वालामुखी उद्गार के कारण क्रेटर का विस्तार अत्यधिक हो जाता है तो उसे काल्डेरा कहते हैं। क्रेटर प्राकृतिक क्रियाओं के कारण अवतलित (धँसाव) हो जाता है जिसके कारण उसका आकार बड़ा होकर काल्डेरा का निर्माण करता है। काल्डेरा के बनने के बाद जब पुनः ज्वालामुखी का उद्गार होता है तो मुख्य काल्डेरा के अन्दर छोटे-छोटे काल्डेरा बन जाते हैं, ऐसे विस्तृत काल्डेरा को घोंसलादार काल्डेरा या **सामूहिक काल्डेरा** कहते हैं। ओरेगन (U.S.A.) का ग्रेटर लेक काल्डेरा विश्व का प्रसिद्ध काल्डेरा है। क्राकाटाओ का सुपर काल्डेरा (1810 वर्ग किमी.), माउण्ट कटमाई व एनिपाचाक (अलास्का) तथा एअरा (जापान), ओरोगन झील एवं सुमात्रा की टोबा झील अन्य प्रमुख काल्डेरा हैं।

(iii) **ज्वालामुखी विवर्तनिक गर्त** (Volcanic-Tectonic Depressions)—इनका अविर्भाव अवतलन (Collapse), काल्डेरा क्रेटर में असमानता होने पर होता है। ये ज्वालामुखी शंकुओं के ढाल पर खाईनुमा गर्त होते हैं। इन्हें **सेक्टर ग्राबेन** (Sector Graben) भी कहते हैं। न्यूजीलैण्ड के उत्तरी द्वीप के बड़े क्षेत्र में एक विशाल ज्वालामुखी विवर्तनिक गर्त स्थित है। न्यूजीलैण्ड की **टाउपो बेसिन झील** (Taupo Basin Lake) यहीं स्थित है। इस प्रकार के अनेक गर्त सुमात्रा में भी पाए जाते हैं। इनमें सबसे बड़े गर्त में टोबा झील विकसित हुई है।

2. आन्तरिक स्थलाकृति (Intrusive Topography)

जब ज्वालामुखी उद्गार के समय निकलने वाले पदार्थों की तीव्रता कम होती है तो मैग्मा धरातल तक नहीं पहुँचता अपितु धरातल के नीचे ही दरारों में जमा होकर ठोस हो जाता है। इस धरातल के आन्तरिक भागों में जमने वाला मैग्मा रूप एवं आकार में भिन्न होता है (चित्र 9.1) जिसके कारण प्रमुखतः निम्नलिखित स्थलाकृतियों का जन्म होता है—

(i) **बैथोलिथ** (Batholith)—मैग्मा की विशाल राशि गुम्बद के रूप में जमा हो जाती है जिसके किनारे तीव्र ढालयुक्त एवं आधार तल अधिक गहराई में होता है। इसका ऊपरी भाग ऊबड़-खाबड़ होता है। ये सैकड़ों किमी. लम्बे तथा 50 से 80 किमी. चौड़े तथा अत्यधिक मोटाई वाले होते हैं। बैथोलिथ

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

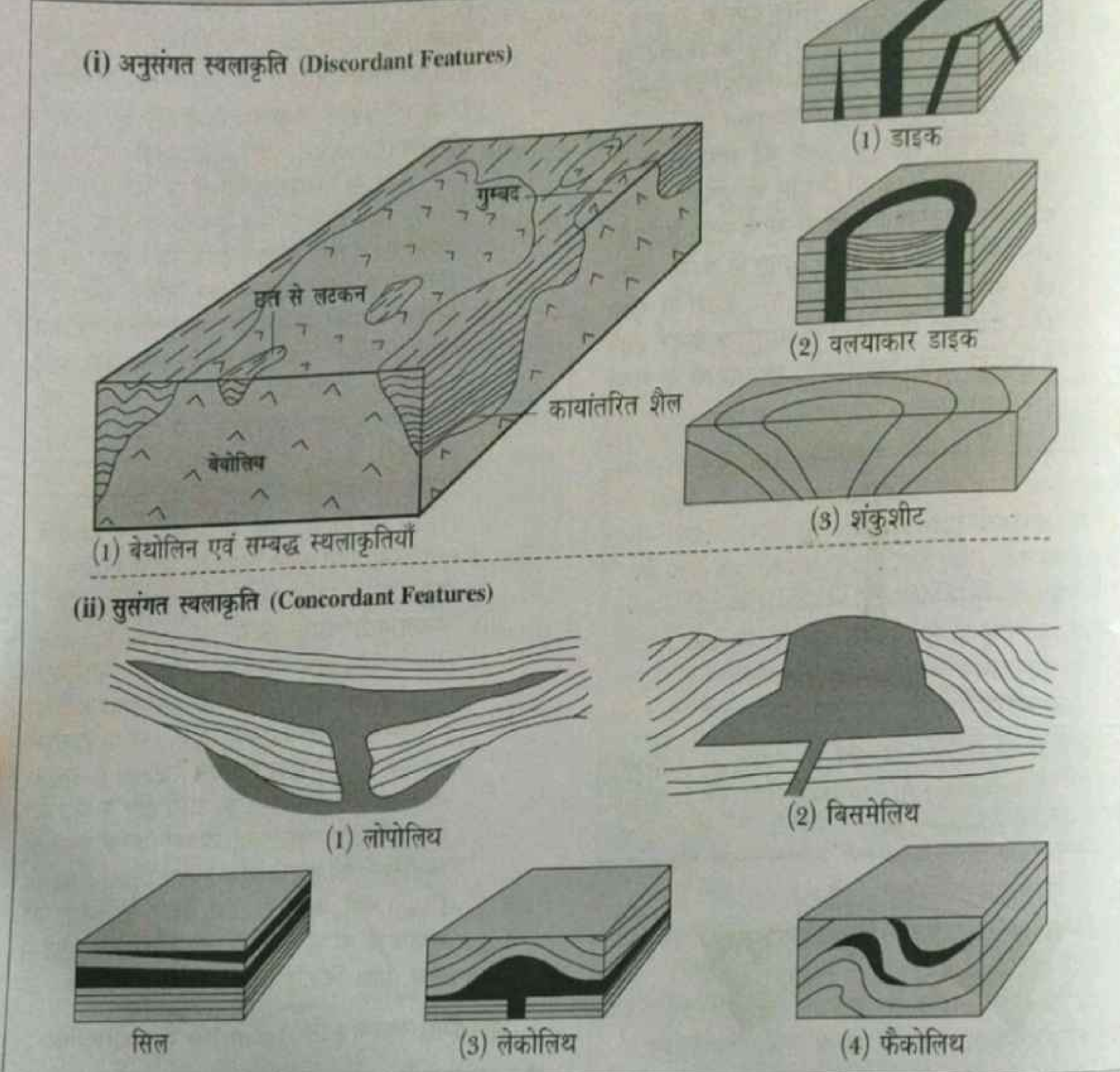

चित्र 11.9 : प्रमुख आन्तरिक स्थलाकृतियाँ

विशेषकर वलित पर्वतीय तथा पठारी क्षेत्रों में, जहाँ ज्वालामुखी का उद्‌गार होता रहता है, पाया जाता है। सतही अनाच्छादन एवं उत्थान से ये दृष्टिगत भी होने लगता है। इसका उदाहरण है—संयुक्त राज्य अमेरिका का इडाहो बैथोलिथ।

(ii) **बॉस एवं स्टॉक** (Bosses and Stock)—बैथोलिथ से आकार में बिल्कुल मिलते-जुलते परन्तु इससे छोटे होते हैं। *क्यूपोलो* (Cupolas) बैथोलिथ के किनारे पर छोटी-सी उभार वाली स्थलाकृति है जो सतह पर अनावृत्त दिखाई देती है।

(iii) **लैकोलिथ** (Lacolith)—पृथ्वी की सतह के निकट परतदार चट्टानों के बीच उत्तल चाप (Convex Arch) अथवा गुम्बदाकार रूप में मैग्मा जम जाने पर इसका निर्माण होता है। उटाह (USA) का हवेरी पर्वत इसका उदाहरण है।

(iv) **फैकोलिथ** (Phaccolith)—मोड़दार चट्टानों की अपनतियों (Anticlines) एवं अभिनतियों (Synclines) में लहरदार मैग्मा जमाव वाली संरचना फैकोलिथ कहलाती है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(v) **लोपोलिथ** (Lopolith)—जब मैग्मा का जमाव धरातल के नीचे अवतल आकार वाली छिछली बेसिन में होता है तो एक तश्तरीनुमा संरचना का विकास होता है जिसे लोपोलिथ कहते हैं। ट्रांसवाल लोपोलिथ (दक्षिण अफ्रीका) व डुलुथ (USA) ऐसे जमावों के उदाहरण हैं।

(vi) **सिल** (Sill)—जब मैग्मा परतदार अथवा रूपान्तरित शैल परतों के बीच जम जाता है तथा इस जमाव की मोटाई अधिक होती है तो 'सिल' कहलाती है। सिल की स्थिति मूल चट्टान के समानान्तर होती है। पतली सिल को **'सीट'** कहा जाता है। अफ्रीका का कारू सीरीज इसका उदाहरण है।

(vii) **डाइक** (Dyke)—जब मैग्मा शैल परतों के लम्बवत् (Veritical) रूप में जमता है एवं सिल की तरह ही होता है। इसकी लम्बाई कुछ मीटर के सैकड़ों किमी. तक तथा मोटाई कुछ से.मी. से कुछ मीटर तक होती है। उद्गार की पुनरावृत्ति के रूप में हुए जमाव के आधार पर डाइक चार प्रकार के होते हैं—(1) साधारण डाइक (Simple Dyke), (2) बहुवेधी डाइक (Multiple Dyke), (3) मिश्रित डाइक (Composite Dyke), तथा (4) विभेदित डाइक (Differential Dyke)। इसके अलावा रिंग डाइक, कोन शीट, कॉल्ड्रॉन, धँसाव डाइक अन्य प्रमुख स्वरूप हैं। जिम्बाब्वे का ग्रेट डाइक इसका उदाहरण है।

(viii) **बिसमेलिथ** (Bysmmalith)—लैकोलिथ स्थल रूप में भ्रंशन (Faulting) होता है, तो उसे बिसमेलिथ कहते हैं। बिसमेलिथ का निर्माण लावा के बड़े पैमाने पर बेलनाकार रूप में आन्तरिक शैलों में खड़े प्रवेश करने से होता है। इसकी ऊपरी आकृति चापाकार होती है। दक्षिणी डकोटा के ब्लेक हिल्स प्रदेश में तथा उटाह के हेनरी पर्वत प्रदेश में यह आकृति मिलती है। बिसमेलिथ का आच्छादित उच्च भूमि क्षेत्र माउण्ट हिलर्स कहलाता है।

बॉक्स 11.1 : बूँदाकार फुआरें

सिंडर आकार का फुआरा जिसमें से गैसों के साथ लावा की बूँदाकार फुआरें निकलती हैं। यद्यपि लावा भू-सतह पर आते ही थपड़ी (Cow Pats) की तरह जम जाता है, इनसे होर्निटो की तरह तीव्र ढालू शंकु बनते हैं।

(ix) **ज्वालामुखी ग्रीवा** (Volcanic Necks)—ज्वालामुखी के दरार को भरने वाले ज्वालामुखी पदार्थों का जब ऊपर से अपक्षय एवं अपरदन के कारण अनावृत्त (Exposure) हो जाता है तो ग्रीवा जैसे दिखाई देते हैं। इसका उदाहरण है मैक्सिको का शिपरॉक।

3. ज्वालामुखी से सम्बद्ध अन्य प्रमुख स्थलाकृतियाँ

(i) **धुँआरे अथवा सोल्फतारा** (Fumaroles or Solfataras)—जब ज्वालामुखी से राख एवं लावा निकलना बंद हो जाता है। इसके बाद बहुत दिनों तक विभिन्न तरह की गैसें एवं धुँआ निकलता रहता है। यह अवस्था धुँआरा अथवा सोल्फतारा कहलाती है। नेपल्स नगर (इटली) के पास 'सोल्फतारा' नामक गन्धकीय धुँआरा है जिसके नाम पर इसे सोल्फतारा कहते हैं। धुँआरे का विस्तृत क्षेत्र अलास्का में कटमई ज्वालामुखी के समीप है। इसे **'दस हजार धुँआरों की घाटी'** (A Velley of Ten Thousand Smokes) कहा जाता है। धुँआरे का तापमान 100° से 645° सेल्सियस तक होता है जिसमें CO_2, हाइड्रोक्लोरिक एसिड, हाइड्रोजन सल्फाइड, नाइट्रोजन व कुछ मात्रा में अमोनिया एवं ऑक्सीजन गैसें निकलती हैं। ईरान का कोह सुल्तान धुँआरा तथा न्यूजीलैण्ड की प्लेण्टी की खाड़ी में 'व्हाइट टापू धुँआरा' आदि अन्य प्रमुख धुँआरे हैं। जावा की विषैली घाटी (Poison Valley) में भी अनेक वाष्पमुख हैं। गंधकीय वाष्पमुख (Fumeroles) को सोल्फतारा, CO_2 वाष्पमुख को **मोफेटस** (Mofettes) तथा बोरिक एसिड वाले वाष्पमुख को **सेफिओनो** (Saffiono) कहते हैं।

(ii) **गीजर या गैसर** (Geysir or Geyser)—आइसलैण्ड की भाषा में **'गोसिर'** शब्द का अर्थ फुहार छोड़ने वाला (Sponter) होता है। होम्स के अनुसार, "गीजर गर्म पानी के स्रोत होते हैं, जिनसे कुछ समय के अन्तराल पर उष्ण जल एवं वाष्प तीव्रता से निकलती रहती है तथा 40-50 मीटर की ऊँचाई तक फैल जाती है।" आइसलैण्ड के ग्रेट गेसर में यह अन्तराल 24 या 30 घण्टे का होता है, जबकि विस्फोट केवल 10 मिनट के लिए होता है। इस जल का तापमान 75° सेल्सियस से 90° सेल्सियस तक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के वायोमिंग राज्य के **'यलोस्टन नेशनल पार्क'** में विश्व प्रसिद्ध **'ओल्ड फेथफुल'** सहित 100 गीजर हैं। आइसलैण्ड तथा न्यूजीलैण्ड में भी कई गीजर मिलते हैं। इनमें गर्म जल एवं वाष्प रुक-रुक कर निकलते रहते हैं। ये ज्वालामुखी के

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

गौण रूप हैं। जब पतले एवं संकरे छिद्रों से गैसर का उद्‌गार होता है तो इन्हें **संकरे गैसर** (Nozzle Type of Geyser) कहते हैं। उष्ण जल के स्रोत साइबेरिया के हिमावरित भागों में, भूमध्य रेखीय उष्ण भागों में व तिब्बत में भी मिलते हैं। अजोर्स के अतिरिक्त अफ्रीका एवं दक्षिणी अमेरिका में गैसर का अभाव पाया जाता है। गेसर के जल के ठण्डे होने पर निक्षेपित पदार्थ को **गेइजेराइट** कहते हैं।

(iii) **गर्म झरने** (Hot Springs)—सतह के अन्दर जब भूजल मैग्मा के सम्पर्क में आता है तो वह 35°C तक गर्म हो जाता है। जब यह उष्ण जल सतह से बाहर आता है तो इसे गर्म जल के झरने (सोते) कहते हैं। ऐसे झरने लद्दाख, मणीकर्ण, सोहना, राजगृह, राज महल, आइसलैण्ड एवं यलोस्टन नेशनल पार्क में मिलते हैं। इनसे गर्म जल निरन्तर निकलता रहता है। ये मुख्यत: ज्वालामुखी के आस-पास के क्षेत्रों में स्थित होते हैं। परन्तु कहीं-कहीं अन्य क्षेत्रों में भी ये पाए जाते हैं।

ज्वालामुखी उद्‌गार के कारण (Causes of Volcanism)

ज्वालामुखी उद्‌गार के वास्तविक कारण की इसके भू-गर्भ से सम्बन्धित होने के कारण खोज नहीं की जा सकी है, क्योंकि भू-गर्भ के बारे में अधिक एवं सटीक जानकारी नहीं मिल पाई है, फिर भी इनके कारणों में निम्नलिखित तथ्यों को महत्त्व दिया जा सकता है—

1. डेली महोदय के अनुसार संसार के सम्पूर्ण दरारी उद्‌गार से निकला लावा का 90 से 95 प्रतिशत भाग बेसाल्ट होता है। अत: ज्वालामुखी भू-गर्भ की बेसाल्ट परत से सम्बन्धित है।
2. अधिकांश ज्वालामुखी भू-पटल के कमजोर क्षेत्रों में फटते हैं। अत: कमजोर धरातल से इनका सम्बन्ध है।
3. ज्वालामुखियों की तटीय क्षेत्रों में उपस्थित इसके साथ जल के सम्बन्ध को प्रकाशित करती है।
4. कुछ विद्वान् पर्वत निर्माण क्रिया से ज्वालामुखी को सम्बन्धित करते हैं।

अत: ज्वालामुखी के उद्‌गार के लिए निम्नांकित कारक प्रमुख हैं—

(i) **पृथ्वी के आन्तरिक भाग के तापमान में वृद्धि** (Increasing Temperature in the Earth's Interior)—भू-गर्भवेत्ताओं के अनुसार पृथ्वी का निर्माण सूर्य से हुआ है। अत: इसका ऊपरी भाग ही ठोस अवस्था में है जबकि पृथ्वी के आन्तरिक भाग में अभी भी तीव्र तापमान के कारण पदार्थ गर्म एवं तरल अवस्था में पाए जाते हैं। यही कारण है कि प्रति 32 मीटर की गहराई पर 1° सेल्सियस तापमान बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त रेडियो एक्टिव तत्त्वों एवं ऊपरी चट्टानों के दबाव के कारण भी तापमान अधिक रहता है।

(ii) **मैग्मा का निर्माण** (Formation of Magma)—ज्वालामुखी के उद्‌गार में मैग्मा का प्रमुख स्थान होता है। मैग्मा की एक प्रमुख मेखला पृथ्वी के भू-गर्भ में पाई जाती है। इसके अलावा ऊपरी दबाव कम होने पर चट्टानें भी तापमान की अधिकता के कारण पिघलकर लावा में परिवर्तित हो जाती हैं।

(iii) **जलवाष्प एवं गैस** (Vapour and Gases)—ज्वालामुखी के उद्‌गार के समय 80 से 90 प्रतिशत भाग वाष्प का एवं हाइड्रोजन, कार्बन-डाइ-ऑक्साइड, सल्फर, अमोनिया आदि गैसों का प्रमुख स्थान होता है। जलवाष्प एवं गैस का निर्माण धरातलीय जल के कमजोर पर्तों में होकर पृथ्वी के भू-गर्भ में जाने पर तीव्र तापमान के कारण होता है। बाद में यही गैसें ज्वालामुखी उद्‌गार का प्रमुख कारण होती हैं। लावा एवं गैस बाद में कमजोर परत को तोड़कर ऊपर की ओर भयंकर विस्फोट के साथ धरातल पर प्रकट होती है जिसके कारण ज्वालामुखी का उद्‌गार होता है।

ज्वालामुखी क्रिया तथा प्लेट विवर्तनिकी (Volcanism and Plate Tectonics)

प्लेट विवर्तनिकी द्वारा ज्वालामुखी उद्‌भेदन की व्याख्या करने में सहायता मिलती है। मध्य महासागरीय कटकों के सहारे उद्‌गार में निकला लावा बेसाल्ट होता है जो मेंटिल के गलन द्वारा उत्पन्न होता है। इस तरह के उद्‌गार के रचनात्मक किनारों के सहारे होते हैं। मध्य महासागरीय कटकों के साथ-साथ सक्रिय ज्वालामुखी मिलते हैं। यहाँ दो प्लेटें विपरीत दिशाओं में खिसकती हैं। इसके कारण दाब कम होने से कटक के नीचे ऊपरी मेंटिल का पदार्थ पिघलकर लावा के रूप में दरार द्वारा बाहर निकलता है जिससे नई सागरीय क्रस्ट का निर्माण होता है।

विनाशात्मक प्लेट किनारों के सहारे विस्फोटक पदार्थ का ज्वालामुखी उद्‌गार होता है। जब दो प्लेटें आमने-सामने सरकती हैं तो आपसी टक्कर के कारण अधिक घनत्वयुक्त प्लेट कम घनत्व वाली प्लेट के नीचे क्षेपित हो जाती है। क्षेपित किनारा मेंटिल में सैकड़ों किमी. (700 किमी. तक) गहराई पर जाकर पिघल जाता है। इस क्षेत्र को बेनी ऑफ मण्डल (Beni off Zone) कहते हैं। यह लावा केन्द्रीय उद्‌गार के रूप में परि प्रशान्त मेखला वाले ज्वालामुखियों में प्रकट होता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चित्र 11.10 : प्लेट टेक्टोनिक्स के दौरान प्लेट के अधोगमन (धँसाव) क्षेत्र (लगभग 700-800 किमी. की गहराई) से ज्वालामुखी उद्गार के उद्भव की प्रक्रिया एवं संबंधित घटक

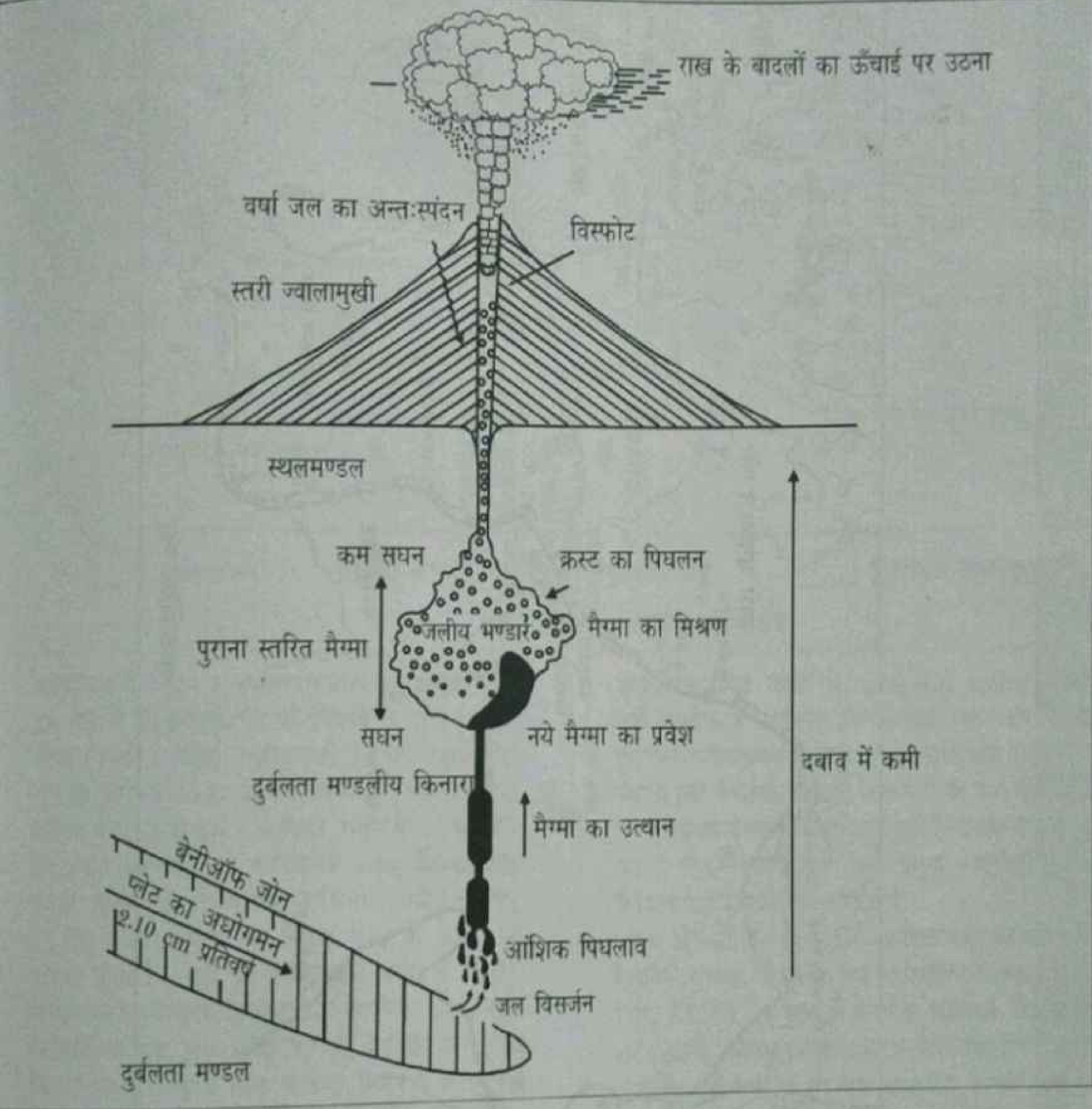

ज्वालामुखी का विश्व वितरण
(World Distribution of Volcanoes)

विश्व के अधिकांश ज्वालामुखी निश्चित पेटियों के रूप में पाए जाते हैं। लगभग दो-तिहाई ज्वालामुखी प्रशांत महासागर के चारों ओर फैले हुए हैं। शेष अन्य नवीन परतदार पहाड़ी क्षेत्रों, भ्रंश घाटियों एवं गहरे सागरों में स्थित हैं। विश्व के निम्न प्रमुख ज्वालामुखी पेटियाँ हैं—

1. **परिप्रशान्त महासागरीय पेटी** (Circum Pacific Belt)— यह प्रशांत महासागर के चारों ओर विस्तृत है। इसमें 403 सक्रिय ज्वालामुखी हैं। इसे 'प्रशांत महासागर का अग्निवृत्त या ज्वालावृत्त' (Pacific Ring of Fire or Fire Gridle of the Pacific Ocean) कहते हैं। प्रशांत महासागर के परिधीय क्षेत्र में पाए जाने वाले ये ज्वालामुखी न्यूजीलैण्ड से शुरू होकर इण्डोनेशिया, सेलीबीज, न्यूगिनी, सोलोमन द्वीप, फिलीपाइंस द्वीप समूह, जापान, कामचटका प्रायद्वीप, क्यूराइल, अल्यूशियन द्वीप समूह, अलास्का, रॉकीज एवं एण्डीज होते हुए अण्टार्कटिका के माउण्ट एरेबस तक फैले हुए हैं। ये ज्वालामुखी विनाशात्मक प्लेट किनारों से

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

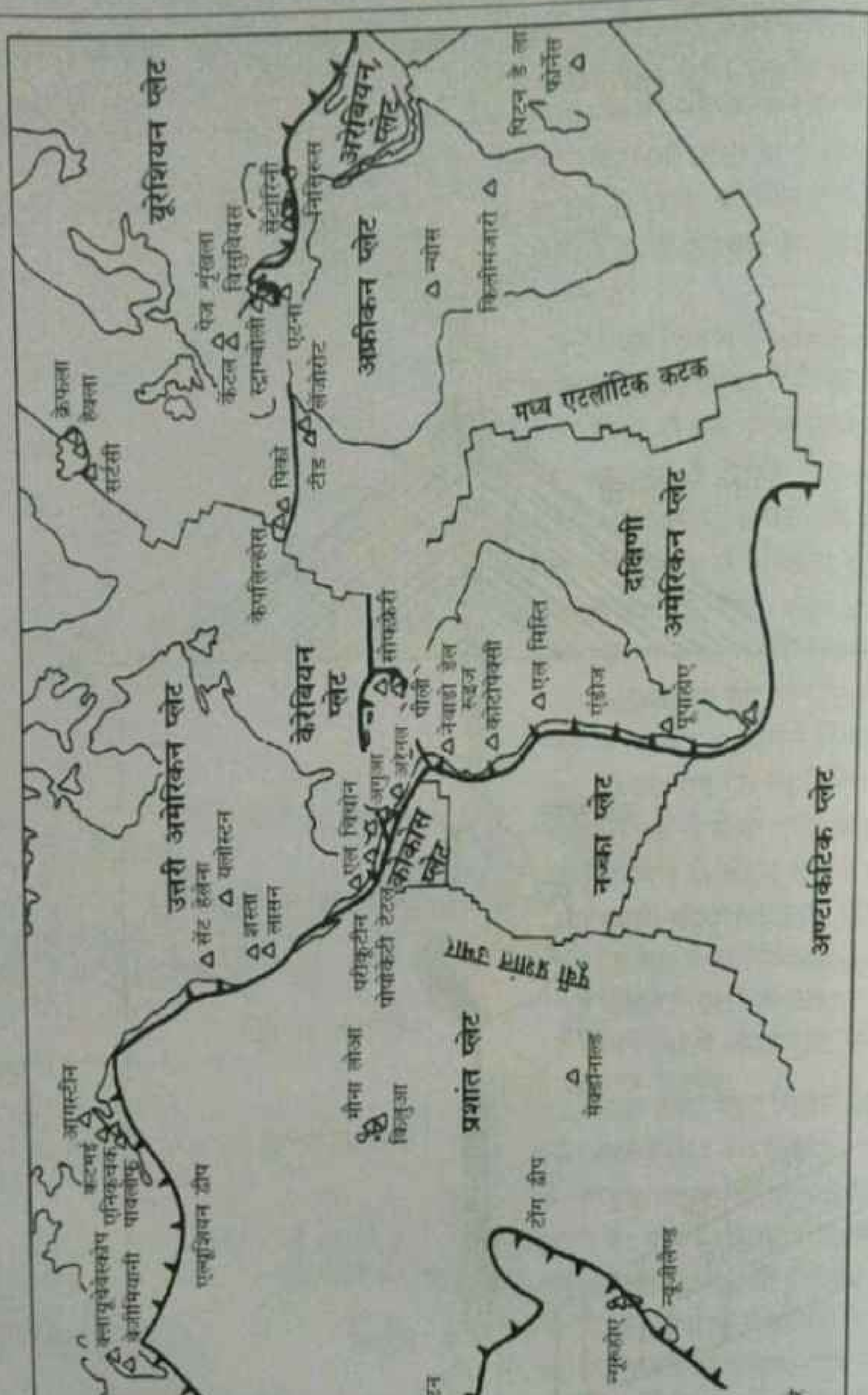

चित्र 11.12 : विश्व की प्रमुख ज्वालामुखी का वितरण

चित्र 11.13 : मध्य महासागरीय कटक एवं अधोगमन क्षेत्रों के सहारे ज्वालामुखियों का विकास

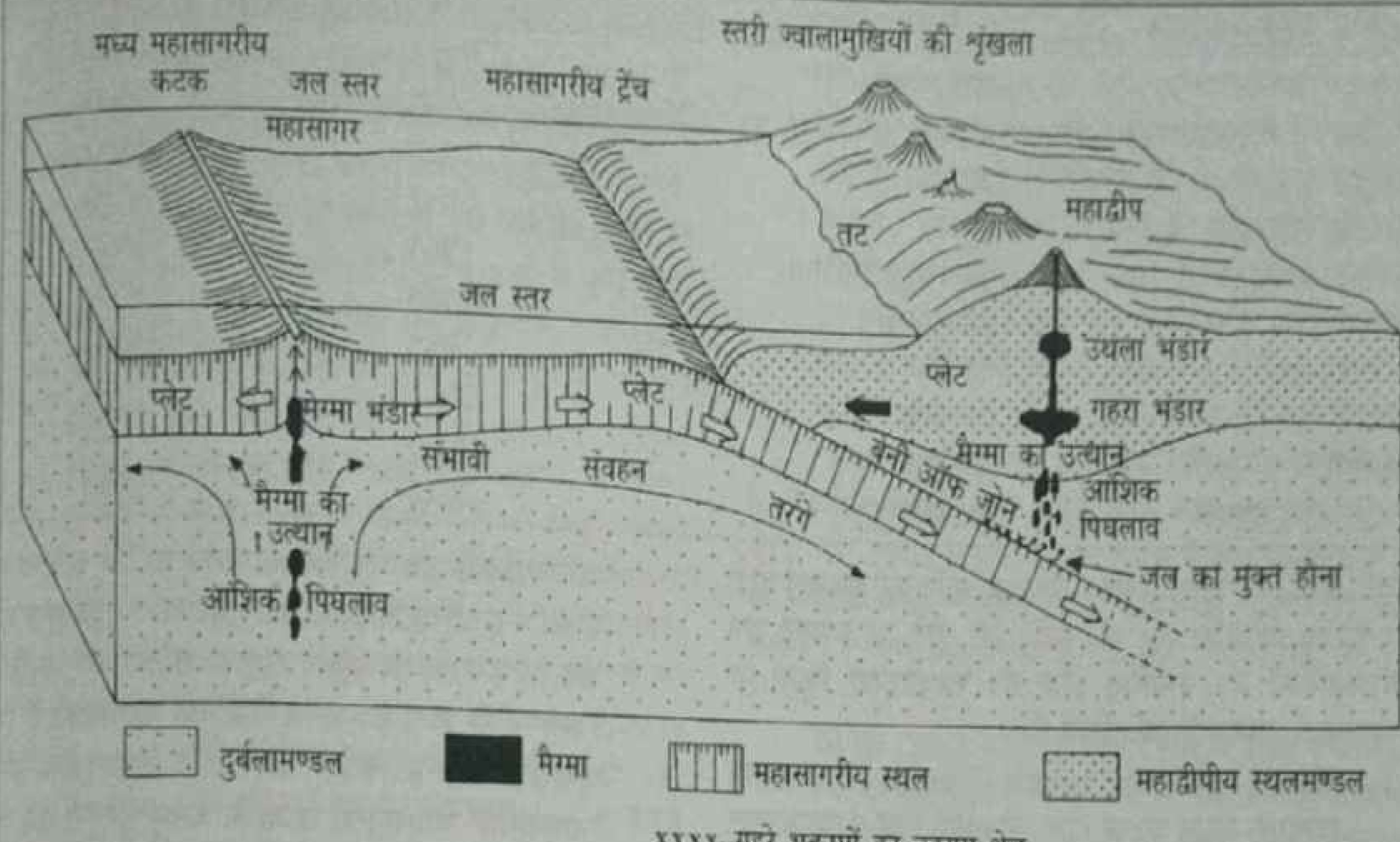

सम्बन्धित हैं। विश्व के अधिकांश उच्च ज्वालामुखी पर्वत इस पेटी में हैं। इक्वेडर का कोटोपैक्सी विश्व का सबसे ऊँचा (19613 फीट) ज्वालामुखी है। यह ज्वालामुखी शृंखला लगभग 3200 किमी. लम्बी है जिसमें सैकड़ों सक्रिय ज्वालामुखी तथा 1.6 किमी. व्यास के 10 काल्डेरा हैं। प्रशांत महासागर का बोगोस्लोक (Bogoslok) द्वीप प्रमुख ज्वालामुखी द्वीपीय चोटी है जिसका आधार लगभग 13 किमी. व्यास में है तथा ऊँचाई सागर के आधार से 1500 मीटर है। यहाँ 22 ज्वालामुखी पर्वत हैं जिनमें जापान का फ्यूजीयामा, संयुक्त राज्य अमेरिका का शस्ता, रेनडियर व हुड, मध्य अमेरिका का चिम्बोरे जो तथा फिलीपिन्स के माउण्ट ताल, माउण्ट मेयान व पिनाटुबो प्रमुख हैं। प्रशांत महासागर में जल के नीचे विश्व का सबसे बड़ा ज्वालामुखी टामू मेसिफ (Tamu Massif) है।

2. **मध्य महाद्वीपीय पेटी** (Mid Continental Belt)—यह पेटी यूरोप तथा एशिया के मध्यवर्ती भागों में आल्पस तथा हिमालय पर्वतों के सहारे पूर्व से पश्चिम दिशा में फैली हुई है। यह मैडिरा तथा कनारी द्वीप समूह से आरम्भ होकर भूमध्य सागर, काकेशस, आरमेनिया, ईरान, बिलोचिस्तान से होती हुई हिमालय क्षेत्र में प्रवेश करती है। यहाँ से आगे भूटान, म्यांमार, अण्डमान निकाबोर तथा इण्डोनेशिया तक विस्तृत है। इस पेटी में लेसर एण्टेलीज, दक्षिणी एण्टेलीज, अजोरस, सेंट हेलेना आदि प्रमुख ज्वालामुखी हैं।

3. **अफ्रीकन रिफ्ट घाटी** (African Rift Valley)—यह पूर्वी अफ्रीका में टांगनिका झील से लाल सागर तक फैलते हुए फिलीस्तीन तक विस्तृत है। इसका सर्वाधिक क्रियाशील ज्वालामुखी कैमरून पर्वत है। रिफ्ट घाटी के पास तंजानिया का किलीमंजारो नामक मृत ज्वालामुखी है। इसके अतिरिक्त मेरु, एल्गान, बिरूंगा एवं रंगवी प्रमुख ज्वालामुखी हैं। कैमरून एक जाग्रत ज्वालामुखी है।

4. **अन्य क्षेत्र** (Other Areas)—अटलाण्टिक महासागर में केप वर्डे, एजोर्स, सेंट हैलेना तथा आइसलैण्ड के ज्वालामुखी प्रमुख हैं। हिन्द महासागर में कोमोरा, मॉरीशस, रियुनियन आदि प्रमुख ज्वालामुखी हैं। अण्टार्कटिका महाद्वीप में रास सागर के तटीय भागों पर बुस तथा टेरर नामक सक्रिय ज्वालामुखी हैं। आइसलैण्ड में 1783 का लाकी, 1974 का हेकला तथा 1973 का हैल्गाफेल प्रमुख उद्गार रहे हैं।

ज्वालामुखी क्रिया के प्रभाव
(Effects of Volcanoes)

ज्वालामुखी क्रिया एक प्रमुख प्राकृतिक आपदा के रूप में प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरणीय स्वरूपों पर विनाशकारी प्रभाव डालती है। ज्वालामुखी उद्गार से निःसृत ज्वलन्त लावा प्रवाह, विभिन्न प्रकार के ठोस शैल टुकड़े तथा विषैली गैसें अपना दुष्प्रभाव पर्यावरण में छोड़ते हैं। इनसे मानव निर्मित

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

सारणी 11.3 भीषण ज्वालामुखी उद्गार से हुई जन-हानियाँ

ज्वालामुखी का नाम	स्थान	वर्ष	मृत व्यक्तियों की संख्या
स्केप्टर जोकुल	आइसलैण्ड	1783	1000
माउण्ट पीली (कैरीबियन सागर)	पश्चिमी द्वीप समूह का मार्टिनिक द्वीप	1902	3000
केलुत	जापान	1919	5500
माउण्ट लैमिंगटन	पपुआ	1951	3000
माउण्ट अगंग	बाली (इण्डोनेशिया)	1963	1500
माउण्ट ताल	फिलीपिन्स	1965	5000
कोलम्बिया	कोलम्बिया	1985	23000
मेयान	फिलीपिन्स,	2001	—
केल्बूको	चीली	2010	—
इजाफ्जालाजोकुल	आइसलैण्ड	2015	2000

भवन, छोटे-बड़े बाँध, सड़कें, जलाशय आदि का नुकसान होता है। इनके अतिरिक्त वन क्षेत्र की क्षति होने पर सम्पूर्ण वन पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित होता है। ज्वालामुखी क्रिया के विनाशकारी प्रभाव निम्नलिखित हैं—

1. **जलवायु परिवर्तन** (Climatic Change)—ज्वालामुखी उद्गार के दौरान धूलकण तथा राख भारी मात्रा में वायुमण्डल में प्रवेश कर जाती है, जिस कारण मौसम तथा जलवायु में क्षेत्रीय तथा प्रादेशिक स्तर पर परिवर्तन हो जाते हैं। धूलकण भू-तल पर पहुँचने वाली सूर्य विकिरणों को कम करते हैं, जिससे भू-सतह पर तापमान कम हो जाता है। वैज्ञानिक फ्रेंकलिन (B. Franklin, 1789) ने ज्वालामुखी क्रिया तथा मौसम एवं जलवायु के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध स्पष्ट कर इस संदर्भ में बताया कि आइसलैण्ड में वर्ष 1783-84 में लाकी ज्वालामुखी के उद्गार के, तुरन्त बाद तापमान में गिरावट हुई तथा मौसम ठण्डा हुआ था। एच.एच. लम्ब ने स्पष्ट किया कि ज्वालामुखी क्रिया के दौरान निःसृत धूल-धुआँ आवरण यदि वृहद् स्तर पर फैलता है, तो इस धूलि आवरण (Dust Cover) का प्रभाव मौसम पर अगले लगभग सात वर्षों तक उपस्थित रहता है। कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में 1883 में क्राकाटाओ ज्वालामुखी के उद्गार के कारण तापमान में कमी हुई थी, किन्तु बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जब इस ज्वालामुखी के कारण निर्मित समताप मण्डलीय धूलि आवरण का प्रभाव समाप्त हो गया तो तापमान में पुनः वृद्धि होने लगी, वास्तविक रूप में यह तापमान में वृद्धि नहीं थी, वरन् तापमान की पुनः प्राप्ति थी।
2. **पारिस्थितिकीय परिवर्तन** (Ecological Change)—ज्वालामुखी उद्गार से निःसृत धूल एवं राख का प्रभाव पारिस्थितिकी तंत्र के जैविक घटकों पर भी दृष्टिगोचर होता है। कुछ वैज्ञानिकों के मतानुसार ज्वालामुखी धूल एवं राख के भू-सतह पर पहुँचने से कुछ जातियों का सामूहिक विलोपन हो जाता है। अनेक वैज्ञानिक यही मानते हैं कि जुरासिक काल में विचरण करने वाले विशालकाय जीव 'डायनासोर' ज्वालामुखी क्रिया के कारण विलुप्त हुए थे। वैज्ञानिकों का एक अन्य वर्ग यह मानता है कि 'डायनासोर' पृथ्वी के साथ किसी लघु ग्रह से टक्कर के कारण विलुप्त हुए थे। संयुक्त राज्य अमेरिका की नासा (NASA) संस्थान के अन्तरिक्ष अध्ययन की गोडार्ट संस्थान (न्यूयॉर्क) के प्रतिवेदन के आधार पर माइकिल रेम्पिनो ने बताया कि भारत के दक्कन लावा उद्गार के कारण एक सप्ताह के अंदर 1000 घन किमी. बेसाल्टिक लावा प्रवाह के कारण वायुमण्डल में इतनी अधिक मात्रा में धूल, राख, गैस तथा वाष्प का प्रवेश हुआ होगा कि समताप मण्डल में घने आवरण के कारण घोर अन्धकार व्याप्त हो गया होगा, जिसके कारण प्रवेशी सौर विकिरण के पृथ्वी तक न पहुँचने के कारण नाभिकीय शीत (Nuclear Winter) के समान प्रचण्ड शीत दशा व्याप्त हो गई होगी, साथ ही अम्लवृष्टि भी हुई होगी तथा सल्फ्यूरिक अम्ल एयरोसॉल वाले घने बादलों के कारण जलवायु ठण्डी हो गई होगी, जिसका हानिकारक प्रभाव जीव-जन्तुओं पर पड़ा। 1883 में क्राकाटाओ ज्वालामुखी विस्फोट के कारण क्राकाटाओ द्वीप का 67 प्रतिशत भाग धँसकर जल-प्लावित हो गया, जिस कारण वहाँ पर जैविक अनुक्रम (Biotic Succession) की विकसित हो रही प्राथमिक स्तर की वनस्पतियाँ तथा जीव-जन्तु नष्ट हो गए। जहाँ पुनः जैविक अनुक्रमण की प्रक्रिया आरम्भ हुई तथा अगले 50 वर्षों में

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्राथमिक तथा द्वितीय अनुक्रमण विकसित हो पाए। ज्ञातव्य है कि किसी भी बंजर भूमि या वनस्पतिविहीन अवस्था में वहाँ पर धीरे-धीरे वनस्पति आवरण तथा जीव-जन्तुओं के आविर्भाव को जैविक अनुक्रमण कहते हैं। यह दो अवस्थाओं में होता है—प्राथमिक एवं द्वितीयक। पूर्ण विकसित समुदाय में जैविक अनुक्रमण की अंतिम अवस्था को चरम अवस्था कहते हैं। अनेक द्वीप भी सागर में डूब जाते हैं। 1831 में सिसली के पास डूबे ग्राहम द्वीप की हाल ही में पुनः खोज की है जो एटना ज्वालामुखी की सक्रियता से सागरीय सतह पर आ रहा है। अब यह मात्र 26 फीट नीचे रहा है।

3. **जोकुल हुप्स का निर्माण** (Formation of Jokull Hapus)—जोकुल हुप्स ज्वालामुखी उद्गार के कारण तापमान में वृद्धि के कारण हिमटोपियों की हिम पिघलने से बनी जलराशि को कहते हैं। आइसलैण्ड के हिममण्डित पर्वतों को जोकुल (Jokull) कहते हैं। प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता डडले स्टेम्प के अनुसार हिमनद से निकलने वाली नदी को *'Jokull'* कहते हैं। (Jokull is a River form a Glacier) जबकि ग्रिफिथ टेलर ने छोटी हिमटोपियों (Small Ice Caps) को जोकुल कहा है। ज्वालामुखी उद्गार प्रबल होता है तो उच्च तापन क्षमता वाला लावा निःसृत होकर सम्पूर्ण हिमचादर को पिघला देता है तथा जल प्रवाहित होने लगता है। मार्च से जून, 2010 में आइसलैण्ड में हुआ इजाफ्जाला जोकुल भी 100 किमी. लम्बी एक हिमटोपी है। जिसमें 15 मिलियन घन मीटर वायु, हिम एवं जल निःसृत हुआ इससे आकाश में बड़ी मात्रा में धुआँ का आवरण बन गया था।

4. **सांस्कृतिक पर्यावरण को हानि** (Loss is Cultural Environment)—ज्वालामुखी क्रिया के दौरान निःसृत विभिन्न अवस्थाओं (ठोस, द्रव तथा गैस) के पदार्थ सांस्कृतिक पर्यावरण को हानि पहुँचाते हैं। अनेक मानव निर्मित संरचनाएँ तप्त लावा प्रवाह के नीचे दब जाती हैं। नदियाँ, झीलें तथा अन्य छोटे-बड़े जलाशय लावा से भर जाते हैं। वनावरण नष्ट हो जाता है। हवाई द्वीप की लोआ ज्वालामुखी उद्गार से निःसृत लावा लोआ पर्वत पर 53 किमी. की दूरी तक फैल गया। इनके अतिरिक्त धूल, राख तथा ठोस पदार्थों के आवरित होने से कृषि फसलें तथा फलोद्यान (Orchards) भी नष्ट हो जाते हैं।

विभिन्न दुष्परिणामों में सर्वाधिक हानिकारक जनहानि होती है। ज्वालामुखी उद्गार से अनेक लोग काल का ग्रास बन जाते हैं। 8 मई, 1902 को कैरीबियन सागर में स्थित मार्टिनक द्वीप के माउण्ट पीली ज्वालामुखी के अकस्मात् उद्गार के कारण समीपवर्ती नगर सेंट पियरे के 28,000 निवासियों की मृत्यु हो गई।

24 जून, 2001 को मध्य फिलीपिन्स में मेयान ज्वालामुखी में भीषण विस्फोट हुआ। ज्वालामुखी के फटते ही लावा फव्वारे की तरह निकला, चट्टानें दलदली हो गईं। बारह किमी. तक शहर एवं गाँव डगमगा गए। सूचना प्रस्तुत करने वाले अधिकारियों ने बताया कि मेयान ज्वालामुखी के क्रेटर से जलती हुई राख हवा में एक से डेढ़ किमी. ऊपर तक उड़ती दिखाई दी। फिलीपिन्स के वोल्केनोलॉजी और सिस्मोलॉजी इंस्टीट्यूट (Institute of Volcanology and Seismology) के वैज्ञानिकों ने बताया कि यहाँ से 8 किमी. तक लगभग सात हजार ग्रामीण अपना घर छोड़कर दूर सुरक्षित स्थानों पर चले गए।

❑❑❑

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न- भूकम्प उत्पत्ति के कारण, प्रभाव, तथा वर्गीकरण को समझाइये।

भूकम्प भू-पटल में उत्पन्न होने वाला वह आकस्मिक कम्पन है, जिससे भू-पटल में परिवर्तन उत्पन्न होता है। भूकम्प भू-पटल की कम्पन अथवा दोलन है जो धरातल के नीचे तथा ऊपर चट्टानों के लचीलेपन या गुरुत्वाकर्षण की समस्थिति में क्षणिक अव्यवस्था होने पर उत्पन्न होती है। भूकम्पीय संचलन प्राकृतिक तथा मानव जनित भूकम्पीय अधिकेन्द्र (Epicentre) दोनों रूप में होता है।

भूकम्प की लहरें ठीक उसी प्रकार उत्पत्ति केन्द्र से चतुर्दिक प्रसरित होती हैं जिस प्रकार से शांत तालाब में पत्थर फेंकने पर गोलाकार लहरें उत्पन्न होकर फैलती हैं। भूकम्प का प्रभाव दो रूपों में होता है—(i) ऊर्ध्वाधर (Vertical) धँसाव, एवं (ii) क्षैतिज (Horizontal) तरंगों द्वारा विनाश।

भूकम्प मूल (Seismic Focus)—पृथ्वी की सतह के नीचे भू-पटल में स्थित वह केन्द्र जहाँ भूकम्प की उत्पत्ति होती है, भूकम्प मूल कहलाता है। भूकम्पीय तरंगें सर्वप्रथम इस केन्द्र पर उत्पन्न होकर अभिकेन्द्र की ओर अग्रसर होती हैं। विभिन्न भूकम्पों में भूकम्प मूल की गहराई भिन्न-भिन्न होती है।

भूकम्प अधिकेन्द्र (Seismic Epicentre)—भूकम्प मूल में ठीक ऊपर भू-तल पर स्थित वह बिन्दु, जहाँ सर्वप्रथम भूकम्पीय तरंगें महसूस की जाती हैं, अधिकेन्द्र कहलाता है। अधिकेन्द्र पर तरंगों की तीव्रता सर्वाधिक होने के कारण यह अधिकतम विनाश वाला स्थान होता है। भूकम्पीय अधिकेन्द्र के चारों ओर स्थित समान भूकम्पीय तीव्रता (Seismic Intensity) वाले स्थानों को मिलाने वाली रेखाओं को **समभूकम्प रेखाएँ** (Isoseismal Lines) कहते हैं। जिस यंत्र से भूकम्प की तरंगों

चित्र 12.1 : भूकम्प मूल एवं अधिकेन्द्र

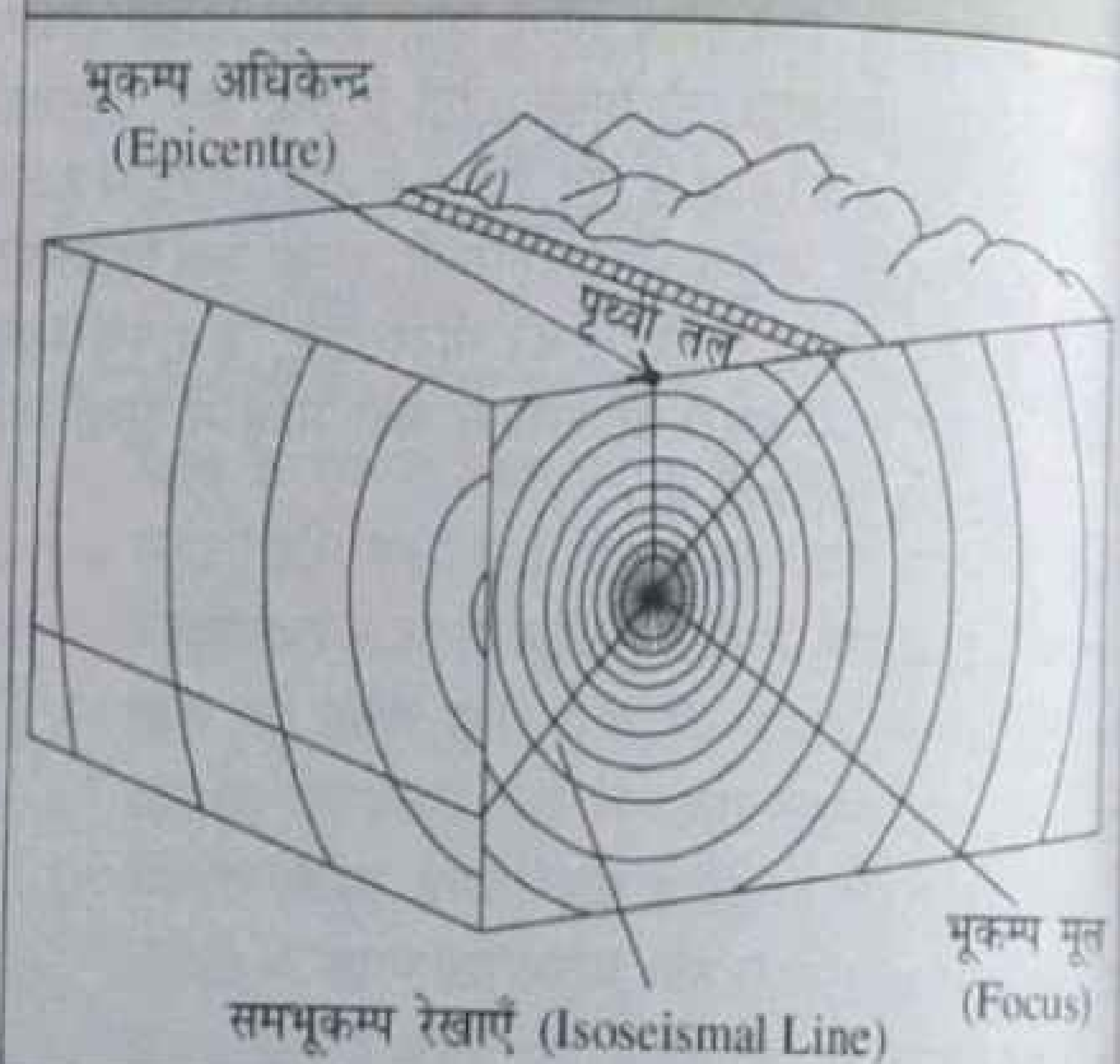

का अंकन करते हैं उसे **भूकम्पमापी** या **भूकम्पलेखी** (Seismometer or Seismograph) कहते हैं।

भूकम्प उत्पत्ति के कारण
(Causes of Earthquakes)

भूकम्प का सर्वप्रमुख कारण धरातल पर सन्तुलन में अव्यवस्था का उत्पन्न होना है। भूगर्भिक हलचलों के कारण भू-पटल तथा उसकी शैलों में सम्पीड़न एवं तनाव होने से शैलों में उथल-पुथल होती है जिससे भूकम्प उत्पन्न होते हैं। विश्व के अधिकांश

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भूकम्प दुर्बल तथा अस्थिर ज्वालामुखी क्षेत्रों और नवीन वलित पर्वतीय क्षेत्रों में उत्पन्न होते हैं। भूकम्प के प्रमुख वैज्ञानिक कारणों में से निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं—

1. **ज्वालामुखी क्रिया** (Volcanic Activity)—ज्वालामुखी के उद्गार के साथ प्रायः भूकम्प आता है। ज्वालामुखी क्रिया में जब तीव्र एवं वेगवती गैसें एवं वाष्प बाहर आने के लिए धक्के लगाती हैं, तो भू-पटल में कम्पन होने लगता है। इस कम्पन से भयंकर भूकम्प महसूस किया जाता है। जहाँ भू-पटल कमजोर होता है वहाँ भी वेगवती गैसें तीव्रता से भू-पटल को तोड़कर सतह पर आ जाती हैं जिसके कारण कम्पन उत्पन्न हो जाता है। इनकी उत्पत्ति कम गहराई से होती है तथा प्रभाव क्षेत्र भी छोटा ही होता है। लेकिन इनकी तीव्रता अधिक देखी गई है। 1883 में क्राकाटाओ ज्वालामुखी (जावा एवं सुमात्रा के मध्य में स्थित सुण्डा जलडमरूमध्य पर स्थित है।) में भयंकर उद्गार हुआ जिससे वहाँ विनाशकारी भूकम्प आया। इसे 12,800 किमी. दूर दक्षिणी अमेरिका के केप हॉर्न पर महसूस किया गया। इससे सागर में 30 से 40 मीटर ऊँची सुनामी तरंगें उत्पन्न हुईं जिससे जावा व सुमात्रा के 36,000 लोग मारे गए।

   ज्वालामुखी क्रिया भूकम्प का केवल स्थानीय कारण ही है, क्योंकि संसार में कई ऐसे स्थान भी हैं जहाँ ज्वालामुखी क्रिया नहीं होती, फिर भी वहाँ भूकम्प आते रहते हैं।

2. **विवर्तनिक कारण** (Tectonic Reasons)—भू-गर्भिक हलचलों के परिणामस्वरूप तनाव एवं सम्पीड़न से भू-पृष्ठ पर भ्रंशन (Faulting) एवं वलन (Folding) क्रिया होती है जिनसे कम्पन उत्पन्न होते हैं। जब चट्टानों में खिंचाव की शक्तियाँ कार्य करती हैं तो भू-पटल में दरार बन जाती है। इसी प्रकार जब भू-भाग भ्रंश तल के सहारे नीचे की ओर खिसक जाता है अथवा ऊपर उठ जाता है तब क्रमशः रिफ्ट घाटी एवं हॉर्स्ट पर्वत का निर्माण होता है। भू-पटल में इन अचानक आए परिवर्तनों से कम्पन होने लगता है। अफ्रीका की महान् दरार घाटी एवं कैलिफोर्निया के सान एण्ड्रियाज भ्रंश के सहारे भूकम्प (1906) आने का यही कारण है। प्रायद्वीपीय भारत में दक्कन ट्रेप के नीचे भ्रंशों के सक्रिय होने से भूकम्पों की आवृत्ति बढ़ती है। सम्पीड़न द्वारा भू-पटल पर मोड़ या वलन पड़ जाने से वलित पर्वत बनते हैं। यह क्रिया तीव्रता से सम्पन्न होने पर भूकम्प का अनुभव होता है। इसी कारण अधिकांश भूकम्प विश्व की नवीन मोड़दार पर्वत शृंखलाओं (हिमालय, आल्पस, रॉकीज, एण्डीज) में आते हैं।

3. **समस्थितिक समायोजन** (Isostatic Adjustment)—भू-तल के ऊपर उठे एवं नीचे धँसे भागों में प्रायः सन्तुलन की व्यवस्था कायम रहती है। लेकिन कभी-कभी इस व्यवस्था में अचानक व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो भूकम्प अनुभव किया जाता है। किसी स्थलरूप के उत्थान के बाद अनाच्छादन के कारकों द्वारा उसका निम्नीकरण किया जाता है जिससे उत्पन्न मलबे का जमाव झीलों व सागरीय भागों में होने लगता है। इस प्रक्रिया में पर्वतीय भागों के भार में कमी एवं सागरीय भाग के भार में वृद्धि होते रहने से भू-सन्तुलन समाप्त हो जाता है। इस सन्तुलन की पुनर्स्थापना हेतु पर्वतीय भाग ऊपर उठने लगते हैं तथा सागर तली नीचे की ओर धँसने लगती है। इस क्रिया के तीव्रता से होने पर भूकम्प उत्पन्न होते हैं।

4. **स्थानीय कारण** (Local Causes)—ऐसे छोटे-छोटे परिवर्तन जिनका प्रभाव सीमित क्षेत्र में ही हो पाता है, उदाहरणार्थ, चूना प्रदेश में अपरदन द्वारा निर्मित कन्दराओं की छत के धँसकने तथा महाद्वीपीय भग्नतट के किसी भाग के अचानक टूटने एवं पर्वतीय भागों में भू-स्खलन व शिला फिसलन द्वारा भूकम्प आ जाते हैं। भू-पटल के नीचे जल पहुँचने पर अत्यधिक ताप के कारण वह जलवाष्प में परिवर्तित हो जाता है। तीव्रता अधिक होने पर यह जल वाष्प ऊपर आने के प्रयास में भूकम्प को जन्म देती है।

5. **भू-पटल सिकुड़न** (Crustal Shrinking)—पृथ्वी अपनी उत्पत्ति के बाद से ही लगातार ठण्डी होती जा रही है। इस प्रकार विकिरण द्वारा ताप ह्रास से पृथ्वी की पपड़ी में सिकुड़न आ जाती है। जेफ्रीज के अनुसार, इसी प्रक्रिया द्वारा पर्वतों का निर्माण हुआ है। जब संकुचन अथवा सिकुड़न शीघ्रता से होता है तो भूकम्प अनुभव किए जाते हैं।

6. **प्लेट-विवर्तनिकी** (Plate-Tectonics)—नवीन मान्यता के अनुसार भूकम्पों की उत्पत्ति को प्लेट-विवर्तनिकी द्वारा समझाया जा सकता है। ज्यादातर भूकम्पीय घटनाएँ तीनों प्रकार के प्लेट किनारों (रचनात्मक, संरक्षी एवं विनाशात्मक) के सहारे घटित होती हैं। **रचनात्मक प्लेट किनारों की स्थिति मध्य महासागरीय कटकों** (Mid-Oceanic

बॉक्स 12.1 : प्रत्यास्थ पुनश्चलन सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन रीड (H.F. Reid) ने किया। इनके अनुसार चट्टानों में प्रत्यास्थता (लचीलापन) होती है। चट्टानें खिंचाव बल द्वारा धीरे-धीरे बढ़ती हैं तथा खिंचाव इनकी सहनशक्ति से अधिक होने पर टूट जाती हैं। इस प्रकार शैलों के अचानक टूटने पर विखण्डित भाग शीघ्रता से सिकुड़कर अपना स्थान ग्रहण करते हैं। इसी दौरान भू-पटल में कम्पन होने से भूकम्प क्रिया होती है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Ridges) के साथ-साथ होती है जहाँ दो प्लेटें एक-दूसरी से विपरीत दिशाओं में खिसकती हैं। प्लेटों के खिसकने पर उनके किनारों के बीच जो स्थान रिक्त हो जाता है वहाँ दाब कम होने से मेंटिल का ऊपरी भाग पिघल जाता है, जिससे लावा दरारी उद्गार के रूप में ऊपर निकलता है। साथ ही इन क्षेत्रों में भूकम्प की उत्पत्ति होती है। संरक्षी प्लेट किनारों के सहारे दो प्लेटें एक-दूसरे के अगल-बगल में सरकती हैं तो **रूपान्तर भ्रंश** (Transform Fault) का निर्माण होता है। परिणामस्वरूप तीव्र भूकम्प आते हैं। विनाशात्मक प्लेट किनारों पर दो प्लेटें आपस में टकराती हैं। इस क्रिया में ज्यादा घनत्व वाली प्लेट का किनारा कम घनत्व वाली प्लेट किनारे के नीचे क्षेपित होता है। यह क्षेपित भाग मेंटिल में जाकर पिघल जाता है तथा पिघलकर केन्द्रीय उद्गार के रूप में धरातल पर प्रकट होता है जिससे अधिक गहरे भूकम्प मूल वाले भूकम्प उत्पन्न होते हैं। सान एण्ड्रियाज भ्रंश (The San Andreas Fault) विश्व का सटीक रूप से अध्ययन किया प्रारूपिक भ्रंश तंत्र (Typical Fault System) है जो 1040 किमी. लम्बाई में कैलिफोर्निया के पश्चिमी तट के सहारे स्थित है। इसकी शाखाएँ लॉस एन्जिल्स तक जाती हैं। यह भ्रंश अनेक भूकम्पों का केन्द्र रहा है जहाँ 1906 का सान फ्रांसिस्को भूकम्प महत्त्वपूर्ण है। इसके उपरान्त 1989 में लोमाप्रियटा भूकम्प प्रमुख है। इस भूकम्प का मूल कारण उत्तरी अमेरिका एवं प्रशांत प्लेट के मध्य होने वाला संचलन मानते हैं। प्रशांत प्लेट प्रतिवर्ष कुछ से.मी. उत्तरी पश्चिमी दिशा में संचालित हो रही है।

7. **मानव जनित कारक** (Anthropogenic Factors)—महत्त्वाकांक्षी मानव ने प्रगति पथ पर अग्रसर रहते हुए अनेकों बार अपने कार्य-कलापों द्वारा भू-पटल को कम्पित किया है, उदाहरणार्थ, परमाणु विस्फोटों के भूमिगत परीक्षणों द्वारा भूमि में कम्पन होता है। खानों एवं सुरंगों को खोदते समय उनकी छतों के धँसने से भूकम्प आते हैं। बहुउद्देशीय परियोजनाओं के अन्तर्गत विशाल जलाशयों के निर्माण में सन्तुलनावस्था छिन्न-भिन्न हो जाती है जिससे भूकम्पों का आविर्भाव होता है। 1929 में ग्रीस में निर्मित मेराथन बाँध के कारण 1931 में भूकम्प आया। इसी प्रकार 1935 में कोलोरेडो नदी पर निर्मित हुवर बाँध से भूकम्प आया था। भूकम्पलेखी से प्राप्त साक्ष्यों के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ है कि बड़े भूकम्प समय के साथ अनियमित या यादृच्छिक नहीं है तथा विश्व में बड़े भूकम्पों का प्रारूप एक सामयिक रूप में पाया जाता है अर्थात् ये निश्चित समय चक्र में आए है। 1910 से 1990 के मध्य भूकम्पों से मुक्त ऊर्जा 20 से 30 वर्षों के चक्र में रही है। कैलिफोर्निया में 1980 से भूकम्पीय क्रिया बढ़ी है। विश्व के बड़े भूकम्प 20वीं शताब्दी में अधिक आए हैं।

भूकम्पों का वर्गीकरण
(Classification of Earthquakes)

भूकम्प उत्पत्ति के उल्लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक भूकम्प की अपनी कोई विशेषता होती है। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर भूकम्पों का वर्गीकरण किया जा सकता है।

1. भूकम्प मूल के आधार पर वर्गीकरण (Classification According to Focus)

विश्व के अधिकांश भूकम्प (90 प्रतिशत) धरातल से 10 किमी. से भी कम गहराई पर उत्पन्न होते हैं। अब तक 720 किमी. की अधिकतम गहराई पर उत्पन्न भूकम्प के बारे में पता चला है। भूकम्प मूल की गहराई के आधार पर भूकम्प निम्नलिखित तीन प्रकार के माने जाते हैं—

(i) **छिछले भूकम्प** (Shallow Earthquakes)—जिन भूकम्पों का भूकम्प मूल 0 से 70 किमी. (0 से 43 मील) की गहराई पर हो उन्हें छिछले भूकम्प माना जाता है। इस प्रकार के भूकम्पों से अपेक्षाकृत जन-धन की हानि होती है।

(ii) **मध्यवर्ती भूकम्प** (Intermediate Earthquakes)—इन भूकम्पों का भूकम्प मूल भू-सतह के नीचे 70 से 300 किमी. (43 से 186 मील) की गहराई पर होता है।

(iii) **गहरे भूकम्प** (Deep Earthquakes)—वे भूकम्प जो 300 किमी. से भी अधिक गहराई पर उत्पन्न होते हैं। इतनी अधिक गहराई वाले भूकम्प बहुत कम संख्या में आते हैं।

2. उत्पत्ति कारकों के आधार पर वर्गीकरण (Classification Based on Originating Factors)

(क) **प्राकृतिक भूकम्प** (Natural Earthquakes)—वे भूकम्प जिनके उत्पन्न होने में प्राकृतिक कारण जिम्मेदार हैं। भूपटल को प्रभावित करने वाले अन्तर्जात बलों द्वारा इनकी उत्पत्ति होती है। इन्हें पुन: उपवर्गों में बाँटा जा सकता है—

(i) **सन्तुलन-मूलक भूकम्प** (Isostatic Earthquakes)—पृथ्वी के सन्तुलनावस्था में अव्यवस्था होने पर अधिकतर नव उत्थित वलित पर्वतीय क्षेत्रों में उत्पन्न होते हैं, उदाहरणार्थ, हिन्दुकोह (1949) का भूकम्प इसी प्रकार का भूकम्प था।

(ii) **ज्वालामुखी भूकम्प** (Volcanic Earthquakes)—वे भूकम्प जो ज्वालामुखी क्षेत्रों में पाए जाते हैं तथा ज्वालामुखी क्रिया के साथ ही जिनकी उत्पत्ति होती

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

है। उदाहरण के लिए, क्राकाटोआ (1883), कटमई (1912) एवं एटना (1968) के विनाशकारी भूकम्पों का कारण अधिक तीव्रता वाले ज्वालामुखी का फटना था।

(iii) **वितलीय भूकम्प** (Plutonic Earthquakes)—पृथ्वी की आन्तरिक उष्मा द्वारा खनिजों के पुनर्गठन की क्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले भूकम्प जो भू-सतह से अधिक गहराई (300 से 720 किमी.) पर उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार के भूकम्पों के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती है।

(iv) **विवर्तनिक भूकम्प** (Tectonic Earthquakes)—भू-पटल में जब कोई नवीन भ्रंश बनता है अथवा पूर्व में निर्मित भ्रंश पर गति होती है तो इस प्रकार के भूकम्प महसूस होते हैं। 1906 का सान फ्रांसिस्को भूकम्प, जापान का संगामी की खाड़ी (1923) का भूकम्प तथा कैलिफोर्निया की इम्पीरियल घाटी (1940) का भूकम्प इसी प्रकार के भूकम्पों के उदाहरण हैं।

(ख) **कृत्रिम भूकम्प** (Artificial Earthquakes)—मानव द्वारा किए जाने वाले कार्यों के कारण स्थानिक रूप से भूकम्प आते हैं। महाराष्ट्र का कोयना (1967) का भूकंप इसी तरह का था।

मरकेली का भूकम्पीय तीव्रता पैमाना
(Mercalli Scale of Earthquake Intensity)

मरकेली (Giuseppe Mercalli) नामक इटेलियन भू-वैज्ञानिक ने 1905 में मरकेली मापनी बनाई जिसे 1931 में रूपान्तरित किया। नवीन मापनी रूपान्तरित मरकेली मापनी (Modified Mercalli Scale, M.M Scale) कहलाती है। मरकेली का पैमाना सरल व सहज है। यह भूकम्प के विनाशकारी प्रभाव पर आधारित है। इस पैमाने पर भूकम्प की तीव्रता को I से XII रोमन अंक वर्गों में बाँटा गया है। इसके अनुसार I तीव्रता वाला भूकम्प कुछ विशेष स्थलों पर ही महसूस किया जा सकता है। जबकि XII तीव्रता वाला भूकम्प पूर्णतया विनाश लीला का दृश्य उत्पन्न करता है अर्थात् I से XII की ओर बढ़ती हुई तीव्रता के अनुसार जन-धन की हानि की मात्रा भी बढ़ती जाती है।

सारणी 12.1 भूकम्प के आकार के मापन की मरकेली एवं रिक्टर मापक

मरकेली संख्या*	मरकेली नाम	तीव्रता के लक्षण (भूकम्पों का प्रभाव)	रिक्टर मापक**
I.	यान्त्रिक (Instrumental)	केवल भूकम्प लेखी यंत्र से भूकम्प का अनुभव होता है।	<3.5
II.	क्षीण (Feeble)	केवल कुछ विशेष व्यक्तियों (आराम कर रहे) द्वारा अनुभव	3.5
III.	अल्प (Slight)	आराम करते हुए व्यक्तियों द्वारा अनुभव	4.2
IV.	साधारण (Moderate)	चलते हुए व्यक्तियों द्वारा अनुभव तथा खड़ी निर्जीव वस्तुओं का कम्पन, रात्रि को नींद खुलना	4.5
V.	आद्रबल (Rather Strong)	सभी को अनुभव, सोये व्यक्ति जाग जाते हैं।	4.8
VI.	प्रबल (Strong)	सभी लटकी वस्तुएँ हिलने लगती हैं, प्लास्टर टूट जायेगा, तार, यंत्रों में कम्पन महसूस	5.4
VII.	अति-प्रबल (Very Strong)	दीवारों में दरार पड़कर भूकम्प का आतंक छा जाता है।	6.1
VIII.	विनाशात्मक (Destructive)	ऊँची इमारतें गिर जाती हैं, मकानों में दरारें पड़ जाती हैं।	6.5
IX.	विनष्टकारी (Ruinous)	मकान धँस जाते हैं। भूमि में दरारें पड़ जाती हैं। पाइप लाइनें टूट जाती हैं।	6.9
X.	सर्वनाशी (Disastrous)	धरातल में लम्बी दरारें पड़ जाती है। इमारतें गिर जाती हैं। ढालों में भूस्खलन (Landslide) होता है।	7.3
XI.	अति-विनाशी (Very Disastrous)	पुल, रेलवे लाइनें टूट जाती हैं। महान् भू-स्खलन, नदियों में बाढ़ आ जाती है।	8.1
XII.	प्रलयंकारी (Catstrophic)	सर्वनाश, धरातलीय पदार्थ हवा में उछलने लगते हैं। धरातल में धँसाव तथा उभार उत्पन्न हो जाते हैं।	>8.1

* भूकम्प तीव्रता (Earthquake Intensity) ** भूकम्प परिमाण (Earthquake Magnitude)

Source : Earthquake, A.K.R., Hemmady, NBT, New Delhi

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भूकम्पीय परिमाण पैमाना
(Earthquake Magnitude Scale)

अमरीकी भूकम्प वैज्ञानिक सी.एफ. रिक्टर (C.F. Richter, 1900-1985) द्वारा 1935 में एक नवीन मापनी तैयार की गई जिस पर 1 से लेकर 10 तक की संख्याएँ अंकित होती हैं। अभी तक अधिकतम परिमाण 8.9 अंकित किया गया है। इस पैमाने पर भी बड़ी संख्याएँ अधिक विनाशकारी भूकम्प की सूचक हैं।

भूकम्प के प्रघात (Shock) या तीव्रता की समान मात्रा वाले बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा को **समभूकम्प रेखा**

बॉक्स 12.2 : सहभूकम्प एवं समभूकम्प रेखाएँ

*किसी मानचित्र पर उन स्थानों को मिलाने वाली रेखा जहाँ एक ही समय भूकम्प के घात (Shock) महसूस किये जाते हैं, **सहभूकम्प रेखा** (Homoseismal Line) कहलाती है, जबकि भूपृष्ठ पर उन सभी बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा जहाँ भूकम्प विक्षोभों या घातों (Shocks) की तीव्रता (Intensity) समान होती है, उसे समभूकम्प रेखा (Isoseismal Line) कहते हैं।*

बॉक्स 12.3 : भूकम्प का परिमाण एवं तीव्रता

*भूकम्प का परिमाण सामान्यतया मापनी का प्रयोग कर प्रदर्शित किया जाता है जिसके लिए सन् 1935 में चार्ल्स रिक्टर द्वारा विकसित स्केल को उपयोग में लेते हैं जबकि तीव्रता के अन्तर्गत भूकम्प के लोगों तथा स्थायी संरचनाओं (Peoples and Structure) पर प्रभाव का मापन किया जाता है। भूकम्प की तीव्रता को मापने में मरकेली स्केल का विस्तृत उपयोग करते हैं। भूकम्प में अधिकेन्द्र सर्वाधिक तीव्रता वाला क्षेत्र होता है तथा इससे दूर जाने पर भूकम्पीय तरंगें क्रमिक रूप से कमजोर होती जाती हैं। प्रत्येक भूकम्प का एक पृथक् परिमाण होता है जिसे रिक्टर संख्या द्वारा दर्शाते हैं जैसे गुजरात में आए भूकम्प का भुज अधिकेन्द्र था तथा 7.9 परिमाण था लेकिन तीव्रता एक स्थान से दूसरे स्थान पर परिवर्तित रूप में महसूस की जाती है जिसमें अधिकेन्द्र से सापेक्षिक स्थिति में मरकेली संख्या परिवर्तित हो जाती है। सारणी 12.1 में दर्शाया गया है कि कैसे दृष्टिगत प्रभाव तीव्रता के साथ बढ़ जाते हैं तथा रिक्टर सूचक संख्या भी दर्शायी गई है। **रोशी फोरेल** (Rossi Forrel) पैमाने द्वारा भी भूकम्प की तीव्रता को प्रदर्शित किया जाता है।*

सारणी 12.2 रिक्टर परिमाण तथा मुक्त ऊर्जा

रिक्टर मापनी पर परिमाण	मुक्त ऊर्जा (जूल्स में)	टिप्पणी
2.0	6×10^{7}	छोटे कम्पन जो मनुष्य द्वारा महसूस किए जाते हैं।
2.5 – 3.0	$10^{8}–10^{9}$	इसके पास वाले क्षेत्र में कम्पन महसूस किए जाते हैं। विश्व में ऐसे उथले कम्पन प्रतिवर्ष लगभग 1,00,000 आते हैं।
4.5	4×10^{11}	स्थानीय हानि हो सकती है।
5.7	2×10^{13}	हिरोशिमा परमाणु बम से मुक्त ऊर्जा के समान, सीमित क्षेत्र में विनाशक, विश्व में इस परिमाण वाले लगभग 100 भूकम्प प्रतिवर्ष आते हैं।
6.0	6×10^{13}	1994 का नोर्थरिज भूकम्प।
6.7	7×10^{14}	मुख्य भूकम्प इसी परिमाण पर आते हैं। इसे सम्पूर्ण पृथ्वी पर अंकित किया जा सकता है।
7.0	2×10^{15}	विश्व में प्रतिवर्ष इस प्रकार के लगभग 14 भूकम्प आते हैं।
7.1	3×10^{15}	1989 का लोमा प्रियटा भूकम्प (कैलिफोर्निया)
8.25 (7.9)	4.5×10^{15}	सन् 1906 का सान फ्रांसिस्को भूकम्प, भुज का 2001 का भूकम्प।
8.1	10^{17}	1986 का मैक्सिको का भूकम्प।
8.4 (9.2)	4×10^{18}	1964 का अलास्का का भूकम्प।
8.3 (9.5)	10^{19}	1960 का चिली का भूकम्प।

इस परिमाण को कनामोरी (Kanamori) द्वारा समायोजित रूप में प्रस्तुत किया गया है। रिक्टर मापनी को कनामोरी ने परिवर्तित किया है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(Isoseismal Line) कहते हैं। रेखाएँ विषम (Irregular) होती हैं। रिक्टर मापनी द्वारा भूकम्पमूल (Focus) से विभिन्न दिशाओं में प्रसरित होने वाली भूकम्पीय तरंगों के प्रभाव क्षेत्र का आधार वर्णित किया जाता है जो भूकम्प के दौरान मुक्त ऊर्जा की मात्रा से निकट सम्बन्ध रखता है। यह धरातलीय गति (Ground Motion) का सीस्मोग्राफ द्वारा अंकित मापन होता है। रिक्टर मापनी का परिमाण आनुपातिक रूप से भूकम्पीय तरंगों के अंकित विस्तार (Amplitude) का लघुगणकीय माप होता है, उदाहरणार्थ, मापनी में 1 से 10 परिमाण में 6 अंक पर परिमाण की ऊर्जा की मात्रा 5 अंक की तुलना में 10 गुना होती है अर्थात् 5 अंक से 6 अंक परिमाण पर आने पर परिमाण 1 बढ़ेगा लेकिन परिमाण ऊर्जा 10 गुना होगी। इसी प्रकार 4 परिमाण की तुलना में 100 गुना 3 परिमाण की तुलना में 6 अंक पर 1000 गुना होगी। इस प्रकार 1 परिमाण वाले भूकम्प की तुलना में 6 परिमाण वाले भूकम्प में ऊर्जा मिलियन गुना अधिक होगी। इसी कारण 2 परिमाण वाला भूकम्प महसूस करने योग्य ही होता है लेकिन 7 परिमाण वाला भूकम्प 2 की तुलना में 1,00,000 गुना अधिक शक्तिशाली होता है।

बॉक्स 12.4 : MSK-64

मेदवेदव-स्पॉनह्यूर-कार्निक मापनी—यह वृहद् भूकंपीय तीव्रता (Macroseismic Intensity) जिसका उपयोग धरातल की हलचल की तीव्रता के मूल्यांकन हेतु किया जाता है, इसे Medvedev-Sponhever-Karnik Scale या MSK-64 भी कहते हैं। इसका प्रथम उपयोग सन् 1964 में किया गया तथा सन् 1990 तक इसका विस्तृत उपयोग रूस एवं यूरोप में किया गया। वर्तमान में इसका उपयोग भारत, इसराइल तथा रूस सहित सभी कॉमनवेल्थ देशों में किया जाता है। इसमें 12 रोमन संख्या की तीव्रता डिग्री हैं।

भूकम्पीय लहरें
(Seismic Waves)

भूकम्प के उत्पन्न होने पर धरातल में जो कम्पन महसूस होता है, उसका कारण भूकम्पीय लहरें ही होती हैं। भूकम्प मूल से उत्पन्न इन लहरों को उनकी गति एवं विनाशकारी प्रभाव तथा द्रव एवं ठोस में गमनशीलता के आधार पर तीन मुख्य प्रकारों में बाँटा जा सकता है—

चित्र 12.2 : भूकम्पीय लहरें

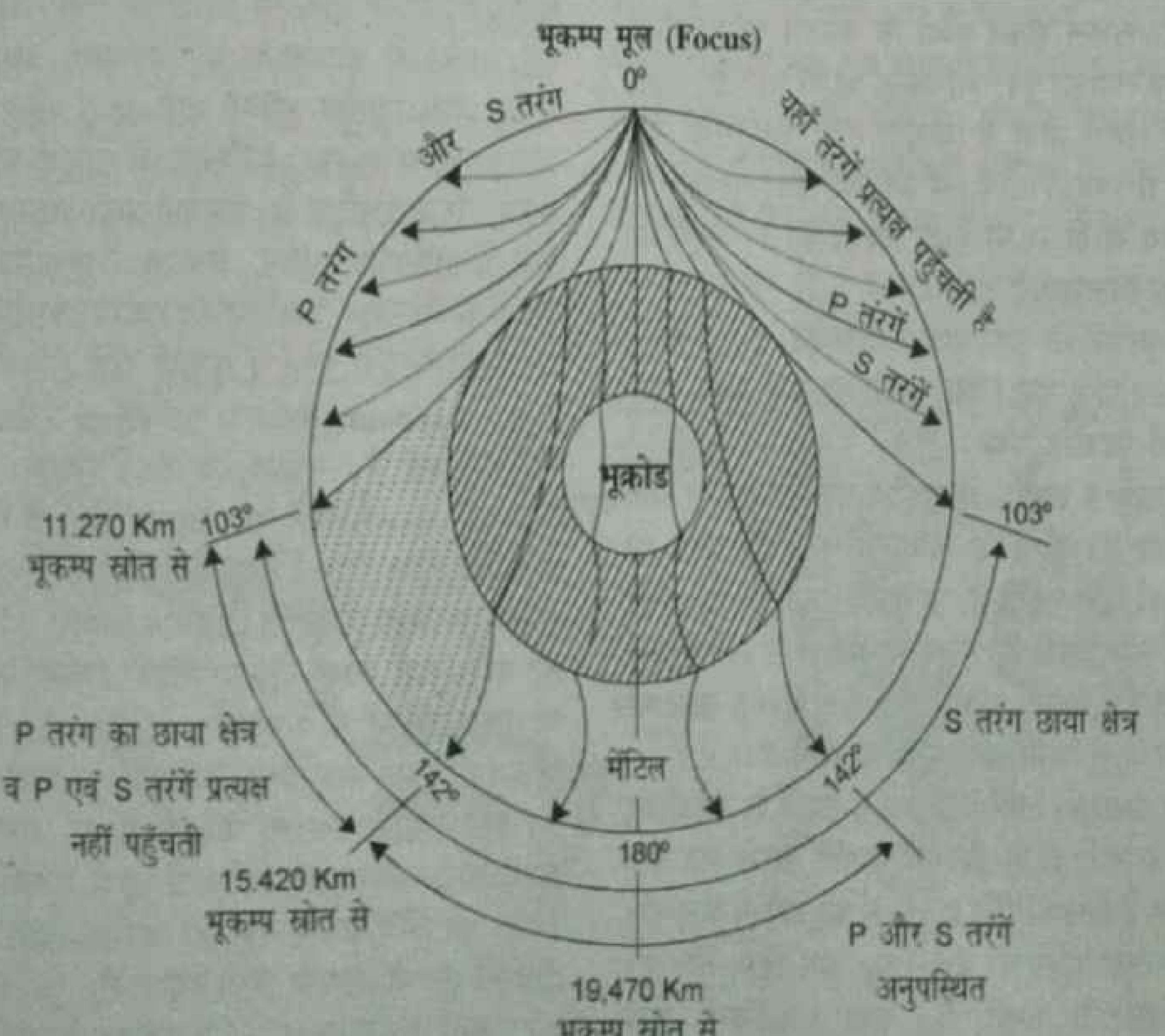

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

1. लम्बवत् अथवा प्राथमिक लहरें (Longitudinal or Primary Waves)

ये लहरें सबसे पहले, धरातल पर पहुँचती हैं। इनमें अणुओं की गति लहरों की दिशा में ही होती हैं। ये लहरें ध्वनि तरंगों की भाँति व्यवहार करती हैं। इन लहरों का उद्भव चट्टानों के कणों के सम्पीड़न से होता है। इनकी गति 8 किमी. प्रति सेकण्ड है जो सर्वाधिक होती है। ये ठोस भागों से होकर तीव्र गति से गुजरती हैं परन्तु द्रव में इनकी गति कम हो जाती है। चट्टानों के घनत्व में अन्तर होने पर इनकी गति में भिन्नता आ जाती है। इन्हें आंग्ल भाषा के 'P' अक्षर द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

2. अनुप्रस्थ अथवा गौण लहरें (Transverse or Secondary Waves)

ये प्राथमिक लहरों के बाद प्रकट होती हैं। इनकी गति अपेक्षाकृत मंद होती है। इनकी गति अपेक्षाकृत कम (5 किमी. प्रति सेकण्ड) होती है। ये लहरें तरल भागों में विलुप्त हो जाती हैं। इनमें शैल कणों की गति लहरों की गति के लम्बवत् होती है, इसी कारण ये अनुप्रस्थ तरंगें कहलाती हैं। इन्हें 'S' अक्षर से सम्बोधित करते हैं।

3. धरातलीय लहरें (Surface Waves)

ये अधिकेन्द्र पर उत्पन्न होकर पृथ्वी के धरातल पर चलती हैं तथा पूर्ण चक्कर लगाकर पुनः अधिकेन्द्र पर पहुँचती हैं। इनका पथ सर्वाधिक लम्बा होता है जबकि गति सर्वाधिक कम (3 किमी. प्रति सेकण्ड) होती है। ये अधिक गहराई पर लुप्त हो जाती हैं तथा द्रव से होकर भी गुजर सकती हैं। इन लहरों का प्रभाव सर्वाधिक विनाशकारी होता है।

विभिन्न भूकम्पों के पर्यवेक्षणों के दौरान P तथा S लहरों की गति में अन्तर पाया गया। इस आधार पर इन्हें पृथक् लहर युग्मों के रूप में पहचाना गया—

(क) **P तथा S लहरें**—ये लहरें सर्वाधिक वेग से गति करती हैं। पृथ्वी के अन्तरतम की ओर बढ़ने पर इनकी गति बढ़ती है, परन्तु द्रव भाग को 'S' लहरें पार नहीं करती हैं। पृथ्वी के मेंटिल में P लहर की गति 7.8 किमी. प्रति सेकण्ड है जबकि S लहर की गति 4.3 किमी. प्रति सेकण्ड होती है।

(ख) **Pg तथा Sg लहरें**—P तथा S लहरों के अतिरिक्त दो P तथा S से मिलती-जुलती लहरों का पता चला है जिनकी गति P तथा S की अपेक्षा कम थी। इस लहर युग्म को Pg – Sg नाम दिया गया है। इनकी गति क्रमशः 5.4 तथा 3.3 किमी. प्रति सेकण्ड होती है। ये लहरें पृथ्वी के ऊपरी भाग में चलती हैं। 1909 में क्रोशिया की कल्पा घाटी में इनकी पहचान की गई।

(ग) **P* तथा S* लहरें**—इन लहरों की गति P तथा S एवं Pg एवं Sg के मध्य की होती है। प्रेक्षणों के आधार पर P* की गति 6.0 से 7.2 किमी. प्रति सेकण्ड तथा S* की गति 3.5 से 4.0 किमी. प्रति सेकण्ड होती है।

इन भूकम्पीय लहरों के भिन्न-भिन्न प्रकारों तथा इनकी गति में पाई जाने वाली विभिन्नता द्वारा पृथ्वी की आन्तरिक संरचना के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

सुनामी (Tsunamis or Seismic Sea Waves)

सागरीय तली के नीचे उत्पन्न होने वाले भूकम्पों के कारण जलीय क्षेत्र में उत्पन्न लहरों को सुनामी कहा जाता है। यह एक जापानी शब्द है जिसे विश्व-स्तर पर अपना लिया गया है। इनकी ऊँचाई प्रायः 1 से 1.5 मीटर होती है। तटवर्ती उथले भागों में इनकी ऊँचाई सर्वाधिक होती है जिसके कारण तटवर्ती भागों में जन-धन की अपार क्षति होती है, उदाहरणार्थ, 1755 में पुर्तगाल के तटीय भागों में 12 मीटर ऊँची सुनामी लहरें उत्पन्न हुई जिससे राजधानी लिस्बन क्षतिग्रस्त हो गई थी तथा 30,000 लोग मारे गए। 1883 में क्राकाटाओ में ज्वालामुखी प्रस्फोट के कारण उत्पन्न अन्तःसागरीय भूकम्प द्वारा 36.5 मीटर ऊँची सुनामी उत्पन्न होने पर 36,000 व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। सुनामी द्वारा सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्र पश्चिमी प्रशांत महासागर है। सागरीय तली में भूस्खलन, भ्रंशन, अवपात, ज्वालामुखी, फियोर्ड के टुकड़ों की फिसलन, एवालांश एवं भूकम्प द्वारा उत्पन्न प्रलयंकारी लहरों को जापानी भाषा में **सुनामी** कहा गया है जो दो शब्दों **Tsu = harbour** (पोताश्रय) एवं **nami = wave** (लहर) से मिलकर बना है। मुख्यतः ये लहरें मुख्यतः अन्तःसागरीय (Submarine) भूकम्पों द्वारा उत्पन्न होती हैं जिनसे सागरीय जल विस्थापित होता है। सुनामी लहरों का प्रभाव लम्बे समय से महसूस किया जा रहा है। 27-28 जनवरी, 1700 को जापान तट पर सुनामी आयी जो कास्केडिया भूकम्प के कारण आयी थी। कास्केडिया में अधोगमन (Subduction) क्षेत्र है जहाँ जूआन डी फूका प्लेट उत्तरी अमेरिकी प्लेट के नीचे खिसक रही है। इसी प्रकार जावा के पश्चिम में 27 अगस्त, 1883 में क्राकाटाओ ज्वालामुखी उद्गार से आयी सुनामी, 16 जनवरी, 1995 को कोबे क्षेत्र में तथा 30 अगस्त, 1902 को मार्टिनिक द्वीप की सुनामी (माउण्ट पीली उद्गार से), 1918 की प्यूर्टोरिको की सुनामी, 1 नवम्बर, 1755 में पुर्तगाल में आयी सुनामी विश्व प्रसिद्ध रही है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

इस सदी की सर्वाधिक विनाशक सुनामी 26 दिसम्बर, 2004 को सुमात्रा में आई जिसका प्रभाव क्षेत्र भारत (तमिलनाडु तट), श्रीलंका, इण्डोनेशिया, थाइलैण्ड रहे, जहाँ 3 लाख लोग काल-कवलित हुए। इसकी उत्पत्ति सुमात्रा तट के पास सिम्पूल द्वीप पर 8.9 परिमाण (रिक्टर मापनी पर) वाले भूकम्प के कारण हुई, इससे सागर तल पर 160 किमी तरंगदैर्ध्य वाली 960 किमी. प्रति घण्टे चलने वाली लहरें उत्पन्न हुई। इसकी उत्पत्ति में 1200 किमी. की लम्बाई में बर्मा प्लेट के नीचे भारतीय प्लेट का क्षेपण 20 मीटर की गहराई तक हुआ जिसके कारण सागर तली में 12 मीटर तक उभार हुआ। इसका अधिकेन्द्र (सिम्पूल) अण्डमान एवं निकोबार से केवल 128 किमी. दूर था।

नेपाल या गोरखा का भूकम्प (2015) : नेपाल में 25 अप्रैल, 2015 को रिक्टर स्केल पर 7.8 परिमाण (Magnitude) तथा मरकेली स्केल पर IX (Violent) की तीव्रता वाला भूकम्प आया था, जिसमें 8857 हजार लोग मारे गये तथा 21952 लोग घायल हुए। इसका अधिकेन्द्र (Epicenter) लामजुंग में तथा भूकम्पमूल (Focus or Hypocenter) 8.2 किमी. की गहराई पर था। सन् 1834 में आये नेपाल-बिहार भूकम्प के बाद आया ये सर्वाधिक विनाशक भूकम्प था।

भूकम्प का वैश्विक वितरण
(The World Distribution of Earthquakes)

भूकम्प का प्रभाव क्षेत्र लगभग सम्पूर्ण विश्व है, लेकिन भूकम्प के उत्पत्ति केन्द्र अति-सीमित होते हैं। विश्व के भूकम्प मानचित्र पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि किन्हीं क्षेत्रों में भूकम्प की आवृत्ति अधिक होती है। इन क्षेत्रों में—(1) नवीन परतदार पर्वतीय क्षेत्र, (2) खड़े महाद्वीपीय मग्न ढाल वाले प्रदेश, (3) ज्वालामुखी वाले क्षेत्र, (4) दरारी क्षेत्र मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त कभी-कभी भूकम्प ऐसे क्षेत्रों में भी उत्पन्न होते हैं जिन्हें प्राय: स्थिर एवं भूकम्प रहित माना जाता है, उदाहरणार्थ, कोयना (1967) एवं लातूर (1993) के भूकम्प इसी प्रकार के भूकम्प थे। अत: यह कहा जा सकता है कि विश्व का कोई भी क्षेत्र भूकम्प के प्रभाव से रहित नहीं है, तथापि विश्व के मुख्य भूकम्प मेखलाओं (Belts) के रूप में निम्नलिखित प्रकार से वितरित हैं—

1. परि-प्रशांत पेटी (Circum-Pacific Belt)

विश्व के सर्वाधिक (63%) भूकम्प इसी क्षेत्र में आते हैं। यह सबसे बड़ा भूकम्प-क्षेत्र है जो प्रशांत महासागर के दोनों तटों पर विस्तृत है। यहाँ भूकम्प के निम्नलिखित मूल कारण हैं—(1) सागर एवं स्थल का मिलन बिन्दु, (2) नवीन वलित पर्वतों का क्षेत्र, (3) ज्वालामुखी क्षेत्र, तथा (4) विनाशी प्लेट सीमाओं का अपसरण। प्रथम शाखा, एशिया के कामचटका से लेकर क्यूराइल एवं जापान द्वीप तथा फिलीपाइन द्वीप से पूर्वी द्वीप समूह तक विस्तृत है, जो यहाँ से मुड़कर न्यूजीलैण्ड तक जाती है। इसमें जापान विश्व प्रसिद्ध है जहाँ प्रतिवर्ष औसतन 1500 भूकम्प महसूस किये जाते हैं। चिली, पेरू, मध्य अमेरिका में होती हुई अलास्का तक दूसरी शाखा फैली है। इस मेखला में विश्व के 80 प्रतिशत कम गहरे भूकम्प, 90 प्रतिशत मध्यम गहराई वाले भूकम्प एवं लगभग शत-प्रतिशत गहरे भूकम्प मूल वाले भूकम्प उत्पन्न होते हैं। पनामा जलडमरूमध्य, उत्तरी मैक्सिको, दक्षिणी कैलिफोर्निया, ओरेगन, वाशिंगटन तथा ब्रिटिश कोलम्बिया अब तक भूकम्प से अप्रभावित रहे हैं।

चित्र 12.3 : भूकम्प का विश्व वितरण

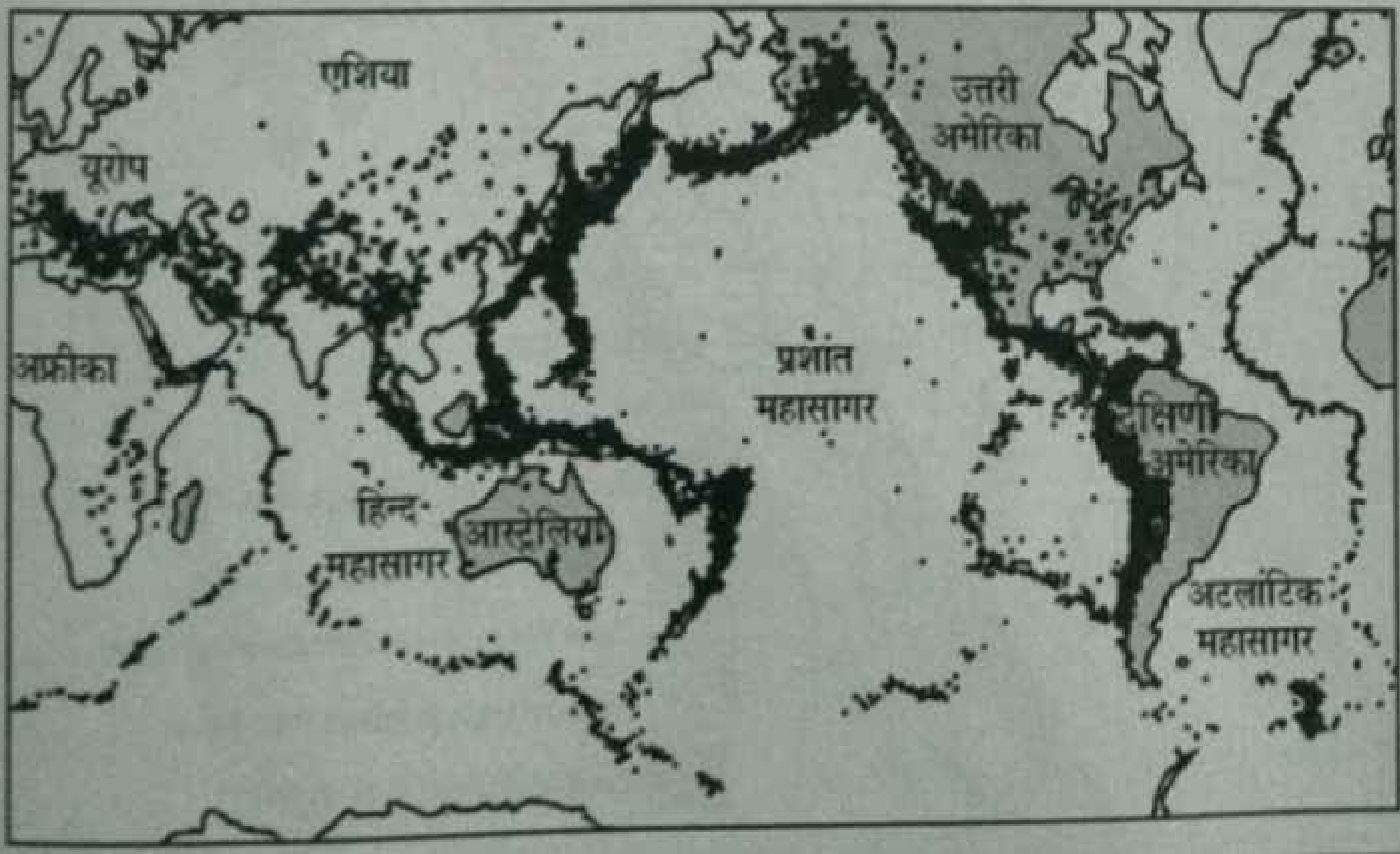

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

2. मध्य महाद्वीपीय मेखला (Mid Continental Belt)

विश्व के 21 प्रतिशत भूकम्प इस मेखला में उत्पन्न होते हैं। यहाँ प्राय: भ्रंश मूलक एवं सन्तुलन मूलक भूकम्प आते हैं। यह पेटी उत्तरी अफ्रीका में केपवर्डे से स्पेन, इटली, यूनान, तुर्की (एशिया माइनर), ईरान, उत्तरी भारत एवं म्यांमार में फैली है। इसमें आल्पस, हिमालय एवं म्याँमार की पहाड़ियों के भूकम्प सम्मिलित किए जाते हैं। इसी मध्य महाद्वीपीय मेखला की एक शाखा नील नदी से होते हुए अफ्रीका की दरार घाटी के साथ गुजरती है, जहाँ भ्रंशमूलक भूकम्प उत्पन्न होते हैं। एक उपशाखा अदन की खाड़ी से होते हुए अरब सागर में चली जाती है। इसे भूमध्यसागरीय पेटी भी कहते हैं।

3. मध्य अटलाण्टिक पेटी (Mid-Atlantic Belt)

अन्ध महासागर के मध्य में उत्थित मध्य महासागरीय कटक के सहारे यह भूकम्प मेखला फैली है। यह उत्तर में आइसलैण्ड से शुरू होकर दक्षिण में बोवेट द्वीप तक विस्तृत है।

भूकम्प क्षेत्र ऐसे स्थानों पर भी हैं जहाँ ज्वालामुखी क्रिया नहीं पाई जाती और न ही नवीन पर्वत निर्माण क्रिया हुई है। उदाहरणार्थ, चार्ल्सटाउन (दक्षिणी कैरोलीना) तथा न्यू मैड्रिड (मिसौरी) क्षेत्र। इसके साथ ही डेल्टा निर्माण वाले क्षेत्रों में भी भूकम्प उत्पन्न होते हैं।

4. अन्य क्षेत्र (Other Areas)

इसके अन्तर्गत पूर्वी अफ्रीकन पेटी है, जिसका विस्तार स्वेज नहर से लाल सागर, इथियोपिया, नील नदी घाटी, अफ्रीका की भ्रंश घाटी में युगांडा, तंजानिया, न्यासा झील तथा डिरगौआ की खाड़ी तक है। हिन्द महासागर के भूकम्प भी इसी में आते हैं।

भारत के भूकम्प क्षेत्र
(Seismic Zones of India)

भारत के भूकम्प क्षेत्रों को मध्य महाद्वीपीय भूकम्प पेटी में सम्मिलित किया जाता है। भारत में अधिक विनाश वाले भूकम्प

चित्र 12.4 : भारत के भूकम्प क्षति जोखिम क्षेत्र (भारत मौसम विभाग, IMD)

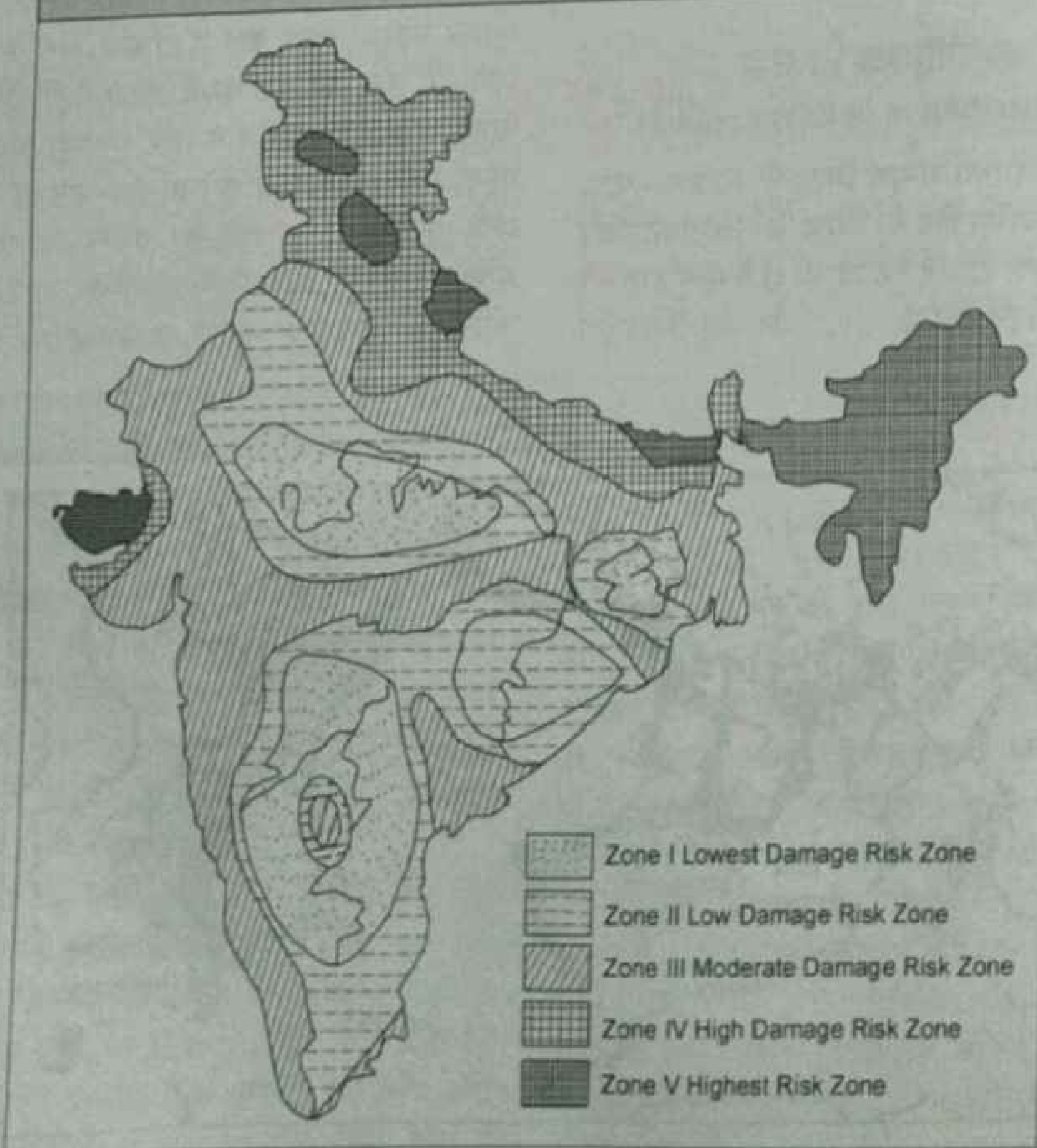

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

बॉक्स 12.5 : सिस्मोस्कोप

विश्व में सर्वप्रथम भूकम्प की जानकारी प्राप्त करने के यंत्र का आविष्कार चीनी खगोलशास्त्री चांग हैंग (Zhang Heng, 78-139 A.D.) ने 132 A.D. में किया जिसका नाम सिस्मोस्कोप (Seismoscope) रखा गया।

बॉक्स 12.6 : प्रयोगशाला में भूकम्प

हाल ही में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में चट्टानों को अत्यधिक ताप एवं दाब उपलब्ध करवाने पर उनमें भूकम्प जैसी हलचल पैदा कर दी। वैज्ञानिकों की इस उपलब्धि से भविष्य में आने वाले भूकम्पों को समझने में मदद मिलेगी।

हिमालय के सहारे आते हैं। क्षति जोखिम परिमाण (Magnitude of Risks) के आधार पर सम्पूर्ण देश को भारतीय मौसम विभाग ने पाँच क्षति जोखिम मण्डलों में विभाजित किया है चित्र (12.4) जबकि भूकम्पों की तीव्रता व फैलाव के अनुसार भारतीय भूकम्पों के तीन क्षेत्र निर्धारित किए गए हैं—

1. **हिमालय प्रदेश** (Himalayan Zone)—इसमें हिमालय पर्वत एवं इसके आस-पास के क्षेत्रों को शामिल किया जाता है। यहाँ सन्तुलन निर्माण क्रिया अभी पूर्ण नहीं हुई है अत: भूकम्प के लिए आवश्यक अस्थिरता यहाँ पाई जाती है। प्लेट-विवर्तनिकी के अनुसार इस क्षेत्र में भारतीय प्लेट का टकराव यूरेशियन प्लेट से होता है जिसके फलस्वरूप

सारणी 12.3 भारत के प्रमुख भूकम्प

क्र.सं.	भूकम्प क्षेत्र	तिथि	प्रभाव
1.	कच्छ का भूकम्प (गुजरात)	16 जून, 1819	2000 व्यक्तियों की मृत्यु, भुज नगर नष्टप्राय।
2.	कश्मीर का भूकम्प	16 जून, 1828	1000 व्यक्तियों की मृत्यु।
3.	बिहार का भूकम्प	26 अगस्त, 1833	1000 मकान-क्षतिग्रस्त।
4.	दकन का भूकम्प	13 अप्रैल, 1843	कर्नूल, शोलापुर, बेलगाँव तथा बेलारी नगरों की हानि।
5.	आसाम (असोम)	10 जनवरी, 1869	2,50,000 वर्ग मील क्षेत्र प्रभावित।
6.	कश्मीर	30 मई, 1885	3000 व्यक्ति मृत।
7.	ढाका तथा पश्चिमी बंगाल	14 जुलाई, 1886	2,50,000 वर्ग मील क्षेत्र प्रभावित।
8.	शिलांग	12 जून, 1887	1500 व्यक्ति मृत, 17,50,000 वर्ग मील क्षेत्र प्रभावित।
9.	कच्छ	15 जून, 1890	1500 व्यक्ति मृत।
10.	कांगड़ा घाटी	4 अप्रैल, 1905	20,000 व्यक्ति मृत।
11.	असोम	8 जुलाई, 1918	
12.	असोम	3 जुलाई, 1930	धुबरी नगर नष्ट।
13.	बिहार	5 जनवरी, 1935	10,700 व्यक्ति मृत।
14.	असोम	15 अगस्त, 1935	1500 व्यक्ति मृत, नदियों में बाढ़।
15.	कोयना	11 दिसम्बर, 1988	192 व्यक्ति मृत, 2063 घायल व 10,000 बेघर।
16.	दरभंगा	21 अगस्त, 1988	850 मृत।
17.	लातूर	1993	30,000 मृत।
18.	जबलपुर	1997	40 मृत।
19.	चमौली	1999	103 मृत।
20.	भुज	26 जनवरी, 2001	30,000 से अधिक मृत, हजारों मकान क्षतिग्रस्त
21.	अण्डमान निकोबार	2004	20,000 व्यक्तियों की मृत्यु

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चित्र 12.5 : भूकम्प लेखी

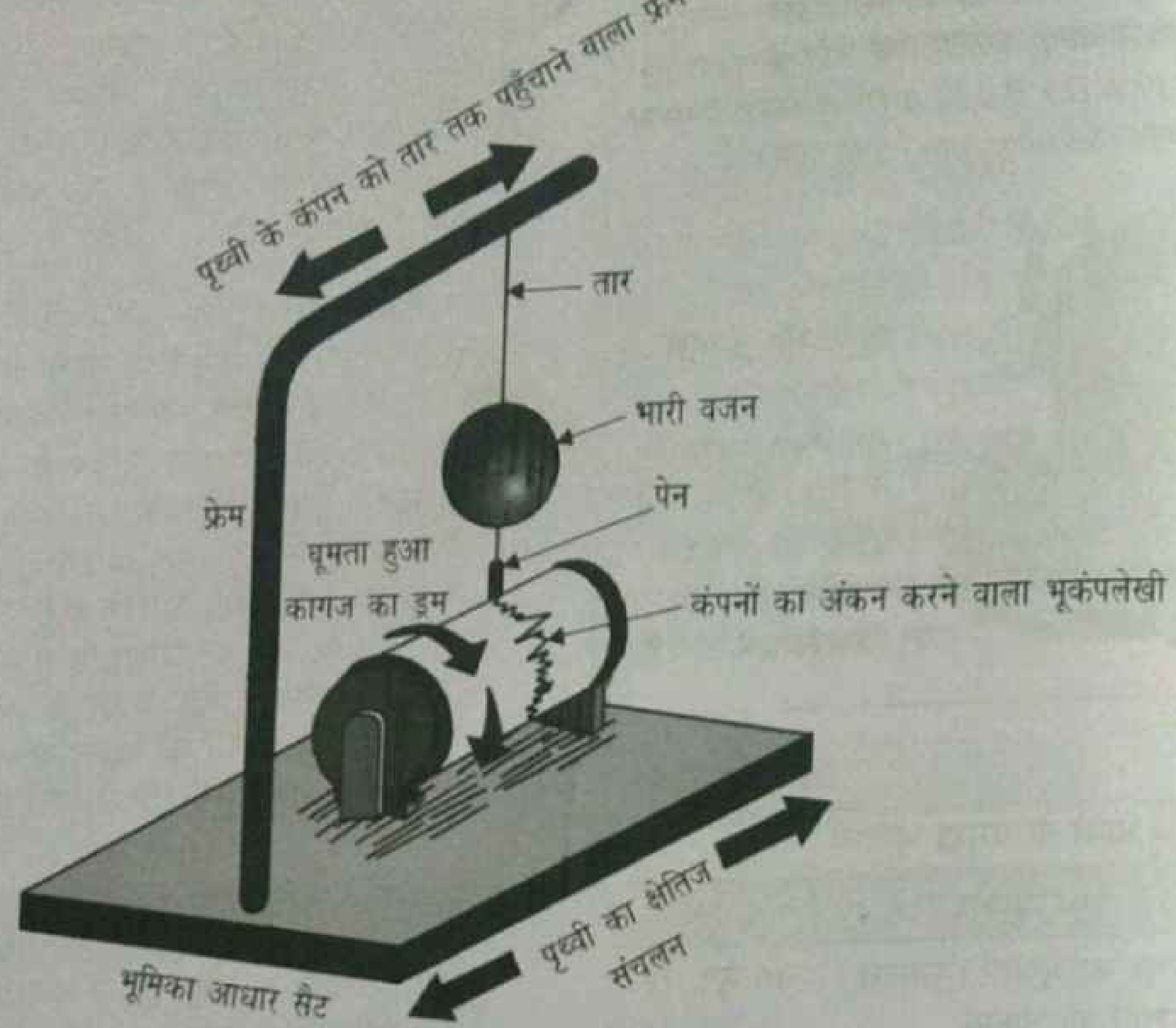

भूकम्प उत्पन्न होते हैं। इसी क्षेत्र की एक शाखा म्यांमार की पहाड़ियों में चली गई है। यह क्षेत्र **सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्र** (Zone of Maximum Intensity) कहा जाता है। असम (1869, 1897, 1950), क्वेटा (1936), गढ़वाल (1991), 2005 में हिन्दुकुश (पाकिस्तान) के भूकम्प मुख्य उदाहरण हैं।

2. **गंगा-सिन्धु का मैदानी क्षेत्र** (Indo-Gangetic Plain Zone)—उत्तर के हिमालय प्रदेश तथा दक्षिण के प्रायद्वीपीय पठारी क्षेत्र के मध्य यह **सामान्य प्रभावी क्षेत्र** (Zone of Moderate Intensity) हैं। यहाँ प्रमुख उपक्षेत्र दिल्ली, पश्चिमी उत्तर-प्रदेश व बिहार हैं। दिल्ली (1803), बिहार (1934), पश्चिमी उत्तर-प्रदेश (1966) में उत्पन्न भूकम्प इसके प्रमाण हैं।
3. **प्रायद्वीपीय क्षेत्र** (Peninsular Zone)—यह एक दृढ़ भूखण्ड है जहाँ भूकम्प का प्रभाव सबसे कम होता है, अत: इसे **न्यूनतम प्रभावित क्षेत्र** (Minimum Intensity Zone) कहते हैं। यहाँ का कच्छ क्षेत्र भूकम्पों से प्रभावित रहा है। कोयना (1967) एवं लातूर (1993) के भूकम्पों से यह प्रमाणित हो गया है कि प्रायद्वीपीय क्षेत्र पूर्णत: स्थिर नहीं हैं।

भूकम्प विज्ञान
(Seismology)

भूकम्पों का वैज्ञानिक अध्ययन जिस विषय में किया जाता है उसे भूकम्प विज्ञान कहते हैं। यह ग्रीक भाषा के दो शब्दों 'Seismos' तथा 'Logos' से बना है जिनका अभिप्राय क्रमश: 'भूकम्प' एवं 'कारण' होता है। भूकम्प विज्ञान में भूकम्प सम्बन्धी सभी क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है, जिसमें भूकम्प मूल (Seismic Focus), अधिकेन्द्र (Epicentre), भूकम्प तरंगें (Seismic Waves), भूकम्प की तीव्रता (Intensity of Earthquakes) आदि प्रमुख हैं। भूकम्पीय लहरों की तीव्रता का अध्ययन भूकम्प लेखी (Seismograph) द्वारा किया जाता है।

भूकम्प लेखी
(Seismograph)

भूकम्प लेखी एक उपकरण है जो भूकम्पीय तरंगों का अंकन करता है। प्रथम विद्युत-चुम्बकीय भूकम्पलेखी का निर्माण इटली

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

सारणी 12.4 पार्कफील्ड, कैलिफोर्निया में भूकम्प निगरानी व्यवस्था

उपकरण (Instruments)	उद्देश्य (Purpose)
सीस्मोग्राम (Seismogram)	भूकम्पीय तरंगों के व्यवहार सम्बन्धी विस्तृत जानकारी प्रदान करता है।
सीस्मोमीटर (Seismometers)	सूक्ष्म भूकम्पों के अंकन के लिए
मैग्नेटोमीटर (Magnetometers)	पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्रों में परिवर्तन का अंकन
भू-सतह के निकट सीस्मोमीटर (Near Surface Seismometer)	बड़े झटकों (Shocks) का अंकन
कम्पन परिवर्तन (Vibreosis Truck)	भूकम्प क्षेत्रों के परीक्षण के लिए टूटती तरंगें उत्पन्न करना
स्ट्रेन मीटर (Strain Meters)	धरातलीय विरूपण (Deformation) की निगरानी
कुओं में सेन्सर (Sensor)	कुओं में भू-जल स्तर में परिवर्तन
उपग्रह किरणें	यू.एस. भू-वैज्ञानिकी विभाग को आँकड़ों की प्राप्ति
लेजर सर्वेक्षण उपकरण	उपग्रह किरणें सतही संचलन (Surface Movement) का मापन

के वैज्ञानिक **एल. पाल्मेरी** (Luigi Palmieri, 1807-1896) ने 1855 में किया जिसे सन् 1885 में ब्रिटिश भूवैज्ञानिक **जॉन मिल्वे** (1850-1913) ने संशोधित किया जो टोकियो में भूविज्ञान पढ़ाते थे तथा बाद में सिस्मोलॉजिकल सोसायटी ऑफ जापान की स्थापना की। यह उपकरण सन् 1914 तक काम में आया। 1915 में **जे.जे. शा** ने इसे पुनः संशोधित किया। इस यंत्र द्वारा तीनों प्रकार की लहरों (P, S तथा L लहरें) के पहुँचने का समय ज्ञात करते हैं। भूकम्प मूल की गहराई जितनी अधिक होगी P एवं S लहरों का वेग उतना ही बढ़ता जाता है जिसके कारण उनका भ्रमण काल छोटा हो जाता है। इस भूकम्प लेखी को अधिकेन्द्र पर स्थापित किया जाता है। इसके द्वारा भूकम्प के उत्पत्ति केन्द्र, गति व प्रभावशीलता का ज्ञान हो जाता है। भूकम्प लेखी के तीन भाग होते हैं—

(i) **कम्पन संयंत्र**—यह पृथ्वी में गढ़ा हुआ कंक्रीट का एक खम्भा होता है तथा भूकम्प आने पर कम्पन करता है।

(ii) **अंकन संयंत्र**—यह एक ढोल के रूप में घूमता है। इसके साथ लगे कागज पर पृथ्वी का कम्पन अंकित होता रहता है।

(iii) **घड़ी**—यह कम्पन के आरम्भ होने तथा समाप्त होने का समय अंकित करती है।

(iv) **कालक्रम ग्राफ** (Chronograph)—इसमें घूमते ड्रम के ऊपर एक कागज लगा होता है जिस पर समय अंकित होता है।

भविष्यवाणी
(Prediction)

भूकम्प के सम्बन्ध में विस्तृत शोध के उपरान्त की जाने वाली भविष्यवाणियों की सहायता से बचा जा सकता है। इसके लिए कुछ छोटे लक्षणों के आधार पर भी तीव्रता का अनुमान लगाया जा सकता है। भूकम्प आने से पूर्व होने वाले बदलावों में भू-सतह में छोटी दरारें पड़ना, झरनों का फूटना, गहरे कुओं में जल स्तर ऊपर आना, पक्षियों के व्यवहार में बदलाव, सर्पों का बिलों से बाहर आना, चूहे, नेवले, खरगोश व विषखोरा का सुरक्षित स्थानों पर जाना आदि प्रमुख हैं। पुलिस के प्रशिक्षित कुत्ते अपने मालिक की आज्ञा का पालन बन्द कर देते हैं, सुअर अपने ही भाई-बहन को काटने लगते हैं, मछलियाँ पानी में गायब होने लगती हैं। उत्तरी चीन में भूकम्प के लक्षण सन् 1974 में स्पष्ट होने लगे, जिनके आधार पर 7 फरवरी, 1975 के भूकम्प के दौरान जान-माल की सुरक्षा की गई। नेशनल ज्यॉग्राफिक नामक पत्रिका में प्रकाशित एक रिपोर्ट में बताया गया है कि चीन में (तांगशान) 1996 में आये भूकम्प से पूर्व वहाँ के लोगों ने पशु-पक्षियों के व्यवहार को देखकर घर छोड़ दिया था, जिससे भारी मात्रा में विनाश से लोग बच गए थे। 1994 में अमेरिका में आये भूकम्प के दौरान घोड़े घुड़साल में अचानक गिर पड़े थे। इसी तरह 12 मई, 2008 को 7.9 की तीव्रता वाला भूकम्प **सिचुआन** में आया। इससे पूर्व मेंढकों एवं टोड्स के धरती पर निकलकर दूसरे स्थानों पर जाने की खबर मीडिया व इन्टरनेट ब्लाग्स ने प्रकाशित की थी। होनोलूलू की सुनामी सोसायटी के वैज्ञानिक जॉर्ज पैरारास कहते हैं कि भूकम्प आने से पूर्व धरती में विशेष प्रकार की भौतिक और रासायनिक तरंगें निकलती हैं, जिन्हें सम्भवत जानवर महसूस कर लेते हैं। वर्तमान समय में विभिन्न शोध करके भूकम्प की भविष्यवाणी का विश्वसनीय तरीकों से पता लगाने का प्रयास किया जा रहा है। यद्यपि भूकम्प की अवस्थिति का पता आसानी से लगा लेते हैं। भूकम्प की भविष्य में प्रवृत्ति जानने के लिए पूर्व में आया भूकम्प एक अच्छा साधन होता है। भूकम्प आपदा मानचित्र भी इसमें सहायक होते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से भूकम्प का अध्ययन करने पर यह समानता मिली है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

अवस्थिति निर्धारण के साथ ही भूकम्पों का समय तथा आकार (Timing and Size) की भविष्यवाणी करना कठिन कार्य है। अनेक बार भ्रंश रेखा के सहारे किए गए निर्माण कार्य द्वारा लघु-स्तर पर आए भू-सतही परिवर्तन से इसका अनुमान लगा लिया जाता है। विशेष रूप से जहाँ भूमि उत्थान या अवतलन होता है यह कार्य आसान हो जाता है। भू-वैज्ञानिक इस दृष्टि से विभिन्न उपकरणों की सहायता से सतत् निगरानी कर भविष्यवाणी व्यवस्था को सुदृढ़ बना रहे हैं। इनमें निम्नलिखित परिवर्तनों को मापने की व्यवस्था विकसित की गई है—

(i) भूमि का झुकाव (Ground Tilt);
(ii) शैलीय दबाव में परिवर्तन (Changes in Rock Stress);
(iii) सूक्ष्म भूकम्पीय क्रिया (Micro Earthquake Activity);
(iv) पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्रों में विषमता (Anomalies in the Earth's Magnetic Field);
(v) रेडान गैस के संकेन्द्रण में परिवर्तन (Changes in Radon Gas Concentration);
(vi) शैलों की विद्युत प्रतिरोधकता में परिवर्तन (Changes in Electrical Resistivity of Rocks)।

सारणी 12.5 प्रमुख विनाशकारी भूकम्प

वर्ष	भूकम्प का प्रभाव क्षेत्र	विनाश एवं विवरण
1456	नेपल्स (इटली)	इस विनाशकारी भूकम्प में 69,000 मनुष्य मारे गए
1556	शैंसी (चीन)	लगभग 8.3 लाख लोग मारे गए एवं अनेक नष्ट हुए
1731	पीकिंग (चीन)	एक लाख लोगों की मौत हुई तथा नगर पूरी तरह नष्ट हो गया
1907	अफगानिस्तान	12,000 व्यक्ति मारे गए
1908	मेसिना (इटली)	व्यापक प्रभाव वाले इस भूकम्प में 2 लाख व्यक्ति मौत का शिकार हुये
1915	एवेन्जारो (इटली)	इसमें 30,000 मनुष्य काल-कवलित हुए
1920	कांसू (चीन)	नगर नष्ट हो गया एवं साथ ही 1,80,000 लोगों की मौत हुई
1927	नानशान (चीन)	अधिक तीव्रता वाले इस भूकम्प ने भी 1,80,000 लोगों की जान ली
1939	चिलान (चिली)	इस भूकम्प में 40,000 लोग काल का ग्रास बने
1939	तुर्की	लगभग 40,000 व्यक्ति मरे
1948	कागी (ताइवान)	यह भूकम्प 19,800 व्यक्तियों की मौत का कारण बना
1970	चिम्बोटे (पेरू)	एण्डीज में उत्पन्न इस शक्तिशाली भूकम्प में 67,000 व्यक्ति मौत का शिकार बने
1974	पश्चिमी-मध्य चीन	इस भूकम्प में 20,000 चीनी नागरिकों की मृत्यु हुई
1976	ग्वाटेमाला	मध्य अमरीकी देश में आए इस भूकम्प में 23,000 लोग मरे
1976	तांग-शान (चीन)	7.5 लाख व्यक्ति मरे एवं नगर नष्ट हुए
1978	तबास (ईरान)	इस भूकम्प में 25,000 लोग मारे गए
1985	मैक्सिको नगर (मैक्सिको)	इसमें 10,000 व्यक्तियों की जीवन लीला समाप्त हुई
1988	आर्मिनिया (टर्की सीमा)	इसके दौरान 30,000 मनुष्य मौत का शिकार हुए
1999	चमौली, भारत	26,000 मरे
2001	भुज, भारत	30,000 से अधिक मरे
2001	एवेक्वीफ (पीरू)	71 मरे
2002	नहरीन (अफगानिस्तान)	5,000 मरे
2002	ईरान	500 मरे
2003	मैक्सिको	25 मरे
2005	नासा-सिबोलगा (सुमात्रा)	3,000 व्यक्ति मरे
2008	चीन (सिचुआन)	62,000 मरे, 10 हजार लोग घायल
2011	तुर्की	2 व्यक्ति मरे
2013	चीन (सिचुआन)	160 व्यक्ति मरे, 5700 घायल
2013	पाकिस्तान	357 मरे
2015	नेपाल	8857 हजार व्यक्ति मरे, 21952 व्यक्ति घायल
2016	इण्डोनेशिया	100 व्यक्ति मरे, 136 घायल

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

वर्तमान समय में बढ़ती निगरानी तकनीकी तथा भूकम्पीय सूचनाओं की विश्लेषण पद्धतियों के विकास के उपरान्त भी भूकम्पीय सम्भावना की विश्वसनीय भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं हो पाया है इसलिए अभी इस क्षेत्र में पर्याप्त शोध की आवश्यकता है तथा अनेक देश भूकम्पीय जोखिम वाले क्षेत्रों तथा भ्रंश रेखाओं पर शोधरत हैं। आई.आई.टी. रुड़की एक ऐसी भूकम्पीय भविष्यवाणी व्यवस्था विकसित कर रहा है जिसमें 75 सेकण्ड पूर्व भूकम्प का पता लग सकेगा।

भूकम्प के प्रभाव
(Effects of Earthquakes)

भूकम्प पृथ्वी की अभ्यान्तरिक गतियों (शक्तियों) के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं, जो पृथ्वी पर रचनात्मक एवं विनाशकारी दोनों ही प्रकार के प्रभाव डालते हैं। विनाशकारी प्रभावों में मानव निर्मित वस्तुओं का विनाश, नगरों का विनाश, भू-स्खलन, धरातल का उत्थान तथा धँसाव, दरारों का निर्माण, बाढ़ का प्रकोप (1950) में असम के भूकम्प से ब्रह्मपुत्र एवं दीहाँग में, जल तरंगों की उत्पत्ति आदि प्रमुख हैं। रचनात्मक प्रभावों में भूकम्प के दौरान निर्मित दरारें झील का रूप ले लेती हैं तथा इन्हीं दरारों से खनिजों की प्राप्ति भी सरल हो जाती है। भ्रंशन से नवीन भूमिगत जलस्रोत बन जाते हैं। भूकम्प एक प्राकृतिक आपदा के रूप में प्रकृति के भौतिक तथा सांस्कृतिक घटकों को विभिन्न रूपों में हानि पहुँचाता है। भौतिक घटकों में धरातलीय स्वरूप, नदी प्रवाह, वन क्षेत्र, झीलें तथा सागर तटीय क्षेत्र प्रभावित होते हैं, जबकि सांस्कृतिक घटकों में मानव निर्मित भू-दृश्य प्रमुख हैं, जिनमें छोटे-बड़े बाँध, नगर, कस्बे तथा अन्य मानव सम्पत्तियाँ सम्मिलित हैं। भूकम्प के आपदाकारी प्रभाव निम्नलिखित हैं—

1. **भू-सतह में परिवर्तन** (Deformation in Land Surface)—भूकम्प के झटकों से भू-सतह में उन्मज्जन एवं निमज्जन हो जाता है। नदियों का प्रवाह परिवर्तित हो जाता है। झीलों में उभार आ जाता है तथा धरातल में अनेक स्थानों पर दरारें पड़ जाती हैं। सन् 1897 के असम के भूकम्प में 10.6 मीटर चौड़ी तथा 19.3 किमी. लम्बी दरार का निर्माण हो गया था। इसी प्रकार मिसीसिपी नदी के डेल्टाई क्षेत्रों में (1811, 1812 तथा 1813) में भूकम्प के कारण अनेक भ्रंशों का निर्माण हो गया था। सन् 1835 के भूकम्प के कारण चिली का तटीय भाग 6-13 मीटर ऊपर उठ गया था। सन् 1950 में असम में आए भूकम्प से ब्रह्मपुत्र नदी का प्रवाह प्रभावित हुआ। इसी प्रकार सन् 1923 में जापान की संगामी की खाड़ी में तलीय भाग 305 मीटर से 454 मीटर तक अवतलित हो गया था। जनवरी, 2001 के भुज के भुकम्प के कारण कच्छ रन में एक लम्बी दरार उत्पन्न हो गई, जिससे लावा सदृश पदार्थ भी निःसृत हुआ। भू-गर्भवेत्ताओं के अनुसार ये पदार्थ सागर तटीय क्षेत्रों से रिसकर गया हुआ पानी था। 24 सितम्बर, 2013 को पाकिस्तान में आये भूकम्प से तीन द्वीप बन गये।
2. **भू-स्खलन** (Landslides)—भूकम्प के कारण पर्वतीय उच्च क्षेत्रों में स्थित ढीला मलबा नीचे की ओर खिसक जाता है। असम में 1950 में भूकम्प के कारण काफी मात्रा में भू-स्खलन हुआ, जिससे ब्रह्मपुत्र नदी का प्रवाह प्रभावित हुआ। 1970 में पीरू का यंगे नगर भूकम्पजनित भू-स्खलन से पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया था। इस नगर के पास स्थित हुआस्करन पर्वत की चोटी पर स्थित हिम टोपी (Ice Caps) नीचे गिर गई। यह वृहदाकार हिमखण्ड मलबे के साथ 320 किमी. प्रति घण्टे की दर से नीचे की ओर खिसकने लगे। इसके प्रभाव से 25,000 व्यक्ति मारे गए।
3. **सांस्कृतिक पर्यावरण को क्षति** (Destriction of Cultural Environment)—भूकम्प द्वारा सांस्कृतिक पर्यावरण भी क्षतिग्रस्त होता है। इसमें मानव निर्मित संरचनाएँ प्रमुख हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार के भवन, रेल लाइनें, सड़क, छोटे-बड़े बाँध आदि को सम्मिलित किया जाता है। ये सभी संरचनाएँ भूकम्प से प्रभावित होती हैं। 26 जनवरी, 2001 को गुजरात का भुज शहर भूकम्प के कारण मलबे में बदल गया। एक सरकारी आकलन के अनुसार सम्पूर्ण गुजरात में 30 हजार करोड़ की मानव निर्मित सम्पत्ति नष्ट हो गई। इसी प्रकार सितम्बर, 1985 का मैक्सिको का भूकम्प लैटिन अमेरिका का विगत शताब्दी का सर्वाधिक प्रबल भूकम्प था। इससे सबसे अधिक हानि मैक्सिको की राजधानी मैक्सिको सिटी में हुई, जहाँ 10 हजार लोग मारे गए, 40 हजार भवन ध्वस्त हो गए।

   भूकम्प का सबसे अधिक प्रभाव नगरीय क्षेत्रों में होता है। यहाँ सघन जन-समूह निवास करते हैं। शहरी आधारभूत सुविधाओं को भारी क्षति होती है। बिजली एवं टेलीफोन की व्यवस्था गड़बड़ा जाती है। यातायात व्यवस्था अवरुद्ध हो जाती है। जून, 1990 में उत्तरी ईरान में भीषण भूकम्प आया जिसके कारण भू-स्खलन से गिलान प्रांत की राजधानी रश्त को काफी क्षति पहुँची।
4. **जनहानि** (Loss of Human Lives)—प्राकृतिक परिवेश तथा सार्वजनिक सम्पत्तियों के अतिरिक्त भूकम्प के कारण जनहानि भी होती है, जो सर्वाधिक हृदय विदारक होती है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

19वीं शताब्दी से पूर्व की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण जनहानि 1956 में शेन-शुचीन (चीन) में हुई थी जब वहाँ भीषण भूकम्प में 8,30,000 लोग मारे गए। इसके अतिरिक्त 1908 में मेसिनो (इटली) के भूकम्प में 1,60,000 व्यक्ति, 1920 में कांसू (चीन) में 1,80,000 व्यक्ति, 1932 में संगामी की खाड़ी (जापान) में 2,50,000 व्यक्ति, 1976 में तांगशान (चीन) में 7,50,000 व्यक्ति काल-कलवित हो गए।

5. **अग्नि** (Fire)—भूकम्प से होने वाले भू-तल के दोलनों द्वारा जगह-जगह आग लग जाती है। इससे मकानों, खदानों तथा कल-कारखानों को व्यापक तौर पर क्षति होती है। 1923 के संगामी की खाड़ी (जापान) का भूकम्प जो दोपहर को आया था उस समय दोपहर का भोजन पकाने हेतु घरों में आग जलाई जा रही थी जिससे टोकियो व योकोहामा के आस-पास के क्षेत्रों में आग के व्यापक फैलाव द्वारा भारी क्षति हुई।
6. **बाढ़** (Floods)—भूकम्प द्वारा स्थलखण्ड टूटकर नदियों के प्रवाह मार्ग को अवरुद्ध कर देने से बाढ़ आ जाती है। 1950 के असोम भूकम्प के दौरान दीहाँग (ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी) नदी में विनाशकारी बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। इसके अलावा भूकम्प के प्रभाव से बड़े बाँधों में दरारें उत्पन्न हो जाती हैं अथवा बाँध फट जाने पर अचानक निचले क्षेत्रों में बाढ़ें आ जाने से जन-धन की हानि होती है।
7. **अन्य प्रभाव**—छोटे-बड़े बाँधों को क्षति पहुँचती है। सुनामी तरंगों से क्षति होती है। सागर तटीय क्षेत्र सुनामी तरंगों से सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। जून, 1819 के कच्छ (गुजरात) के भूकम्प के कारण प्रबल सुनामी तरंगें उत्पन्न हुई, जिससे तटीय भागों में भारी क्षति हुई।

भूकम्प के लाभकारी प्रभाव

(i) भूकम्प से धरातल में दरार पड़ जाने के कारण कुछ भाग नीचे धँस जाते हैं जिससे बनने वाले गर्त में जल भर जाने पर झील बन जाती है।

(ii) कई झीलों का जल बह जाने से उनकी तली उपजाऊ कृषि भूमि में बदल जाती है।

(iii) भूमिगत जल-व्यवस्था में विक्षोभ उत्पन्न होने पर नवीन झरने एवं सोते बन जाते हैं।

(iv) समुद्र के तटवर्ती भागों के नीचे धँस जाने से खाड़ियाँ बन जाती हैं, जो प्राकृतिक बंदरगाहों का कार्य करती हैं।

(v) भूकम्प से शैलों में टूट-फूट से उनका विघटन एवं वियोजन सरलता से हो जाता है एवं मिट्टी का निर्माण होता है।

(vi) भूकम्प के दौरान अनेक खनिज पदार्थ भू-गर्भ से ऊपर की ओर आ जाते हैं।

(vii) नदियों के मार्ग बदल जाने से नवीन क्षेत्रों में उपजाऊ मिट्टी बिछाई जाती है।

(viii) ऊँचे उठे भागों का निम्नीकरण होने से धरातल समतल हो जाता है, जिस पर यातायात का विकास आसान हो जाता है।

(ix) भूकम्पीय लहरों के स्वभाव एवं गति में विभिन्नता के अध्ययन द्वारा भू-गर्भ की बनावट के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध होती है।

सार्वजनिक सम्पत्तियों तथा अन्य प्राकृतिक परिवेश की होने वाली क्षति की पुन: पूर्ति हो जाती है, जिसको विकसित करने में मनुष्य की महती भूमिका होती है। लेकिन जन-हानि की क्षति अपूरणीय होती है। विभिन्न परिवार टूट जाते हैं, जिसकी सामाजिक पीड़ा आने वाली पीढ़ियों को सहनी पड़ती है।

□□□

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic :- (2) Mountain Building Theories : Kober
(पर्वत निर्माण सिद्धान्त :- कोबर)

प्रश्न -(1) पर्वत निर्माण के भू-सन्नति सिद्धान्त की विवेचना कीजिए। (2018)

→ पर्वत - भूतल पर द्वितीय श्रेणी के उच्चावच होते हैं,

परिभाषा :- सैलिसबेरी के अनुसार :- "पर्वत स्थल के ऐसे पुंज (समूह) हैं जो अपनी पर्याप्त ऊँचाई के कारण अपने आस-पड़ोस की अपेक्षा अत्यन्त स्पष्ट होते हैं। किन्तु उनके शीर्ष के तल का विस्तार अधिक नहीं होता है।"

सीमैन के अनुसार :- "पर्वत धरातल की महत्वपूर्ण भू-आकृति है, जो संकुचित शिखर और काफी ऊँचाई के होते हैं।"

अतः पर्वत वे भू-आकार है जो निकट की भूमि से अधिक ऊँचाई के होते हैं तथा जिनकी चोटी शंक्वाकार हो"

पर्वत कई रूपों में पाये जाते हैं- पर्वत कटक, पर्वत श्रेणी, पर्वत श्रृंखला, पर्वत तंत्र, पर्वत वर्ग, पर्वत समूह, पर्वत शिखर आदि।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

February 2020

S	M	T	W	T	F	S
						1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

भू-सन्नति (Geosynclines):- "भू-सन्नतियाँ लम्बे, संकरे

8.00 तथा उथले जलीय भाग होती है। जिनमें तलछटीय निक्षेप

9.00 के साथ-साथ तली में धंसाव होता है।"

- ये भू-सन्नतियाँ (जलीय गर्त) सदैव दृढ़ प्राचिन

10.00 भू-खण्डों के मध्य अवस्थित होती है। जिन्हे

अग्रदेश (Foreland) कहते हैं।

11.00

12 NOON भू-सन्नति की संकल्पना का विकास :- हाल तथा डाना ने किया।

⇒ सागरों के लिए सर्वप्रथम डाना ने 'भूसन्नति' नाम

1.00 दिया तथा बताया कि - "भूसन्नतियाँ लम्बे, संकरे, उथले

तथा निरन्तर धँसती हुई सागरीय भाग होती है।"

2.00

⇒ भू-सन्नति संकल्पना का सिद्धान्त के रूप में प्रतिपादन

3.00 - 'हाग' ने किया है।

4.00

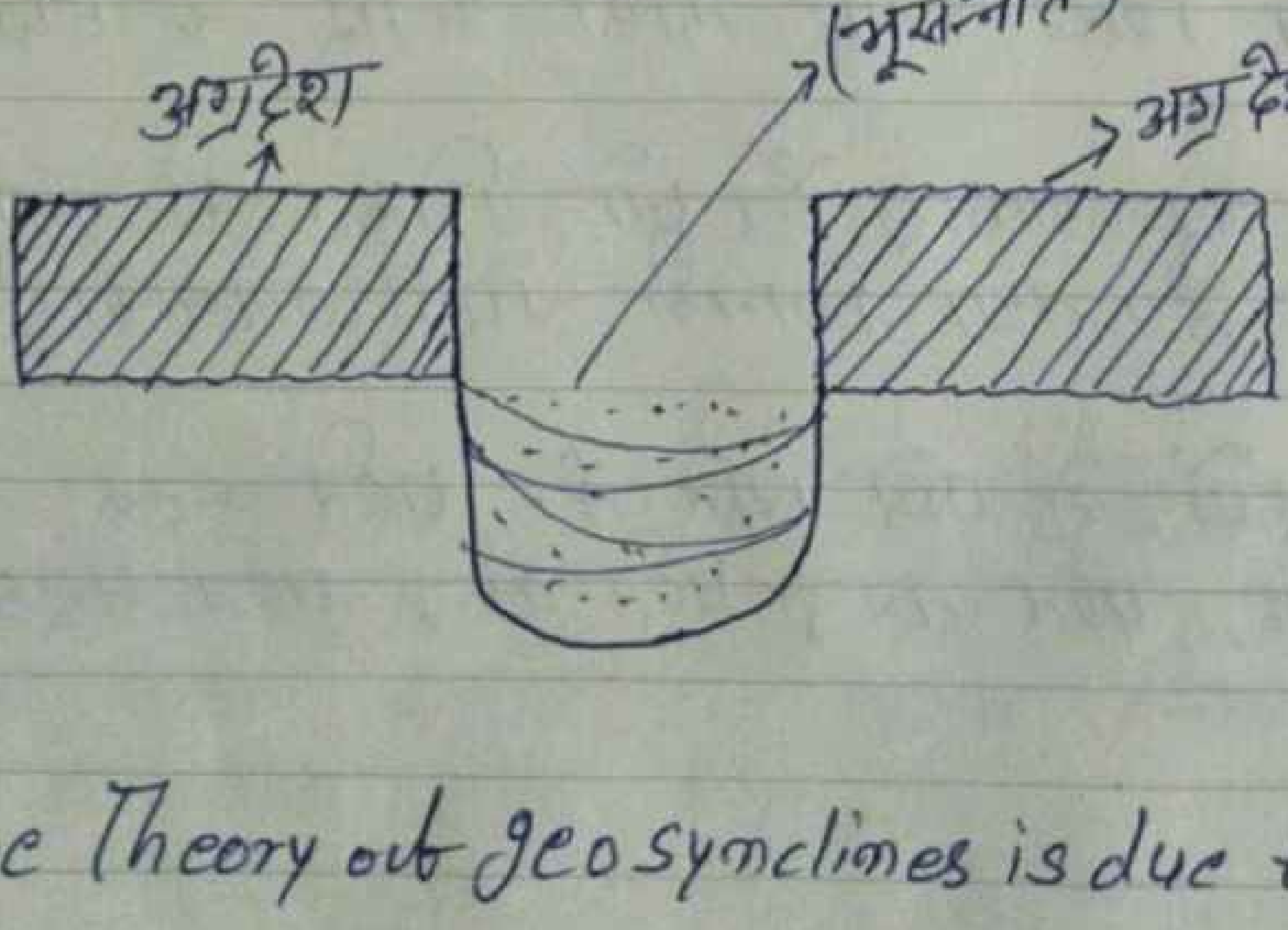

5.00

6.00

⇒ While the Theory out geosynclines is due to (Haug.)

⇒ The Concept out idea belongs to Hall and Dana'

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

भूसन्नतियों को - 'पर्वतों का पालना' कहते है।

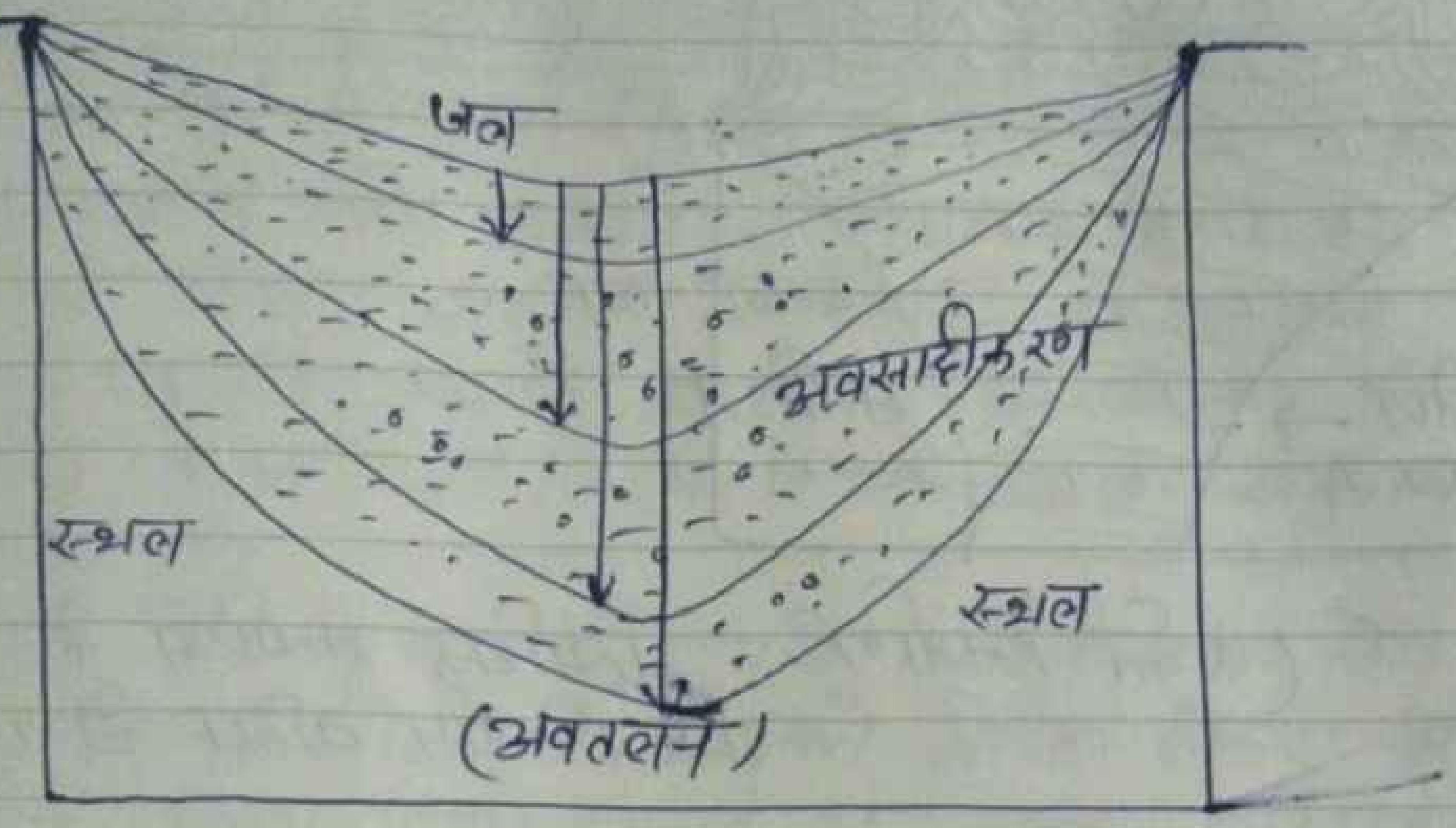

(भू-सन्नति : तलघटीय जमाव तथा धंसाव)

भू-सन्नति की अवस्थाएँ :- 3 अवस्थाएँ है।

(i) भू-सन्नति अवस्था :- पर्वत निर्माण की प्रा. अवस्था
(ii) पर्वत निर्माण की अवस्था - ग्रीवा खण्ड तथा परिवलन मोडों का निर्माण
(iii) विकास की अवस्था :- पर्वत उत्थान की अवस्था

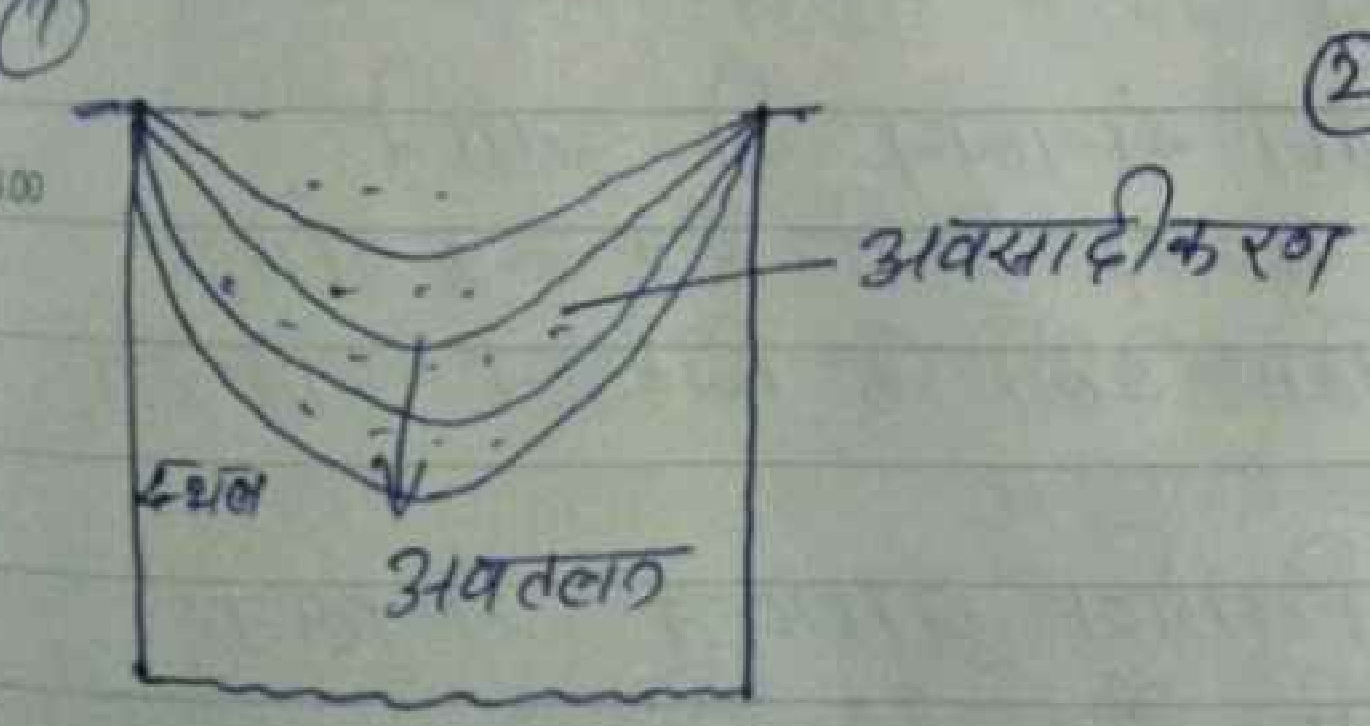

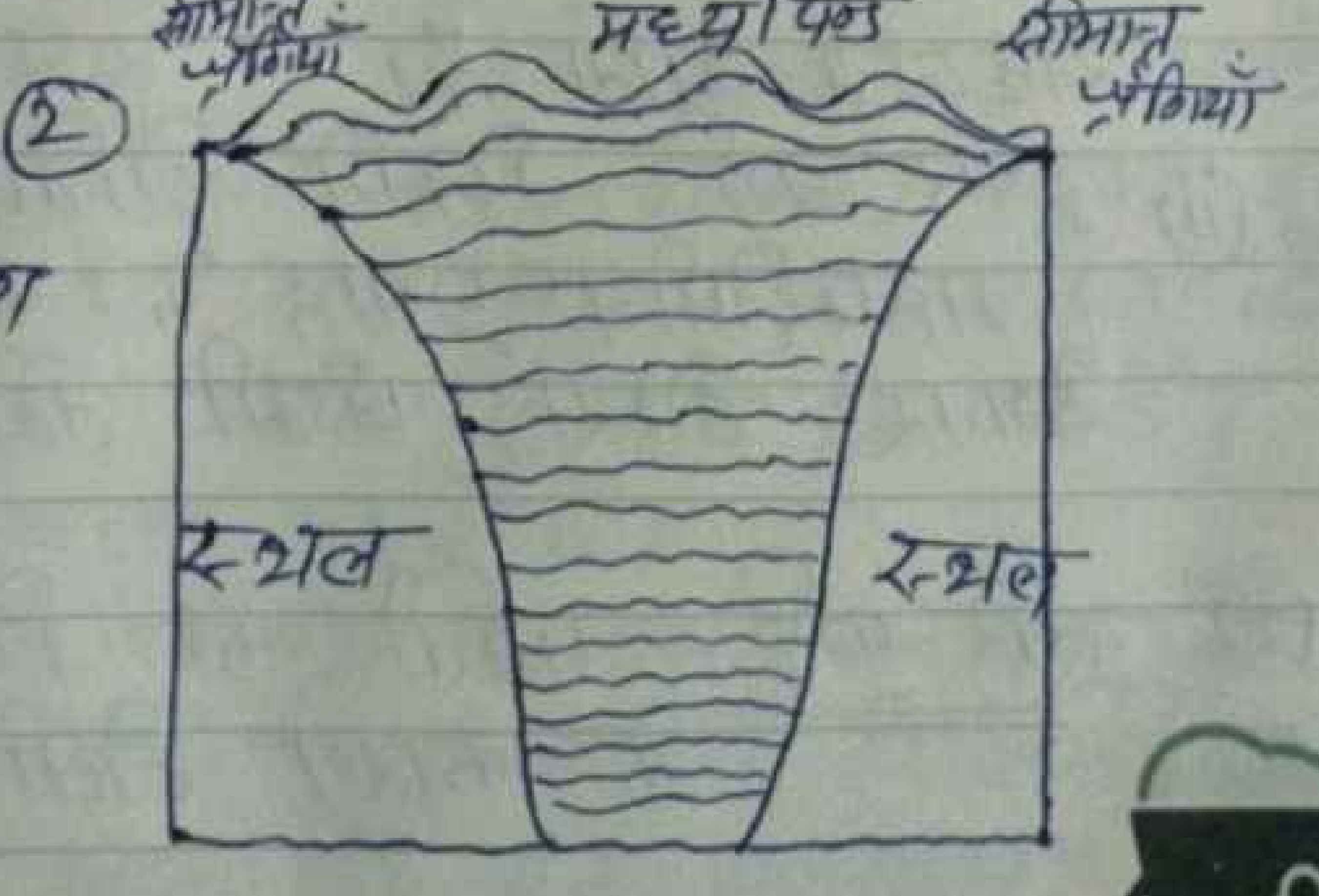

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3)

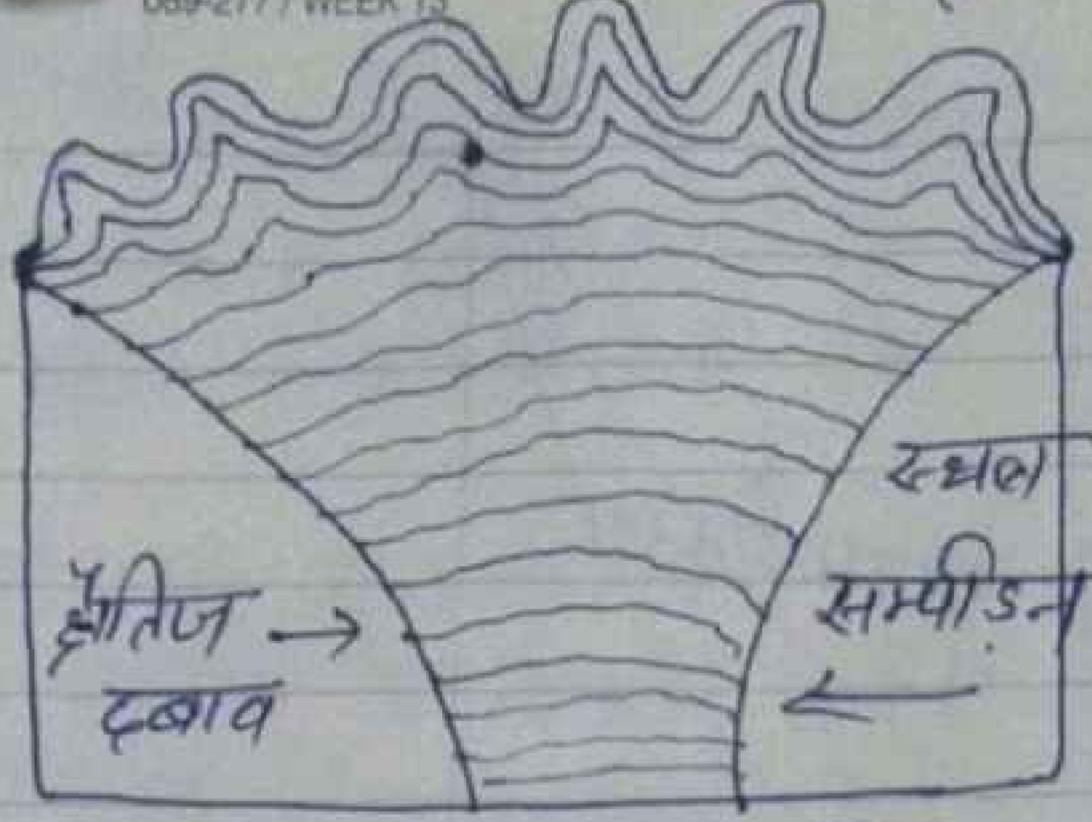

(पर्वत निर्माण :- अत्यधिक सम्पीड़न के कारण समस्त भाग वलित हो जाता है,

पर्वत निर्माण के सिद्धान्त :- दो वर्गों में रखा

(i) प्रथम वर्ग - में भूपटल पर पर्वतों का निर्माण धरातलीय क्षैतिज संचलन के कारण भू-पटल में सिकुड़न एवं वलन होने से होता है।

इसे पुनः दो वर्गों में

(i) प्रथम वर्ग :- क्षैतिज संचलन पृथ्वी में सिकुड़न होने से उत्पन्न होता है। इसके अन्तर्गत संकुचन सिद्धान्त का अध्ययन किया जाता इसमें - कोबर तथा जेफ्रीज का सिद्धान्त आता है।

(ii) दूसरे वर्ग :- जिनमें क्षैतिज संचलन की उत्पत्ति महाद्वीपीय प्रवाह के कारण होती है। इसमें :- वेगनर, होम्स, जोली तथा डेली के सिद्धान्त आते हैं,

(2) दूसरे वर्ग :- पर्वतों का निर्माण लम्बवत् संचलन के कारण होता है। (उर्ध्वाधर)

Let's make a right choice and use dustbin.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

कोबर का पर्वत निर्माणक भू-सन्नति सिद्धान्त :-

(Geosynclinal Orogen Theory of Kober) :- कोबर ने वलित पर्वतों की उत्पत्ति की व्याख्या के लिए 'भू-सन्नति सिद्धान्त दिया' वास्तव में कोबर का प्रमुख उद्देश्य प्राचीन दृढ़ भूखण्डों तथा भू-सन्नतियों में सम्बन्ध स्थापित करना था, इनका सिद्धान्त संकुचन शक्ति पर आधारित है।

- पृथ्वी में संकुचन होने से उत्पन्न बल से अग्रदेशों में गति उत्पन्न होती है जिससे प्रेरित होकर सम्पीडनात्मक बल के कारण भू-सन्नति का मलवा वलित होकर पर्वत का रूप धारण करता है जहाँ पर आज पर्वत है, वहाँ पर पहले भू-सन्नतियाँ थी। जिन्हें कोबर ने पर्वत निर्माण स्थल बताया है। इन भू-सन्नतियों के चारों ओर प्राचीन दृढ़ भूखण्ड थे, जिन्हे क्रैटोजेन बताया है।

कोबर के अनुसार भू-सन्नतियाँ लम्बे तथा चौड़े जलपूर्ण गर्त थी पर्वत निर्माण की पहली अवस्था भू-सन्नति निर्माण की होती है जिसके दौरान पृथ्वी में संकुचन के कारण भू-सन्नति का निर्माण होता है इसे भू-सन्नति अवस्था कहते है प्रत्येक भू-सन्नति के किनारे पर दृढ़ भूखण्ड होते है जिन्हे कोबर ने अग्रदेश (Foreland) बताया इन दृढ़ भूखण्डों के अपरदन से प्राप्त मलवा का नदियों द्वारा भू-सन्नति में धीरे-धीरे जमाव होता रहता है इस क्रिया को अवसादीकरण कहते है (Sedimentation) अवसाद जमाव के कारण भार में वृद्धि होने से भू-सन्नति की तली मे निरन्तर धंसाव होता जाता है इसे अवतलन

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

की क्रिया कहते है। इन दोनों क्रियाओं के लम्बे समय तक चलते रहने के कारण भू-सन्नति की गहराई अत्यन्त अधिक हो जाती है तथा अधिक मात्रा में मलवा का निक्षेप हो जाता है

- जब भू-सन्नति भर जाती है तो पृथ्वी के संकुचन से उत्पन्न क्षैतिज संचलन के कारण भू-सन्नति के दोनों अग्रदेश एक दूसरे की ओर खिसकने लगते है इसे पर्वत निर्माण की अवस्था कहते है। अग्रदेशों के सरकने से भू-सन्नति के तलछट में सिकुड़न तथा मोड़ पड़ने लगता है जिस कारण मलबा वलित होकर पर्वत का रूप धारण कर लेता है।
- भू-सन्नति के दोनों किनारों पर दो पर्वत श्रेणियों का निर्माण होता है जिन्हे कोबर ने 'रैण्डकेटेन' नाम दिया है
- भू-सन्नति के मलबा का वलित होना सम्पीडन के बल पर आधारित होता है यदि सम्पीड़न का बल सामान्य होता है तो केवल किनारे वाले भाग ही वलित होते है तथा मध्य का भाग वलन से अप्रभावित रहता है जो इस भाग को कोबर ने 'स्वाशिनवर्ग' जिसे सामान्य रूप से मध्य पिण्ड कहा जाता है

जब सम्पीड़न का बल सर्वाधिक होता है तो भूसन्नति का समस्त मलवा वलित होता है पर्वत निर्माण होता है सम्पीडन बल जितना अधिक होता है पर्वतीकरण में उतनी जटिलता आती है

- कभी-कभी वलन की ग्रीवा टूट कर दूसरे वलन पर चढ़ जाती है जिससे ग्रीवाखण्ड का निर्माण होता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

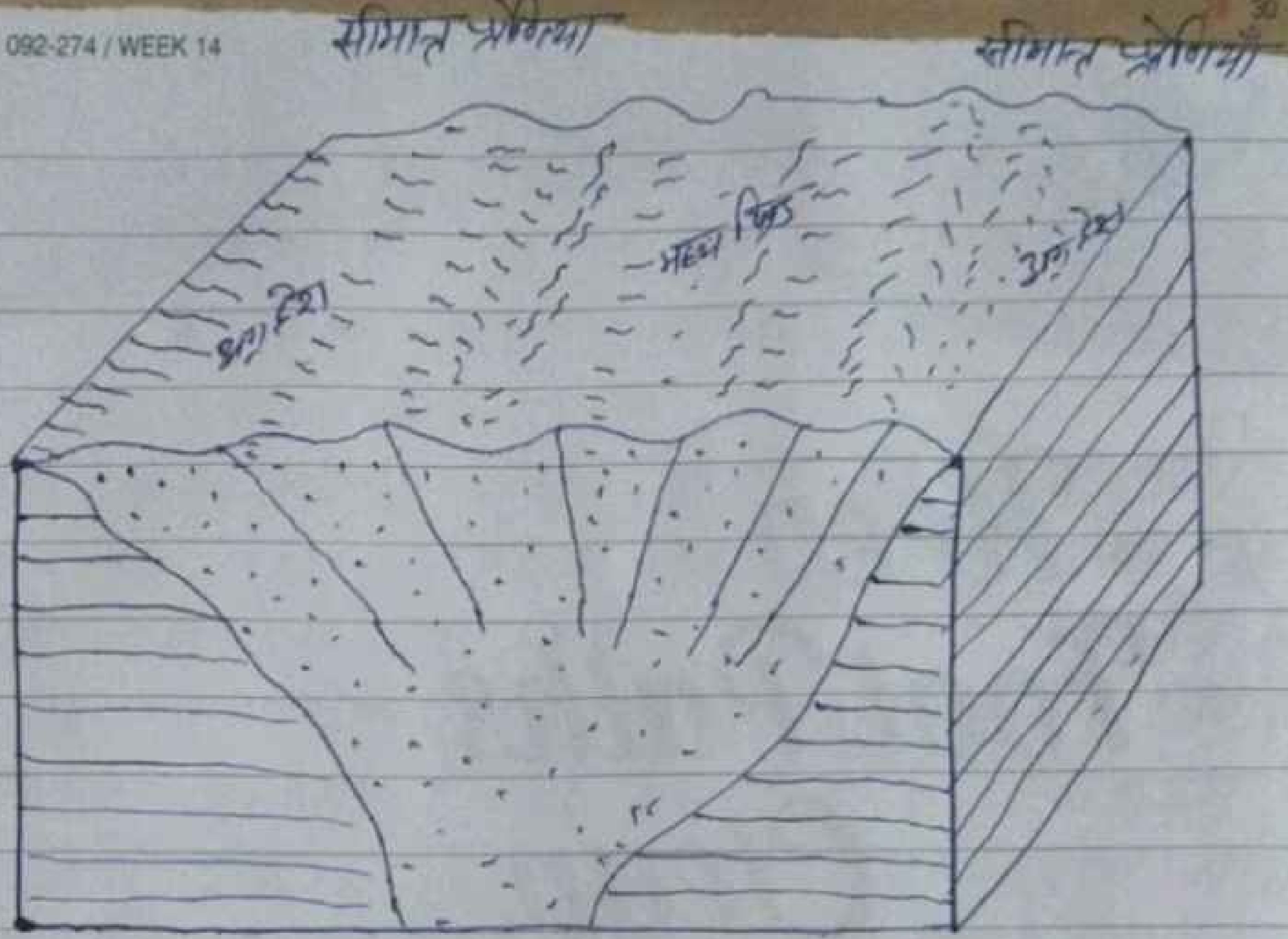

(कोबर के पर्वत निर्माण का भूसन्नति सिद्धान्त)

- कोबर ने अपने विशिष्ट मध्य पिण्ड के आधार पर विश्व के वलित पर्वतों की संरचना को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

⇒ टेथीज भू-सन्नति के उत्तर में यूरोप का स्थल भाग तथा द. अफ्रीका का दृढ़ भूखण्ड था। इन दोनों अग्रदेशों के आमने-सामने सरकने के कारण अल्पाइन पर्वत शृंखला का निर्माण हुआ।

⇒ अफ्रीका के उत्तर की ओर सरकने के कारण बेटिक, कार्डिलेरा, पिरेनीज, आल्प्स, कार्पेथियन्स बालकन पर्वत, कॉकेशस पर्वत का निर्माण हुआ।

⇒ यूरोपीय दृढ़-भूखण्ड के दक्षिण की ओर खिसकने के कारण एटलस, एपीनाइन्स, डिनाराइड्स, हेलेनाइड्स, आदि पर्वतों का निर्माण हुआ। कार्पेथियन्स तथा दिनारिक आल्प्स के मध्य 'हंगरी का मैदान' मध्य

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

पिण्ड रहा है। पेरेनीज श्रेणियों तथा एटलस के मध्य रूम सागर का भाग एक मध्य पिण्ड है, टारस तथा पाण्टिक श्रेणियों के मध्य अनातोलियाँ का पठार, एल्बुर्ज और जेग्रोस पर्वतों के मध्य ईरान का पठार, हिमालय तथा कुनलुन के मध्य तिब्बत का पठार आदि मध्य पिण्ड के उदाहरण है।

→ कोबर ने मध्य पिण्ड से पर्वत निर्माण को उचित ढंग से समझाने का प्रयास किया मध्य पिण्ड विशिष्ट पर्वत निर्माण स्थल की अच्छी तरह व्याख्या करती है।

हिमालय के निमार्ण के विषय में कोबर ने बताया है कि पहले टैथीज सागर था।, जिसके उत्तर में अंगारालैण्ड तथा दक्षिण में गोण्डवानालैण्ड अग्रदेश के रूप में थे।, इयोसीन युग में दोनों आमने-सामने सरकने लगे जिससे उत्तर में कुनलुन पर्वत तथा दक्षिण में हिमालय की उत्तरी श्रेणी का निर्माण हुआ।, दोनो के मध्य तिब्बत का पठार मध्य पिण्ड के रूप मे शेष रहा।,

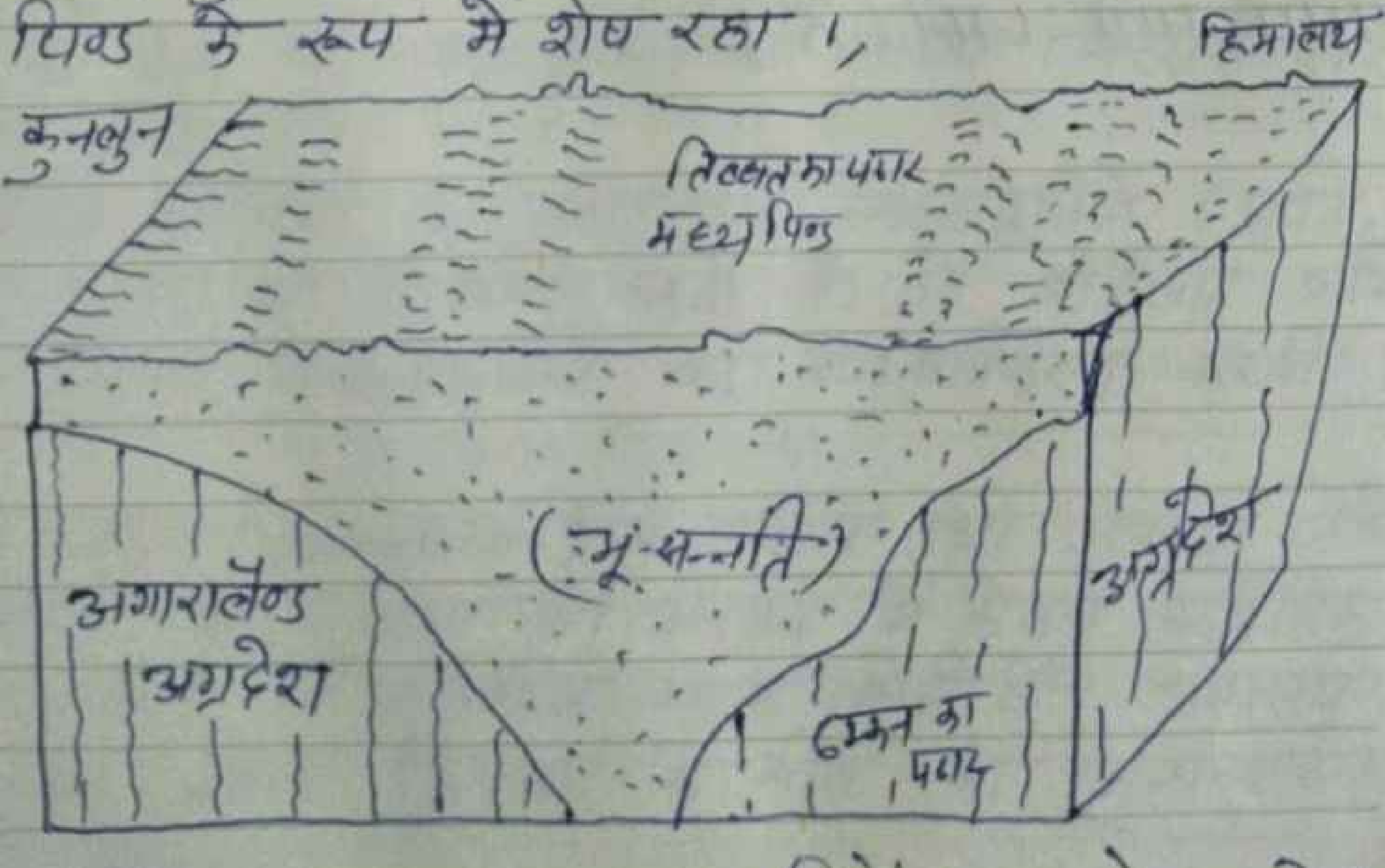

(हिमालय तथा कुनलुन पर्वतों तथा कोबर के मध्य पिण्ड सिद्धान्त)

Clean India, Beautiful India.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

March 2020
S M T W T F S
1 2 3 4 5 6 7
8 9 10 11 12 13 14
15 16 17 18 19 20 21
22 23 24 25 26 27 28
29 30 31

8.00
9.00
10.00
11.00
12 NOON

आलोचनाएँ / दोष :- (i) कोबर द्वारा वर्णित पृथ्वी के संकुचन से उत्पन्न बल, पर्वत निर्माण के लिए उपर्युक्त नहीं है।

(ii) कोबर के अनुसार भू-सन्नति के दोनों पार्श्व सरकते हैं परन्तु स्वैस ने बताया है कि एक पार्श्व सरकता है जिसे इन्होने पृष्ठ प्रदेश कहा तथा दूसरा पार्श्व अपनी जगह स्थिर रहता है जिसे इन्होने अग्रदेश कहा है।

(iii) पूर्व - पश्चिम फैले पर्वतों (आल्प्स, हिमालय) का स्पष्टीकरण तो हो जाता हैं परन्तु उत्तर - दक्षिण फैले पर्वतों का स्पष्टीकरण नहीं हो पाता है। (रॉकीज एवं एण्डीज)

(iv) अवसाद अधिक गहराई तक पाये जाने चाहिए पर ऐसा नही होता है। पर्वतों में अन्दर धातुओं के निक्षेप पाये जाते है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic :- पर्वत निर्माण सिद्धान्त :-(होम्स)

प्रश्न•1• होम्स के तापीय संवहन तरंग सिद्धान्त का वर्णन कीजिए ।,

प्रश्न• होम्स का संवहन तरंग सिद्धान्त को समझाइयें ।,

उत्तर :- होम्स का तापीय संवहन तरंग सिद्धान्त :-

⇒ ब्रिटिश भू-वैज्ञानिक आर्थर होम्स ने वर्ष 1928-29 में भू-पटल को दो भागों : ऊपरी परत तथा अध-स्तर में विभाजित किया तथा बताया कि अध: स्तर द्रव अवस्था में हैं।

⇒ यह सिद्धान्त चट्टानों की रेडियोधर्मिता पर आधारित है, इन्होंने बताया कि भू-पटल की चट्टानों में यूरेनियम, थोरियम, पोटेशियम आदि रेडियोधर्मी पदार्थ विखण्डित होकर ऊष्मा उत्पन्न करते हैं,

⇒ ये पदार्थ निचली चट्टानों की अपेक्षा ऊपरी भागों में अधिक पाए जाते है, लेकिन ऊपरी सियाल पर से इनका विकिरण द्वारा ह्रास हो जाता है, जबकि अध: स्तर में ताप (ऊष्मा) का संचय होता रहता है, जिस कारण भू-गर्भ में संवहन धाराएँ चलने लग जाती हैं,

साक्ष्य के आधार पर मैंटिल एक वृत्ताकार गति में घूम रहा है, जिसे संवहन कहते हैं। तथा इन विशाल छल्लों को संवहन कोश कहते हैं।, संवहन तरंगों की गतिशीलता निम्न दो तथ्यों पर निर्भर करती है, -

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(1) भू-पटल रेखा से ध्रुवों तक अधःस्तर की मोटाई -

(2) भू-पटल की मोटाई एवं रेडियोधर्मी पदार्थ की मात्रा -

⇒ होम्स महोदय ने भूमध्य रेखा पर ध्रुवों की अपेक्षा भू-पटल का अधिक मोटा माना है। अतः इसके नीचे से ऊपर की ओर संवहन धाराएँ संचरित होती हैं। इसी क्रम में महाद्वीपों के नीचे महासागरों की तुलना में रेडियोधर्मी पदार्थों की अधिकता होने के कारण नीचे से ऊपरमुखी धाराएँ चलती हैं। भूमध्य रेखा से ध्रुवीय क्षेत्रों की ओर गतिशील धाराओं द्वारा भू-खण्ड भी ध्रुवों की ओर विस्थापित एवं खण्डित होते हैं। होम्स ने टैथीज की उत्पत्ति मध्यजीवी काल में होना बताया है,

⇒ महासागरों के नीचे अधःस्तर मे चलने वाली संवहन धाराएँ भिन्न क्रम की होती हैं। सागरीय क्षेत्रों के मध्यवर्ती भागों से ऊपर उठती हैं तथा किनारों पर ऊपर से नीचे की ओर धाराएँ चलती है,

⇒ नीचे से ऊपर उठकर भिन्न दिशा में चलने वाली अपसारी धाराओं द्वारा भू-पटल पर तनाव उत्पन्न होता है, जबकि इसके विपरीत दो विपरीत दिशाओं से आकर मिलने वाली 'अभिसारी धाराओं' के स्थान पर सम्पीड़न उत्पन्न होता है। जिसके परिणामस्वरूप ग्रेनाइट का रूपान्तरण एक्लोजाइट में होकर अधिक सघन हो जाती है,

⇒ इस प्रकार इनका अवतलन होकर भू-अभिनतियों में निरन्तर तलछट का जमाव होता रहता है, इन धाराओं की दिशा उथले सागरों की

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

ओर होने से इनमें मोड़ पड़कर पर्वतों का निर्माण सम्भव होता है, होम्स के अनुसार हिमालय तथा आल्पस पर्वतों की उत्पत्ति इसी क्रम से हुई है,

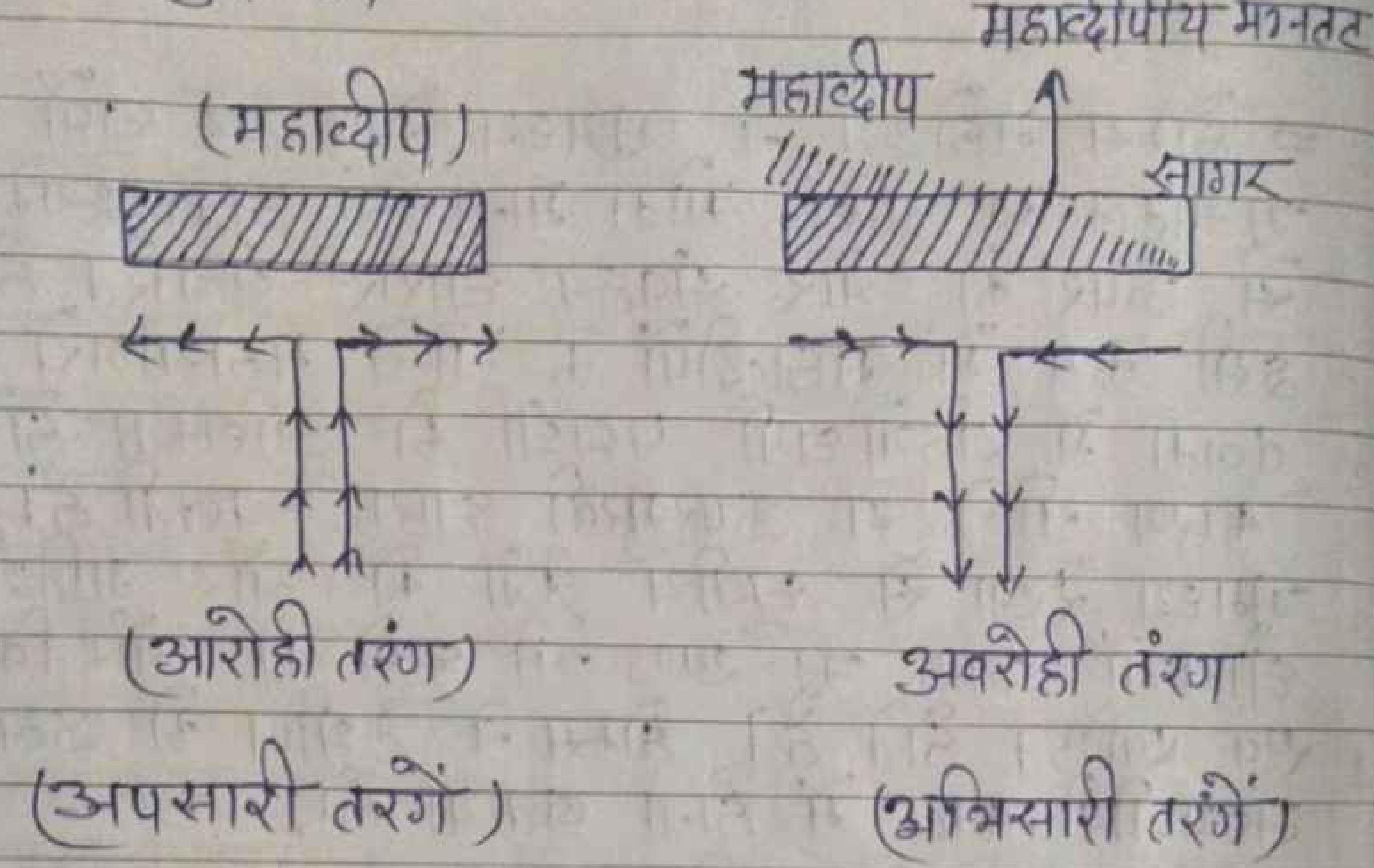

⇒ संवहनीय तरंगों की क्रिया चक्रीय रूप में पूर्ण होती है, जिसके दौरान ही भू-अभिनति का निर्माण होता है, संवहनीय तरंगों की क्रिया चक्रीय रूप में पूर्ण होती है, जिसके दौरान ही भू-अभिनति का निर्माण होता है, भू-अभिनति के उपरान्त पर्वत की उत्पत्ति तथा उत्थान होता है,

⇒ होम्स महोदय ने इस सम्पूर्ण अवधि में उत्पन्न होने वाली संवहनीय तरंगों की तीन अवस्थाएँ बताई हैं।

1) प्रथम अवस्था :-(First stage):- इसकी अवधि लम्बी होती हैं।, जिसमें दो केन्द्रों से आने वाली तरंगों के मिलने से जलमग्न तटों के नीचे भू-अभिनतियों का निर्माण होता है, इस अवस्था में तरंगों के

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

JAN - 2020

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

वेगवती होने के कारण भू-अभिनति में निरन्तर जमाव के साथ धँसाव भी होता रहता है, जिससे इन धँसते पदार्थों का गहराई तक अवतलन हो जाता है, तो ऊपरी दबाव एवं पृथ्वी की आन्तरिक गर्मी से ये अवतलित पदार्थ तप्त होकर पुनः घनत्व बढ़ने से धँसते हैं। यहाँ ताप का पर्याप्त संचय नहीं हो पाता है,

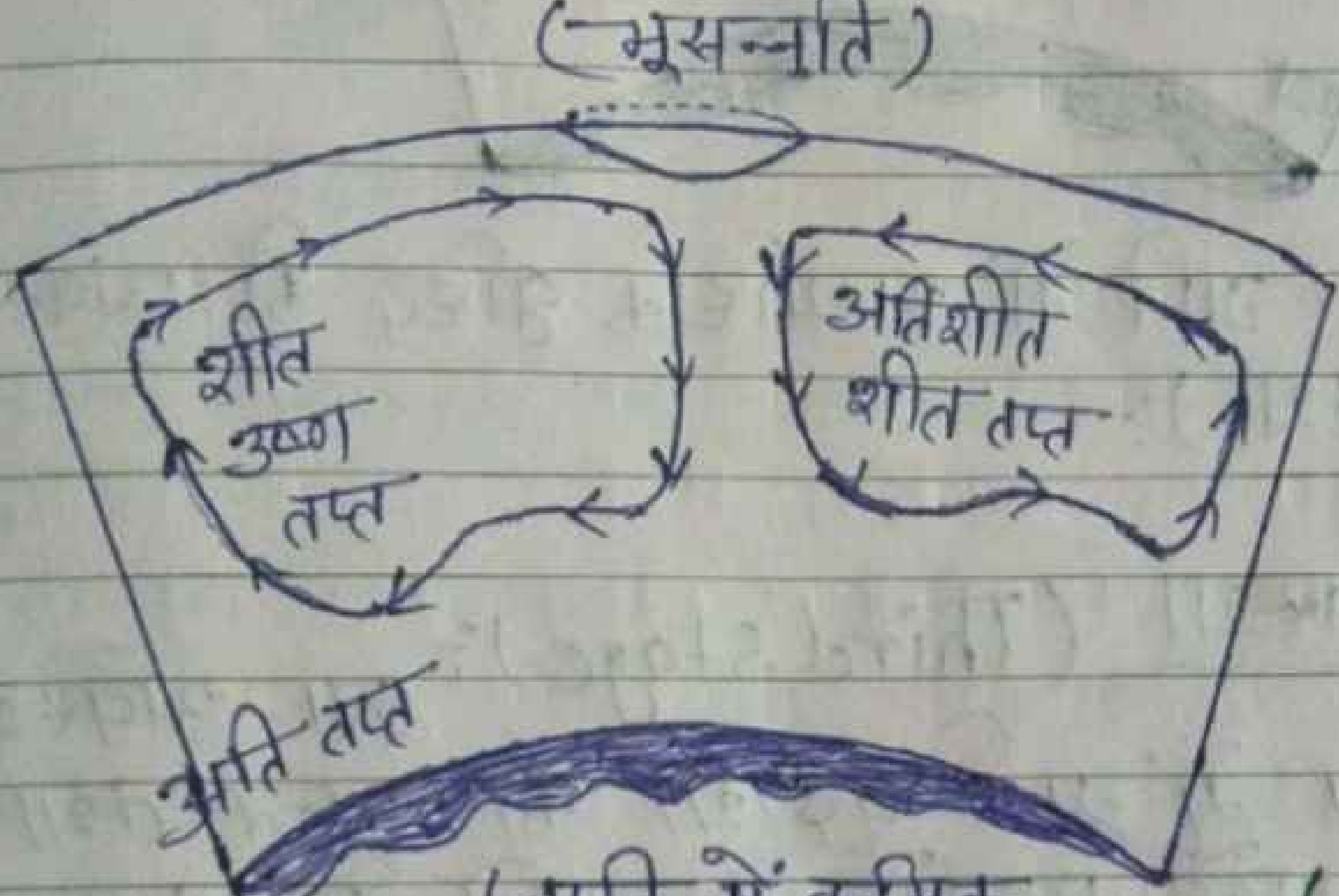

(गति में क्रमिक वृद्धि)

(प्रथम अवस्था)

(2) द्वितीय अवस्था :- (Second stage): इस अवस्था में संवाहनीय तरंगों की गति में भी तीव्रता आ जाती है, लेकिन यह अवधि छोटी होती है, भू-सतह की ओर आने वाली तरंगों की तीव्रता से मिलकर मुड़ जाने से भू-अभिनति की तलछट में क्षैतिज सम्पीडन होता है, जिसके परिणामस्वरूप भू-अभिनति की तलछट वलित होकर पर्वत निर्माण को जन्म देती है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

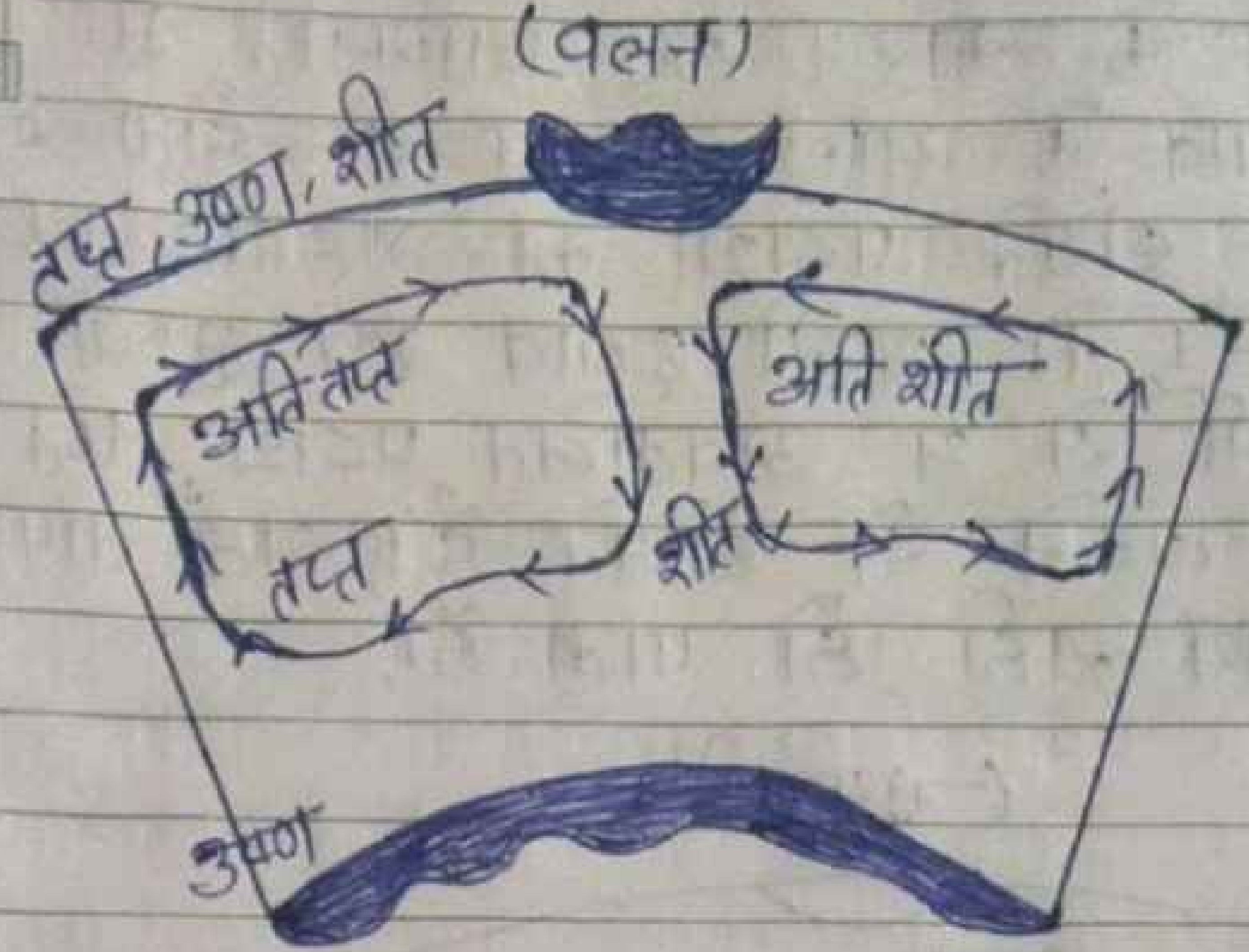

(गति में अत्यधिक वृद्धि की अवस्था)
(द्वितीय अवस्था):-

(3) तृतीय अवस्था (Third stage):- इस अवस्था में गिरते स्तम्भ में गर्म पदार्थों का अन्त तथा उठते स्तम्भ में ठण्डे पदार्थों के उठने के कारण तरंगें क्षीण हो जाती हैं, क्योंकि गिरते स्तम्भ में गर्म पदार्थों का अन्त हो जाता है तथा उठते स्तम्भ शीतल हो जाते हैं, जिस कारण स्तम्भ तरंगें समाप्त हो जाती हैं, होम्स द्वारा प्रस्तुत पर्वत निर्माण की इस प्रक्रिया में विश्वास व्यक्त किया गया है,

⇒ इसके परिणामस्वरूप निक्षेप समाप्त हो जाने से गिरते स्तम्भ के ऊपर दबाव कम होगा तथा ये पदार्थ (गिरते स्तम्भ के) धीरे-धीरे उठेंगे जिससे पर्वत निर्माण प्रारम्भ होगा, साथ ही दबाव कम होने से नीचे दबे भारी पदार्थ ऊपर उठने लगते हैं,

⇒ फलस्वरूप पुनः पर्वतों का उत्थान होता है, इस प्रकार होम्स के इस विचार से पर्वत निर्माण की अवस्थायें स्पष्ट हो जाती हैं,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(वलित पर्वत)

(III)

(गति में ह्रास की अवस्था)

होम्स के सिद्धान्त के पक्ष में निम्न तथ्य महत्वपूर्ण हैं ⇒

(i) पुराजीवी काल के अन्त में पृथ्वी पर गोण्डवानालैण्ड तथा लॉरेंशिया नामक दृढ भू-खण्डों के मध्य टेथीज सागर नामक भू-अभिनति स्थित थी तथा शेष भाग पर प्रशान्त महासागर का विस्तार था।

(2) गोण्डवानालैण्ड के खण्डित होने से हिन्द महासागर की उत्पत्ति हुई।

(3) लॉरेंशिया के खण्डित होने पर अटलाण्टिक महासागर बना तथा इसके विस्थापन से रॉकीज तथा पश्चिमी द्वीप समूह उत्पन्न हुए।

आलोचना :-

(i) इस सिद्धान्त के आधार तत्व रेडियोधर्मी पदार्थ तथा अधः स्तर में क्रियाशील संवहनीय तरंगों के बारे में ज्ञान अल्प हैं, तथा इस सिद्धान्त में कल्पना को अधिक महत्व दिया गया है।

M	T	W	T	F	S	S
30	31					1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

MAR - 2020

MARCH
APRIL

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2). संवहनीय धाराएँ सक्रिय अवश्य हैं, लेकिन इतनी अधिक शक्तिशाली नहीं कि महाद्वीपों का विस्थापन कर सके तथा इनसे पर्वत निर्माण सम्भव हो सके।

(3) संवहनीय धाराओं की निरन्तरता पर भी सन्देह है, क्योंकि इसके निरन्तर सक्रिय रहने पर नवीन भू-खण्डों का निर्माण गतिशील रहना चाहिए।

(4) उठते हुए गिरते स्तम्भ की संकल्पना विश्वसनीय नहीं है।

(5) भू-पर्पटी (crust) के नीचे संवहन तरंगों का क्षैतिज प्रवाह भी विश्वसनीय नहीं है,

(6) रूपान्तरण द्वारा भारी पदार्थ को नीचे की ओर धँसना एक भ्रामक आधार पर दिया गया विचार है।

(7) प्रो. स्टीयर्स के अनुसार: "सिद्धान्त रुचिपूर्ण है, लेकिन ऐसे कारकों पर आधारित है जिनके बारे में अल्प जानकारी प्राप्त है।"

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न : टिप्पणी लिखे
(i) आग्नेय चट्टान (2022)

शैल (Rocks) ⇒ वे समस्त पदार्थ जिनसे भूपर्पटी का निर्माण हुआ है चाहे वे ग्रेनाइट की भांति कठोर हो अथवा मुलायम हो शैल कहलाते है।
- भूपर्पटी में विभिन्न खनिजों का मिश्रित ठोस रूप शैल कहलाता है।

ये निम्न प्रकार की होती है। - इनकी उत्पत्ति, भौतिक व रासायनिक गुण, संरचना, तथा स्थिति के आधार पर मुख्यत: तीन वर्गो मे विभक्त किया गया है।

(i) आग्नेय चट्टाने (Igneous Rocks)
(ii) अवसादी चट्टाने (Sedimentary Rocks)
(iii) कायांतरित चट्टाने (Metamorphic Rocks)

(1) आग्नेय चट्टानें - (Igneous Rocks) :-

Ignis :- अग्नि

वारसेस्टर के अनुसार :- चट्टानों का निर्माण तप्त एवं द्रव पदार्थों के ठण्डे होकर जमने से हुआ है। जिस तप्त द्रव पदार्थ के ठण्डे होने से आग्नेय चट्टाने बनी उसे मैग्मा कहते है। ये प्राचिन सबसे शैल है इनका निर्माण एक सतत प्रक्रिया है, जो वर्तमान में भी चालू है।

विशेषताए :-
(i) ये रवेदार होती है।
(ii) स्तर व रन्ध्रों का अभाव होता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(iii) जीवाश्मों का अभाव, ये ठोस, सघन होती है।
8.00 (iv) इनका अपरदन नही होता है। कम (अपक्षय होने पर)
9.00 (v) सोना, चाँदी, लोहा, जस्ता, तथा सीसा आदि खनिज आग्नेय शैलों में ही पाए जाते है।

10.00 वर्गीकरण :-
(i) कणों के आधार पर -
11.00 (ii) रासायनिक संरचना के आधार पर.
(iii) उत्पत्ति की प्रक्रिया के आधार पर-
12 NOON

(i) कणों के आधार पर :-
1.00
(i) बड़े कणो वाली
2.00 (ii) मध्य कणों वाली
(iii) सूक्ष्म कणों वाली

3.00 (ii) रासायनिक संरचना के अनुसार :-
4.00
(i) आम्लिक आग्नेय चट्टानें.
(ii) मध्यवर्ती
5.00 (iii) पैठिक आग्नेय चट्टाने

6.00 (iii) उत्पत्ति की प्रक्रिया के आधार पर :-

(i) बाह्य आग्नेय चट्टाने
(ii) आन्तरिक आग्नेय चट्टाने :-
(i) पातालीय आग्नेय शैल
(ii) अधिपातालीय आग्नेय शैल

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(iii) अधिपातालीय आग्नेय शैलें :-

(1) बेथोलिथ	(2) फेकोलिथ	(3) लेकोलिथ	(4) लेपोलिथ
ग्रेनाइट की प्रधानता 100km गहराई	मैग्मा का निक्षेप फेकोलिथ	मैग्मा का विशाल जमाव, उत्तल ढाल, गुम्बदकार	छिछले बैसिन में मैग्मा जमा होने से होता है तश्तरीनुमा होता है

- भू-सतह पर प्रतिवर्ष 10% नवीन मैग्मा का उद्गार होता है जिसका प्रभावित क्षेत्र मध्य महासागरीय कटक है।

(2) अवसादी चट्टानें :- (Sedimentary Rocks)

Sedimentum- शब्द से हुई - अर्थ - (नीचे बैठना)

वरसेस्टर के अनुसार :- "अवसादी शैलें प्राचीन शैलों तथा खनिजों के अवसादों के परतों के रूप में संगठित होने से निर्मित हुई है"

⇒ क्षेत्र की दृष्टि से सम्पूर्ण धरातल के 75% भाग पर अवसादी शैलें विस्तृत हैं तथा शेष 25% भाग पर आग्नेय चट्टानें हैं।
संगठन के आधार पर 5% प्रतिशत अवसादी तथा 95% हिस्सा आग्नेय शैलों का है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

"चट्टानें चाहे आग्नेय हों या अवसादी एवं और पृथ्वी के इतिहास की हस्तलिपि तैयार करती हैं तो दूसरी ओर समकालीन दृश्यावली के लिए आधार प्रस्तुत करती है"

"वुलरिज तथा मोर्गन ने लिखा है

⇒ चट्टानें भू-गर्भिक इतिहास की पुस्तकें हैं तथा जीवाश्म उनके पृष्ठ है

अवसादी शैलों की विशेषताएँ :-

(i) इन शैलों में जीवों के अवशेष पाए जाते है, जिससे पूर्व इतिहास के बारे में ज्ञात होता है
(ii) ये शैलें मुलायम तथा रवेदार होती है।
(iii) इनका जमाव परतों के रूप में होता है इनमें विभिन्न खनिज पाये जाते है - कोयला, चूना पत्थर, बालूका पत्थर.
(iv) इनमें भू-जल भी उपलब्ध होता है।

अवसादी शैलों का वर्गीकरण :-

(1) प्रयुक्त अवसाद के अनुसार :-
(i) चट्टान चूर्ण से निर्मित : बालुका पत्थर, चीका मिट्टी,
(ii) जैविक तत्व से निर्मित :- डोलामाइट, कोयला युक्त,
(iii) रासायनिक तत्व से निर्मित :- नमक, खड़िया मिट्टी,

(2) निर्माण में प्रयुक्त साधन के अनुसार :-
(i) जल निर्मित शैलें :- सागरीय, नदी में, झील में
(ii) वायु निर्मित शैलें :- लोयस् उदा.
(iii) हिमानी निर्मित शैलें :- हिमोढ़ उदा.

Cleanliness is happiness

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) कायान्तरित शैलें :- (Metamorphic Rocks) :- किसी मौलिक शैल में वियटन व वियोजन के बिना उसके गुण व संरचना में मूलभूत परिवर्तन से बनी भिन्न प्रकार की शैलें कायान्तरित शैलें कहलाती हैं। यह कायान्तरण जल, ताप व दाब आदि के प्रभाव से हो सकता है। ये मौलिक शैलें - आग्नेय, अवसादी भी हो सकती हैं।

कायान्तरित शैलों की विशेषतायें :-

(i) ये गौण शैलें होती हैं क्योंकि इनका निर्माण अन्य शैलों के रूप परिवर्तन से होता है
(ii) ये मौलिक शैलों की अपेक्षा अधिक संगठित व कठोर होती हैं
(iii) इनमें धात्विक खनिजों की प्रधानता होती है ये आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है।
(iv) ये शैलें अरन्ध्रपूर्ण होती हैं

इन शैलों का रूपान्तरण निम्न :-

(i) तापीय रूपान्तरण :- ज्वालामुखी क्रिया के समय
(ii) गतिक या क्षैत्रीय रूपान्तरण :- मोड़दार पर्वतीय क्षेत्रों में
(iii) जलीय रूपान्तरण :- जल के साथ रासायनिक पदार्थों के मिलकर घोल
(iv) ताप जलीय रूपान्तरण :- गर्म जल तब दबाव व जलवाष्प से शैलों में इस प्रकार का रूपान्तरण होता है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

कायान्तरित शैलों का वर्गीकरण :-

8.00 (i) प्रादेशिक कायांतरण :- विस्तृत क्षेत्र पर सम्पन्न होती है।
(कोयला, चूना पत्थर)

9.00 (ii) सम्पर्कीय कायांतरण :-
सीमित क्षेत्रों मे → चुना पत्थर, संगमरमर में परिवर्तित हो जाता है।

10.00

11.00

प्रमुख कायांतरित शैलें :-

संगमरमर, क्वार्टजाइट, नीस,
12 NOON सिस्ट, स्लेट, ~~[illegible]~~ फाइलाइट, एम्फीबोलाइट आदि है।

1.00 (i) संगमरमर का निर्माण :- चूना-पत्थर तथा डोलोमाइट के कायांतरण से होता है।

2.00

(ii) क्वार्टजाइट :-
3.00 इसका निर्माण बलुआ-पत्थर के रूपान्तरण से

4.00 (iii) नीस :- इसका निर्माण कांग्लोमरेट से होता है। इसका प्रमुख खनिज फेल्सपार होता है।

5.00

(iv) सिस्ट :- यह फाइलाइट का रूपान्तरित रूप है, इसमें
6.00 माइका एवं क्वार्टज की मात्रा अधिक होती है।

(v) स्लेट :- पत्रीकरण, न्यून दाब व ताप से कायान्तरण

(vi) फाइलाइट :- स्लेट से विकास होता है।
(vi) एम्फीबोलाइट :- यह बेसाल्ट, गेब्रो तथा अन्य लोहा, तथा मेग्नीशियम युक्त शैलों के रूपान्तरण से निर्मित होता है।

Let's make a right choice and use dustbin

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

शैल-चक्र :-

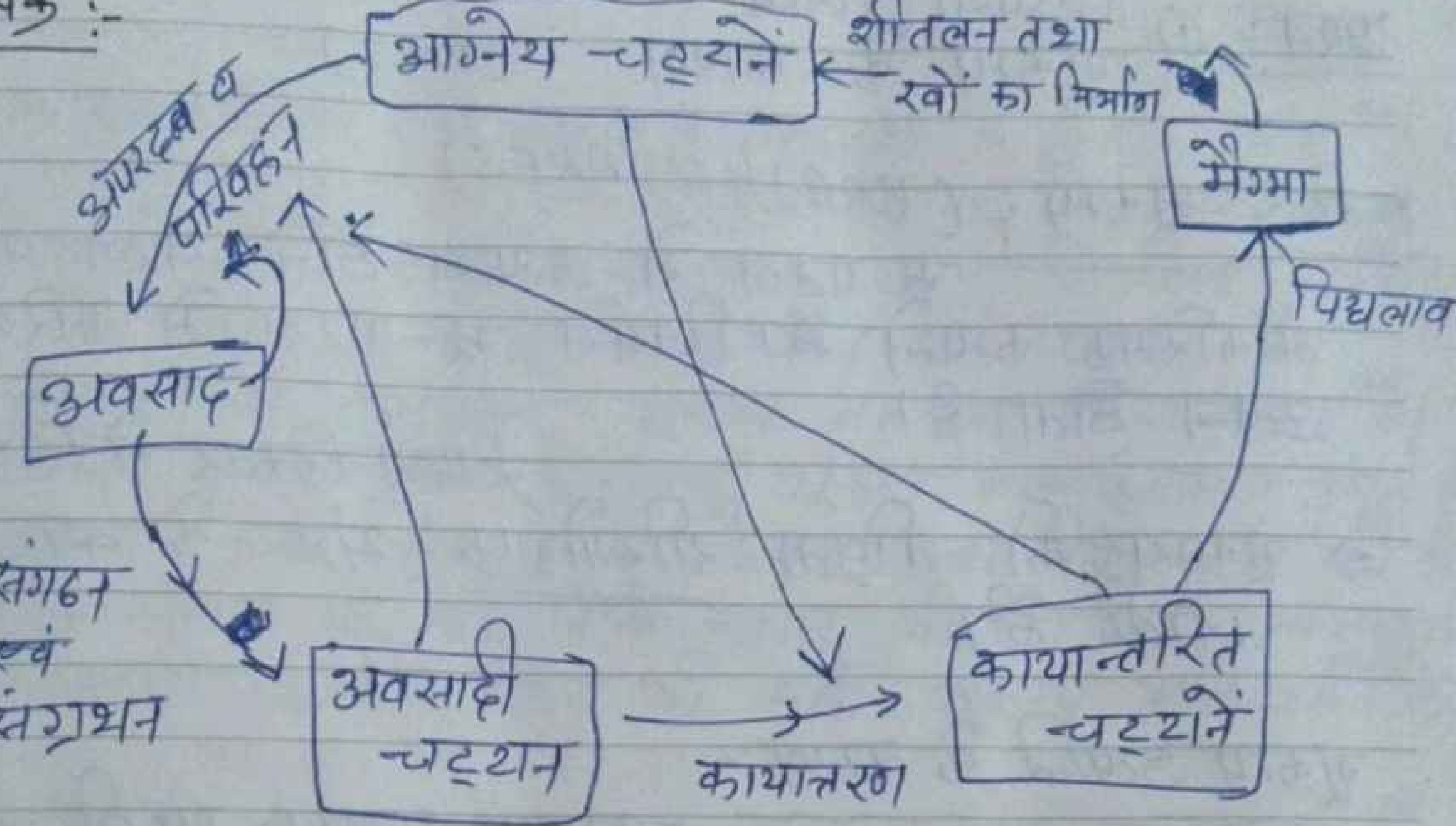

⇒ मूल शैल आग्नेय शैल है। अपक्षय व अपघटन होता है अपरदन होकर अन्यत्र जमा होने से अवसादी शैल बनती है। ये अवसाद जब परत-दर-परत निक्षेपित होता रहता है तो आन्तरिक ताप तथा ऊपरी दाब से इनका कायांतरण होने से कायांतरित शैलों का निर्माण होता है।

शैल-चक्र पृथ्वी की आन्तरिक तथा बाह्य परतों को संयोजित करने की कड़ी का कार्य करती है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

Topic:- (9) Denudation, cycle of erosion:- views of W.M Davis and W.Penck (अनाच्छादन, अपरदन-चक्र :- W.M. डेविस और पेंक)

प्रश्न:- (1) अपरदन चक्र से क्या तात्पर्य है? डेविस के त्रिकूट को विस्तार से समझाइये। (2016)

प्रश्न.(2) अपरदन चक्र पर W.M डेविस व W. पैंक के विचारों की तुलना कीजिए। (2018)

प्रश्न.(3) अनाच्छादन से क्या तात्पर्य है? अपक्षय एवं अपरदन के विभिन्न प्रकारों को समझाइयें। (2016)

प्रश्न.(3) अनाच्छादन से क्या तात्पर्य है। अपक्षय एवं अपरदन के विभिन्न प्रकारों को समझाइयें। (2016)

उत्तर:- भू-पटल पर स्थलाकृतियों का स्वरूप निरन्तर परिवर्तित होता रहता है।
अन्तर्जात शक्तियाँ भू-पटल पर स्थलाकृतियों (पर्वत, पठार, मैदान आदि का निर्माण करती है तो बहिर्जात शक्तियाँ इन विषम स्थलाकृतियों का समतलीकरण करती है।

अनाच्छादन (denudation) में अपक्षय तथा अपरदन दोनों क्रियाओं का समावेश किया जाता है। अपक्षय में केवल स्थैतिक क्रिया तथा अपरदन में गतिशील क्रिया होती है। अपक्षय व अपरदन दोनों क्रियाओं के योग को अनाच्छादन कहते हैं,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

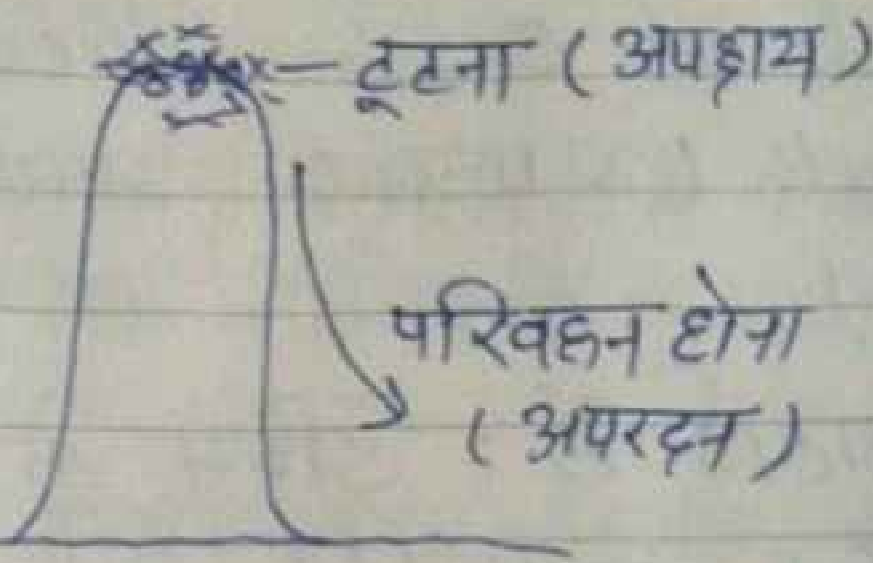

(अनाच्छादन प्रक्रम)

(1) अपक्षय (Weathering): शैलों का अपने ही स्थान पर भौतिक व रासायनिक क्रियाओं द्वारा विघटन व वियोजन को अपक्षय कहते हैं,

निम्न प्रकार :-

(i) भौतिक अपक्षय :-
- (i) पिण्ड विच्छेदन -
- (ii) अपशल्कन -
- (iii) तुषारी अपक्षय -
- (iv) दाब मोचन -
- (v) जल / वर्षा अपक्षय -

(2) रासायनिक अपक्षय :-
- (i) ऑक्सीकरण -
- (ii) कार्बोनेशन -
- (iii) सिलिका पृथक्करण -
- (iv) जलयोजन -
- (v) घोलन -

Let's make a right choice and use dustbin.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) जैविक अपक्षय :- (i) वनस्पति द्वारा अपक्षय -
(ii) जीवजन्तु द्वारा अपक्षय -
(iii) मानव द्वारा अपक्षय -

(1) भौतिक अपक्षय :- (Physical Weathering) :-
सूर्यातप, तुषार, जल एवं वायु दबाव द्वारा चट्टानों के विघटन होने की क्रिया भौतिक अपक्षय कहलाती है।

निम्न प्रकार :-

(1) पिण्ड विच्छेदन :- (Block disintegration) :-
गर्म मरूस्थलों में शैलों में अत्यधिक दैनिक तापान्तर होने से शैलों में दरारें पड़ जाती है और कालान्तर में शैल बड़े - बड़े टुकड़ो मे विघटित हो जाती है। इसे पिण्ड विच्छेदन कहते हैं,

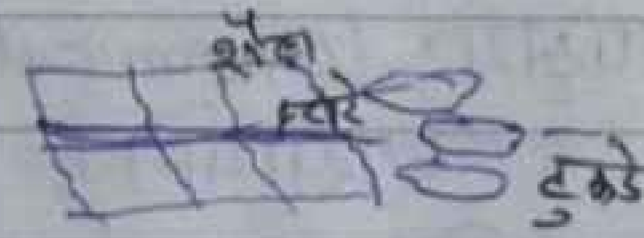

(2) अपशल्कन - (Exfoliation) :- शैलों की ऊपरी परत के गर्म व ठण्डी होने से शैलों का छिलकों की तरह टूटना अपशल्कन कहलाता है।

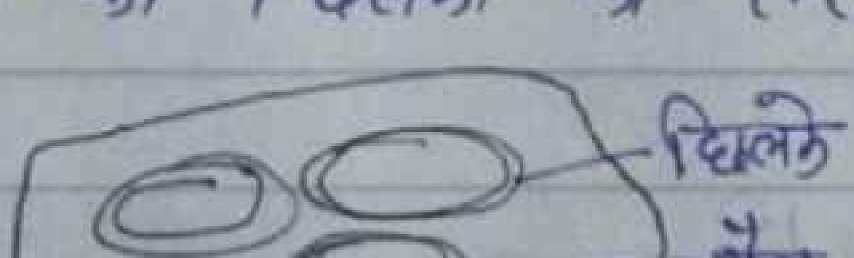

(3) तुषारी अपक्षय :- (Forst Weathering) :-
बहुत ठण्डे क्षेत्रों में निरन्तर रूप से पानी का शैलों की दरारों में जमने व पिघलने के परिणामस्वरूप शैलों का टूटना तुषारी अपक्षय कहलाता है।

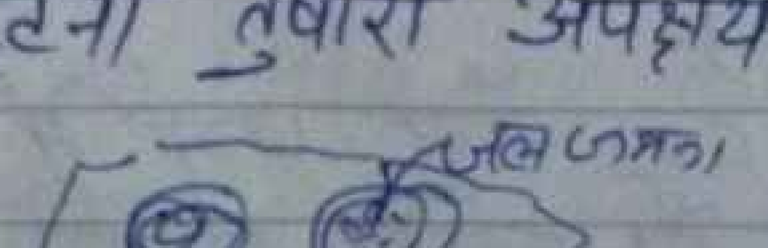

India is our home, let's not make it dirty.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(iii) दाब मोचन (Pressure Release):- जब कभी ऊपरी चट्टानों के हटने से निचली चट्टानों पर पड़ने वाला दबाव कम होता है तो उनमे चटकने पड़ने लगती हैं।

(iv) वर्षण अपक्षय:- गर्म तप्त शैलों पर अचानक वर्षा के कारण शैल टूटकर बिखर जाते है।

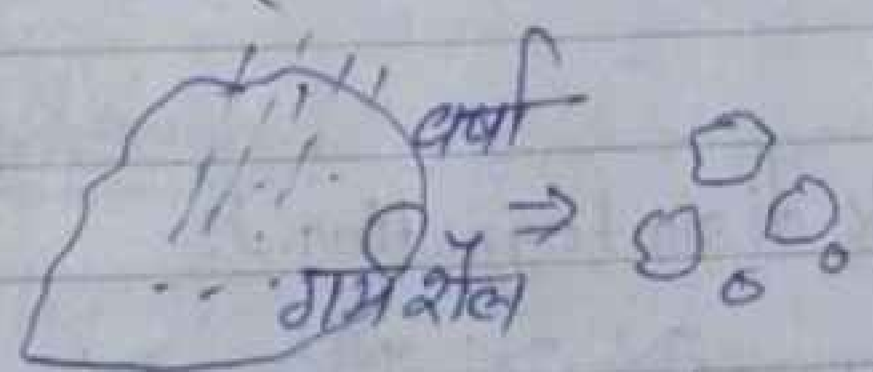

उदा. - U.S.A के टेक्सास प्रान्त में इस घटना के कारण चट्टानों का बिखरना आम सामान्य घटना है।

(2) रासायनिक अपक्षय:-(Chemical weathering) रासायनिक प्रक्रिया द्वारा शैलों का जल व गैस की सहायता से टूटना, घुलना, सड़ना व नये यौगिकों में बदलना रासायनिक अपक्षय कहलाता है।
ये निम्न रूपों होता है

(i) ऑक्सीकरण:-(Oxidation):- वायुमण्डलीय ऑक्सीजन जल में घुलकर शैल खनिजों को ऑक्साइड में बदल देती है। जिसे ऑक्सीकरण कहते है। इससे शैलों का शीघ्र अपघटन होता है।
उ.- लोहे के खनिज

(ii) कार्बोनेशन:-(Carbonation):- वायुमण्डलीय CO_2 गैस जल में मिलकर कार्बनिक अम्ल बनाती है। इसके सम्पर्क में आकर

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

चूनायुक्त शैले तीव्रता से घुल जाती है।

$CO_2 + H_2O \rightarrow H_2CO_3$ (कार्बनिक अम्ल)

$H_2CO_3 \rightarrow H^+ + HCO_3^-$
हाइड्रोजन + बाईकार्बोनेट
(विखण्डन)

(iii) सिलिका पृथक्करण :- (Desilication):- शैलों से सिलिका के अलग होने को डिसिलिकेशन कहते है। आर्द्र प्रदेशों में आग्नेय शैलों पर जल क्रिया से सिलिका पृथक हो जाती है। और उनका अपक्षय हो जाता है।

(iv) जल योजन (Hydration):- शैल खनिजों में जल के अवशोषण को हाइड्रेशन कहते हैं। बॉक्साइट, फेल्सपार, आदि शैले जल्दी जल सोखती है। जिससे उनका भार बढ़ जाता है। और वे बिखर जाती है।

(v) घोलन :- (Solution):- वर्षा जल शैल पदार्थों से अनेक प्रकार के अम्लों एवं कार्बनिक तत्वों को घोल लेता है एवं नया रासायनिक मिश्रण बना लेता है। इसी अभिक्रिया को हाइड्रोलिसिस कहते है।

$CaO + H_2O \rightarrow Ca(OH)_2$
कैल्सियम + जल (कैल्सियम हाइड्रोक्साइड)
ऑक्साइड

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) **जैविक अपक्षय (Biological Weathering):** भू-पटल पर अनेक प्रकार के जीव-जन्तु और वनस्पति, मानव आदि के द्वारा अपक्षय होना जैविक अपक्षय कहलाता है,

निम्न प्रकार से होता है

(i) **वनस्पति द्वारा अपक्षय:-** विभिन्न प्रकार के वृक्षों की जड़े शैलों में प्रवेश कर उनके कणों को ढीला कर देती है। जिससे शैल शीघ्र टूट जाती है।

(ii) **जीव-जन्तु द्वारा अपक्षय:-** विभिन्न प्रकार के कीड़े-मकोड़े तथा लोमड़ी, गीदड़, चीटीयाँ, चूहा, केचुआ आदि निवास स्थान के लिए चट्टानों को खुरच कर ढीली कर बील बनाते है। जिससे चट्टाने कमजोर होकर टूट जाती है।

(iii) **मानव द्वारा अपक्षय :-** मनुष्य की कृषि, खनन व निर्माण क्रियाओं द्वारा अपक्षय होता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

अपरदन (Erosion)

अपरदन शब्द लेटिन भाषा के Erodere शब्द से बना है, जिसका अर्थ - घिसना या कुतरना

अपरदन एक गतिशील प्रक्रिया है जिसमें शैलें, हिमानी, भूमिगत जल, लहरों, वायु व नदियों द्वारा घिसती, कटती एवं स्थानान्तरित या परिवहित होकर निक्षेपित होती रहती हैं।

निम्न प्रकार से होता है

(i) अपघर्षण :-
(ii) सन्निघर्षण :-
(3) जलदाब क्रिया :-
(4) संक्षारण -
(5) अपवाहन -
(6) गुहिकायन -
(7) उत्पाटन -

(i) अपघर्षण :- (Abrasion):-

जब अपरदनकारी कारक (नदी, हिमनद, पवन, महासागरीय तरंगें) अपने साथ चट्टानी मलबे व चूर्ण को बहाकर ले जा रहे होते हैं तो ये पदार्थ धरातलीय शैलों का घर्षण करते है जिसे अपघर्षण कहते है।

(2) सन्निघर्षण :- (Attrition):-

पवन, नदी, या लहरों के साथ प्रवाहित शैल कण एवं टुकड़े आपस में रगड़ खाकर टूटते रहते हैं। जिसे सन्निघर्षण कहते हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) जलदाब क्रिया :- (Hydraulic Action) :-

नदी जल के भारी दबाव से या जल भँवर के दबाव से चट्टानों के अपरदन की क्रिया को जलदाब क्रिया कहते हैं शैल टूट जाती जल धक्का लगने से

(4) संक्षारण :- (corrosion) :- or Solution) :-

जल की रासायनिक क्रिया द्वारा चट्टानों के खनिजों का जल में घुलकर बह जाना संक्षारण कहलाता है।

(5) अपवाहन (DeFlation) :-

पवन द्वारा बालू मिट्टी को एक स्थान से दूसरे स्थान पर उड़ाकर ले जाना अपवाहन कहलाता है।

(6) गुहिकायन (Cavitation) :-

नदी में उत्पन्न भँवर से उठने वाली तरंगे नदी के तल में अनेक प्रकार के छिद्रों का निर्माण करती है जल गर्तिकाए तथा अवनमित कुण्ड ऐसे छिद्रों के उदाहरण है।

(7) उत्पाटन (Plucking) :-

जब हिमानी अपने मार्ग में आने वाले शैल खण्ड उखाड़कर उनका परिवहन अपने साथ करती है तो इस क्रिया को उत्पाटन या उत्खनन कहते हैं।

अपरदित पदार्थ प्राय: तीन रूपों में प्रवाहित होता है। घुलकर, निलम्बन, लुढ़ककर आदि।

Live life cleaner, make earth greener.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न.(2) अपरदन चक्र से क्या तात्पर्य है। 'डेविस के त्रिकट' को विस्तार से समझाइये।, (2016)

उत्तर :- अपरदन शब्द लेटिन भाषा के Erodere शब्द से बना है, जिसका तात्पर्य घिसना या कुतरना है,

परिभाषा :-

" भौगोलिक चक्र (अपरदन चक्र) समय की वह अवधि है, जिसके अन्तर्गत एक उत्थित भू-खण्ड अपरदन के कारकों द्वारा प्रभावित होकर एक आकृतिविहीन समतल मैदान में बदल जाता है।" (Geographical cycle is a Period of time during which an Uplifted Landmass Undergoes it's transformation by the Process of Land-Sculpture ending in to a Law Featureless Plain or Peneplain.)

→ अपरदन चक्र की संकल्पना विलियम मोरिस डेविस ने 1899 में प्रस्तुत किया। डेविस ने अपरदन चक्र के स्थान पर 'भौगोलिक चक्र' शब्द का उपयोग किया।,

(भौगोलिक चक्र - समय की अवधि)

समय की वह अवधि - "जिसमें कोई उत्थित भूखण्ड अपरदन से आकृति हीन मैदान में बदल जाता है,"

- डेविस ने अपने भौगोलिक चक्र में स्थलाकृतियों के विकास के उसकी

(i) संरचना (Structure) :- शैल की रचना

(ii) प्रक्रम (Process) :- अनाच्छादन प्रक्रम

(iii) समय (Time) (अवस्था) :- लगने वाला समय

इन तीन कारकों

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

को 'डेविस के त्रिकूट' (Trio of Davis) कहते है,

विलियम मौरिस डेविस :- (1850-1934)

डेविस को वर्तमान भू-आकृति विज्ञान का जन्मदाता माना जाता है। इन्होंने 'मिसिसीपी' की सहायक 'ओहियो' नदी पर शोध कर समप्राय मैदान एवं अपरदन चक्र की अवधारणाएँ दीं। इन्होंने कहा कि स्थलाकृतिक नामावलियों को समझने के लिए दृश्यभूमि का अवबोध आवश्यक है, इस संदर्भ में इन्होंने लिखा है कि "जाओ और देखो तथा देखो और सोचो"

(डेविस का सिद्धान्त निम्न मान्यताओं पर आधारित है,) :-

(i) अपरदन से पहले उत्थान की प्रक्रिया पहले होगी जो कि अल्प कालिक व तिव्र गति से सम्पन्न होती है,

(ii) स्थलरूप अन्तर्जात तथा बहिर्जात बलों की पारस्परिक क्रिया का प्रतिफल होते है

(iii) नदियाँ अपनी घाटी को उस समय तक गहरा करती रहती जब तक कि वे व्यवस्थित दशा को प्राप्त नहीं कर ले। उसके बाद पार्श्विक अपरदन द्वारा घाटी चौड़ी होने लगती है

(iv) स्थल खण्ड का उत्थान तीव्रगति से लघु अवधि में पूर्ण हो जाता है लेकिन डेविस ने यह व्यक्त किया है कि परिस्थितिवंश अन्य स्थितियों में मन्द गति से भी उत्थान हो सकता है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- इनके मतानुसार सर्वप्रथम किसी भी स्थलखण्ड का तीव्रता से उत्थान होता है तथा उत्थान पूर्ण होने पर उत्थित भू-खण्ड पर अपरदन का कोई कारक कार्य करना शुरू करता है अपरदन द्वारा भू-खण्ड विभिन्न अवस्थाओं से गुजरता है, जिसके दौरान अनेक स्थलाकृतियों का निर्माण होता है, सतह कि विषमताएँ समाप्त हो जाती है, तथा अन्त में भू-खण्ड समतल प्राय: मैदान में परिवर्तित हो जाता है, ~~जिसे~~ उत्थान तीव्र गति से अपरदन लम्बी अवधि में पूर्ण होता है,

डेविस ने अपरदन चक्र की निम्न तीन अवस्थाएँ बतायी है:-

(i) युवावस्था - (Youth Stage)
(ii) प्रौढ़ावस्था - (Mature Stage)
(iii) वृद्धावस्था - (Old Stage)

(i) युवावस्था - (Youth Stage) :- (तरूणावस्था) :-

शुरू में नदियाँ छोटी तथा दूर-दूर होती है। ये छोटी नदियाँ शीर्षवर्ती अपरदन से लम्बाई बढ़ाती है इस प्रक्रिया को सरिता दीर्घीकरण कहते है। तीव्र ढाल एवं तीव्र जलमार्ग के कारण नदियों के पानी का वेग तीव्र होता है, तीव्र वेग में पानी के साथ बड़े-बड़े शिलाखण्ड आ जाते है इनके कारण नदी की घाटि गहरी होती है। (लम्बवत अपरदन) इस प्रक्रिया को 'घाटी गर्तन' कहते है, इनके ढाल खड़े तथा उत्तल होते है घाटी गर्तन के कारण निचला वक्र (LC) निरन्तर तेजी से घटता जाता है अर्थात घाटियों की तली गहरी होती जाती है परन्तु ऊपरी वक्र (UC) पहाड़ियों

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

शिखर लगभग स्थिर रहते है (स-र) इनका अपरदन नही होता है इस तरह सापेक्षिक उच्चावच में निरन्तर वृद्धि होती जाती है इस अवस्था के अन्त में अधिकतम उच्चावच (य-र) भाग विकसित होता है।

तरूणा / युवावस्था की निम्न विशेषताएँ :-

(i) निरपेक्ष उच्चावच स्थिर क्योंकि पार्श्विक अपरदन नगण्य होता है

(ii) घाटि के लगातार लम्बवत अपरदन से घाटी गहन तथा ऊपरी भाग (U.C) के न्यूनतम अपरदन के कारण सापेक्षिक उच्चावच मे वृद्धि होती है।

(iii) घाटिया का आकार 'V' होता है इसमें गार्ज व कैनियन का निर्माण होता है।

(iv) नदियों के जलमार्ग में जल प्रपात बनते है।

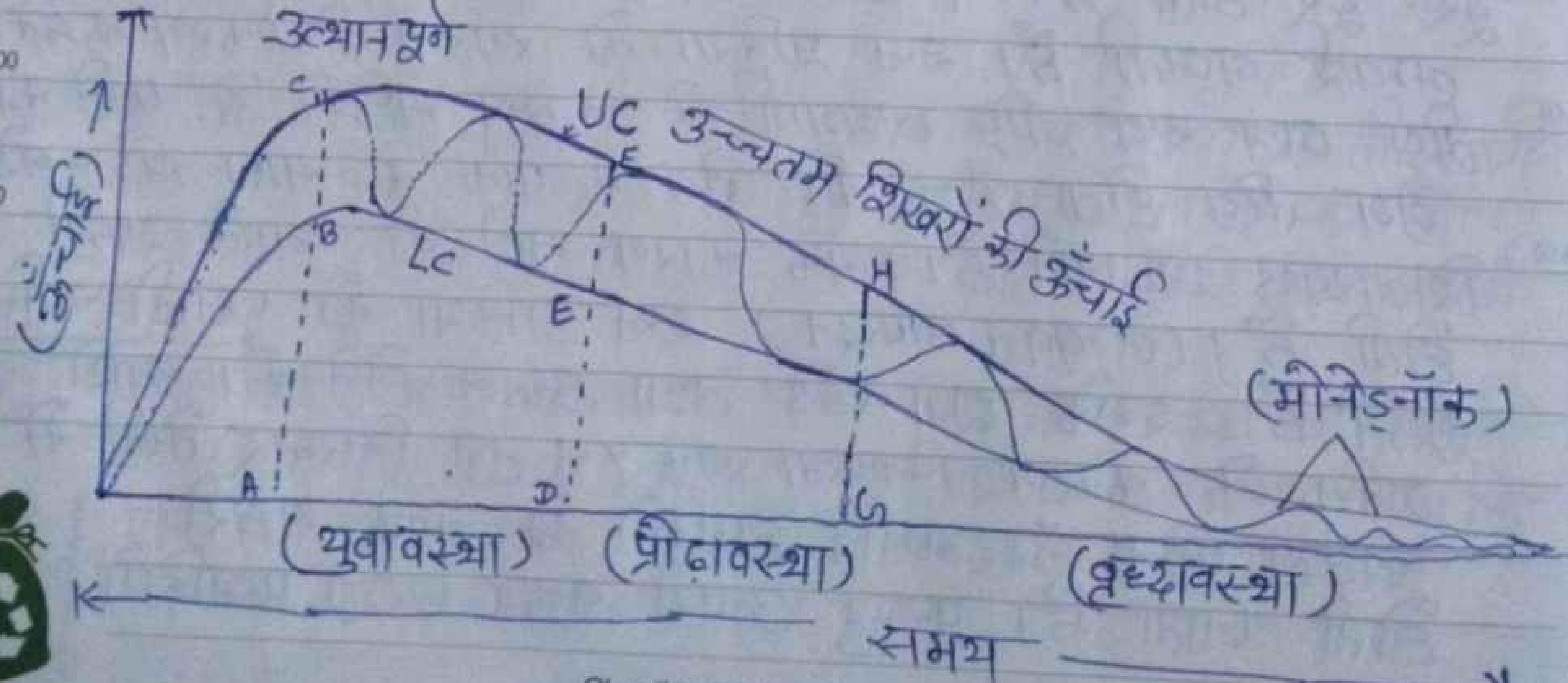

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) प्रौढावस्था :- (Mature stage) :- इस अवस्था में पार्श्विक अपरदन प्रारम्भ हो जाता है घाटियों की चौड़ाई बढ़ने लगती है तथा पहाड़ियो के शिखरों का भी अपरदन प्रारम्भ हो जाता है, परिणामस्वरूप (UC) में गिरावट आने लगती है, तथा जलमार्ग कम ढाल के हो जाते है नदियों का प्रवाह वेग कम हो जाता है जिससे घाटी गर्तन मन्द पड़ जाता है, परन्तु घाटियों का चौड़ा होना अधिक सक्रिय होता है,

(3) वृद्धावस्था (old stage) :- /(जीर्णावस्था) :- इस अवस्था में ढाल कम होने से लम्बवत अपरदन पूर्णतया रूक जाता है तथा नदी घाटियाँ चौड़ाई में विकसित हो जाती है निरपेक्ष ऊँचाई घटने के उच्चावचीय विषमता समाप्त होने लगती है तथा अन्त में समप्राय मैदान निर्मित हो जाता है, अन्त में कहीं - कहीं कठोर शैले अवशिष्ट रूप में शेष रह जाती हैं इन्हें 'मोनाडनाक' कहते है
(मोनेड्नाक का नाम न्यू हैम्पशायर (U.S.A) में मोनेड्नाक' नामक पहाड़ी के नाम पर किया गया) है

UC :- भू-सतह की सागर तल से निरपेक्ष ऊँचाई
LC :- सागर तल से न्यूनतम ऊँचाई
A-B-C - उत्थान ऊंचाई
A-D-G - रेखा आधार तल अपरदन का

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

* सिद्धान्त का मूल्यांकन :- (Evaluation) :- डेविस ने स्थलरूपों के विकास में चक्रीय व्यवस्था को सैद्धान्तिक रूप में प्रस्तुत किया। इसे विश्व स्तर पर व्यापक समर्थन एवं ख्याति मिली।

सिद्धान्त की आलोचनाएँ :- (i) डेविस की उत्थान की संकल्पना मान्य नहीं है क्योंकि प्लेट विवर्तनी सिद्धान्त के अनुसार उत्थान की प्रक्रिया सतत् चलती है अत्यन्त मन्द गति से

(ii) डेविस ने बताया की उत्थान के बाद अपरदन होता है। पर ऐसा नहीं उत्थान के साथ-साथ अपरदन भी प्रारम्भ हो जाता है,

(iii) डेविस ने चक्र के अन्त में स्थलखण्ड को दीर्घकाल तक स्थिर दशा में माना लेकिन प्लेट विवर्तनी सिद्धान्त के अनुसार स्थलखण्ड गतिशील रहते है। लेकिन डेविस का कहना है कि अपरदन चक्र की पूर्ण समाप्ति होने पर भू-पटलीय स्थिरता सम्भव नहीं हो पाती है पुनः उत्थान होने के कारण अपरदन चक्र में व्यवधान हो जायेगा तथा नया अपरदन चक्र प्रारम्भ हो जायेगा।

(iv) डेविस के मॉडल में समय को आवश्यकता से अधिक महत्व दिया गया है। यह समय आधारित मॉडल है। पेंक के अनुसार स्थलरूप संरचना, प्रक्रम तथा समय का प्रतिफल न होकर उत्थान एवं अपरदन

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

की दरों के सम्बन्धों पर आधारित होता है।

(v) ए॰ यन॰ स्ट्रालर, जे॰ टी॰ हैक, आर॰ जे॰ चोर्ले आदि ने डेविस द्वारा प्रस्तुत स्थलरूपों के ऐतिहासिक विकास की संकल्पना को अस्वीकृत करके 'गतिक सन्तुलन सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है,

प्रश्न:- (3) 'अपरदन चक्र' पर W. M डेविस व W. पेंक के विचारों की तुलना कीजिए।, (2018)

उत्तर:-

डेविस का मत	पैंक का मत
(i) डेविस के अनुसार पहले उत्थान समाप्त हो जाता है और बाद में अपरदन प्रारम्भ होता है। दोनों साथ-साथ नहीं चलते हैं।	(i) पैंक के अनुसार दोनो साथ-साथ चलते हैं। परन्तु कुछ समय बाद उत्थान रूक जाता है और अन्त में केवल अपरदन चलता हैं।
(2) स्थल खण्ड के उत्थान की दर बहुत तीव्र होती है।	(ii) स्थल खण्ड के उत्थान की दर कभी एक समान नहीं होती है।
(3) डेविस के अनुसार उत्थान की अवधि बहुत कम होती है,	(3) पैंक के अनुसार उत्थान का समय लम्बा हो सकता है। यह अवधि मध्यम प्रकार एवं कम भी हो सकती है
(4) डेविस के अनुसार चक्र का प्रारम्भ संरचना की दृष्टि से निम्न भागों पर होता है।	(4) चक्र का प्रारम्भ समान संरचना वाले फैलते हुये गुम्बद (प्राइमारम्प) से होता है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(5) डेविस के अनुसार चक्र - तीन अवस्थाओं युवावस्था, प्रौढावस्था एवं जीर्णावस्था मे पूर्ण होता है,	(5) पैंक के अपरदन चक्र में कोई अवस्थायें नही होती है। पैंक ने स्थल खण्ड के उत्थान की आफस्तीजिन्डे, ग्लीखफार्मिग, आवस्तीजिन्डे, तीन अवस्थायें मानी है
(6) डेविस के अनुसार दृश्य-भूमि संरचना, प्रक्रम और अवस्थाओं का प्रतिफल होता है।	(6) पैंक के अनुसार दृश्य-भूमि उत्थान की दर तथा निम्नीकरण की दर के सम्बन्ध का परिणाम होता है,
(7) डेविस ने अपने चक्र में ढाल को कोई विशेष महत्व नहीं दिया।	(7) पैंक ने ढालों के विकास को विशेष महत्व प्रदान किया है,
(8). इसमें प्रथम व द्वितीय अवस्थाओं में उच्चावच बढ़ता है तथा उच्चावच स्थिर नही रहता है	(8) इसमें प्रथम अवस्था में उच्चावच बढ़ता है। दूसरी, तीसरी तथा चौथी अवस्था में उच्चावच स्थिर रहता है। अन्तिम अवस्था में वह घटता है।
(9) डेविस ने चक्र की अन्तिम अवस्था में अवशिष्ट पहाड़ियों को 'मोनाड्नाक' नाम दिया	(9) पैंक ने चक्र की अन्तिम अवस्था नुकीली शंक्वाकार पहाड़ियों को 'इन्सेलबर्ग' कहा है,
(10) डेविस ने चक्र की अन्तिम अवस्था में समतल प्राय: (पेनीप्लेन) मैदान की संज्ञा दी है	(10) पैंक ने चक्र की अन्तिम अवस्था में 'इण्ड्रम्प' की संज्ञा दी है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(i) डेविस ने अवस्था संकल्पना का प्रयोग किया।	(ii) पैंक ने अवस्था संकल्पना का प्रयोग नहीं किया इसके नाम पर 'इट्विकलुंग' नामावली का प्रयोग किया।
(12) डेविस ने उत्थान पूर्ण स्थल खण्डों को भू-खण्ड माना है	(12) पैंक ने उत्थान से पूर्व स्थलखण्ड को 'प्राइमारम्प' नाम दिया।
इनका मॉडल समय पर आधारित था	इनका मॉडल 'विवर्तनिक आधारित मॉडल कहा गया

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

17

अपवाह तंत्र तथा प्रतिरूप

(Drainage System and Pattern)

17.1 अपवाह तंत्र : अर्थ तथा संकल्पना

किसी भी क्षेत्र या प्रदेश के अपवाह जाल की विशेषताओं का अध्ययन दो रूपों में किया जाता है (1) वर्णनात्मक उपागम (descriptive approach) तथा (2) जननिक उपागम। वर्णनात्मक उपागम के अन्तर्गत क्षेत्र विशेष की सरिताओं के आकार (form) तथा प्रतिरूप (pattern) की विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है जबकि जननिक उपागम के अन्तर्गत क्षेत्र विशेष की सरिताओं के उद्भव एवं विकास का उस क्षेत्र के शैल प्रकार, भौमिकीय संरचना, विवर्तनिकी तथा जलवायु दशाओं के संदर्भ में अध्ययन किया जाता है। इस तरह अपवाह तंत्र (drainage system) का सन्दर्भ सरिताओं की उत्पत्ति तथा उनके समय के साथ विकास से होता है जबकि अपवाह प्रतिरूप का संदर्भ क्षेत्र विशेष की सरिताओं के ज्यामितीय रूप तथा स्थानिक व्यवस्था (spatial arrangement) से होता है।

किसी भी प्रदेश में अपवाह तंत्र की उत्पत्ति तथा समय के साथ विकास दो प्रमुख कारकों द्वारा निर्धारित तथा नियंत्रित होता है—(1) प्रारम्भिक धरातलीय सतह की प्रकृति तथा ढाल, एवं (2) भौमिकीय संरचना (यथा-वलन, भ्रंश, विदर, संधि, नति, नतिलम्ब तथा शैल प्रकार)। अपवाह तंत्र की सरिताओं को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है—

(1) **क्रमवर्ती सरिता** (sequent streams)—जो क्षेत्र विशेष के ढाल के अनुरूप प्रवाहित होती है तथा भौमिकीय संरचना के साथ समयोजित होती है, यथा—अनुवर्ती, परवर्ती, प्रति अनुवर्ती तथा नवानुवर्ती सरितायें।

(2) **अक्रमवर्ती सरिता** (insequent streams)—जो प्रादेशिक ढाल का अनुसरण नहीं करतीं तथा भौमिकीय संरचना के प्रतिकूल प्रवाहित होती हैं, यथा—पूर्ववर्ती तथा पूर्वारोपित सरितायें।

17.2 प्रमुख अपवाह तंत्र

(अ) **क्रमवर्ती अपवाह तंत्र**

(Sequent Drainage System)

इसके अन्तर्गत उन सरिताओं को सम्मिलित करते हैं जो ढालों के अनुरूप प्रवाहित होती हैं यथा—अनुवर्ती सरिता, परवर्ती सरिता, प्रत्यनुवर्ती सरिता, नवानुवर्ती सरिता आदि।

1. अनुवर्ती सरिता (consequent streams)

किसी भी क्षेत्र में सर्वप्रथम अनुवर्ती सरिता का उद्भव होता है। ये सरितायें क्षेत्रीय धरातल के प्रारम्भिक ढाल के अनुरूप प्रवाहित होती हैं। दूसरे शब्दों में अनुवर्ती नदियाँ प्रादेशिक ढाल का अनुसरण करती हैं। इन्हें **नति सरिता** (dipstreams) भी कहते हैं। वलित पर्वतीय क्षेत्रों में अनुवर्ती नदियों का अभिनतीय गर्तों (synclinal troughs) में उद्भव होता है। ऐसी नदियों को **अभिनतीय अनुवर्ती सरिता** कहते हैं। बाद में चलकर विकसित जालीनुमा अपवाह प्रतिरूप में ये मुख्य अनुवर्ती नदियाँ होती हैं। सागर तल से ऊपर उठे तटीय मैदान में सर्वप्रथम उत्पन्न होने वाली सरितायें अनुवर्ती सरिता होती हैं जो एक दूसरे के समानान्तर होती हैं। इनमें से सबसे लम्बी सरिता को प्रमुख अनुवर्ती (master consequent)कहते हैं (चित्र 17.1)। भारत तटीय भागों पर प्रवाहित होने वाली अधिकांश नदियाँ अनुवर्ती नदियों की उदाहरण हैं। अनुवर्ती नदियों की उत्पत्ति तथा विकास के लिए सर्वाधिक अनुकूल स्थलाकृति ज्वालामुखी शंकु तथा गुम्बदीय संरचना होती है। अनुवर्ती नदियों को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है—(i) **अनुदैर्ध्य अनुवर्ती** (longitudinal consequent)—जो वलित संरचना में अभिनतियों का अनुसरण करती है, तथा (ii) **पार्श्ववर्ती अनुवर्ती** (lateral consequent)—जो अपनतियों (anticlines) के पार्श्व भागों पर विकसित होती हैं। पार्श्ववर्ती

अनुवर्ती नदियाँ प्रमुख अनुवर्ती या अभिनतीय अनुवर्ती नदियों से समकोण पर मिलती हैं। जब तटीय भाग का सागर से निर्गमन (emergence, ऊपर आना) होता है तो प्राचीन स्थल से निकलने वाली नदियाँ इन तटीय मैदानों से होकर सागर में मिलती हैं। इस तरह की नदियों को विस्तृत अनुवर्ती (extended consequent) कहा जाता है (चित्र 17.1)।

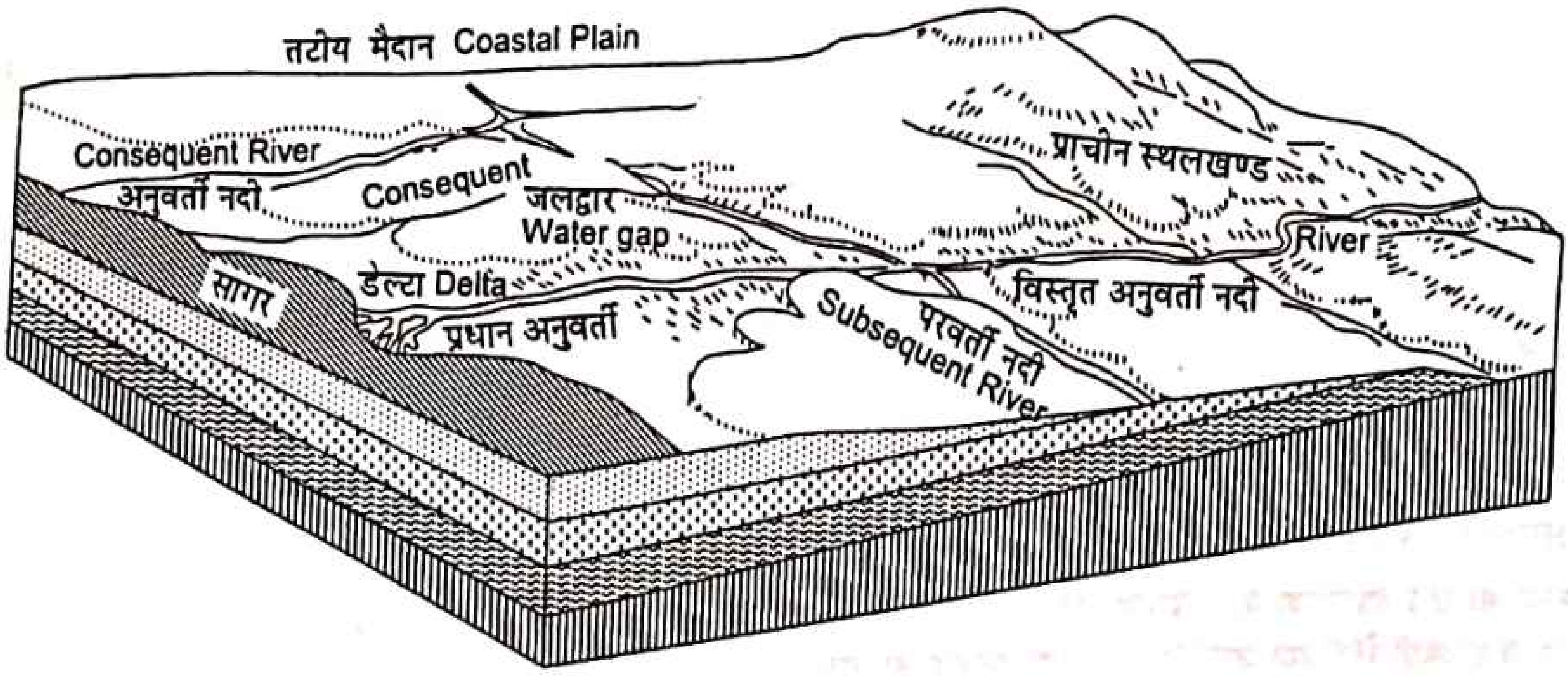

चित्र 17.1 : तटीय मैदान पर प्रमुख अनुवर्ती तथा परवर्ती सरिताओं का उद्‌भव तथा विकास।

(2) परवर्ती सरिता (subsequent stream)

अनुवर्ती सरिताओं के बाद उत्पन्न तथा अपनतियों या कटकों (ridges) के अक्षों (axis) का अनुसरण करने वाली सरिताओं को परवर्ती सरिता कहते हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार परवर्ती नदियाँ अपनतियों के पार्श्वभागों पर उत्पन्न होकर अभिनतीय प्रमुख अनुवर्ती नदियों से समकोण पर मिलती हैं (इस तरह ऊपर वर्णित पार्श्ववर्ती अनुवर्ती ही परवर्ती सरिताएँ हैं) जबकि अन्य का कहना है कि परवर्ती नदियाँ प्रमुख अनुवर्ती के समानान्तर होती हैं। ऊलरिज तथा मार्गन के अनुसार प्रमुख अनुवर्ती की प्रथम पीढ़ी की सभी सहायक नदियाँ परवर्ती होती हैं क्योंकि इनका उद्‌भव प्रधान अनुवर्ती के बाद (परवर्ती माने बाद की) होता है। कुछ विद्वानों का कहना है कि जितनी भी सरिताएं प्रमुख अनुवर्ती से अनुप्रस्थ (transverse, यानी समकोण पर) रूप में मिलती हैं वे सभी परवर्ती होती हैं। देहरादून घाटी में गंगा तथा यमुना नदियाँ प्रमुख अनुवर्ती हैं जबकि यमुना की सहायक असान नदी तथा गंगा की सहायक सांग नदी परवर्ती नदियों की उदाहरण हैं (चित्र 17.2)।

(3) प्रतिअनुवर्ती सरिता (obsequent streams)

प्रधान अनुवर्ती सरिता की प्रवाह दिशा के विपरीत दिशा में प्रवाहित होने वाली सरिता को प्रतिअनुवर्ती कहा जाता है। वास्तव में प्रति अनुवर्ती भी अनुवर्ती सरिता ही होती है क्योंकि वह भी ढाल के अनुरूप ही प्रवाहित होती है। प्रति अनुवर्ती परवर्ती से समकोण पर मिलती है। उदाहरण के लिए सिवालिक श्रेणियों से निकलकर उत्तर दिशा में प्रवाहित होने वाली सरिताएं प्रति अनुवर्ती हैं क्योंकि ये दक्षिण दिशा में प्रवाहित होने वाली प्रधान अनुवर्ती गंगा तथा यमुना की सहायक पूर्व-पश्चिम दिशा में प्रवाहित होने वाली परवर्ती नदियों से समकोण पर मिलती हैं।

(4) नवानुवर्ती सरिता (resequent streams)

प्रधान अनुवर्ती सरिता की प्रवाह दिशा के अनुरूप दिशा में प्रवाहित होने वाली सरिताओं को नवानुवर्ती कहा जाता है। प्रधान अनुवर्ती की तुलना में नवानुवर्ती का उद्‌भव बहुत बाद में होता है। नवानुवर्ती सरिता का उद्‌भव वलित संरचना पर द्वितीय अपरदन चक्र के समय होता है। प्रथम अपरदन चक्र के दौरान वलित पर्वतों के अपरदन के कारण **'उच्चावच प्रतिलोमन'** हो जाता है जिस कारण अपनतियों के स्थान पर **'अपनतीय घाटियों'** और अभिनतियों के स्थान पर **'अभिनतीय कटक'** (synclinal ridges) का निर्माण होता है (चित्र 17.3 में 1, 2, 3 तथा 4 में प्रदर्शित अभिनति तथा अपनति 5 वीं दशा में क्रमशः अपनति (कटक) तथा घाटी में बदल गयी है)। परिणामस्वरूप अपनतीय घाटियों में अनुदैर्ध्य सरिताओं का आविर्भाव होता है। प्रथम अपरदन चक्र के अन्त में इन आकृतियों का अपरदन होने से समतलीकरण के फलस्वरूप समप्राय मैदान का निर्माण होता है। द्वितीय अपरदन चक्र के प्रारम्भ होते ही प्रारम्भिक मौलिक अभिनतियों में सरिताओं का आविर्भाव होता है जो नवानुवर्ती कही जाती हैं। यद्यपि ये नवानुवर्ती सरिताएं प्रारम्भिक मौलिक अनुदैर्ध्य अनुवर्ती सरिताओं के अनुरूप होती हैं परन्तु नवानुवर्ती उनकी तुलना में सैकड़ों मीटर नीचे विकसित होती हैं।

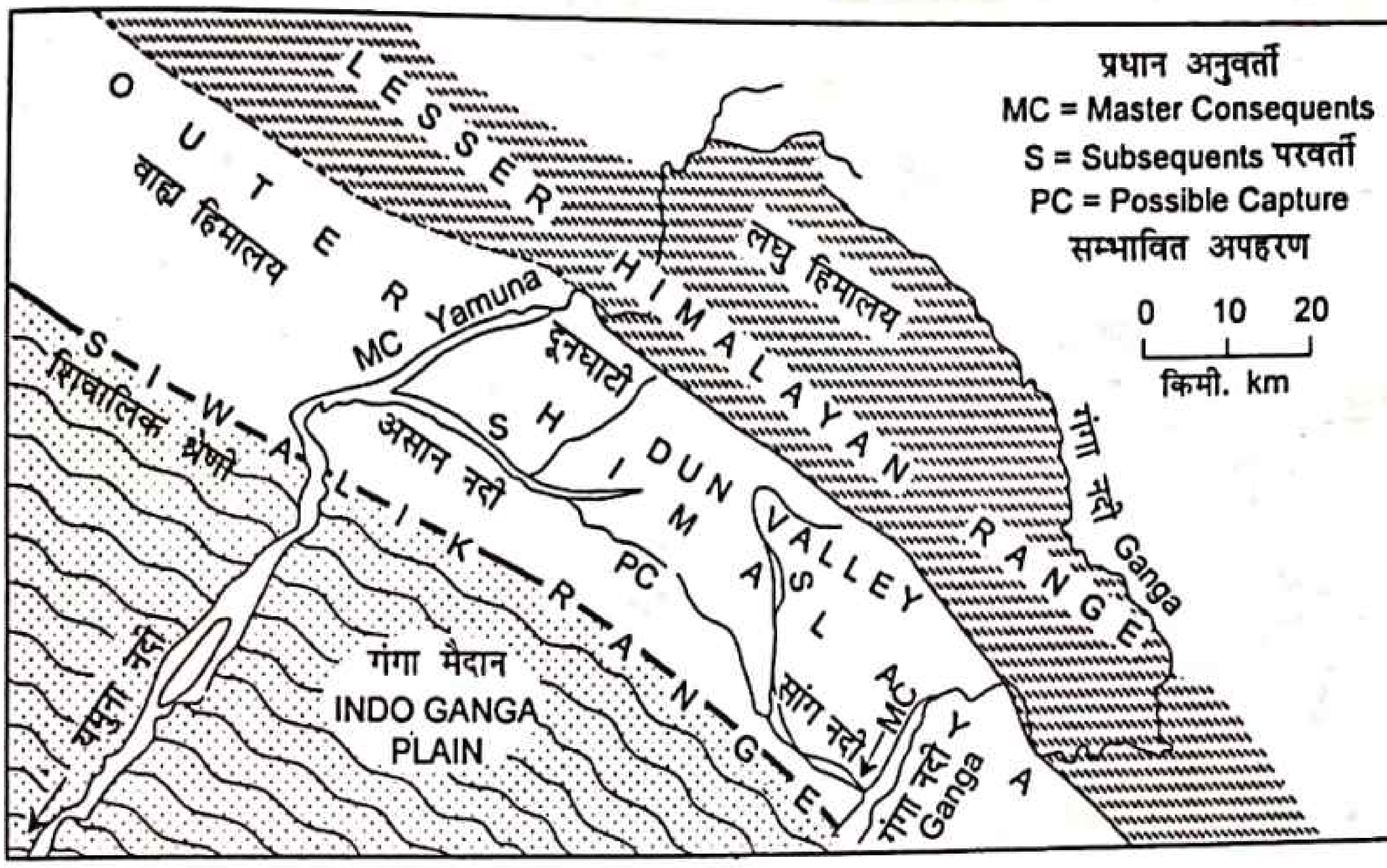

चित्र 17.2 : देहरादून घाटी में प्रमुख अनुवर्ती तथा परवर्ती नदियों का विकास।

(ब) अक्रमवर्ती (insequent) अपवाह तंत्र

जो नदियाँ प्रादेशिक ढाल के अनुरूप न होकर प्रतिकूल दिशा में तथा भौमिकीय संरचना के आर-पार प्रवाहित होती हैं उन्हें अक्रमवर्ती सरिता कहते हैं। इस तरह के अक्रमवर्ती अपवाह तंत्र के अन्तर्गत पूर्ववर्ती (antecedent) तथा पूर्वारोपित (superimposed) सरिताएँ अधिक महत्वपूर्ण हैं।

(1) पूर्ववर्ती अपवाह तंत्र
(Antecedent Drainage System)

'पूर्ववर्ती जलधारा' उसे कहते हैं जिसका आविर्भाव स्थलखण्ड में उत्थान के पहले हो चुका है। साधारण अर्थों में पहले से प्रवाहित होने वाली जलधारा को पूर्ववर्ती कहते हैं, जिस पर संरचना या स्थलखण्ड के उत्थान का प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि नदी घाटी का विकास किसी स्थान विशेष पर हो जाता है और उसके बाद यदि नदी के मार्ग में स्थलखण्ड में उत्थान होता हो तो पूर्ववर्ती नदी ऊंचे उठे स्थलखण्ड को काटकर अपने पुराने मार्ग एवं घाटी को सुरक्षित रखती है। इस प्रकार परिभाषा के रूप में '*पूर्ववर्ती नदियाँ वे जलधाराएं हैं, जो कि स्थलखण्ड में उत्थान होने पर भी अपने पहले मार्ग को ही अपनाती हैं।*' इस तरह पूर्ववर्ती नदियाँ अपने धरातलीय ढाल तथा संरचना से समायोजित नहीं होती हैं। पूर्ववर्ती नदियों को अक्रमवर्ती जलधारा (inconsequent streams) भी कहा जा सकता है। चूँकि ये जलधाराएं स्थानीय ढाल का अनुसरण नहीं करती हैं, अत: इन्हें विलोम अनुवर्ती या प्रति-अनुवर्ती (anteconsequent) जलधारा भी कहा जा सकता है। पूर्ववर्ती नदी के लिए उत्थान के स्वभाव का अध्ययन आवश्यक है तथा सभी प्रकार के उत्थान के समय नदी अपने पहले वाले मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकती है। उदाहरण के लिए यदि स्थलखण्ड का उत्थान अचानक बड़े पैमाने पर होता है एवं थोड़े ही समय में पूरा स्थलखण्ड अत्यधिक ऊंचाई को प्राप्त हो जाता है तो पहले वाली सरिताएं नवीन ऊंचे स्थलखण्ड का सामना नहीं कर पायेंगी और छिन्न-भिन्न हो जायेंगी। इससे स्पष्ट है कि पूर्ववर्ती जलधारा के लिए उत्थान का धीरे-धीरे मन्द गति से होना आवश्यक है ताकि नदी अपनी घाटी को निम्न कटाव द्वारा गहरा करके अपने पहले मार्ग को कायम रख सके। उत्थान के विषय में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि वह स्थानीय होना चाहिए, न कि प्रादेशिक। जब नदी के मार्ग में किसी सीमित स्थान पर उत्थान होता है तथा नदी यदि उस उठे भाग को काटकर अपना पहला मार्ग कायम रखती है, तभी उसे **पूर्ववर्ती सरिता** कहा जा सकता है, अन्यथा यदि समस्त भाग, जिससे होकर जलधारा प्रवाहित होती है, ऊपर उठ जाता है तो पूर्ववर्ती जलधारा का विकास नहीं हो सकेगा। अन्तिम महत्वपूर्ण तथ्य उत्थान तथा नदी द्वारा निम्न कटाव के बीच अनुपात से सम्बन्धित है। यदि उत्थान के साथ नदी द्वारा निम्न कटाव इतना अधिक है कि वह उत्थान का अनुसरण कर सके अर्थात् नदी का कटाव यदि उत्थान की दर से बराबर या अधिक है, तभी नदी अपनी पहली घाटी को कायम रख सकती है, अन्यथा स्थलखण्ड अधिक ऊपर उठ जायेगा।

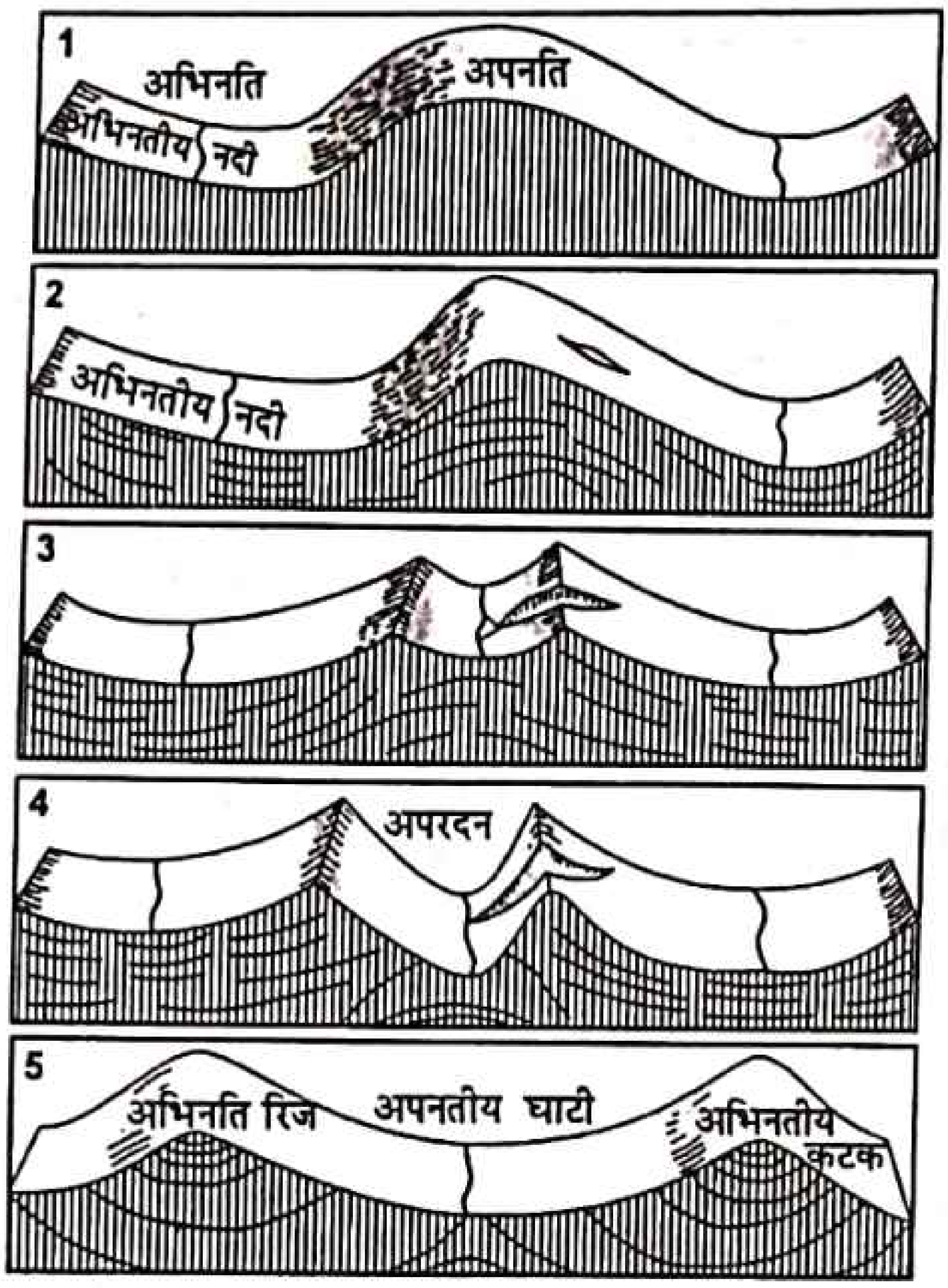

चित्र 17.3 : उच्चावच प्रतिलोमन की अवस्थाएं। अवस्था 1 की अपनति तथा अभिनति का अवस्था 5 में क्रमश: अपनतीय घाटी तथा अभिनतीय कटक में परिवर्तन हो गया है। यह प्रथम अपरदन चक्र के अन्त की स्थिति है। द्वितीय अपरदन चक्र के समय अभिनतीय कटक पुन: घाटियों में बदले जाते हैं तथा उनमें विकसित नदियाँ नवानुवर्ती होती हैं।

रेखाचित्र की सहायता से पूर्ववर्ती नदी के विकास की अवस्थाओं को स्पष्ट किया जा सकता है। चित्र 17.4 में 'अ' नदी की घाटी तथा प्रवाह मार्ग का स्थलखण्ड के ऊपर पूर्णतया विकास हो चुका है। चित्र 17.4 में 'स' स्थान पर स्थलखण्ड में उत्थान हो जाता है। फलस्वरूप नदी में नवोन्मेष के कारण उसके कटाव की क्षमता अधिक हो जाती है। इस कारण नदी अपनी घाटी को निम्न कटाव द्वारा गहरा करना प्रारम्भ कर देती है। नदी घाटी के गहरा होने की दर अर्थात् निम्न कटाव की दर तथा स्थलखण्ड के ऊपर उठने की दर बराबर हो तो नदी का तल वही होता है, परन्तु उसके दोनों ओर के किनारे निरन्तर उठते रहते हैं, अत: घाटी की दीवारों की ऊंचाई अधिक होती जाती है जो कि एक निश्चित समय के बाद गार्ज का निर्माण करती है। परन्तु चित्र 17.4 में यह स्थिति नहीं है। यहाँ पर उत्थान के साथ ही नदी का तल भी ऊंचा हो गया है। अत: यदि उत्थान की दर एवं निम्न कटाव की दर समान होगी तो नदी का तल ऊंचा ही रह जायेगा। ऐसी स्थिति में नदी उत्थान की दर से कुछ अधिक कटाव करती है ताकि वह उत्थान से पहले वाले तल एवं घाटी से होकर ही प्रवाहित हो। चित्र 17.4 में नदी ने अपने निम्न कटाव द्वारा अपनी घाटी तथा प्रवाह मार्ग (चित्र 17.4 द की स्थिति) को प्राप्त कर लिया है। अर्थात् नदी अब पूर्ववर्ती है। 'द' स्थान पर नदी ने अपनी घाटी को इतना गहरा कर रखा है कि गार्ज का निर्माण हो गया है, जिसमें नदी तल से उसके किनारे की दीवारें अत्यन्त ऊंची हैं। उपर्युक्त विवरण के आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि स्थलखण्ड के उत्थान होने पर भी अपने तल को पूर्ववत बनाये रखने वाली जलधारा को 'पूर्ववर्ती' कहते हैं तथा उससे निर्मित घाटी को **'पूर्ववर्ती घाटी'** (antecedent valley) कहते हैं। पूर्ववर्ती जलधाराओं के सामूहिक क्रम को पूर्ववर्ती अपवाह तंत्र कहा जाता है।

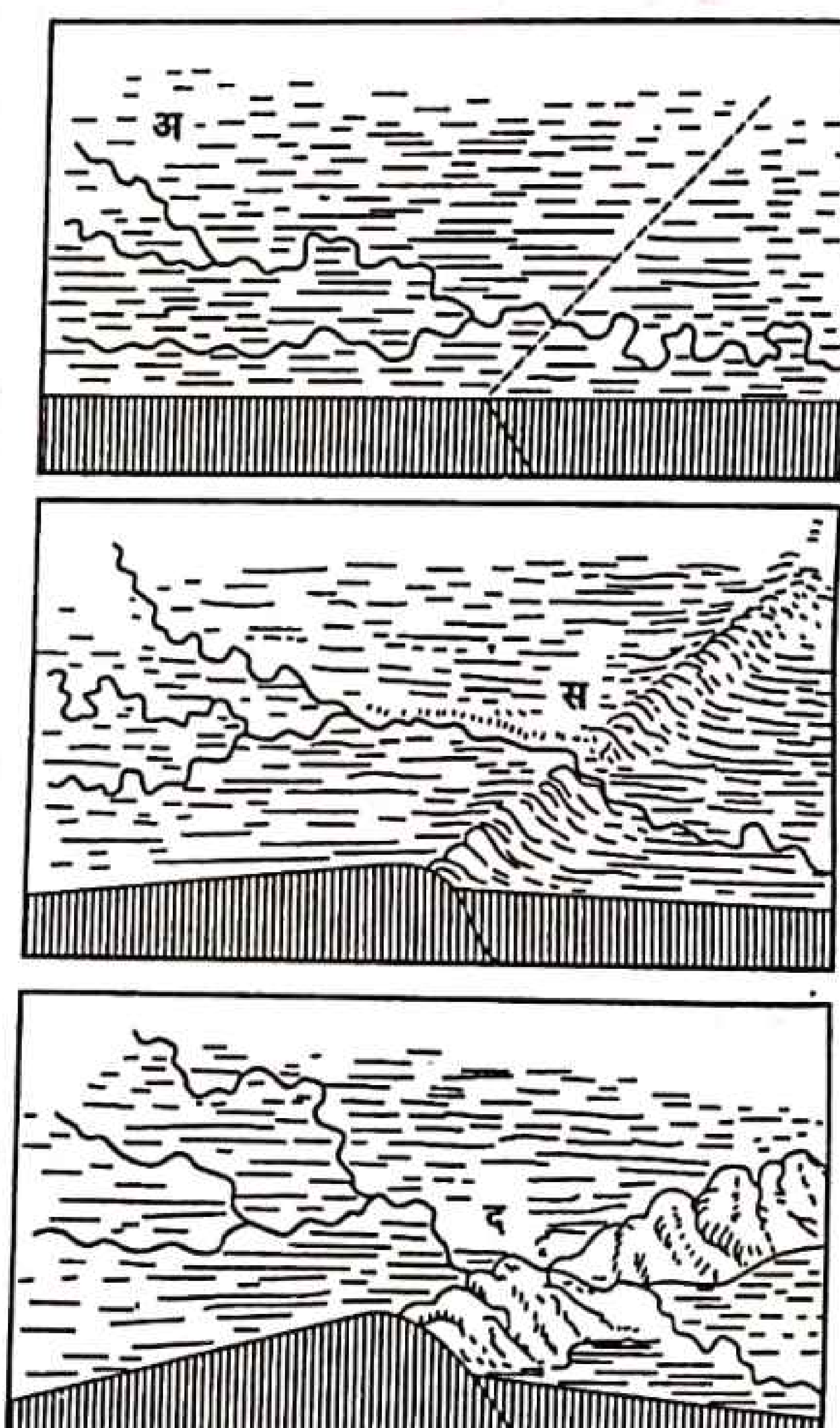

चित्र 17.4 : पूर्ववर्ती अपवाह तंत्र के विकास की प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय अवस्थाएं।

पूर्ववर्ती नदियों की सहायक नदियाँ भी होती हैं, परन्तु ये उतनी तीव्रता से उठे स्थलखण्ड में निम्न कटाव नहीं कर पातीं हैं जितनी तीव्रता से मुख्य नदी निम्न कटाव करती हैं। परिणामस्वरूप सहायक नदियों की घटियाँ मुख्य नदी की घाटी से ऊपर रह जाती हैं तथा देखने में लटकती घाटी (hanging valley) की तरह लगती है। यहाँ पर स्मरणीय है कि ये लटकती घाटियाँ, हिमानीकृत लटकती घाटियों से सर्वथा भिन्न होती हैं। पूर्ववर्ती नदियों के उदाहरण प्रायः हर पर्वतीय क्षेत्र में मिलते हैं। हिमालय पर्वत को काटकर आरपार प्रवाहित होने वाली सिन्धु एवं ब्रह्मपुत्र नदियाँ निश्चय ही पूर्ववर्ती जलधारा का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। हिमालय के उत्थान के पहले भी ये नदियाँ वर्तमान थीं। हिमालय के उत्थान के साथ ही साथ इन्होंने अपने निम्न कटाव द्वारा अपने प्राचीन मार्ग को अंगीकृत किया तथा वर्तमान समय में ये तंग घाटियों (गार्ज) से होकर बहती हैं। सिन्धु नदी गिलगित के पास हिमालय की श्रेणियों को काटकर 17,000 फीट गहरे गार्ज से होकर प्रवाहित होती है। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि पूर्ववर्ती नदियों के सैद्धान्तिक पक्ष पर तो आपत्ति नहीं है परन्तु व्यावहारिक पक्ष पर आपत्तियाँ अवश्य उठ जाती हैं। ये आपत्तियाँ मुख्य रूप से नदियों के पूर्ववर्ती होने की पहचान से सम्बन्धित हैं। उदाहरण के लिए सिन्धु नदी को भूगर्भवेत्ताओं का यदि एक वर्ग 'पूर्ववर्ती' बताता है तो दूसरा वर्ग उसे अनुवर्ती बताने से नहीं चूकता है। इनका कहना है कि हिमालय के उत्थान के बाद उसके दक्षिणी ढालों पर अनुवर्ती नदियों का विकास हुआ होगा। तदन्तर नदियों ने शीर्ष कटाव द्वारा पीछे हटना प्रारम्भ कर दिया होगा। फलस्वरूप उनका जलविभाजक भी निरन्तर उत्तर की ओर (पीछे —backward shifting of divide) खिसकता गया। अन्त में दक्षिणी ढालवाली अनुवर्ती नदियों ने हिमालय के उत्तरी ढाल पर बहनेवाली सरिताओं का अपहरण कर लिया। फलस्वरूप इनका निर्माण हिमालय के आरपार हो गया होगा। यद्यपि यह सम्भावना है, तथापि यह मत मान्य नहीं है।

यही समस्या अप्लेशियन पर्वत की अनुप्रस्थ नदियों (transverse streams) के विषय में भी उठती है। वहाँ पर ऐसी अनेक नदियाँ हैं, जो कि या तो अप्लेशियन के पूर्वी ढाल से निकलकर उसे आरपार काटकर पश्चिम दिशा में मिसीसिपी क्रम की ओर प्रवाहित होती हैं या अप्लेशियन के पश्चिम से निकलकर, उसे आरपार काटकर पूर्व दिशा में आन्ध्र महासागर में गिरती हैं। ऐसी नदियाँ निश्चय ही पूर्ववर्ती जलधाराओं का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं, परन्तु यहाँ पर तो विद्वानों में सर्वाधिक मतभेद है। इनके विचारों में इतना विभेद है कि क्रम से विद्वानों ने अप्लेशियन की अनुप्रस्थ नदियों को अनुवर्ती, पूर्ववर्ती, पूर्वारोपित (superimposed) या सरिता अपहरण से उत्पन्न नदियाँ कह डाला है। उदाहरण के लिये मेयरहाफ ओमस्टेड महोदय इन्हें 'अनुवर्ती' नदियाँ कहते हैं, जानसन महोदय 'पूर्वारोपित सरिता' तथा टामस महोदय 'प्रगामी सरिता अपहरण से उत्पन्न सरिता' बताते हैं।

हिमालय की अधिकांश प्रमुख नदियाँ पूर्ववर्ती हैं, यथा—सिन्धु, सतलज, गंगा, घाघरा, काली, गंडक, तिस्ता, ब्रह्मपुत्र आदि। ज्ञातव्य है कि हिमालय पर्वत तंत्र में पश्चिम पूर्व फैली तीन समानान्तर श्रेणियाँ पायी जाती हैं यथा—(उत्तर से दक्षिण) बृहद् हिमालय, लेसर हिमालय तथा सिवालिक श्रेणियाँ। इन तीन श्रेणियों के परिप्रेक्ष्य में तीन प्रकार की पूर्ववर्ती सरितायें विकसित हुई हैं—(1) सिन्धु, सतलज, गंगा, घाघरा, कोसी, ब्रह्मपुत्र आदि नदियाँ तीनों श्रेणियों के प्रति पूर्ववर्ती हैं अर्थात् ये तीनों श्रेणियों के आर-पार प्रवाहित होती हैं। (2) झेलम, यमुना, रावी, रामगंगा आदि केवल लेसर हिमालय एवं सिवालिक श्रेणियों के प्रति पूर्ववर्ती हैं। (3) तीसरी श्रेणी के अन्तर्गत उन नदियों को सम्मिलित करते हैं जो मात्र सिवालिक श्रेणियों के ही आर-पार प्रवाहित होती हैं। उदाहरण—कमला, राप्ती, गोला आदि।

2. पूर्वारोपित अपवाह तंत्र (Superimposed Drainage System)

पूर्ववर्ती सरिता के समान ही पूर्वारोपित या अध्यारोपित सरिता अपने प्रवाह स्थल की संरचना के साथ समायोजित नहीं होती है अर्थात् वह स्थलखण्ड के ढाल का अनुसरण नहीं करती

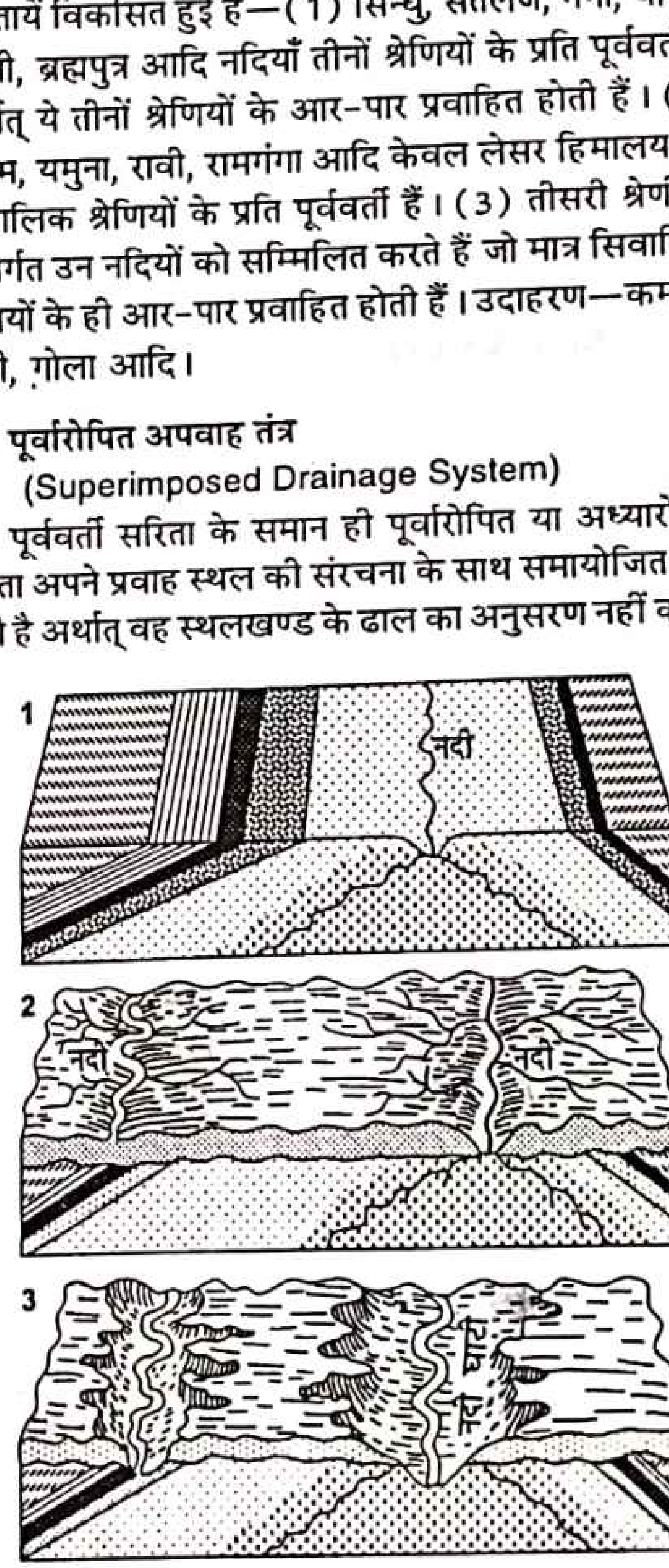

चित्र 17.5 : पूर्वारोपित (superimposed) अपवाह तंत्र के विकास की अवस्थाएं।

वाली हैं। इनके विकास के इतिहास में पर्याप्त विभेद है, जिसका उल्लेख आगे किया जायेगा। यहाँ पर पहले पूर्वारोपित सरिता के विकास का उल्लेख अन्तर स्पष्ट करने में सहायक होगा। यह सदैव आवश्यक नहीं है कि भूमिगत संरचना का ढाल या भूमिगत शैलों के स्तर का स्वभाव उसके ऊपर बिछे शैल आवरण के समान हो। प्राय: ऐसा होता है कि ऊपर का शैल आवरण अपने नीचे स्थित शैल की संरचना से भिन्न होता है। सर्वप्रथम नदी की घाटी का निर्माण ऊपरी आवरण पर होता है। जब ऊपरी आवरण पर नदी की घाटी का विकास हो चुकता है तो नदी निम्न कटाव द्वारा अपनी निर्मित घाटी का विस्तार तथा विकास निचली संरचना पर भी करती है, चाहे वह ऊपरी संरचना से भिन्न ही क्यों न हो। इस अवस्था में निचली संरचना को ऊपरी शैल आवरण में निर्मित घाटी के आकार और स्वभाव को स्वीकार करना ही पड़ता है, यद्यपि अगर विभिन्न स्वभाववाली निचली संरचना ऊपर होती है तो उसे अपनी इच्छानुसार चुनाव करने का अवसर मिल सकता था, परन्तु यहाँ पर उसके समक्ष कोई चुनाव का प्रश्न ही नहीं है। ऐसी अवस्था में ऊपरी आवरणवाली घाटी का निचली संरचना पर आरोपण (superimposition) कर दिया गया है। इस तरह की घाटी वाली सरिता को 'अध्यारोपित या पूर्वारोपित सरिता' (superimposed stream) कहा जाता है। इन जलधाराओं की घाटियाँ स्थानीय संरचना के विरुद्ध होती हैं। इन घाटियों को माव महोदय (Maw, G. 1886) तथा पावेल महोदय (Powell, J. W. 1857) ने 'superimposed' की संज्ञा प्रदान की है जबकि मैगी महोदय (McGee, W. J. 1888) ने केवल 'superposed' कहा है।

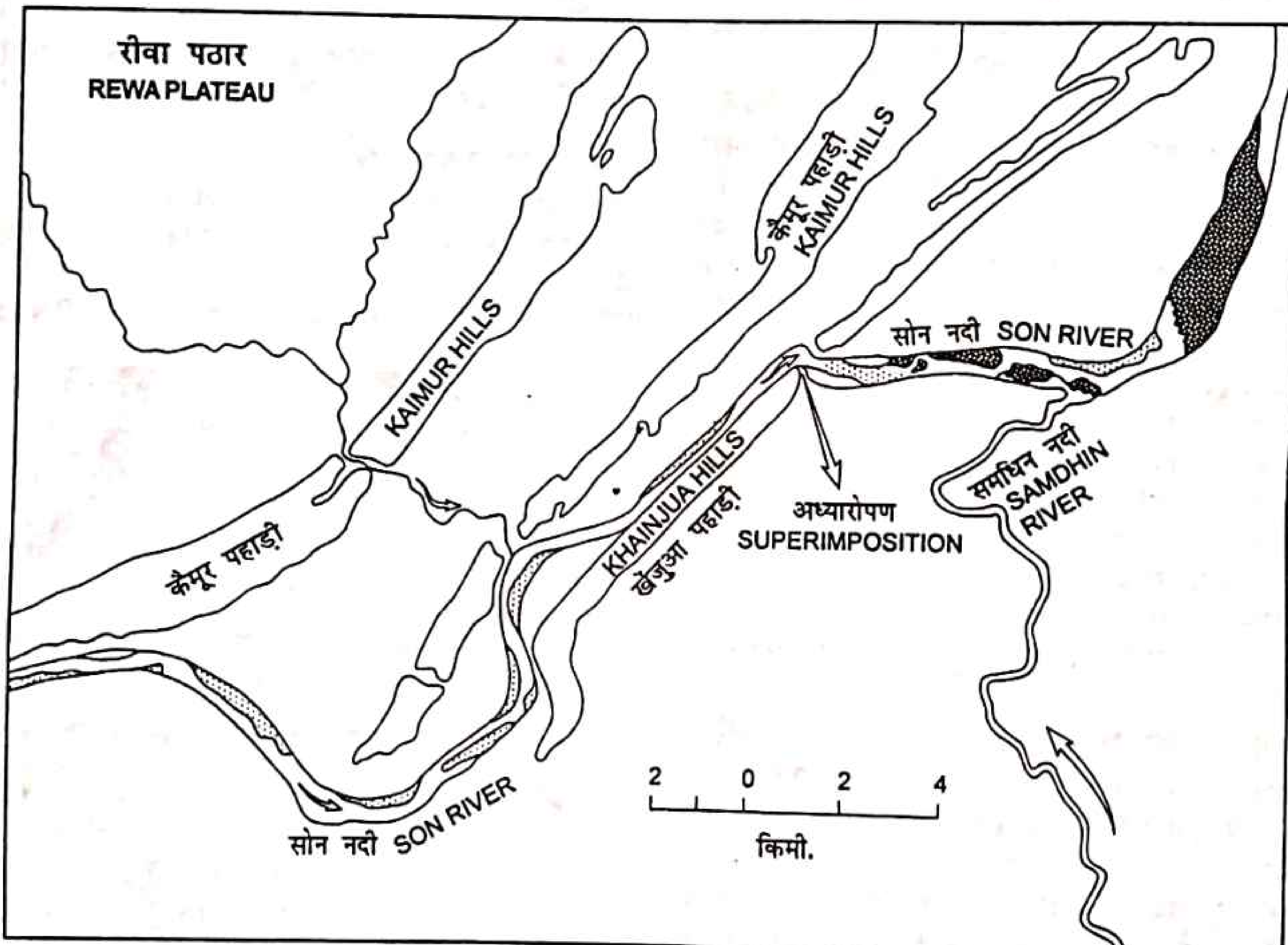

चित्र 17.6 : अध्यारोपित सोन घाटी (रीवां पठार)।

पूर्वारोपित सरिता तथा उसकी घाटी की उत्पत्ति को एक सरल उदाहरण लेकर समझा जा सकता है। चित्र 17.5 में एक ऐसी संरचना वाला भाग है जिसके ऊपरी भाग पर परतदार शैल का आवरण है जो कि समानान्तर स्तरवाली है। उसके नीचे वाले भाग में वलित संरचना का एक अपनतिवाला भाग है। सर्वप्रथम चित्र 17.5 (1) में नदी का आविर्भाव ऊपरी परतदार शैल के

ऊपर होता है। नदी निम्न कटाव द्वारा अपनी घाटी का विकास ऊपरी परतदार सतह में पूर्णतया कर लेती है, जैसा कि चित्र 17.5 (2) से स्पष्ट है। अब नदी की घाटी अपनति वाले भाग पर आ जाती है। यहाँ पर संरचना ऊपरी संरचना से सर्वथा भिन्न है, परन्तु नदी अपनी ऊपरी घाटी के अनुसार ही इस निचली अपनति पर निम्न कटाव करके अपनी घाटी का निर्माण करती है, जैसा कि चित्र 17.5 (3) से स्पष्ट है। यहाँ पर नदी की घाटी के विकास में अपनति का कोई प्रभाव नहीं है। यदि यह अपनति स्थल के ऊपर रही होती तो घाटी का स्वरूप कुछ और ही रहा होता, परन्तु यहाँ पर चूँकि घाटी का विकास ऊपरी आवरण पर हो चुका है, अत: वैसी ही घाटी अपनति पर बनी है अर्थात् ऊपरी आवरण शैल वाली घाटी का आरोपण निचली अपनति पर कर दिया गया है।

पूर्वारोपित तथा पूर्ववर्ती सरिताओं में अन्तर यह होता है कि प्रथम अपनी ऊपरी संरचना में निर्मित घाटी का आरोपण निचली संरचना में करती है, चाहे वह किसी प्रकार की संरचना क्यों न हो। इसमें उत्थान का समावेश नहीं किया जाता है। दूसरी में संरचना का महत्व नहीं होता है, वरन् नदी के मार्ग में उत्थान होता है और नदी उत्थान के साथ गहरा कटाव करके अपने पूर्ववत् मार्ग का अनुसरण करती है। परन्तु अगर सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो यह अन्तर और सूक्ष्म हो जाता है। उदाहरण के लिये यदि किसी पेनीप्लेन पर जलोढ़ मिट्टी या सागरीय मिट्टी की पतली परत बिछी है तथा यदि उस पर नदी का विकास होता है तो घाटी का निचले शैल पर आरोपण हो जाता है। यदि पेनीप्लेन का उत्थान हो जाता है तो नदियों में नवोन्मेष आ जाता है और अपने निम्न कटाव द्वारा अपनी घाटी को पूर्ववत् बनाये रखती हैं, संरचना चाहे जो हो। यहाँ पर 'पूर्ववर्ती' तथा 'पूर्वारोपित' में अन्तर स्पष्ट करना कठिन हो जाता है, परन्तु यदि सूक्ष्मता से देखा जाय तो दोनों नदियों के सम्बन्ध में उत्थान के स्वभाव में अन्तर होता है। पूर्ववर्ती नदी के मार्ग में स्थानीय उत्थान होता है जबकि पूर्वारोपित नदी के मार्ग में (यदि उसका आरोपण पेनीप्लेन पर होता है तो) प्रादेशिक उत्थान होता है, क्योंकि पेनीप्लेन में प्रादेशिक उत्थान ही हुआ करता है। कनेक्टीकट नदी,(संयुक्त राज्य अमेरिका) का निचला भाग, जो कि मिडिलटाउन से लांग आईलैण्ड साउण्ड के बीच है, एक पूर्वारोपित घाटी का ही रूप है। यहाँ पर पहले नदी घाटी का विकास तटीय मैदान के अवसाद पर हुआ था। तदन्तर उसका आरोपण निचली संरचना पर भी हो गया। हडसन नदी का गार्ज, डिलावेयर वाटर गैप इत्यादि पूर्वारोपण के ही उदाहरण हैं। ग्रेट ब्रिटेन में नवीन चट्टानों के ऊपर नदियों की घाटियों का कई स्थानों पर निचली पुरानी कठोर संरचना वाले भागों पर आरोपण (superposition) हो गया है। ग्रेटब्रिटेन में लेक डिस्ट्रिक्ट में भी पूर्वारोपित अपवाह तंत्र के उदाहरण मिलते हैं। दक्षिण पूर्व में छोटा नागपुर पठार पर चन्दिल के पश्चिम में स्वर्णरेखा नदी का डाल्मा एवं फाइलाट पहाड़ियों पर अध्यारोपण हुआ है। किसी भी क्षेत्र में, इस प्रकार, पूर्वारोपित जलधाराओं के समूह और क्रम को 'पूर्वारोपित अपवाह तंत्र' कहा जाता है। इनकी दो प्रमुख पहचानें हैं—1. घाटियों के ऊपर प्राथमिक आवरण शैल के, जिसके ऊपर सर्वप्रथम नदी की घाटी का विकास हुआ था, अवशेष दिखाई पड़ते हैं तथा 2. इन नदियों की घाटियाँ संरचना के विपरीत भी होती हैं या यों कहिये इनका संरचना से कोई सम्बन्ध नहीं होता है।

मध्य प्रदेश में रींवा पठार के दक्षिणी भाग में कैमूर श्रेणियों तथा खेन्जुआ श्रेणियों के आर-पार प्रवाहित होने वाली सोन नदी पूर्वारोपित नदी का प्रमुख उदाहरण है (चित्र 17.6)। सोन नदी पश्चिम में महानदी के संगम ($24^0 2'$ उ० अक्षांश एवं 81^0 पूर्वी देशान्तर) से उत्तर में स्थित कैमूर श्रेणियों से सटकर बहती है तथा $81^0 10'$ पू० से $81^0 15'$ पूर्व० देशान्तर के बीच उक्त श्रेणियों से दूर हट जाती है तथा मियाण्डर का निर्माण करती है। आगे चलकर (पूर्व की ओर) यह पुन: कैमूर श्रेणियों के पास आ जाती है तथा देवलन्द के पास कैमूर को काटकर द० पू० दिशा की ओर मुड़ जाती है। पुन: बनास नदी से संगम बनाने के बाद उत्तर दिशा की ओर मुड़ जाती है तथा खेन्जुआ श्रेणियों को काटकर अपना मार्ग बनाने के बाद पूर्व की ओर मुड़ जाती है। निचली विन्ध्यन क्रम की अवसादी शैलों के निर्माण के बाद रींवा पठार के इस दक्षिणी भाग में वलन तथा भ्रंशन की क्रियाएँ हुई हैं तथा कैमूर श्रेणियों का निर्माण हुआ। इसके बाद ऊपरी विन्ध्ययन क्रम की शैलों का निक्षेपण हुआ जिनमें न्यूनतम विरूपण हुआ। क्रीटैसियस तथा प्रारम्भिक इयोसिन युग में दकन लावा प्रवाह के कारण खेन्जुआ श्रेणियाँ लावा के नीचे तिरोहित हो गयीं। इस नवीन सतह पर सोन नदी का विकास हुआ। सोन ने शनै: शनै: इस लावा को काटकर अपनी घाटी का निर्माण किया। बाद में खेन्जुआ श्रेणियों के ऊपर भी पूर्व निर्मित घाटी का अध्यारोपण हो गया। इस तरह सोन घाटी अध्यारोपित घाटी का ही उदाहरण है।

17.3 अपवाह प्रतिरूप
(Drainage Patterns)

किसी भी प्रदेश या क्षेत्र में अपवाह तंत्र (drainage system) के ज्यामितीय आकार तथा सरिताओं की स्थानिक व्यवस्था (spatial arrangement) को अपवाह प्रतिरूप कहते हैं। किसी भी प्रदेश की सरिताओं की अवस्थिति, संख्या तथा प्रवाह दिशा उस प्रदेश के धरातलीय ढाल, संरचनात्मक नियंत्रण, शैलों की विशेषताओं, विवर्तनिक कारकों तथा हलचलों, जलवायु सम्बन्धी दशाओं, वनस्पति सम्बन्धी विशेषताओं आदि पर निर्भर होती है। चूँकि विश्व के विभिन्न प्रदेशों में पर्यावरणीय दशाओं में अत्यधिक विभिन्नताएं होती हैं अत: अपवाह प्रतिरूपों में स्थानिक विभिन्नताएँ होती हैं। यद्यपि

कुछ प्रदेशों के अपवाह प्रतिरूप समरूप होते हैं परन्तु एक जैसे नहीं होते हैं। परन्तु कुछ उभय विशेषताओं के आधार पर विभिन्न अपवाह प्रतिरूपों में विभेद अवश्य किया जा सकता है। सामान्य रूप से निम्न प्रकार के अपवाह प्रतिरूपों का निर्धारण किया गया है—जालीनुमा प्रतिरूप, पादपाकार (वृक्षाकार) प्रतिरूप, आयताकार प्रतिरूप, समानान्तर प्रतिरूप, अरीय या अपकेन्द्रीय प्रतिरूप, अभिकेन्द्रीय प्रतिरूप, कंटकीय प्रतिरूप, वलायाकार प्रतिरूप, अनिश्चित प्रतिरूप, हेरिंगबोन प्रतिरूप, पाइनेट प्रतिरूप आदि।

1. जालीनुमा अपवाह प्रतिरूप (Trellis Drainage Pattern)

जालीनुमा अपवाह प्रतिरूप का विकास संरचना में ढाल के अनुरूप विकसित प्रधान अनुवर्ती सरिता तथा उसकी सहायक सरिताओं के प्रवाह जाल द्वारा होता है। इस तरह के प्रतिरूप का विकास सामान्यतया समानान्तर अपनतीय कटकों (ridges) तथा अभिनतीय घाटियों वाली सरल वलित संरचना वाले भाग में होता है। अभिनतीय घाटियों में प्रधान अनुवर्ती सरिताओं का उद्भव होता है। तदन्तर अपनतीय कटकों के

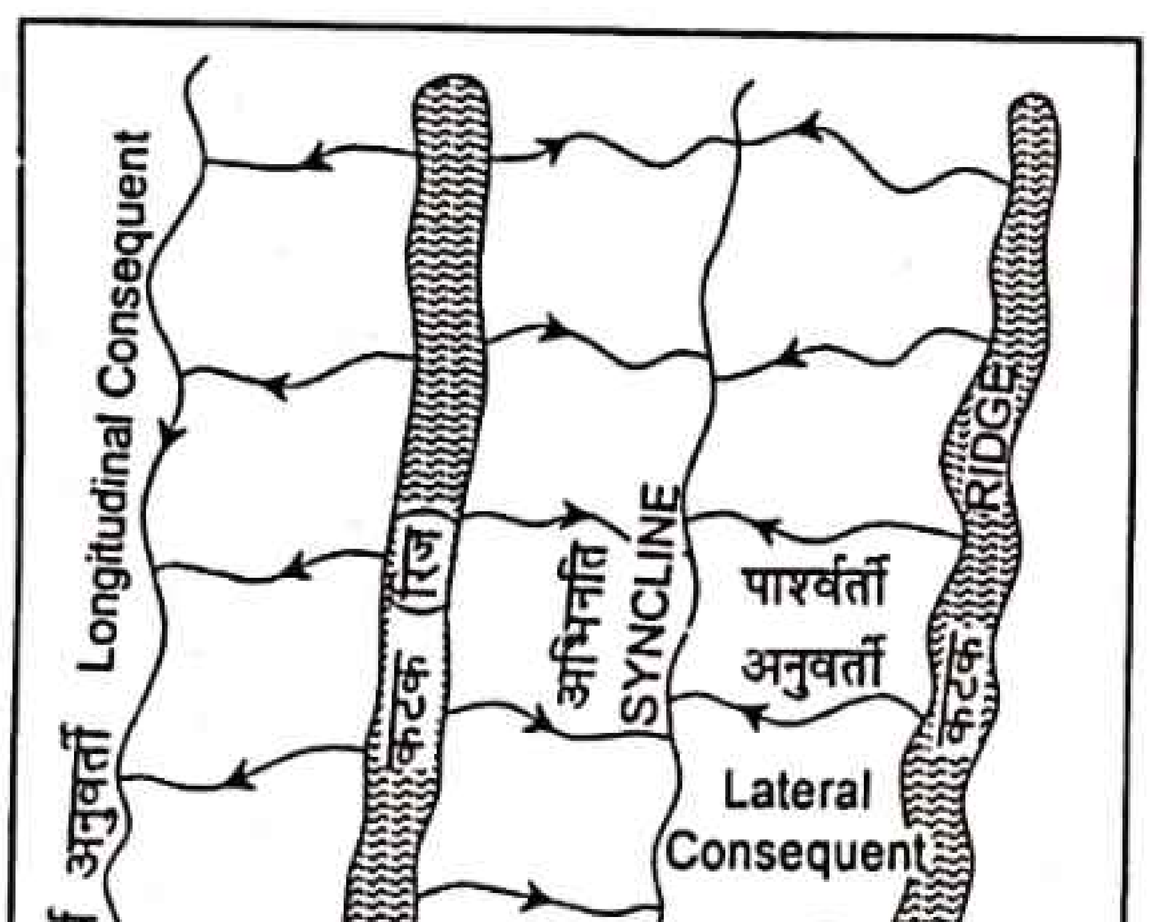

चित्र 17.7 : वलित संरचना पर जालीनुमा अपवाह प्रतिरूप का विकास।

पार्श्व भागों पर अनेकों सरिताओं का आविर्भाव होता है जो अभिनतीय प्रधान अनुवर्ती नदियों से समकोण पर मिलती हैं (चित्र 17.7)। इन सहायक सरिताओं को पार्श्विक अनुवर्ती (lateral consequent) कहा जाता है। इस तरह अनेक अनुदैर्ध्य अनुवर्ती तथा अनुप्रस्थ पार्श्विक अनुवर्ती नदियों के जाल को जालीनुमा अपवाह प्रतिरूप (चित्र 17.7) कहते हैं। यह प्रतिरूप आयताकार प्रतिरूप से भी मिलता-जुलता है। वास्तव में जालीनुमा तथा आयताकार प्रतिरूपों में विभेद सरिताओं के बीच की दूरी के आधार पर किया जाता है। यदि सरिताएँ पास-पास होती हैं तो प्रतिरूप जालीनुमा होता है जबकि नदियों के दूर दूर होने पर आयताकार प्रतिरूप होता है।

2. पादपाकार अपवाह प्रतिरूप (Dendritic Drainage Pattern)

इस अपवाह प्रतिरूप को **द्रुमाकृति या वृक्षाकार प्रतिरूप** की भी संज्ञा प्रदान की जाती है। इस प्रकार की सरिताओं का विकास प्रमुख रूप से सपाट तथा चौरस विस्तृत भागों में होता है। ग्रेनाइट शैलवाले भाग में इनका विसतार सर्वाधिक होता है। ऐसी जलधाराओं वाले प्रवाह क्रम को 'पादपाकार अपवाह प्रतिरूप' कहा जाता है। इनका आकार देखने पर वृक्ष के तने तथा उसकी शाखाओं के समान दिखाई पड़ता है। जिस प्रकार एक वृक्ष में सर्व प्रमुख उसका तना होता है तथा उसकी प्रमुख शाखाएँ एवं प्रतिशाखाएँ होती हैं जो कि प्राय: सभी दिशाओं की ओर उन्मुख होती हैं, उसी प्रकार पादपाकार प्रतिरूप में क्षेत्र की एक प्रमुख जलधारा होती है और उसकी शाखाएँ सभी दिशाओं से आकर मुख्य जलधारा से मिल जाती हैं। जिस तरह वृक्ष की छोटी शाखाएं बड़ी शाखा से मिलती हैं, उसी तरह इस अपवाह प्रतिरूप में छोटी जलधाराएं बड़ी जलधाराओं से मिली रहती हैं। यद्यपि संरचना का पादपाकार अपवाह प्रतिरूप पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ता है, तथापि एक ही शैल से निर्मित समतल भूभाग में इनका विकास शीघ्र एवं स्पष्ट रूप में होता है। इनके विकास की दशाएं क्रमिक तथा सरल होती हैं। सर्वप्रथम मुख्य नदी का आविर्भाव एवं विकास होता है। तदन्तर नदी की लम्बाई बढ़ती जाती है तथा उसकी सहायक नदियों का विकास होता है। शीर्ष अपरदन (headward erosion) द्वारा बड़ी जलधाराएं छोटी जलधाराओं को आत्मसात् करती रहती हैं। चित्र 17.8 में पादपाकार अपवाह प्रतिरूप के विकास की अवस्थाएँ दिखाई गयी हैं।

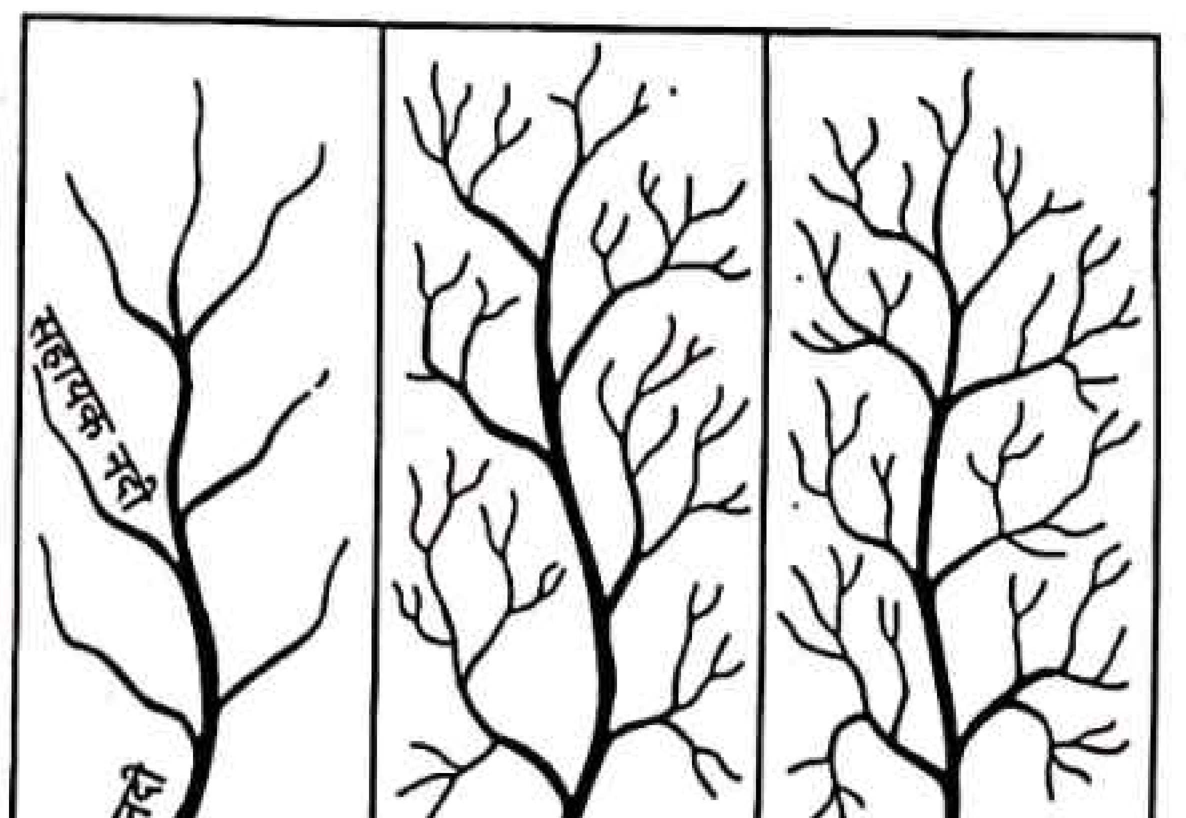

चित्र 17.8 : पादपाकार अपवाह प्रतिरूप के विकास की अवस्थाएँ।

पादपाकार अपवाह प्रतिरूप में नदियों के विस्तार तथा उनकी सहायक जलधाराओं की संख्या के ऊपर शैल की प्रवेश्यता तथा ढाल का प्रभाव अवश्य होता है। यदि कोई स्थान सपाट तथा चौरस है, एवं ढाल मन्द है, साथ ही साथ यदि चट्टानें अप्रवेश्य (impervious) हैं तो पादपाकार प्रतिरूप अत्यधिक विस्तृत होगा अर्थात् लम्बाई और चौड़ाई दोनों में विकास एवं विस्तार होगा तथा सहायक नदियों की संख्या अधिक होगी। परन्तु यदि स्थल का ढाल तीव्र है तो यह प्रतिरूप लम्बाई में तो अधिक होगा, परन्तु चौड़ाई में विस्तृत नहीं हो पायेगा। छोटा नागपुर के अधिकांश क्षेत्रों में समान अवरोध वाली आग्नेय शैल के ऊपर पादपाकार अपवाह प्रतिरूप का विकास हुआ है।

3. आयताकार अपवाह प्रतिरूप
(Rectangular Drainage Pattern)

आयताकार अपवाह प्रतिरूप में भी सहायक नदियाँ अपनी मुख्य नदी से समकोण पर मिलती हैं, परन्तु यह अपवाह प्रतिरूप, अनुवर्ती तंत्र से सर्वथा भिन्न है, क्योंकि अन्त में नदियाँ ढाल के अनुरूप होती हैं एवं उनके मिलने का कोण उस स्थल के नतिलम्ब (strike) तथा नति (dip) द्वारा निर्धारित होता है, परन्तु आयताकार अपवाह प्रतिरूप में नदियों के मिलने के स्थान का कोण चट्टान की सन्धियों के स्वभाव द्वारा निर्धारित होता है। अत: आयताकार प्रतिरूप का विकास प्राय: उन क्षेत्रों में होता है, जहाँ पर चट्टानों के जोड़ तथा सन्धियाँ आयत के रूप में होती हैं। इस कारण सर्वप्रथम सन्धियों के सहारे चट्टान का अपक्षय द्वारा विघटन एवं वियोजन होता है। तदन्तर सन्धियों का विस्तार हो जाता है एवं उनमें बाही जल एकत्र होने लगता है। फलस्वरूप छोटे-छोटे नालों का विकास होता है। ये नाले बढ़कर जलधाराओं का रूप धारण कर लेते हैं। कुछ समय बाद उस समस्त क्षेत्र में आयताकार सन्धियों के चारों तरफ जलधाराओं का विकास हो जाता है तथा नदियां समकोण पर एक दूसरे से मिलती हैं। इस प्रकार की जलधाराओं के सामूहिक क्रम को 'आयताकार अपवाह प्रतिरूप' कहा जाता है।

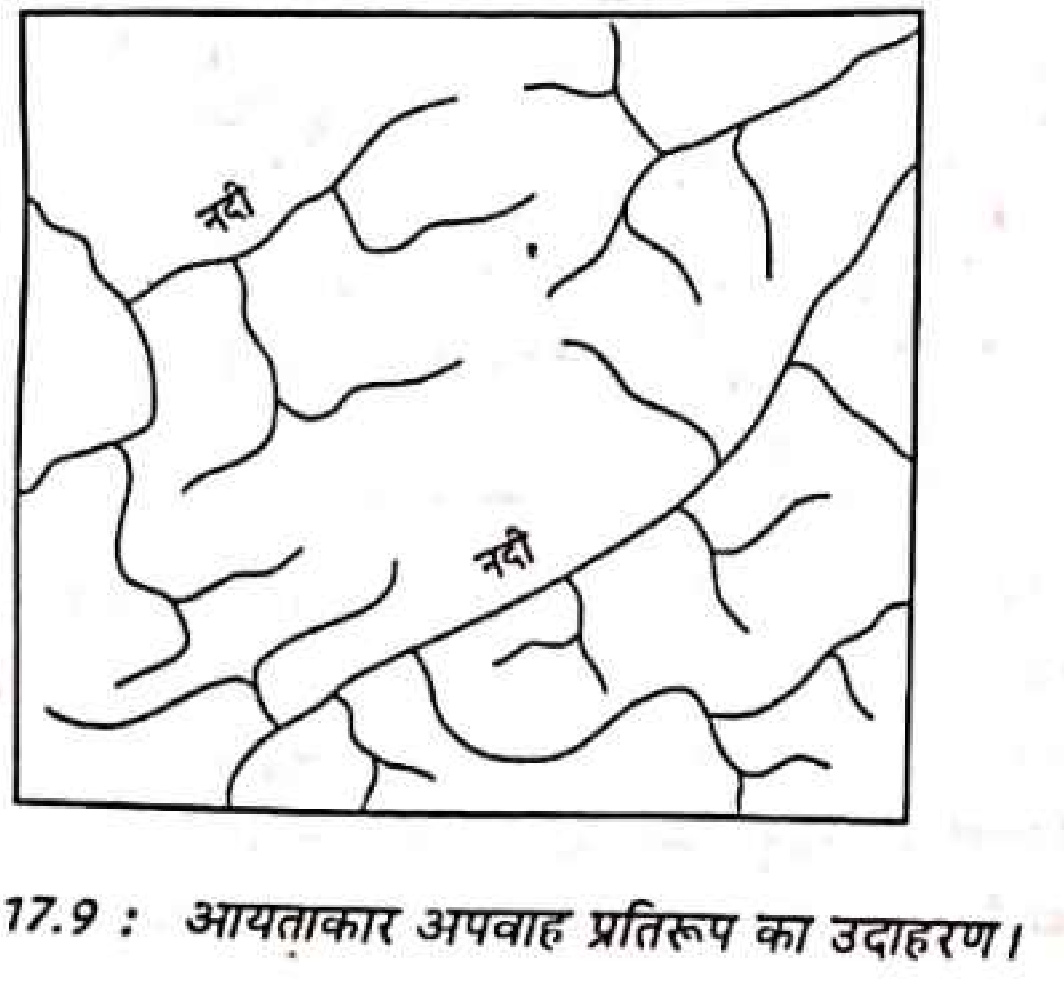

चित्र 17.9 : आयताकार अपवाह प्रतिरूप का उदाहरण।

4. अपकेन्द्रीय अपवाह प्रतिरूप
(Radial or Centrifugal Drainage Pattern)

चूँकि इस प्रकार के प्रतिरूप में नदियाँ एक स्थान से निकलकर चारों तरफ प्रवाहित होती हैं, अत: इस प्रकार के अपवाह प्रतिरूप को 'केन्द्रत्यागी या अरीय (radial) अपवाह क्रम' भी कहा जा सकता है। इस तरह के अपवाह प्रतिरूप के विकास के लिये आवश्यक दशाएँ गुम्बदाकार पर्वत या ज्वालामुखी शंकुओं से मिलती हैं, जहाँ पर ऊपरी केन्द्र से चारों तरफ प्राय: समान ढाल होता है। नदियाँ ऊपरी केन्द्र से निकलकर चारों दिशाओं की ओर प्रसारित होती हैं। यहाँ पर जलधाराएं ढालों का अनुसरण करती हैं, अत: मौलिक रूप में वे अनुवर्ती जलधाराएँ (consequent streams) ही होती हैं। इनका आकार वास्तव में पहिये के अरों या वृत्त के अर्द्धव्यासों के समान हुआ करता है। माउण्ट एटना, माउण्ट हुड, माउण्ट रेनियर आदि ज्वालामुखी पर्वतों और ऊटा के हेनरी पर्वत, फ्रांस के मध्य गुम्बदीय क्षेत्रों आदि में अपकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप विकसित है। श्रीलंका का अपवाह प्रतिरूप भी अपकेन्द्री या केन्द्रत्यागी ही है।

राँची पठार के मध्यवर्ती उत्थित भाग ने अपकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप को जन्म दिया है, जहाँ पर नदियाँ शीर्षवर्ती अपदन में व्यस्त हैं। हजारीबाग पठार के उत्थित भाग, पारसनाथ पर्वत, पंचेत पहाड़ी तथा डाल्मा ज्वालामुखी पर्वत के ऊपर भी अपकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप का विकास हुआ है।

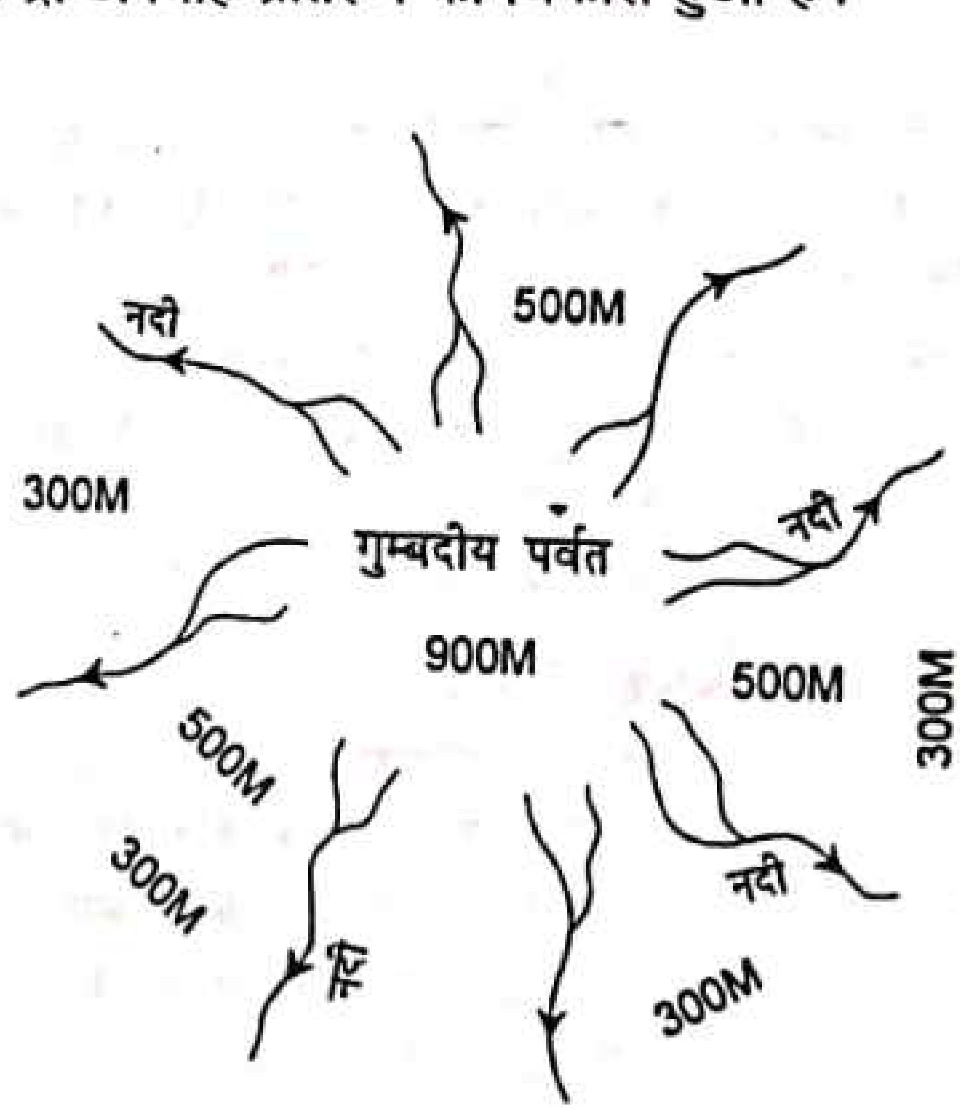

चित्र 17.10 : अरीय (radial) अपवाह पतिरूप का उदाहरण।

अपकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप का खूबसूरत उदाहरण रांची शहर से द० प० दिशा में 13 से 16 किमी० पर स्थित उत्थित भाग (762.5 मी०), जिसे रांची पठार के प्रवाह क्रम का नाभिक (nucleus) कहा जाता है, से प्राप्त होता है, जहाँ से द०

कोयल, स्वर्ण रेखा, कांची, कारो आदि नदियाँ निकलकर विभिन्न दिशाओं में प्रवाहित होती हैं।

झारखण्ड प्रान्त में हजारी बाग पठार के मोरचा पहाड़ तथा लुगु पहाड़ केन्द्रत्यागी अपवाह प्रतिरूप के खूबसूरत उदाहरण हैं। राजस्थान का माउण्ट आबू भी अरीय अपवाह प्रतिरूप का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है। यदि बड़े क्षेत्रीय मापक पर देखा जाय तो द० प० बिहार का रोहतास पठार केन्द्रत्यागी अपवाह प्रतिरूप का ही उदाहरण है क्योंकि इस पठार के द० प० भाग से कर्मनाशा एवं दुर्गावती नदियां तथा उनकी सहायक (अधौरा पठार से निकलकर) द० प०, उ० प०, तथा उत्तर पूर्व दिशा की ओर जाती हैं तथा सोन नदी की सहायक द० की ओर प्रवाहित होती हैं।

5. अभिकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप (Centripetal Drainage Pattern)

अभिकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप अपकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप से एकदम विपरीत होता है क्योंकि इस व्यवस्था में नदियाँ चारों तरफ से निकल कर एक केन्द्र की ओर आती हैं। फलस्वरूप इन्हें 'केन्द्रोन्मुख अपवाह प्रतिरूप' भी कहा जाता है। इस तरह की व्यवस्था में नदियाँ प्राय: एक झील या गर्त भाग में आकर गिरती हैं। उन ज्वालामुखी के शंकुओं में जिनमें क्रैटर झील का आविर्भाव हो जाता है, केन्द्रोन्मुख अपवाह प्रतिरूप का विकास हो जाता है। इनमें ज्वालामुखी कैटर की दीवारें ऊंची होती हैं और उनके बीच में निम्न भाग या गड्ढा होता है। फलस्वरूप चारों तरफ से नदियाँ उतरकर इस गड्ढे में गिरने लगती हैं। तिब्बत एवं लद्दाख क्षेत्र की जलधाराएं अभिकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप का स्वरूप प्रस्तुत करती हैं। इन्हें 'अन्तर्देशीय अपवाह प्रतिरूप' (inland drainage pattern) इसलिये कहा जाता है कि इनका सम्बन्ध सागर से नहीं हो पाता है।

निचली चम्बल बेसिन में रायगढ़ गुम्बद (450 मीटर) के शीर्ष पर गर्त का निर्माण हुआ है। अत: कगार के आन्तरिक किनारों से नदियाँ निकलकर गर्त के केन्द्र की ओर प्रवाहित होकर अभिकेन्द्री अपवाह प्रतिरूप को जन्म देती हैं।

6. वलयाकार अपवाह प्रतिरूप (Annular Drainage Pattern)

वलयाकार अपवाह प्रतिरूप को 'चक्राकार क्रम' भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें जलधाराएं एक वृत्त के आकार में फैली होती हैं। इस तरह के अपवाह प्रतिरूप मुख्य रूप से प्रौढ़ एवं घर्षित गुम्बदीय पर्वतों में विकसित होते हैं। इन गुम्बदों पर नदियां उनकी परिक्रमा करती हुई प्रवाहित होती हैं। यदि गुम्बदनुमा पर्वत कठोर एवं मुलायम शैलों का बना है और यदि उसका पर्याप्त अनाच्छादन हो चुका है तो मुख्य अनुवर्ती नदियों की सहायक परवर्ती (subsequent) नदियों का विकास इन मुलायम चट्टानों वाले भागों में गुम्बद के चारों तरफ परिधि के आकार में होता है। वलयाकार अपवाह प्रतिरूप में प्राय:

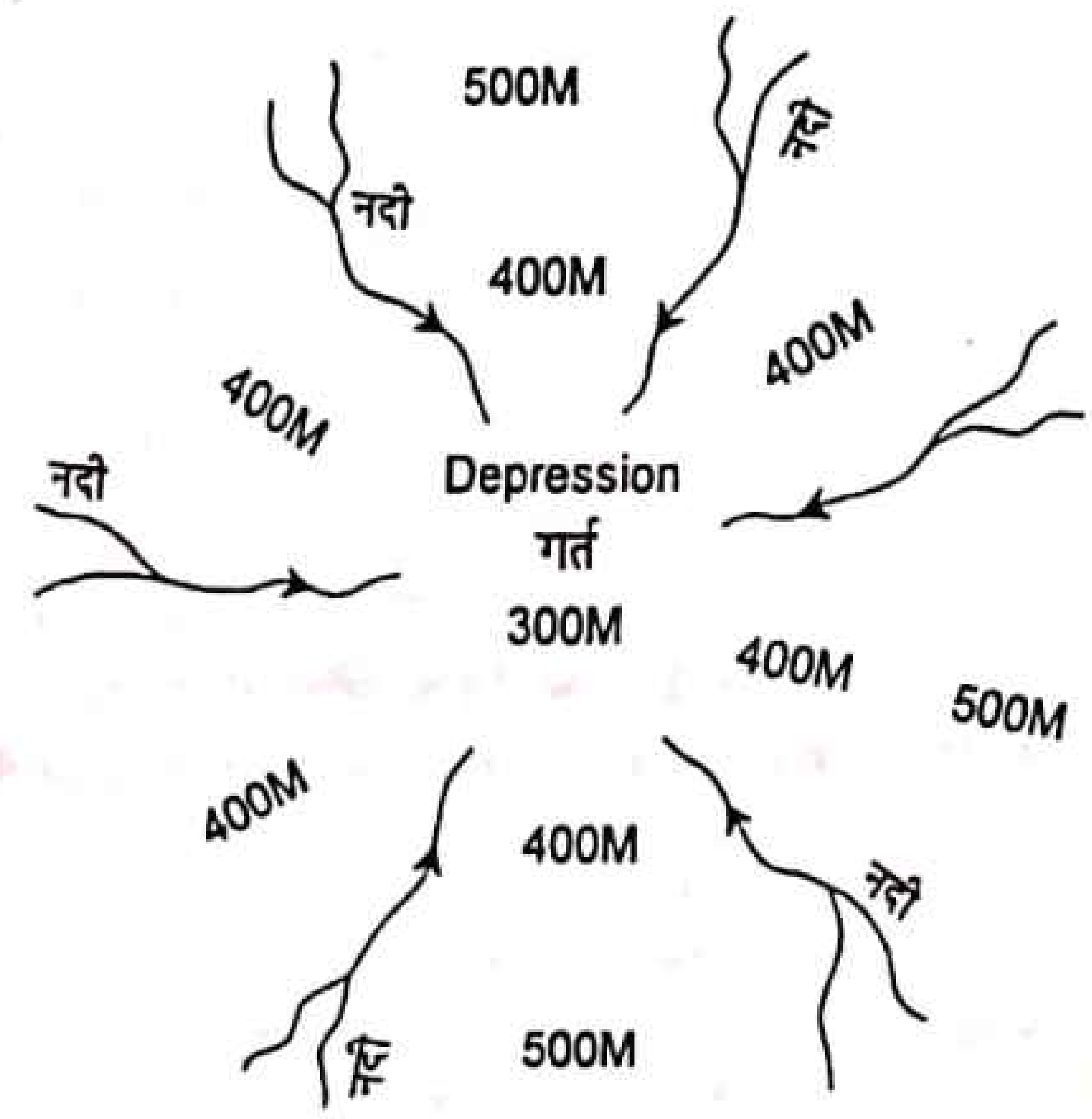

चित्र 17.11 : अभिकेन्द्रीय (centripetal) अपवाह प्रतिरूप का उदाहरण।

परवर्ती जलधाराएँ होती हैं और उनकी सहायक जलधाराओं का भी विकास हो जाता है, जो मुख्य रूप से नवानुवर्ती (resequent) तथा प्रत्यनुवर्ती (obsequent) जलधाराएं होती हैं। वास्तव में वलयाकार क्रम, जालीनुमा अपवाह क्रम का ही

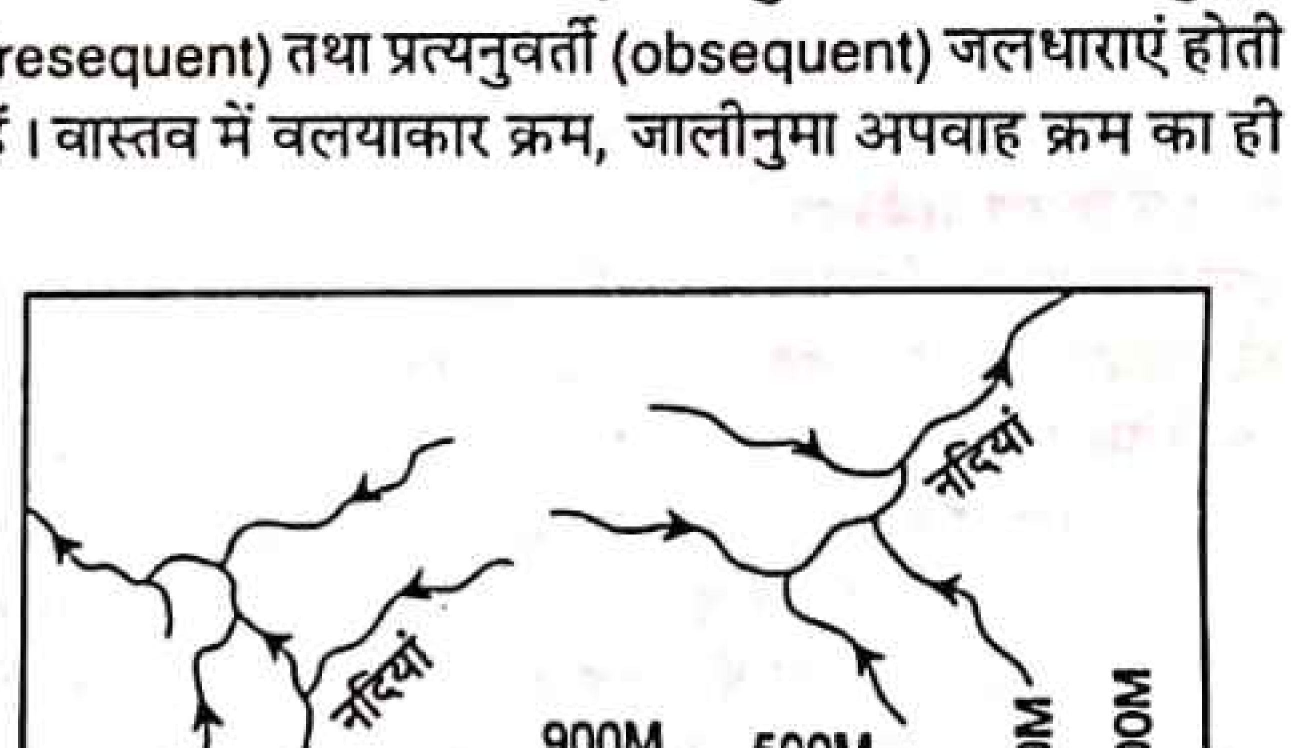

चित्र 17.12 : वलयाकार (annular) अपवाह प्रतिरूप।

एक विशिष्ट रूप होता है। अन्तर केवल इतना ही है कि प्रथम में परवर्ती जलधाराएं गुम्बद का चक्कर लगाकर प्रवाहित होती हैं तथा एक वृतनुमा या चक्राकार अपवाह प्रतिरूप का निर्माण करती हैं। इस अपवाह प्रतिरूप की जलधाराएं संरचना के साथ

समायोजित होती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के ब्लैक हिल्स गुम्बद में पर्याप्त अनाच्छादन के बाद नदी शेइन (Cheyene) एवं उसकी सहायक जलधाराओं ने चक्राकार अपवाह प्रतिरूप का विकास किया है। इंग्लैण्ड के वेल्ड में भी नदियों ने अनाच्छादित गुम्बदों पर वलयाकार प्रतिरूप का विस्तार किया है। सोनपेत के प्रौढ़ घर्षित गुम्बद के ऊपर वलयाकार अपवाह प्रतिरूप का विकास हुआ है, जहाँ पर कठोर तथा कोमल शैल परतें एकान्तर रूप में वलयाकार रूप में पायी जाती हैं।

7. कंटकीय अपवाह प्रतिरूप (Barbed Drainage Pattern)

जब मुख्य नदी के ऊपरी भाग में ऐसी सहायक जलधाराएं मिलती हैं जिनके प्रवाह की दिशा मुख्य नदी के विपरीत हुआ करती है तो इन सहायक नदियों द्वारा निर्मित प्रवाह क्रम को कंटकीय अपवाह प्रतिरूप कहा जाता है। इस तरह के प्रतिरूप का विकास प्राय: सरिता अपहरण वाले क्षेत्रों में होता है। अपहरण की जाने वाली सरिता की सहायक नदियाँ होती हैं, जो कि मुख्य नदी की दिशा का अनुकरण करती हैं। इन नदियों की दिशा अपहरण करने वाली सरिता के प्रवाह मार्ग की उल्टी होती है। जब मुख्य नदी दूसरी नदी का अपहरण कर लेती है तो अपहृत नदी (captured river) का जल मुख्य नदी से होकर बहने लगता है परन्तु अपहृत नदी की सहायक नदियाँ जो कि अब संगठित नदी (integrated river) की सहायक हो गयी हैं अपनी पहली दिशा में ही प्रवाहित होती हैं। अत: इनकी प्रवाह दिशा, मुख्य नदी की प्रवाह दिशा के विपरीत होती है। इस तरह के अपवाह प्रतिरूप को 'कंटकीय प्रतिरूप' कहा जाता है। सिन्धु एवं ब्रह्मपुत्र नदियों के ऊपरी भाग में कई सहायक नदियाँ अपनी मुख्य नदी के विपरीत दिशा में प्रवाहित होकर उपर्युक्त प्रतिरूप का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

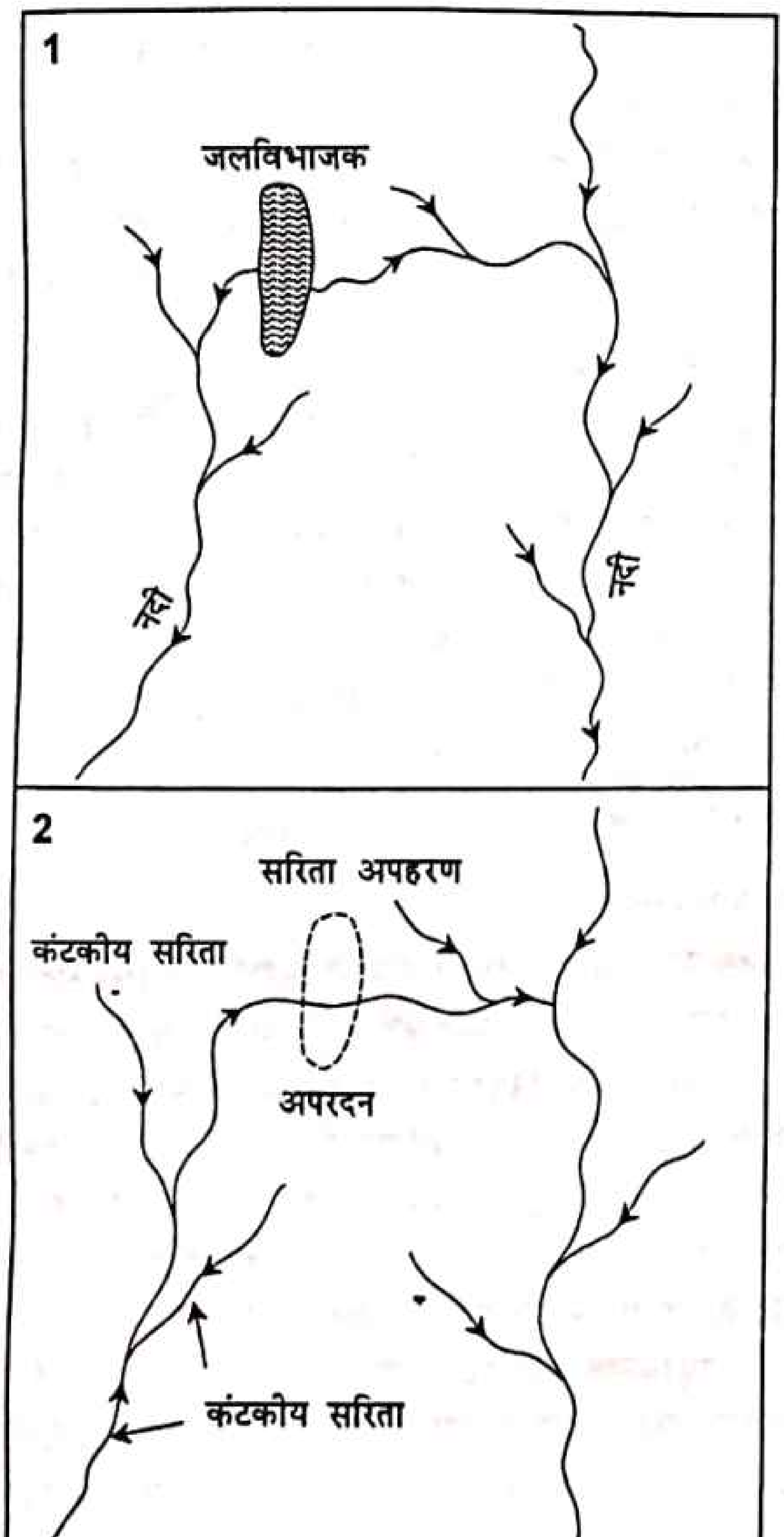

चित्र 17.13 : कंटकीय अपवाह प्रतिरूप (barbed drainage pattern) के विकास की अवस्थाएँ।

8. परनुमा अपवाह प्रतिरूप (Pinnate Drainage Pattern)

परनुमा (पक्षियों के पर यानी पंख के आकार का) अपवाह प्रतिरूप का विकास खड़े ढाल वाली श्रेणियों से आवृत्त संकरी अनुदैर्ध्य घाटियों वाले भागों में होता है। पार्श्ववर्ती समानान्तर पर्वत श्रेणियों के तीव्र (खड़े) ढालों से सरितायें निकलकर प्रधान अनुदैर्ध्य अनुवर्ती सरिता से न्यून कोण पर मिलती हैं (चित्र 17.14)। ऊपरी सोन नदी एवं नर्मदा का अपवाह जाल परनुमा अपवाह प्रतिरूप का उदाहरण है। इस तरह का प्रतिरूप पत्तियों की नसों के समान होता है।

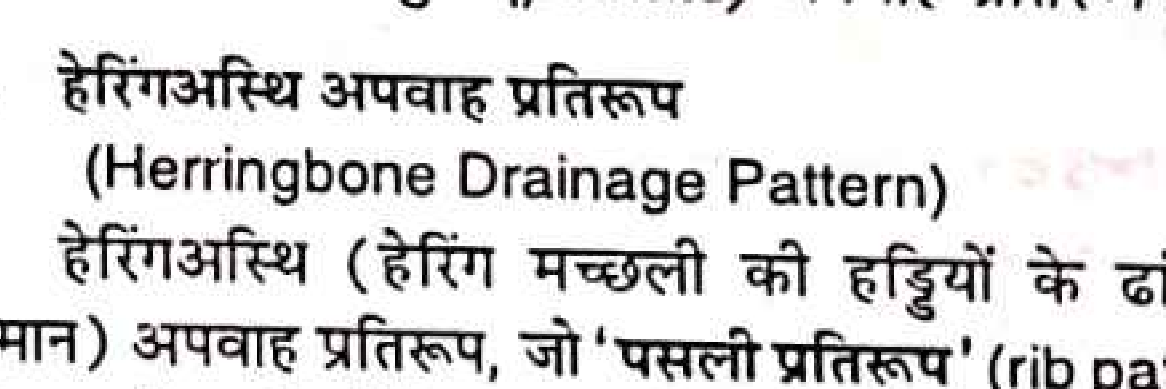

चित्र 17.14 : परनुमा (pinnate) अपवाह प्रतिरूप।

9. हेरिंगअस्थि अपवाह प्रतिरूप (Herringbone Drainage Pattern)

हेरिंगअस्थि (हेरिंग मच्छली की हड्डियों के ढांचे के समान) अपवाह प्रतिरूप, जो **'पसली प्रतिरूप'** (rib pattern, मनुष्य की पसलियों के समान) के नाम से भी जाना जाता है, का विकास तेज ढाल वाली पर्वत श्रेणियों के मध्य विस्तृत (चौड़ी) घाटियों वाले भागों में होता है। अनुदैर्ध्य समानान्तर घाटियों में प्रधान अनुदैर्ध्य अनुवर्ती सरिताओं का पहले विकास होता है। तत्पश्चात् पर्वत श्रेणियों के पार्श्व ढालों से पार्श्विक अनुवर्ती (lateral consequent) नदियाँ निकलकर प्रधान

अनुवर्ती से लगभग समकोण पर मिलती हैं। झेलम नदी के ऊपरी भाग में इस तरह के प्रतिरूप का विकास हुआ है। हिमालय में पश्चिम-पूर्व दिशा में फैली घाटियों में हेरिंगबोन अपवाह प्रतिरूप का आविर्भाव हुआ है।

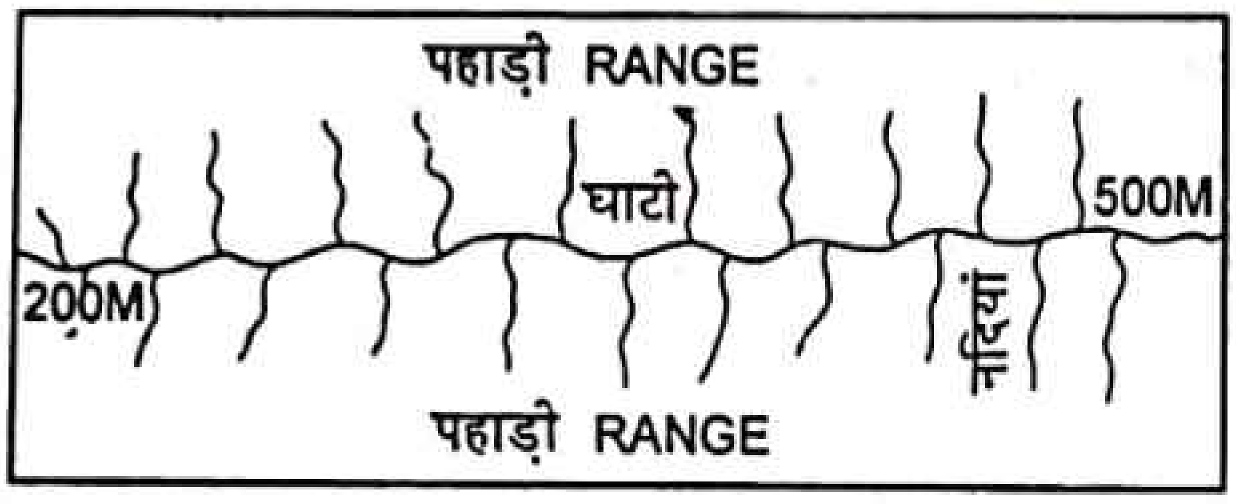

चित्र 17.15 : हेरिंगबोन अपवाह प्रतिरूप।

10. समानानतर अपवाह प्रतिरूप

समानान्तर अपवाह प्रतिरूप के अन्तर्गत अनेक नदियाँ एक दूसरे के समानान्तर प्रवाहित होती हुई प्रादेशिक ढाल का अनुसरण करती हैं, इस तरह का प्रतिरूप समान ढलुआ सागर तटीय मैदान या क्वेस्टा मैदान पर अधिक होता है। भारत के पश्चिमी तटीय मैदान पर इस तरह का कई अपवाह प्रतिरूप विकसित हुआ है। यहाँ पर पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढलानों से नदियाँ निकलकर सीधे मार्ग से प्रवाहित होती हुई अरब सागर में मिल जाती हैं। पूर्वी तटीय भाग पर भी समानान्तर प्रतिरूप का विकास हुआ है (चित्र 17.16)।

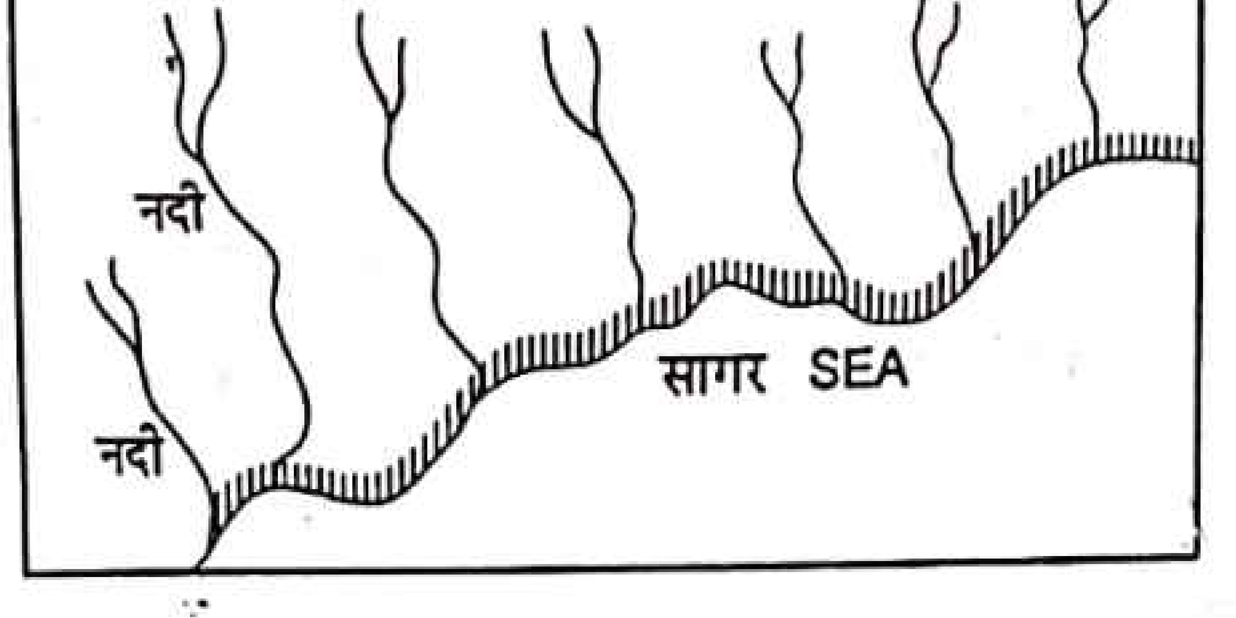

चित्र 17.16 : समानान्तर अपवाह प्रतिरूप।

11. अनिश्चित अपवाह प्रतिरूप
(Indeterminate Drainage Pattern)

जब किसी स्थान विशेष पर नदियाँ एवं उनकी सहायक दर सहायक नदियाँ एक दूसरे से इतनी गुथी होती हैं कि उनके प्रवाह मार्ग या अपवाह प्रतिरूप का निश्चय करना कठिन हो जाता है, तो उस प्रणाली को 'अनिश्चित प्रवाह क्रम या जटिल प्रवाह या मिश्रित अपवाह प्रतिरूप' (complicated or compound drainage) कहा जा सकता है। ऐसा प्राय: उन प्रदेशों में होता है जहाँ पर अनेक छोटी-छोटी झीलें पायी जाती हैं तथा वे जलधाराओं को एक दूसरे से इस प्रकार मिलाये रहती हैं कि किसी निश्चित क्रम, यहाँ तक कि मुख्य जलधारा (master stream) का पता लगाना कठिन हो जाता है। फिनलैण्ड का अपवाह प्रतिरूप एक अनिश्चित अपवाह प्रतिरूप का सुन्दर उदाहरण है।

12. प्रच्छन्न अपवाह प्रतिरूप
(Intermittent Drainage Pattern)

अर्द्धशुष्क मरुस्थलीय भागों में मौसमी जलधाराएं उपर्युक्त अपवाह पतिरूप का रूप धारण करती हैं, क्योंकि जल की प्राप्ति वर्ष भर नहीं हो पाती है। इस प्रवाह क्रम के अन्तर्गत उन जलधाराओं को भी सम्मिलित किया जाता है, जिनका जल थोड़े समय के लिए पथरीली एवं बड़े-बड़े कंकड़ वाली भूमि में छिप जाता है या लुप्त हो जाता है तथा कुछ दूरी तय करने के बाद पुन: स्थल पर प्रकट होता है। हिमालय से निकलनेवाली अधिकांश भारतीय नदियों का जल भाबर प्रदेश में लुप्त हो जाता है तथा तराई प्रदेश में पुन: दृष्टिगोचर होता है। इस अपवाह प्रतिरूप को विशेषात्मक अपवाह प्रतिरूप भी कहा जाता है।

13. भूमिगत अवाह प्रतिरूप

चूने की चट्टानवाले क्षेत्र में सतह का जल रिसकर भूमि के अन्दर चला जाता है, जहाँ पर छोटे पैमाने पर मन्द गति से चलनेवाली जलधाराओं का विकास होता है, जिससे अनेक प्रकार की स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। पूर्ववर्ती युगोस्लाविया के कार्स्ट प्रदेश, दक्षिणी फ्रांस के काँजे डिस्ट्रिक्ट तथा इंग्लैण्ड के सरे प्रदेश में भूमिगत अपवाह प्रतिरूप का विकास हुआ है।

17.4 सरिता अपहरण (River Capture)

सामान्य परिचय

जब सामान्य सरिता या उसकी सहायक दूसरी नदी या उसकी सहायक नदी के जल का अपहरण कर लेती है तो उस अवस्था को सरिता अपहरण (river capture or piracy) कहा जाता है। अपहरण करने वाली नदी को अपहरणकर्त्री सरिता (captor stream) तथा जिसका अपहरण होता है उसे अपहृत सरिता (captured stream) कहा जाता है। यद्यपि सरिता अपहरण की क्रियाएं तरुणावस्था में अधिक होती हैं, तथापि प्रौढ़ावस्था एवं वृद्धावस्था में भी सरिता अपहरण के उदाहरण मिले हैं। सरिता अपहरण की क्रिया में बलवती तथा सक्रिय नदी, निर्बल एवं मन्द गति से प्रवाहित होने वाली नदी के ऊपरी जल प्रवाह को हड़प कर अपने में आत्मसात कर लेती हैं। चित्र 17.17 में सरस्वती नदी का अपहरण दर्शाया गया है।

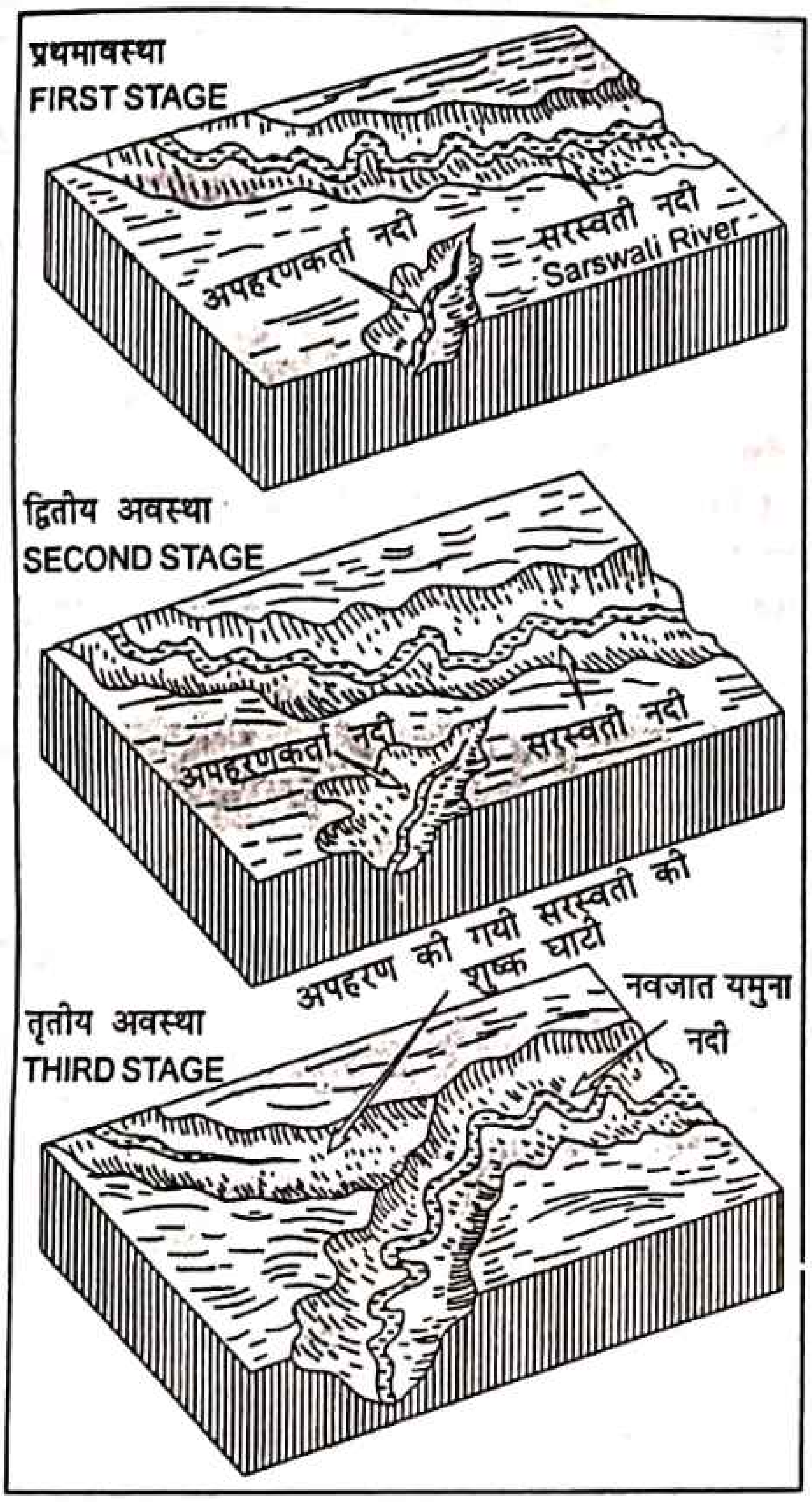

चित्र 17.17 : शीर्ष अपरदन द्वारा सरिता अपहरण (सरस्वती नदी का अपहरण)।

अपहरण के लिए आवश्यक दशाएँ—प्रत्येक दशा में सरिता अपहरण की क्रिया घटित नहीं होती है, वरन् कुछ ऐसी विशेष आवश्यक परिस्थितियाँ होती हैं, जिनके रहने पर ही अपहरण सम्भव हो पाता है। उदाहरण के लिये नदी की गहराई, नदी के प्रवाह मार्ग का ढाल, नदी में जल की मात्रा, संरचना का स्वभाव तथा नदी के अपरदन चक्र की अवस्था। यदि किसी स्थान में दो नदियों में से एक की घाटी दूसरी की अपेक्ष अधिक गहरी है, उसमें जल की मात्रा अधिक है, ढाल भी तीव्र है तथा कमजोर एवं मुलायम चट्टान से प्रवाहित होती है तो निश्चय ही प्रथम नदी की धारा प्रखर होगी तथा उसके शीर्ष अपरदन (headward erosion) की दर अधिक होगी। अत: प्रथम नदी दूसरी नदी से बलवती होगी। फलस्वरूप वह दूसरे के जल का अपहरण कर लेगी। उपर्युक्त विवरण के आधार पर अपहरणकर्त्री नदी के लिए निम्न आवश्यक दशाओं का होना आवश्यक है :

1. नदी का ढाल तीव्र हो अर्थात् ढाल प्रवणता (slope gradient) अधिक हो,

2. घाटी की चौड़ाई कम हो, अन्यथा जल दूर तक फैल जायेगा,

3. जल की मात्रा अधिक हो ताकि तीव्र ढाल के साथ प्रवाह धारा तीव्र हो सके,

4. नदी कमजोर शैल से होकर बह रही हो,

5. नदी की स्थिति अन्य की अपेक्षा नीची होनी चाहिए, तथा

6. नदी की धारा में बोझ (load) कम होना चाहिए ताकि अपरदन अबाध गति से चल सके।

अपहरण के रूप (Forms of Capture)

इतना तो निश्चित है कि अपरदन द्वारा नदियों का अपहरण होता है, परन्तु यह अपरदन सदैव एक ही रूप में नहीं हुआ करता है। नदियों द्वारा प्राय: शीर्ष अपरदन, निम्नवर्ती अपरदन (downward cutting or valley deepening) तथा क्षैतिज अपरदन (lateral erosion or valley widening) अधिक प्रमुख हैं। इनमें से प्रथम तथा अन्तिम अपरदन के रूप अपहरण में अधिक सहायक होते हैं।

यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि शीर्ष अपरदन द्वारा अपहरण नदी की तरुणावस्था में होता है, जब कि क्षैतिज अपरदन द्वारा अपहरण प्रौढ़ावस्था में अधिक होता है। कभी-कभी नदियों के विसर्प (मियाण्डर) के मिल जाने पर एक सरिता का जल दूसरी में चला जाता है। स्पष्ट है कि इस तरह का अपहरण नदी की जीर्णावस्था में हो जाता है। यदि किसी स्थलखण्ड के ऊपरी भाग पर कोई सरिता प्रवाहित होती है तथा दूसरी निचले ढाल पर तो निचले ढाल वाली सरिता ऊपर स्थित नदी का अपहरण कर लेती है। यहाँ अब हम सरिता अपहरण के तीन रूपों का अलग-अलग उल्लेख करेंगे।

(1) शीर्ष अपरदन द्वारा नदी अपहरण

अधिकांश सरिता अपहरण नदी द्वारा शीर्ष अपरदन के कारण ही हुआ करते हैं। प्रत्येक नदी तथा उसकी सहायक शाखाएँ अपने शीर्ष की ओर अपरदन करती हैं। इस तरह जलविभाजक सदैव पीछे हटता जाता है। इसे 'जलविभाजक का सरकना या खिसकना' (shifting of divide) कहते हैं। जलविभाजक की ऊंचाई भिन्न-भिन्न हुआ करती है। यह उस स्थान के उच्चावच्च पर आधारित होता है। यदि हिमालय पर्वत अपनी नदियों के लिये अत्यधिक उच्च जल विभाजक

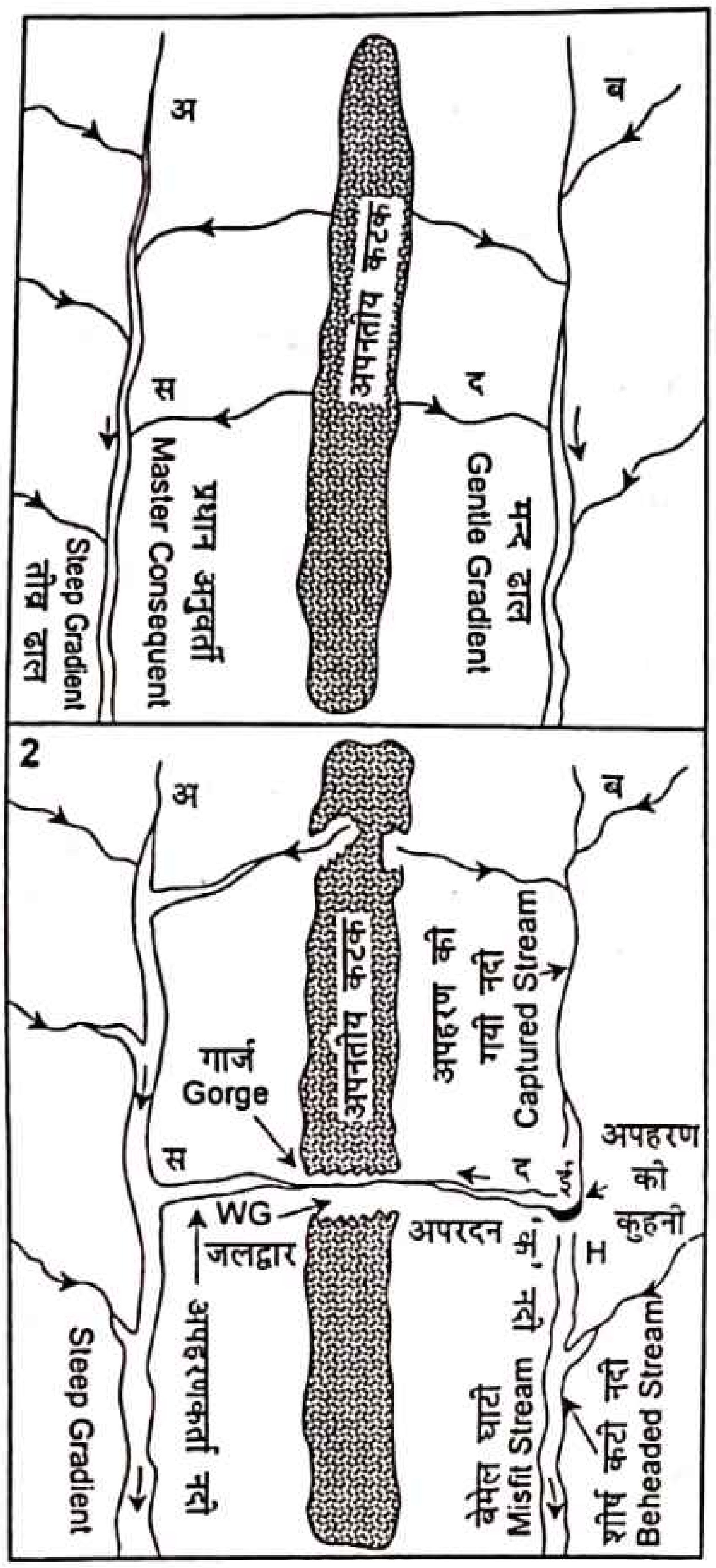

चित्र 17.18 : सरिता अपहरण की अवस्थाएँ।

W.G. = Water gap, ई =wind gap.

(चोटी तल) का कार्य करता है तो फिनलैंड में जलविभाजक अत्यन्त कम ऊंचाई वाले होते हैं। जलविभाजक के दोनों ढाल समान स्वभाव वाले नहीं होते हैं। यदि एक ढाल दूसरे की अपेक्षा अधिक तेज हो तथा वहाँ की चट्टानें कोमल हों, वर्षा अधिक होती हो और नदी का मार्ग (उद्गम से मुहाने तक की दूरी) छोटा हो तो इस ढाल पर निकलने वाली नदी का तल दूसरे ढाल वाली नदी की अपेक्षा नीचा होता है। परिणामस्वरूप प्रथम नदी की कटाव शक्ति दूसरी की अपेक्षा अधिक होगी। निम्न तल वाली नदी शीर्ष की ओर अर्थात् जलविभाजक की ओर अधिक कटाव करती है जिससे जलविभाजक पीछे की ओर अर्थात् मन्द ढाल वाली नदी की दिशा की ओर सरकने या खिसकने लगता है। एक ऐसी स्थिति आती है, जब प्रथम नदी का उद्गम स्थान दूसरी नदी के शीर्ष से मिल जाता है। चूँकि प्रथम नदी का तल द्वितीय की अपेक्षा नीचा होता है अत: द्वितीय नदी का प्रथम नदी द्वारा अपहरण हो जाता है।

शीर्ष अपरदन द्वारा सरिता अपहरण को एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। किसी भी नवीन उत्थित या झुके हुए स्थलखण्ड के ढाल पर अनुवर्ती नदियों का विकास होता है। इसमें एक सबसे बड़ी तथा सर्वाधिक क्रियाशील सरिता होती है जिसे 'प्रधान अनुवर्ती' कहा जाता है।

चित्र 17.18 में दो अनुवर्ती नदियों **अ** तथा **ब** को प्रदर्शित किया गया है। इसमें **अ** नदी सबसे अधिक बड़ी तथा **ब** की अपेक्षा खड़े ढाल से प्रवाहित होती है। अत: निम्न कटाव द्वारा **अ** नदी ने अपनी घाटी को इतना अधिक गहरा कर लिया है कि वह **ब** नदी की घाटी की तल से नीची है। इस प्रकार **अ** नदी अधिक क्रियाशील और **ब** नदी कम क्रियाशील है। **अ** नदी प्रधान अनुवर्ती नदी है तथा इसके प्रवाह की गति अधिक तेज है। जलविभाजक से निकलकर परवर्ती नदियाँ (subsequent streams) दोनों अनुवर्ती नदियों से समकोण पर मिलती हैं। **स** नदी **अ** की सहायक तथा **द** नदी **ब** की सहायक है। ये दोनों नदियाँ एक ही जलविभाजक से निकलकर विपरीत दिशाओं में **अ** तथा **ब** से मिलती हैं। चूँकि **अ** नदी की घाटी **ब** की अपेक्षा गहरी है अत: **'स'** की घाटी भी **'द'** की अपेक्षा गहरी होगी। फलस्वरूप **'स'** द्वारा शीर्ष अपरदन **'द'** की अपेक्षा अधिक होगा। अत: **'स'** का ढाल भी **'द'** की अपेक्षा अधिक होगा। **'स'** नदी निरन्तर शीर्ष कटाव करती जाती है जिससे जलविभाजक कट कर पीछे की ओर खिसकता जाता है। दूसरे ढाल पर **'द'** नदी भी शीर्ष अपरदन करती है परन्तु उसकी कटाव दर कम होती है। एक समय ऐसा आता है जब कि **'स'** नदी जलविभाजक को काट करके **'द'** के शीर्ष से मिल जाती है तथा पुन: कटाव द्वारा **'द'** के शीर्ष का अपहरण कर लेती हैं। चूँकि **'द'** की घाटी **'स'** की अपेक्षा ऊँची है, अत: **'द'** का जल **'स'** से होकर बहने लगता है। **द** नदी पहले **ब** नदी से **ई** स्थान पर मिलती थी। अब **ब** नदी का ऊपरी भाग भी **'द'** तथा **'स'** से होकर **अ** नदी में मिल जाता है। इस प्रकार **ब, ई, द, स** एक जलधारा के रूप में **अ** नदी में मिल जाती है। यहाँ पर अपहरण की दो अवस्थाएं हुई हैं। प्रथम अवस्था में **अ** की सहायक **स** ने **ब** की सहायक **द** का अपहरण किया है तथा दूसरी अवस्था में **स द** ने मिलकर **ब** नदी के **ब ई** भाग का अपहरण कर लिया है।

द्वितीय अवस्था में चित्र 17.18 (2) द्वारा उपर्युक्त विवरण स्पष्ट हो जाता है। **ब** नदी का **ब ई** भाग अपहृत सरिता का उदाहरण है तथा **'क'** नदी को **रुण्डित नदी या शीर्षकटी नदी** (beheaded river) कहा जाता है। जहाँ पर नदी का हरण होता है, वहाँ पर अपहृत नदी समकोण पर मुड़कर हरणकर्त्री नदी के साथ मिल जाती है। इस मोड़ या घुमाव को **अपहरण की कुहनी** कहा जाता है। अपहरण की कुहनी तथा रुण्डित नदी के

ऊपरी भाग के बीच में शुष्क स्थान रह जाता है। इस स्थान को **वात दर्रा** (wind gap—विण्ड गैप) या वायु अन्तराल कहा जाता है। रुण्डित नदी में ऊपरी भाग के अपहरण के कारण पहले की अपेक्षा अब जल की मात्रा कम हो जाती है। अत: नदी अपनी पुरानी घाटी में समायोजित नहीं हो पाती है। वरन् एक नवीन पतली घाटी का निर्माण करती है। अत: यह घाटी पहली घाटी में व्यवस्थित नहीं हो पाती है। इस कारण रुण्डित नदी की घाटी को **बेमेल घाटी** (misfit valley) कहा जाता है। यदि रुण्डित नदी में जल स्रोत पहले अपहृत नदी से ही होता था तो अपहरण के बाद रुण्डित नदी सूख जाती है। परन्तु यदि उसकी सहायक नदियों से कुछ जल की प्राप्ति हो जाती है तो रुण्डित नदी अपना प्रवाह कायम रखती है। अपहृत नदी के लिये इस प्रकार, दो विशेषताएँ हैं, जिनसे उन्हें पहचाना जा सकता है—1. हरण की कुहनी तथा 2. कुहनी के नीचे वात दर्रा। इसके विपरीत **अ** नदी में अपहरण के कारण जल की मात्रा बढ़ जाती है तथा वह गहरा कटाव करके तंग घाटियों से प्रवाहित होने लगती है। अपहरण के पहले **द** नदी का जल दूसरी दिशा में बहता था परन्तु अपहरण के बाद दूसरी दिशा में बहने लगता है। अर्थात् हरणकर्त्री नदी की ओर बहता है। इस तरह से उल्टे प्रवाह मार्ग वाली जलधाराओं को प्रतिलोम सरिता कहा जाता है। इस तरह की सरिता अपहरण की अनेक घटनाएं हिमालय प्रदेश में हुई हैं। कोसी नदी की सहायक अरुन नदी ने सांगपो नदी की सहायक फुंग चो नदी का अपहरण किया है। देहरादून के पास गंगा की सहायक सांग नदी तथा यमुना की सहायक असान नदी के उद्गम के मध्य कुछ मीटर की दूरी रह गयी है। निकट भविष्य में अपहरण की पूर्ण सम्भावना है।

(2) क्षैतिज अपरदन द्वारा अपहरण

शीर्ष अपरदन द्वारा सरिता अपहरण मुख्य रूप से नदी की तरुणावस्था में होता है। प्रौढ़ावस्था में नदी की घाटी का चौड़ा होना, गहरा होने की अपेक्षा अधिक सक्रिय हो जाता है अर्थात् नदी द्वारा क्षैतिज अपरदन (lateral erosion) निम्न कटाव की अपेक्षा अधिक होता है। यदि तटीय मैदान में परतदार संरचना वाले भाग में दो अनुवर्ती नदियाँ प्रवाहित होती हैं और एक नदी प्रमुख होती है, जिसमें जल की मात्रा तथा उसका ढाल दूसरे की अपेक्षा अधिक होता है तो प्रमुख नदी द्वारा क्षैतिज कटाव द्वारा उसकी घाटी का निरन्तर विस्तार होता जाता है। दूसरी नदी भी क्षैतिज अपरदन द्वारा अपनी घाटी को चौड़ा करती जाती है। एक समय ऐसा आता है जबकि दोनों नदियों की घाटियाँ एक दूसरे से मिल जाती हैं। परिणामस्वरूप प्रमुख नदी जो कि अधिक क्रियाशील और बलवती होती है, दूसरी नदी का अपहरण कर लेती है। इस तरह का अपहरण मुख्य रूप से समतल मैदानी भागों में होता है, जहाँ पर नदियाँ बल खाती हुई प्रवाहित होती हैं।

(3) नदी विसर्प के प्रतिच्छेदन द्वारा अपहरण

क्षैतिज अपरदन द्वारा अपहरण तथा नदियों के विसर्पों के प्रतिच्छेदन के कारण अपहरण प्राय: एक ही तरह होते हैं क्योंकि क्षैतिज अपरदन दोनों में सक्रिय रहता है। नदी अपने निचले भाग में जीर्णावस्था में समतलप्राय भूमि से होकर प्रवाहित होती है, जिस कारण उसमें विसर्प (meanders) का सृजन होता है। इस प्रकार नदियाँ मैदानी भागों में विसर्पों में बल खाती हुई चलती हैं। जैसे-जैसे ये जीर्णावस्था की ओर अग्रसर होती हैं, वैसे-वैसे विसर्पों का आकार बढ़ता जाता है। जब दो नदियों के विसर्प मिल जाते हैं तो उसे 'प्रतिच्छेदन' (intersection) कहा जाता है। इस प्रतिच्छेदन के कारण अधिक क्रियाशील और वेगवती नदी दूसरी के जल का अपहरण कर लेती है। बाढ़ के समय नदी की चौड़ाई बढ़ जाती है तथा एक समय ऐसा आता है कि दो नदियों के बाढ़ के मैदान मिल जाते हैं तथा बड़ी नदी छोटी नदी का अपहरण कर लेती है। इस तरह के अपहरण का सर्वप्रथम उल्लेख ईसाया बोमन ने किया था। इसका उदाहरण भी बोमन ने डिट्रायट के पास हुए सरिता अपहरण से दिया है।

उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जनपद में देवघाट के पास बेलन नदी विसर्पण की क्रिया द्वारा अपनी सहायक सेवती नदी के निचले मार्ग का अपहरण करके उसी के मार्ग से प्रवाहित होती है। परिणामस्वरूप बेलन-सेवती का संगम अब पुराने संगम से लगभग 6 किमी० ऊपरी मार्ग की ओर हो गया है तथा बेलन नदी की पुरानी घाटी अब बेमेल घाटी बन गयी है। अवसादीकरण के फलस्वरूप अब यह पतली जलधारा के रूप में रह गयी है।

17.5 जुड़वा-नदी तंत्र (Twin-River System)

भारतीय मूल के ब्राजील की रियो डि जनेरो स्थित राष्ट्रीय वेधशाला (observatory) के वैज्ञानिक **वालिया मन्नाथल हज्मा** ने सन् 2011 में ब्राजील में धरातलीय सतह से 4 किमी० की गहराई पर 6000 किमी० की लम्बाई में पश्चिम से पूर्व की ओर प्रवाहित होने वाली भूमिगत सरिता का पता लगाया है। इसी वैज्ञानिक के नाम पर इसका नामकरण **हज्मा** किया गया है। हज्मा की प्रवाह दिशा धरातलीय सतह पर प्रवाहित अमेजन नदी के अनुरूप (पश्चिम से पूर्व) ही है। यह भूमिगत सरिता एण्डीज पर्वत की पदस्थली से प्रारम्भ होकर पूर्व दिशा में अमेजन के समान ही अटलाण्टिक महासागर में मिल जाती है। इस तरह पृथ्वी की क्रस्ट के ऊपर तथा नीचे दो तलों पर एक ही दिशा में प्रवाहित होने वाली सरिताओं के प्रतिरूप को **जुड़वा नदी तंत्र** नाम दिया गया है। अमेजन की चौड़ाई 1 किमी० से 10 किमी० तक है जबकि **हज्मा** की चौड़ाई 200 से 400 किमी० है। अमेजन के जल का प्रवाह वेग 5 मीटर प्रति सेकेण्ड है जबकि **हज्मा** की प्रवाह गति एक मिमी० प्रति सेकेण्ड से भी कम है। हज्मा का निर्माण ऊपर स्थित प्रवेश्य (permeable) अवसादी शैलों से जल के रिस कर नीचे जाने से हुआ है। धरातलीय सतह की प० से पू० की ओर ढाल प्रवणता (gradient) ने **हज्मा** की प्रवाह दिशा को निर्धारित किया है।

18

बहते हुए जल (नदी) के कार्य तथा उत्पन्न स्थलाकृति

(The Work of Running Water (Stream) and Resultant Topography)

18.1 सरिता : सामान्य परिचय

भूतल पर समतल स्थापक बलों में बहते हुए जल (नदी) का कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। वर्षा का जो जल धरातल पर किसी न किसी रूप में बहने लगता है, उसे बाही जल (runoff) कहते हैं। जब बाही जल एक निश्चित रूप में ऊँचाई से निचले ढाल पर गुरुत्वाकर्षण के कारण प्रवाहित होता है तो उसे नदी या 'सरिता' कहते हैं। अत: नदी किसी भी ढाल पर एक निश्चित मार्ग में प्रवाहित होने वाली जलराशि होती है, जिसमें जलधारा के साथ चट्टान चूर्ण भी बहते हुए चलते हैं। नदियाँ मुख्य रूप से चार प्रकार की होती हैं—स्थायी नदी, अस्थायी नदी, आन्तरायिक नदी (intermittent river) तथा अल्पकालिक नदी (ephemeral river) । नदियाँ ऊँचे ढाल से निचले ढाल की ओर बहती हैं, तथा यह ढाल क्रमश: उद्गम से मुहाने की ओर घटता जाता है। प्रत्येक नदी का ढाल भिन्न-भिन्न हुआ करता है। नदियाँ भूतल पर समतल स्थापना का कार्य तीन रूपों में करती हैं, जिसे **त्रिकल कार्य** या **त्रिपथ कार्य** (three-phase work or three-way-work) कहा जा सकता है। ये तीन कार्य हैं—अपरदन, परिवहन तथा निक्षेप।

18.2 अपरदन का कार्य (Erosion)

नदी का सर्वप्रमुख कार्य भूपटल का अपरदन करना है। प्रमुख विद्वान सैलिसबरी ने बताया है कि—"नदी के प्रमुख कार्यों में से एक कार्य स्थल का सागर तक ले जाया जाना है। "नदियाँ सदैव अपने मार्ग की समीपी चट्टानों को घिस कर तथा काटकर अपने साथ परिवहन करने में प्रयत्नशील रहती हैं। नदी द्वारा अपरदन कार्य में अपक्षय का भी पर्याप्त योग रहता है। अपक्षय की विभिन्न क्रियाओं द्वारा समीपी चट्टान विघटित तथा वियोजित होकर कमजोर हो जाती है तथा जल के साधारण कार्य द्वारा अलग होकर जल के साथ हो लेती है। नदियाँ अपरदन का कार्य दो रूपों में करती हैं। एक तो नदी का जल घाटी की तली तथा किनारे को काटता है और दूसरे नदी के साथ सम्मिलित पदार्थ भी अपरदन का कार्य करते हैं। फलस्वरूप अपरदन के लिए नदी में बोझ (load) का होना आवश्यक है। नदी के बोझ (भार) में कंकड़, पत्थर, रेत आदि पदार्थ सम्मिलित किये जाते हैं।

18.3 नदी अपरदन का सिद्धान्त

नदी का अपरदन कार्य नदी के ढाल तथा वेग एवं उसमें स्थित नदी के बोझ (अवसाद भार) पर आधारित होता है। नदी के अवसाद भार (sediment load) के अन्तर्गत ग्रैवेल, रेत, सिल्ट तथा क्ले को सम्मिलित किया जाता है। ग्रैवेल के अन्तर्गत बोल्डर (256 mm), कोबुल (64-256mm), पेबुल (4-64 mm) तथा ग्रैनूल (2-4 mm) आते हैं। अपरदन के लिए यह आवश्यक है कि नदी के साथ कंकड़-पत्थर आदि वर्तमान हों। नदी द्वारा अपरदन न केवल बोझ की मात्रा द्वारा निर्धारित होता है, वरन् उसके आकार (size and calibre of load) द्वारा भी निर्धारित होता है। उदाहरण के लिए यदि बोझ के पदार्थ महीन कण वाले हैं तथा आकार में छोटे हैं तो वे जल के साथ लटक कर (in suspension) चलते हैं और अपरदन कम करते हैं। इसी तरह यदि पदार्थ इतने महीन होते हैं कि वे घुलकर जल के साथ चलते हैं तो अपरदन नगण्य होता है। इसके विपरीत यदि बोझ के पदार्थ इतने बड़े होते हैं कि वे जल के साथ लुढ़ककर या कूदते हुए चलते हैं तो उनसे अपरदन सर्वाधिक होता है। इसी तरह बोझ की मात्रा का भी अपरदन पर पर्याप्त प्रभाव होता है। प्राय: यह भी कहा जाता है कि नदी में बोझ की मात्रा जितनी अधिक होगी, उसके द्वारा अपरदन भी उतना ही अधिक होगा, परन्तु यह तथ्य सर्वत्र सत्य नहीं होता है। वास्तव में प्रत्येक नदी में अधिकतम भार ग्रहण करने तथा उसे ढोने की

एक निश्चित सीमा होती है। इस सीमा से अधिक भार होने पर नदी उसका परिवहन करने में असमर्थ होती है। यदि नदी अपनी सामर्थ्य के अनुसार भार अर्थात् अधिकतम भार का वहन करती है तो अपरदन का कार्य नगण्य होता है क्योंकि अधिक भार के कारण नदी के वेग में शिथिलता आ जाती है। इस आधार पर अपरदन तथा नदी भार के बीच निम्न सम्बन्धों का प्रतिपादन किया जा सकता है—

(i) नदी में अवसाद भार या बोझ के अभाव में अपरदन कम होता है।

(ii) अधिकतम अवसाद भार या बोझ पर भी अपरदन कम होता है।

(iii) इन दोनों अवसथाओं के बीच की दशा में अपरदन सर्वाधिक होता है। इस अवस्था के पूर्व अपरदन बढ़ता है तथा इसके पश्चात् अपरदन घटता है। इसे 'अपरदन का सामान्य सिद्धान्त' कहते हैं।

उपर्युक्त विवरण से ही अपरदन की समस्या समाप्त नहीं हो जाती है। यहाँ पर केवल नदी के बोझ का ही विचार किया गया है। नदी के अपरदन को प्रभावित करने वाले अन्य कारक भी हैं—नदी का वेग (velocity) तथा जलमार्ग की ढाल प्रवणता (channel gradient)। यदि नदी का बोझ यथेष्ट है, परन्तु नदी का वेग कम है तो अपरदन अधिक नहीं हो पायेगा। तीव्र वेग से प्रवाहित होने वाली नदी की अपरदन शक्ति निश्चिय ही अधिक होती है। नदी का वेग दो बातों पर आधारित होता है—नदी के मार्ग का ढाल तथा नदी में जल का आयतन। जब नदी का ढाल तथा आयतन अधिक होता है तो निश्चित ही नदी वेग अधिक होता है। यदि तीव्र वेग के साथ यथेष्ट बोझ भी सुलभ है तो नदी द्वारा अपरदन सर्वाधिक होता है। साधारण रूप में नदी के वेग तथा अपरदन शक्ति में वर्ग का अनुपात होता है। इसे निम्न गुर द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

अपरदन शक्ति $\propto$ (नदी का वेग)^2

अर्थात् यदि नदी का वेग दोगुना कर दिया जाय तो उसकी अपरदन शक्ति चौगुनी हो जायेगी। यदि नदी वेग चौगुना कर दिया जाय तो उसकी अपरदन शक्ति 16 गुनी हो जायेगी। यह सम्बन्ध उस समय होता है, जबकि नदी का बोझ समान रहे क्योंकि नदी बोझ में परिवर्तन के साथ नदी वेग तथा अपरदन दोनों में परिवर्तन हो जाता है। नदी के अपरदन कार्य में अपरदित होने वाले स्थलखण्ड की संरचना का भी पर्याप्त प्रभाव होता है। यदि स्थलखण्ड की चट्टान अत्यधिक संगठित, संधियों से विहीन तथा अभेद्य एवं अप्रवेश्य होती है तो अपरदन सरलता से नहीं हो पाता है। इसके विपरीत असंगठित, मुलायम, संधियुक्त, प्रवेश्य तथा भेद्य चट्टान का अपरदन सरलता से तथा सर्वाधिक मात्रा में होता है।

18.4 नदी के अपरदन के रूप

नदी द्वारा अपरदन कार्य मुख्य रूप से दो तरह से होता है—रासायनिक अपरदन तथा यांत्रिक अपरदन। रसायनिक अपरदन का कार्य सामान्य रूप से घोलीकरण द्वारा होता है तथा यांत्रिक अपरदन, अपघर्षण (corrasion or abrasion), जलगति क्रिया (hydraulic action) तथा सन्निधर्षण (attrition) द्वारा सम्पन्न होता है। इनमें से यांत्रिक अपरदन सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है।

(i) घोलीकरण या संक्षारण (solution or corrosion)—नदी के बहते हुए जल के सम्पर्क में आने वाली चट्टानों के घुलनशील पदार्थ घुलकर शैल से अलग हो जाते हैं तथा जल के साथ मिल जाते हैं। कार्बोनेशन की क्रिया द्वारा चट्टान का अधिकांश घुलनशील तत्व उनसे अलग होकर नदी में बहने लगता है। भूमिगत जल द्वारा भी चट्टान से घुलनशील पदार्थ अलग हो जाते हैं तथा जलस्रोतों द्वारा ऊपर आकर सरिता से मिल जाते हैं। घोलन की क्रिया द्वारा प्राप्त पदार्थों की मात्रा निश्चय ही अधिक होती है। मरे ने गणना के आधार पर बताया है कि नदी के प्रतयेक घनमील जल में लगभग 7,62,587 टन खनिज पदार्थ होते हैं तथा इसका आधा भाग कैलशियम कार्बोनेट होता है। यदि यह गणना सत्य मान ली जाय तो भूपटल की समस्त नदियों द्वारा सागर में लाये गये घुलनशील पदार्थों की मात्रा का अनुमान लगाया जा सकता है। यह विश्वास किया जाता है कि प्राय: प्रतिवर्ष समस्त भूपटल की नदियों द्वारा 6500 घनमील जल सागर तक ले जाया जाता है। उपर्युक्त गणना के आधर पर प्रतिवर्ष लगभग 5,000,000,000 टन खनिज पदार्थ घोलीकरण की क्रिया से प्राप्त होता है तथा घोल के रूप में यह सागर तक पहुँचता है।

(ii) अपघर्षण (corrasion or abrasion)—नदी के साथ कंकड़, पत्थर आदि भी नदी के भार के रूप में चलते हैं। इन पदार्थों के सम्पर्क में आने वाली चट्टानों के घर्षण तथा टूट-फूट की क्रिया को 'अपघर्षण की क्रिया' कहते हैं। अपघर्षण की मात्रा तथा रूप, नदी बोझ के पदार्थों के गुणों पर आधारित होता है। इनमें से गोलाश्म (boulder), कंकड़, पत्थर के टुकड़े सर्वाधिक महत्वपूर्ण होते हैं। इन पदार्थों को 'छेदन यंत्र' (drilling tools—वर्मा मशीन की तरह छेद करने वाले) कहते हैं जो कि नदी की घाटी में लम्बवत् तथा क्षैतिज कटाव करते हैं। इस तरह की क्रिया को 'अपघर्षण' कहते हैं। उपर्युक्त शैलकण (टुकड़ा कहना अधिक उपयुक्त होगा) प्रथम रूप में जल के साथ मिलकर नदी की घाटी के दोनों पार्श्वों को कुरेदकर तथा रगड़-रगड़ कर घर्षित करते हैं। इस क्रिया को 'क्षैतिज अपघर्षण' कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि क्षैतिज अपघर्षण से नदी के किनारे कट कर चौड़े होते हैं। अत: अपरदन का यह रूप नदी की घाटी को चौड़ा करता है। यह क्रिया यद्यपि नदी के प्रत्येक भाग में सक्रिय रहती है परन्तु प्रौढ़ावस्था तथा वृद्धावस्था

में यह अपरदन सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। यहाँ पर इसे पार्श्ववर्ती या क्षैतिज अपरदन कहते हैं। दूसरे रूप में चट्टानों के टुकड़े नदी की तली में घर्षण द्वारा काट-छाँट करके उसे गहरा करते हैं। इस क्रिया को लम्बवत् अपघर्षण (vertical abrasion) कहते हैं। नदी के तली में भँवर के साथ पत्थर के नुकीले टुकड़े बढ़ई की बर्मा मशीन के समान घुमावदार छिद्र करते रहते हैं, जिससे संकरे परन्तु गहरे गर्त का निर्माण होता है। इसे **जलगर्तिका** (pot holes) कहते हैं। जल गर्तिका लम्बवत् अपघर्षण द्वारा निर्मित एक मुख्य स्थलाकृति है। अपघर्षण की इस क्रिया द्वारा नदी की घाटी गहरी होती है। लम्बवत् अपघर्षण नदी की तरुणावस्था में सबसे अधिक होता है।

(iii) सन्निघर्षण (attrition)—ऊपर यह बताया गया है कि नदी के साथ कंकड़-पत्थर, आदि नदी के अवसाद भार के रूप में चलते हैं। इनका कार्य दो रूपों में होता है। प्रथम रूप में तो ये नदी की घाटी के किनारे तथा तली का घर्षण करते हैं। इसका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। दूसरे रूप में ये टुकड़े आपस में भी टक्कर खाते हैं, जिससे उनमें टूट-फूट होती रहती है। इस तरह टुकड़ों की आपस में रगड़ तथा घर्षण द्वारा टूटने की क्रिया को 'सन्निघर्षण' कहते हैं। इस क्रिया द्वारा टुकड़े टूटकर छोटे तथा महीन होते रहते हैं। मुख्य रूप से टुकड़ों का आकार गोल हो जाता है। सन्निघर्षण द्वारा कंकड़ अत्यधिक महीन तथा बारीक हो जाते हैं, जिनका परिवहन आसानी से हो जाता है।

(iv) जलगति क्रिया (hydraulic action)—इस क्रिया द्वारा अपरदन में केवल जल का ही सहयोग होता है, अन्य साधनों का नहीं। बिना कंकड़-पत्थर आदि की सहायता के तथा बिना रासायनिक क्रिया के जल यांत्रिक ढंग से मार्ग में पड़ने वाली चट्टानों के कणों को धक्के द्वारा ढीला तथा कमजोर बनाकर तथा उन्हें चट्टान से अलग करके अपने साथ लेकर बहता है। इस क्रिया में जल का वेग अधिक महत्वपूर्ण होता है।

उपर्युक्त नदी अपरदन के चार प्रकार प्राय: एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। उदाहरण के लिए हाइड्रेशन की क्रिया से चट्टानों के कण कमजोर हो जाते हैं। फलस्वरूप अपधर्षण द्वारा उनका टूटना अधिक सरल हो जाता है। नदी के अपरदन में नदी की घाटी के किनारे का ढाल भी अधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यदि ढाल तीव्र होता है तो गुरुत्व के कारण भूमि स्खलन (landsliding), अपवात (slumping), भूमि सर्पण (soil and land creep) आदि द्वारा घाटी के कगार सरक कर नीचे आते रहते हैं। इस तरह अपक्षय (weathering) तथा द्रव्यमान स्थानान्तरण (mass translocation) भी अपरदन में सहायक होते हैं।

नदी के विभिन्न भागों के अनुसार अपरदन को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—(i) पार्श्व अपरदन, (ii) लम्बवत् अपरदन, (iii) शीर्ष अपरदन तथा (iv) मुख अपरदन।

18.5 आधर तल (Base Level)

प्रत्येक नदी के लम्बवत् (निम्नवर्ती) अपरदन की एक अन्तिम सीमा होती है, जिसके बाद पुन: अपरदन सम्भव नहीं हो सकता। इस सीमा को नदी का आधार तल या निम्नतमस्तर (base level) कहते हैं। आधार तल, वासतव में नदी के लम्बवत् अपरदन की अन्तिम सीमा होता है। पावेल ने 1875 ई० में आधार तल पर अपनी संकल्पना का पतिपादन किया था, जिसकी आगे चलकर कटु आलोचना की गयी। पावेल के अनुसार सागर तल मुख्य आधार तल (grand base level) को प्रदर्शित करता है, जिसके नीचे शुष्क स्थलखण्ड का अपरदन नहीं हो सकता है, परन्तु अस्थायी तथा स्थानीय उद्देश्यों के लिए अपरदन के और भी आधार तल हो सकते हैं, जो कि प्रमुख नदी के तल के बराबर होते हैं। आधार तल वास्तव में एक काल्पनिक सतह है जो कि प्रमुख सरिता के निचले भाग की ओर धीरे-धीरे झुकता जाता है। आधार तल तीन तरह के होते हैं—

1. सामान्य या चरम या स्थायी आधार तल (general or ultimate or permanent base level)—अधिकांश नदियाँ प्राय: सागर में रिक्त होती हैं। अत: सागरतल जल अपरदन की अन्तिम सीमा निर्धारित करता है। इसका तात्पर्य सागर तल के बराबर धरातल के नीचे एक सीधी रेखा से कदापि नहीं होता है। आधार तल एक निष्कोण वक्र (smooth curve) के रूप में होता है, जिसका ढाल नदी के ऊपरी भाग की ओर अवतल होता है। वास्तव में आधार तल एक ऐसा वक्र होता है, जिसका ढाल नियमित रूप से सागर की ओर धीरे-धीरे गिरता जाता है। यही सीमा नदियों द्वारा निम्न कटाव (down cutting) की अन्तिम सीमा होती है। इसी तरह आधार तल केवल सागर के समीपी भाग में तल के बराबर होता है परन्तु आनतरिक भाग में जाने पर आधाार तल सागर तल से ऊपर उठ जाता है। अत: आधार तल एक ऐसा वक्र होता है, जिस पर सागर तल एक स्पर्श रेखा के समान होता है। प्रत्येक सरिता का आधार तल सदैव एक ही नहीं होता है। सागर तल के उठने तथा नीचा होने के साथ ही साथ यह आधार तल भी बदलता रहता है। यदि कोई नदी सागर तल के बराबर (आधार तल) अपनी घाटी को गहरा कर लेती है तो यह कहा जाता है कि नदी "आधार तल को प्राप्त हो गयी है।"

2. अस्थायी आधार तल (temporary base level)—अस्थायी आधार तल नदी के मार्ग में कई कारणों द्वारा होता है। उदाहरण के लिए यदि कई नदियों का जल एक झील में गिरता है तथा पुन: झील का जल एक निकास के रूप में एक नदी का रूप धारण करता है तो झील का तल ऊपरी नदियों के लिए आधार तल का कार्य करता है। अर्थात् ऊपरी नदियों के निम्न

कटाव की अन्तिम सीमा झील का तल ही होता है। कुछ समय बाद जब नदियाँ झील को या तो भरकर या अपने निम्न कटाव द्वारा बहा ले जाती हैं तो झील का आधार तल के रूप में नियंत्रण समापत हो जाता है। फलस्वरूप झील द्वारा उत्पन्न आधार तल लुप्त हो जाता है। चूँकि यह थोड़े समय तक ही रहता है, अतः इसे 'अस्थायी आधार तल' कहते हैं। नदी के मार्ग में इस प्रकार के कई अस्थायी आधार तल हो सकते हैं तथा अन्ततः नदी इन सभी अस्थायी आधार तलों को समाप्त करके सागर तल के अनुसार एक स्थायी आधार तल का विकास कर लेती है। अस्थायी आधार तल उस समय भी हो जाता है, जबकि नदी के मार्ग में कठोर तथा मुलायम चट्टानों के स्तर पाये जाते हैं। मुलायम चट्टान का स्तर शीघ्र कट जाता है, परन्तु कठोर शैल का स्तर प्रतिरोधी होने के कारण निकला रहता है, जिसके नीचे कटाव नहीं हो पाता है। इस तरह प्रतिरोधी शैल का निकला हुआ स्तर अपने ऊपरी भाग में नदी के लिए आधार तल का निर्माण करता है, जिसके नीचे अपरदन नहीं हो सकता है। यह स्थिति तब तक रहती है जब तक कि प्रतिरोधी शैल पूर्णतया कट न जाय। इस तरह के अस्थायी आधार तल नदी के मार्ग में कई हो सकते हैं।

3. स्थानीय आधार तल (local base levels)—यदि कोई नदी निम्न कटाव द्वारा अपने आधार तल को प्राप्त करके क्रमबद्ध (graded)हो गयी है तो उस सरिता का आधार तल समीपी स्थलखण्ड के निम्न कटाव की अन्तिम सीमा को निर्धारित करता है। इस तरह के आधार तल को 'स्थानीय आधार तल' कहा जा सकता है यदि इस तल के बराबर स्थलखण्ड अपने आधार तल को प्राप्त हो गया है।

18.6 नदी का परिवहन कार्य

नदियाँ अपरदन द्वारा प्राप्त चट्टान चूर्ण या मलवा (debris) का एक स्थान से दूसरे स्थान तक स्थानान्तरण करती हैं। नदी के इस कार्य को परिवहन कहते हैं। अपरदन के अलावा नदियों में अपक्षय द्वारा विघटित एवं वियोजित पदार्थों तथा भूमि स्खलन (landslide), अपवात (slumping) तथा भूमि सर्पण (land creep) द्वारा मलवा प्राप्त होता है, जिसका परिवहन नदी का जल करता है। नदी द्वारा छोटे-बड़े तथा महीन सभी प्रकार के कणों का परिवहन किया जाता है। नदी की परिवहन शक्ति की एक सीमा होती है, जिससे अधिक बोझ (load) होने पर नदी उसे ढोने में असमर्थ हो जाती है और निक्षेप करने लग जाती है। नदी की परिवहन शक्ति को प्रभावित करने वाले दो कारक सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं—1. बोझ के पदार्थों का आकार तथा मात्रा, 2. नदी का वेग। महीन कणों वाले बारीक पदार्थों का परिवहन नदी के साथ घोल के रूप में आसानी से हो जाता है। परन्तु बड़े कणों वाले पदार्थों का परिवहन नदी की तली के साथ लुढ़कते हुए होता है। नदी का वेग, जो नदी की परिवहन शक्ति को निर्धारित करता है, नदी की घाटी के ढाल, आकार तथा स्वरूप एवं जल के आयतन पर आधारित होता है। यदि नदी मार्ग का ढाल तथा आकार स्थिर है, तो जल के आयतन में वृद्धि होने पर नदी वेग में वृद्धि होती है। उल्टी अवस्था होने पर नदी वेग कम हो जाता है। यदि नदी घाटी का आकार तथा जल का आयतन स्थिर है तो अधिक ढाल होने पर नदी का वेग अधिक हो जायेगा। यदि ढाल तथा आयतन स्थिर है तो सीधे जलमार्ग में नदी वेग अधिक होगा और घुमावदार जलमार्ग का वेग कम होगा। इस तरह यदि नदी का वेग अधिक होगा तो नदी की परिवहन शक्ति निश्चय ही अधिक हो जायेगी।

गिलबर्ट महोदय ने नदी के वेग तथा नदी की परिवहन शक्ति के बीच सम्बन्ध के आधार पर एक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है, जिसे गिलबर्ट का **'छठी शक्ति का सिद्धान्त'** (Gilbert's Sixth Power Law) कहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार नदी की परिवहन शक्ति नदी के वेग की छठी शक्ति के अनुपात में होती है। अर्थात् यदि नदी के वेग को दुगुना कर दिया जाय तो नदी की परिवहन शक्ति 64 गुनी अधिक हो जायेगी।

दूसरे शब्दों में नदी के वेग के दोगुना होने पर परिवहन किये जाने वाले बोझ का भार 64 गुना हो जायेगा। अर्थात् नदी पहले से 64 गुना अधिक भार का परिवहन करने लगेगी।

इस गुर को निम्न सूत्र द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं—

परिवहन शक्ति $\propto$ (नदी का वेग)^6

नदियाँ बोझ (अवसाद भार) का परिवहन कई रूपों में करती हैं। इनमें से निम्नलिखित रूप अधिक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं—

(i) **कर्षण द्वारा** (लुढ़क कर by traction)—जब चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़े लुढ़कते हुए चलते हैं तो इस क्रिया को 'कर्षण' कहते हैं। इस विधि में चट्टानों के टुकड़े एक ही बार में परिवहित नहीं हो पाते हैं, वरन् एक स्थान से दूसरे स्थान पर, पुनः उससे तीसरे स्थान पर आदि रूप में चलते हैं। ये टुकड़े नदी की तली के साथ फिसलकर या लुढ़ककर चलते हैं।

(ii) **उत्परिवर्तनद्वारा** (by saltation)—इस विधि में चट्टानों के टुकड़े जल के साथ नदी की तली पर उछल-उछल कर स्थानान्तरित होते हैं। उछलने या फुदकने की क्रिया निहायत मन्द होती है। इस विधि से परिवहन की क्रिया को 'उत्परिवर्तन' कहते हैं।

(iii) **लटक कर** (by suspension)—यह सामान्य नियम है कि जल में प्रत्येक वस्तु का भार कम हो जाता है। जब शैल-कण चट्टानों से अलग होकर नदी के जल में गिरते हैं, तो जल की प्लवनशीलता (buoyancy) के कारण उनके भार में कमी आ जाती है। इस क्रिया के कारण मध्यम श्रेणी के टुकड़े जल में लटके रहते हैं तथा जलधारा द्वारा दूर तक बहा लिये जाते हैं।

इस विधि को **लटकन विधि** भी कहा जाता है। अनुमान किया जाता है कि मिसीसिपी नदी के बोझ का 90 प्रतिशत भाग लटकन के रूप में चलता है।

(iv) **घुलकर** (by solution)—चट्टानों के घुलनशील पदार्थ जल के साथ घुल कर मिल जाते हैं तथा जल के साथ अदृश्य रूप में बहते हुए चलते हैं।

Topic - 20. Erosional and Depositional Topographies (River, Wind, Underground Water, Glaciers)

अपरदनात्मक व निक्षेपात्मक स्थलाकृतियाँ : नदी, पवन, भूमिगत जल, हिमनद।

प्रश्न-(1) नदी के अपरदनात्मक और निक्षेपात्मक कार्यों का वर्णन कीजिए। (2017, 2023)

उत्तर:- 'Fluvial' शब्द लैटिन भाषा के Fluvious से बना है जिसका अर्थ है - नदी (River)

"भू-सतह पर किसी निश्चित मार्ग में प्रवाहित जलराशि को नदी कहते हैं।"

नदी में बहता हुआ जल घाटी के पार्श्व भाग (अगल-बगल) व तली को खरोंचता हुआ शैल सामग्री को अलग कर अपने साथ परिवाहित कर अन्य जगह निक्षेपित करता है। इससे निम्नलिखित अपरदनात्मक व निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का निर्माण होता है,

(1) नदी: अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ:- निम्न है-

(i) 'V' आकार की घाटी
(ii) गार्ज (Gorge)-
(iii) कैनियन (Canyon)-
(3) जल प्रपात (Water-Falls)
(4) क्षिप्रिकाएँ (Rapids)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(5) जल-गर्तिका (Potholes):-
(6) नदी - विसर्प (River Meander's)
(7) अवनमन कुंड (Plunge Pools)
(8) संरचनात्मक सोपान (Structural Benches)
(9) समप्राय मैदान (Peneplain) -

(1) 'V' आकार की घाटी:-

नदी उद्गम स्थल से आगे प्रवाहित होती है, तो ढाल एवं गति की अधिकता होने के कारण नदी तल कटाव द्वारा घाटी को गहरा करती है। घाटी के गहराई में विकसित होने से उसका आकार अंग्रेजी के 'V' अक्षर के समान दृश्य होता है जिस कारण इसे 'वी'- आकार की घाटी कहते हैं।

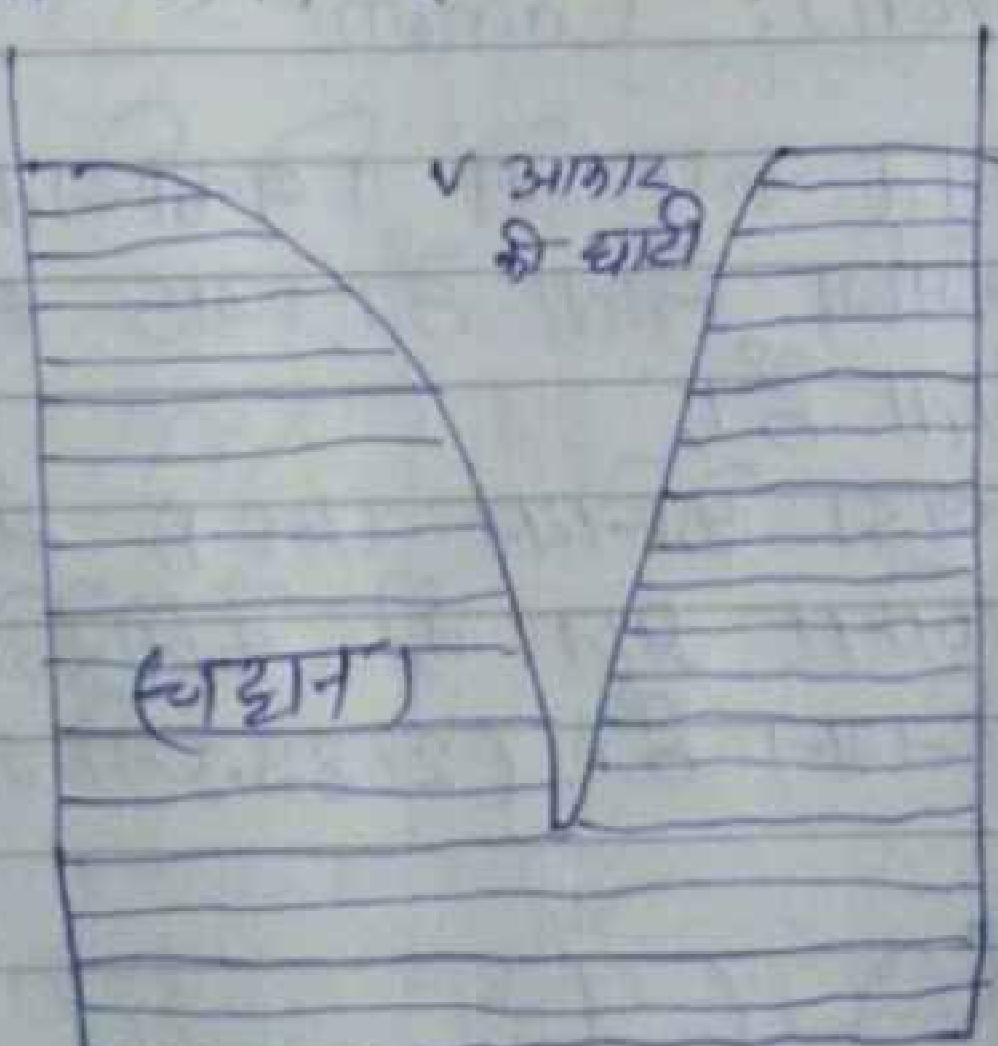

(ii) गार्ज (Gorge):-

इसका विकास वी-आकार की घाटी से ही होता है। गार्ज अत्यधिक सँकरी तथा गहरी घाटी होती है, इसके किनारे खड़े होते हैं।

Every litter bit hurts our mother nature.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

हिमालय में - सिन्धु नदी (गार्ज - 5666 मीटर गहरा है,)

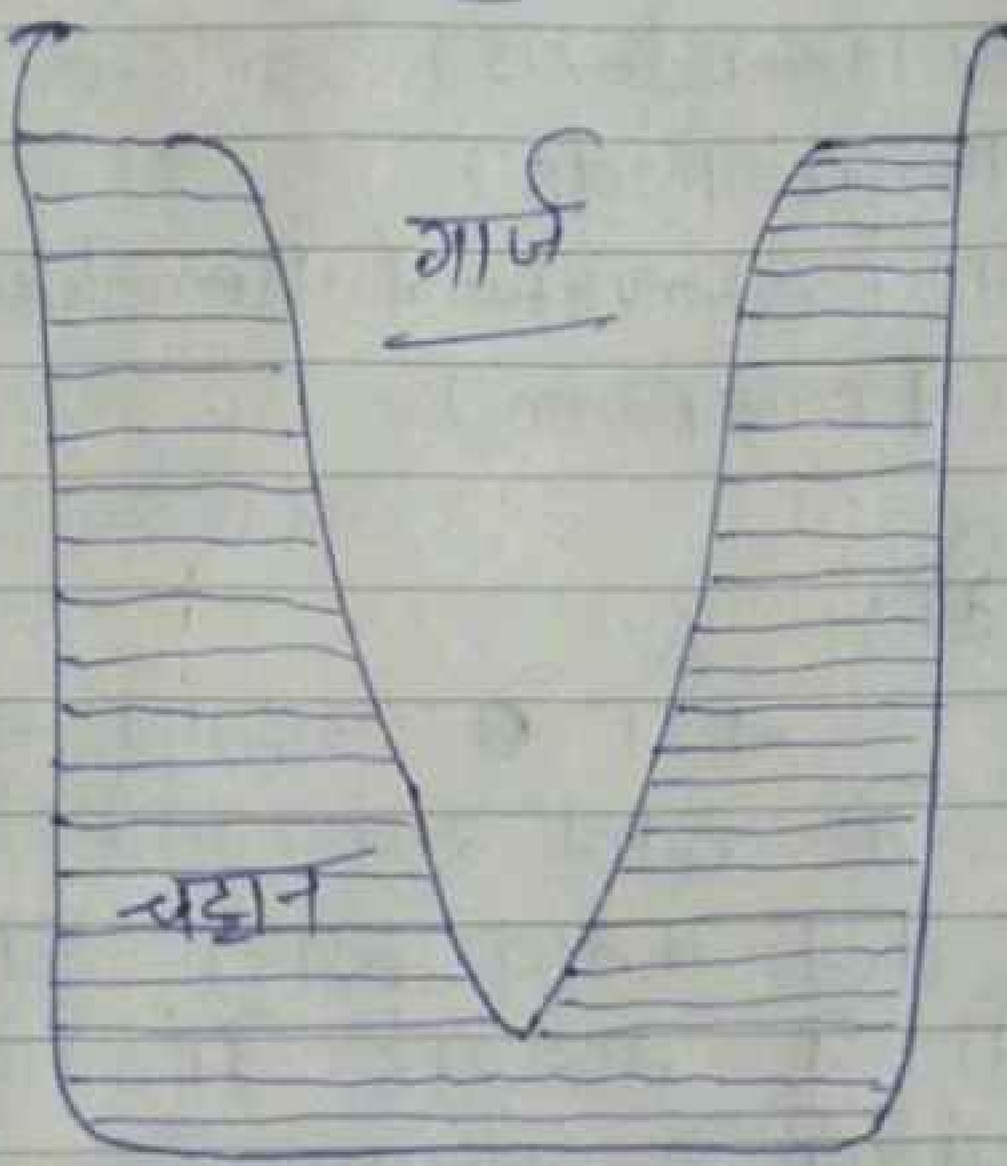

(3) कैनियन :- (canyon) :- Canon - अर्थ - (गम्भीर खड्ड)

- गार्ज के विस्तृत रूप में विकसित होने से कैनियन का निर्माण होता है, यह सँकरा तथा गहरा अधिक होता है,
विश्व का सबसे बड़ा कैनियन U.S.A संयुक्त राज्य अमेरिका के एरिजोना प्रांत की कैलोरेडो नदी पर स्थित ग्राण्ड कैनियन है, (2083.3 मी गहरा 482.2 Km लम्बा है।

Clean India is our duty and right.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(4) जल प्रपात:- (Water falls):-
जब किसी स्थान पर नदियों का जल ऊँचाई से खड़े ढाल के उपरी भाग से अत्यधिक वेग से नीचे की तरफ गिरता है। तो उसे जल प्रपात कहते है।
- वेनेजुएला की कैराओं नदी पर स्थित एंजेल प्रपात (979) मीटर सबसे ऊँचा जल प्रपात है।
- राजस्थान मे चम्बल नदी का चुलियाँ जल प्रपात मुख्य है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(5) क्षिप्रिकाएँ :- (Rapids) :- क्षिप्रिकाएँ नदी मार्ग के वे भाग है, जहाँ ऊपर उठी कठोर शैलों के कारण नदी उछलती हुई बहती है। क्षिप्रिका जल प्रपात का छोटा रूप होता है,

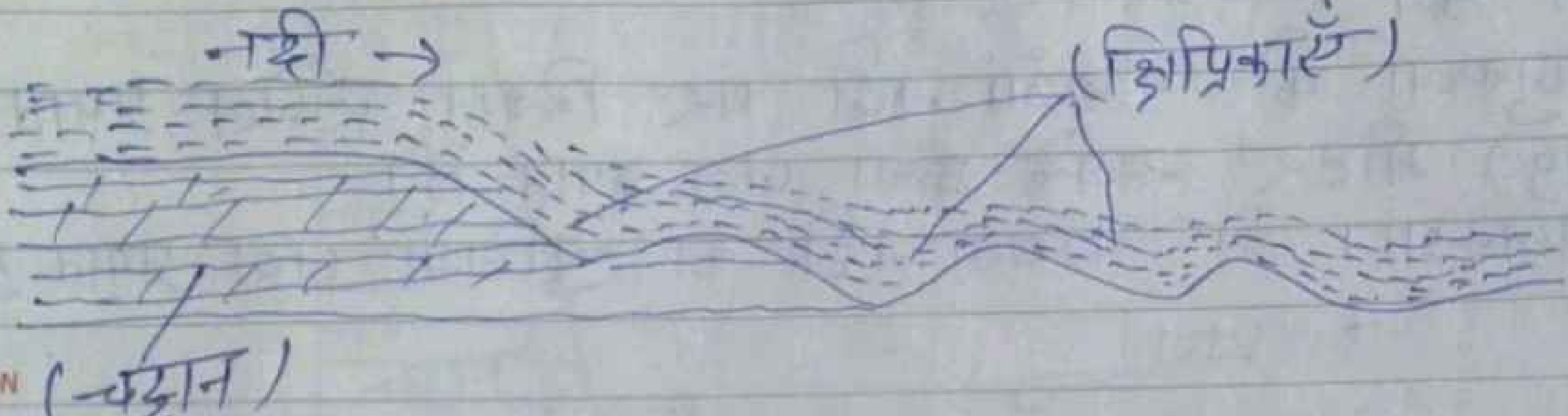

(6) जल गर्तिका :- (Potholes) :- नदी तल में पड़ने वाले गड्ढों को जलगर्तिका कहते है, नदी में कठोर चट्टानों के बड़े-बड़े शिलाखण्ड, कंकड़, पत्थर, बजरी आदी नदी के तीव्र बहाव से नदी तल में बार-बार टकराव से गड्ढे बन जाते है इन गड्ढो को ही जलगर्तिका कहते है।

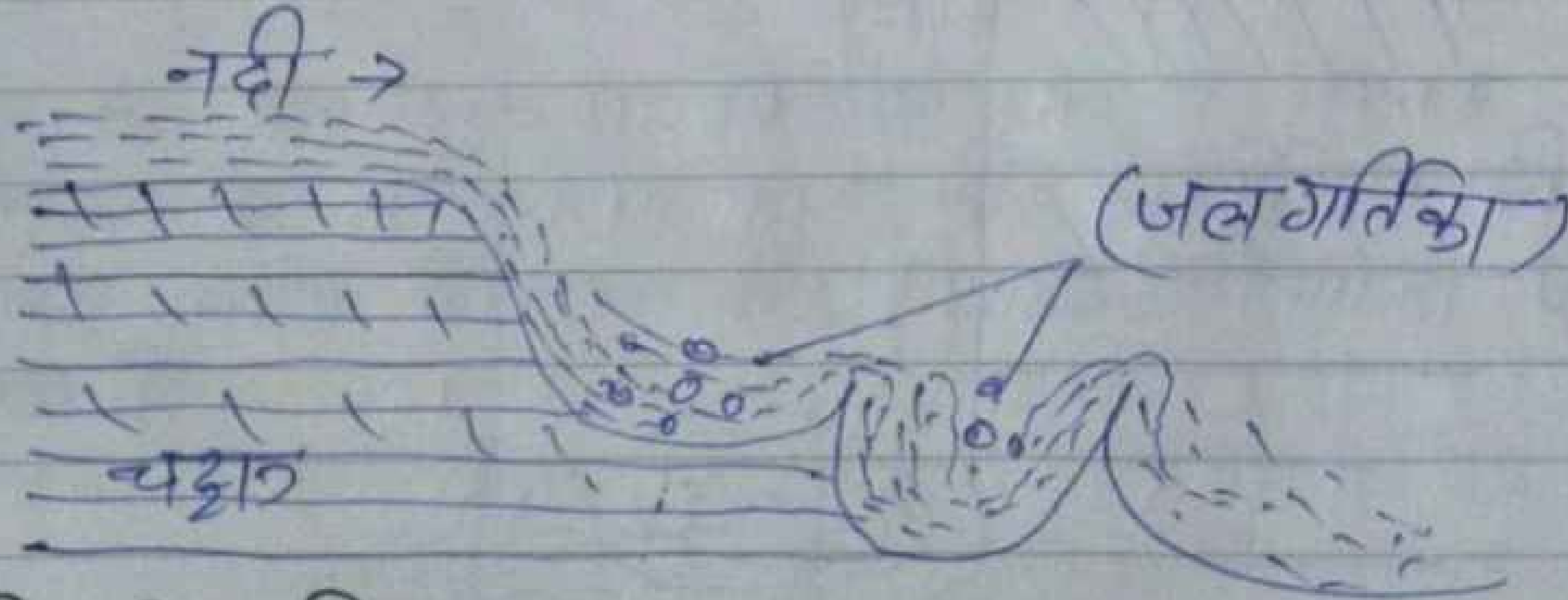

(7) नदी विसर्प :- (River Meander) प्रौढ़ावस्था में नदी मैदान में बहती हुई क्षैतिज अपरदन से घाटी अधिक चौड़ी होती जाती है मार्ग मे कठोर चट्टाने आ जाने से

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

नदी मुड़कर बहती है, नदी मार्ग में अनेक तरह के मोड़ पड़ जाते है जिन्हे नदी विसर्प कहते है,

⇒ तुर्की में प्रवाहित होने वाली मियेण्डर (मियाण्डर) नदी इसी तरह के बड़े-बड़े मोड़ो से प्रवाहित होती है

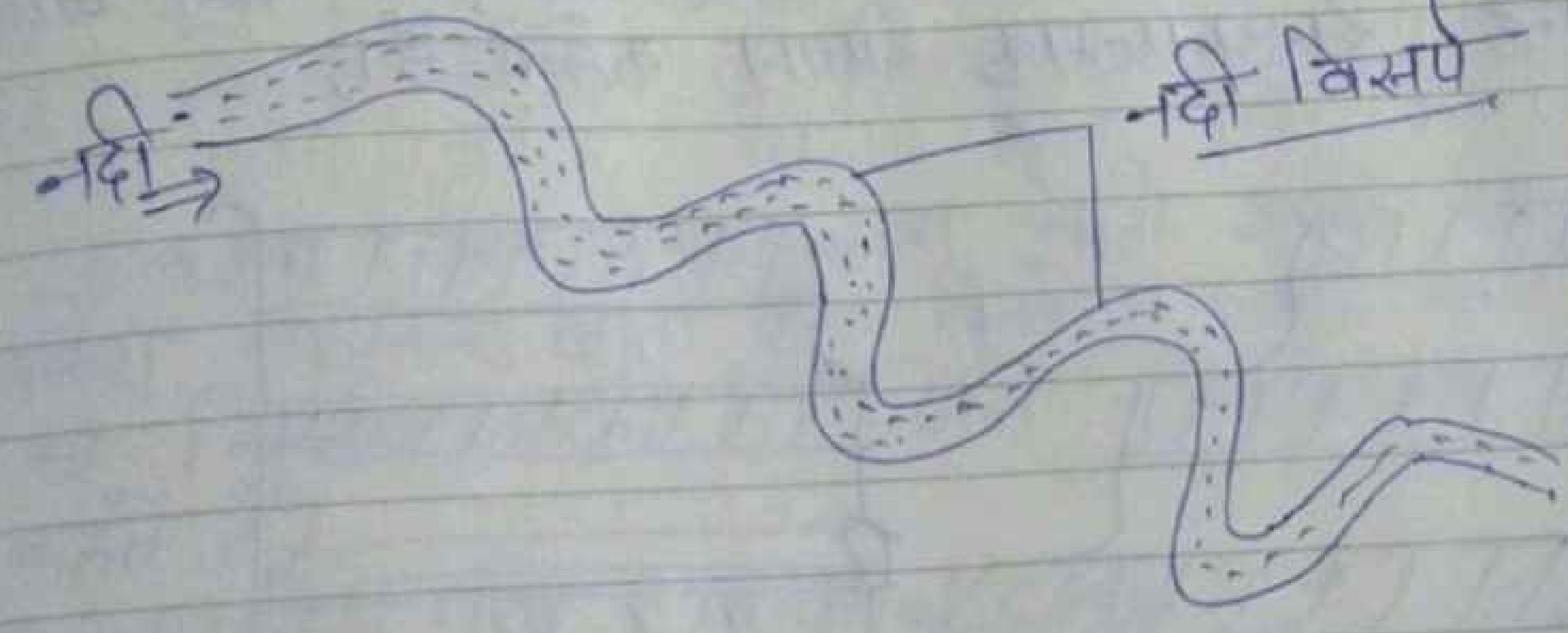

(8) <u>अवनमन कुण्ड</u> :- (Plung Pools) :- जल प्रपात के अन्दर जहाँ पर जल ऊँचाई से गिरता है वहाँ जल के साथ प्रवाहित कंकड़-पत्थरों के कारण एक गड्ढा बन जाता है जिसे अवनमन या प्रपात कुण्ड कहते है

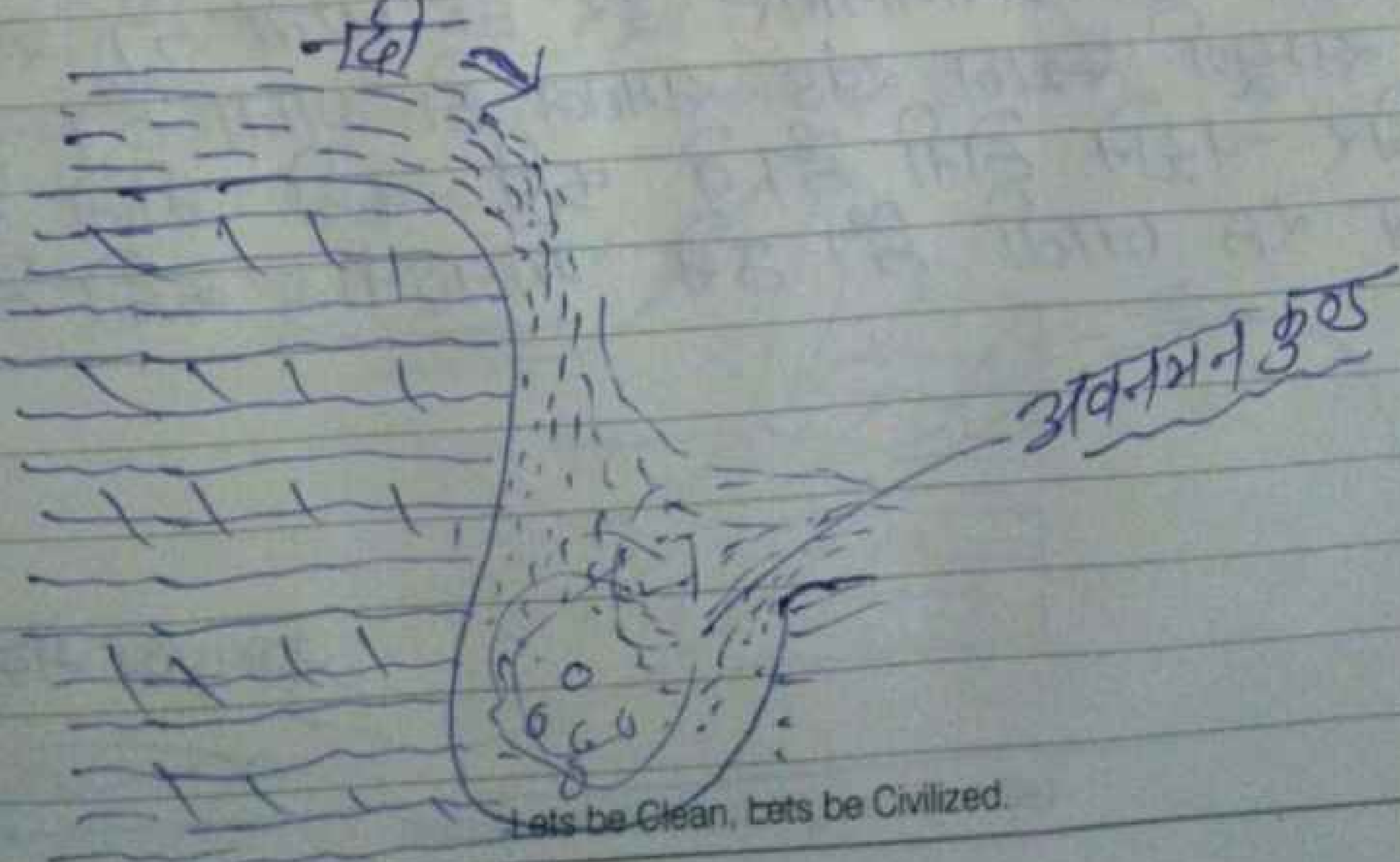

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(9) संरचनात्मक सोपान :- (Structural Benches) :- जब नदी के मार्ग मे पार्श्वों पर कठोर एवं मुलायम शैलों की परत क्षैतिज रूप में स्थित होती है। मुलायम शैल शीघ्र अपरदित हो जाती है जबकि कठोर शैल उभरी अवस्था में रहती है। इनसे नदी घाटी के दोनों किनारों पर सोपनाकार सीढ़ियाँ बन जाती हैं, जिन्हे संरचनात्मक सोपान कहते है,

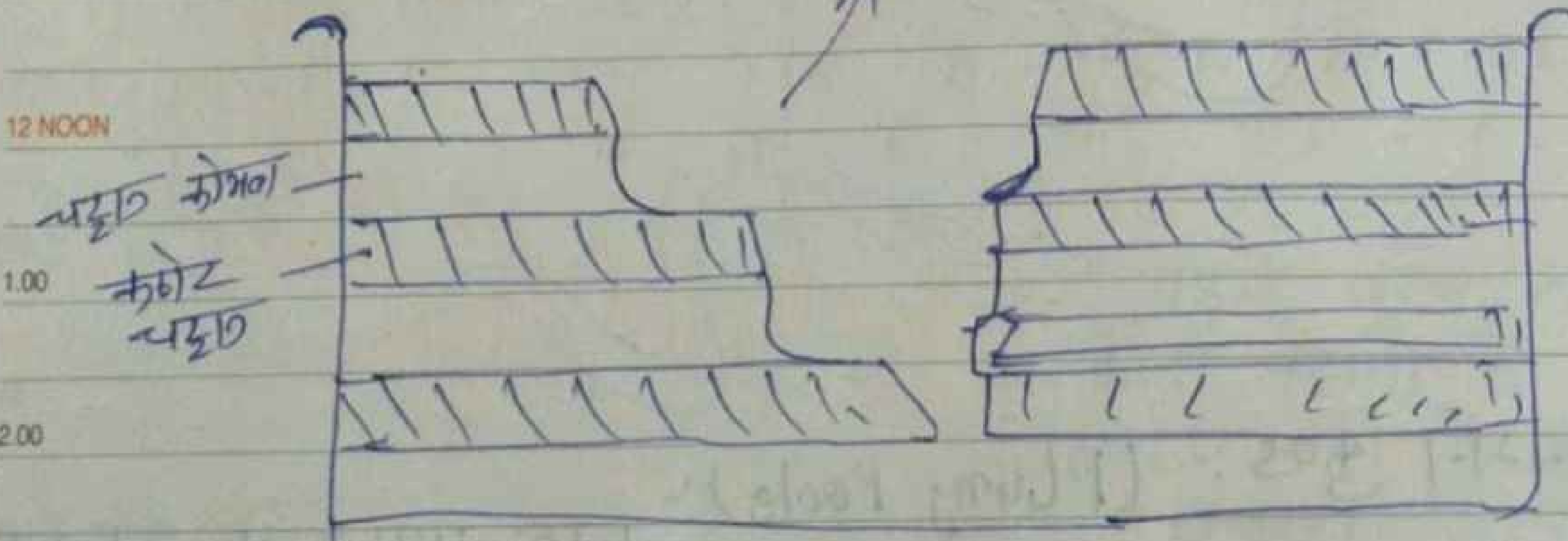

(10) समप्राय मैदान (पेनीप्लेन) :- इसका निर्माण उस समय होता है, जब नदी की अन्तिम अवस्था में क्षैतिज अपरदन द्वारा सतह की असमानताएँ दूर हो जाती है। इस समय सम्पूर्ण स्थल खंड समतल हो जाता है। इसमे जो कठोर चट्टाने होती है वे कही -कही टीलों के रूप मे शेष रह जाती है। उसे 'मोनड्नॉक' कहते है

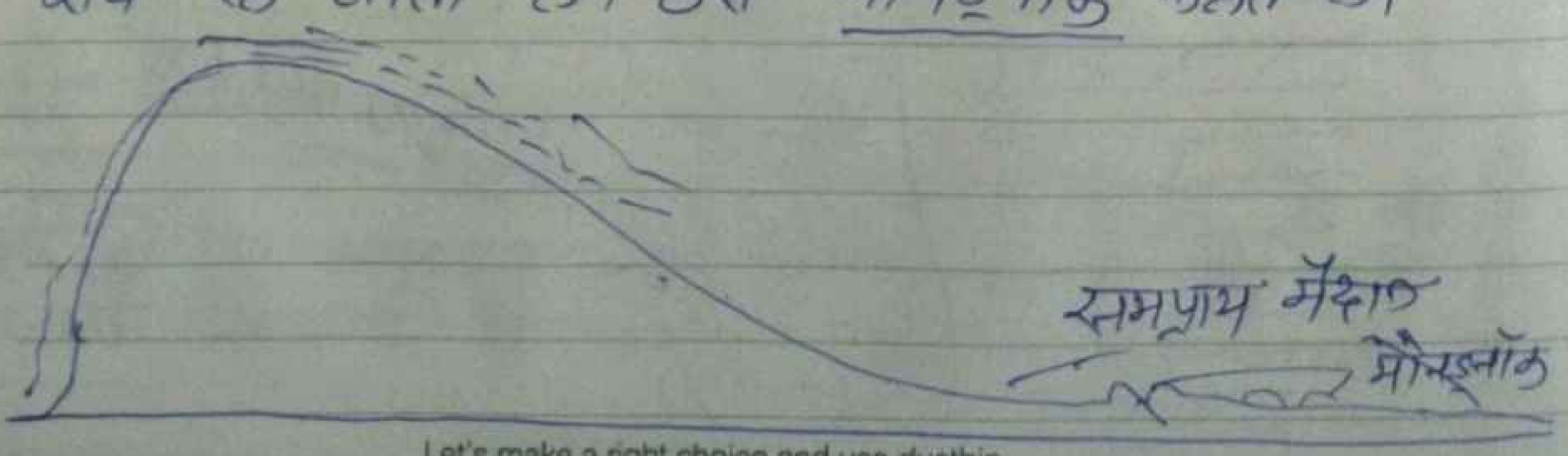

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(II) नदी की निक्षेपात्मक स्थलाकृतियाँ :- (Depositional Topographies)

(i) जलोढ पंख :- (Alluvial Cone):-
(ii) जलोढ शंकु :- (Alluvial Fans):-
(3) प्राकृतिक तट बन्ध (Natural Levees):-
(4) बाढ़ का मैदान (Flood plain):-
(5) डेल्टा (Delta):-
(6) गोखुर झील (Oxbow-Lake):-

— कटाव (अपरदन) द्वारा नदी अपने साथ चट्टान मलबा बहाकर लाती है जिसे जमा कर अनेक स्थलरूपों का निर्माण करती है जिसे निक्षेपात्मक स्थलरूप कहते है,

(i) जलोढ़ पंख (Alluvial Cone) :-
इसका निर्माण तीव्र पर्वतीय ढाल वाले भागों में नदी द्वारा संगृहीत शैल मलबे के कम तीव्र ढालों पर निक्षेप के रूप में होती है, मलबे को नदी अर्द्धवृत्ताकार या पंखाकार रूप में जमा कर देती है, इसका निर्माण सामान्य ढाल व जल की मात्रा अधिक होने पर होता है, भारत में व्यास, रावी तथा तिस्ता महानदी संयुक्त पंख बनाती है इनमें देहरादून जलोढ़ पंख प्रमुख है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) जलोढ़ शंकु (Alluvial Cone):- जलोढ़ शंकु नदी की युवावस्था के अन्त तथा प्रौढ़ावस्था के प्रारम्भ का सूचक है, जब नदी पर्वतीय क्षेत्र से उतरकर मैदानी भाग में प्रवेश करती है तो ढाल एवं वेग में अचानक कमी आ जाने से उसकी वहन क्षमता भी कम हो जाती है, फलस्वरूप नदी पर्वतपदीय क्षेत्रों में शैल मलबे को शंकु के आधार में जमा कर देती है। इस जमाव में शिलाखण्ड सबसे नीचे तली में फिर उनके ऊपर बजरी तथा सबसे ऊपरी सतह पर महीन रेत का जमाव होता है, एक शंकु सदृश्य दिखाई देता है।

(जलोढ़ शंकु)

(3) तटबन्ध या प्राकृतिक तटबन्ध:- (Natural Levees):- नदी अपनी प्रौढ़ावस्था के अन्त में दोनो किनारों (तटों) पर मिट्टी या बजरी को जमा करती है जिससे लम्बें-2 बाँधों का निर्माण हो जाता है प्राकृतिक रूप से बने बाँधों को तटबन्ध कहते है, तटबन्धों के निर्माण के बाद नदी की तली में भी जमाव होने लगता है इन तटबन्धों की ऊँचाई भी भिन्न-भिन्न होती है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30		

8.00 ⇒ मिसीसिपी नदी के तटबन्धों की ऊँचाई 6-7 मीटर तक है तटबन्धों के टूटने पर भयंकर बाढ़ आती है,

9.00 - चीन की ह्वाँग-हो नदी तथा भारत की कोसी नदी के तटबन्ध टूटने से प्रायः बाढ़े आया करती है,

11.00 (4) **बाढ़ का मैदान** :- (Flood Plains) :-
प्रौढ़ावस्था में नदी अपने तटों के ऊपर फैलाव करती है इसे बाढ़ का मैदान कहते है

1.00 - वर्षा की अधिकता से नदी के समीपवर्ती क्षेत्र मे मिट्टी के बारीक कणों के निक्षेपण से बाढ के मैदान का निर्माण होता है, ऐसा निक्षेप बार-बार होने से नवीन मिट्टी के उपजाऊ मैदान बन जाते है उसे 'बाढ़कृत मैदान' कहा जाता है.
ह्वांग-हो नदी, कोसी नदी

(5) **डेल्टा** (Delta) :-
अपरदन चक्र की अन्तिम अवस्था (वृद्धावस्था) में नदी का वेग मन्द पड़ जाता है जिस कारण नदी अपने साथ बहाकर लाए गए जलोढ़क को सागर या झील में मिलाते समय अपने मुहाने पर त्रिभुजाकार आकृति का निर्माण करती है जिसे डेल्टा कहते हैं।
डेल्टा शब्द का नामकरण लैटिन भाषा के Delta अथवा (Δ) के के नाम पर किया गया है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

- डेल्टा शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम हेरोडोटस ने नील नदी के मुहाने पर निर्मित निक्षेपात्मक स्वरूप के लिए किया था। तत्पश्चात् सभी नदियों के मुहाने पर निक्षेप द्वारा निर्मित स्थलरूपों के लिए डेल्टा शब्द का प्रयोग किया जाने लगा।

ये कई प्रकार के होते हैं

⇒ चापाकार डेल्टा – गंगा, राइन, नील नदी
⇒ पंजाकार डेल्टा – मिसीसिपी नदी।
⇒ ज्वारनदमुखी डेल्टा – नर्मदा, ताप्ती नदी

(6) <u>गोखुर झील (Oxbow - Lake)</u> :- (अस्थाई झील) गोखुर झीलों का निर्माण नदी के विसर्पण द्वारा ही होता है। जब विसर्पण का नदी से पूर्णतः सम्बन्ध टूट जाता है तो यही विसर्पण गोखुर झील में परिवर्तित हो जाती है।

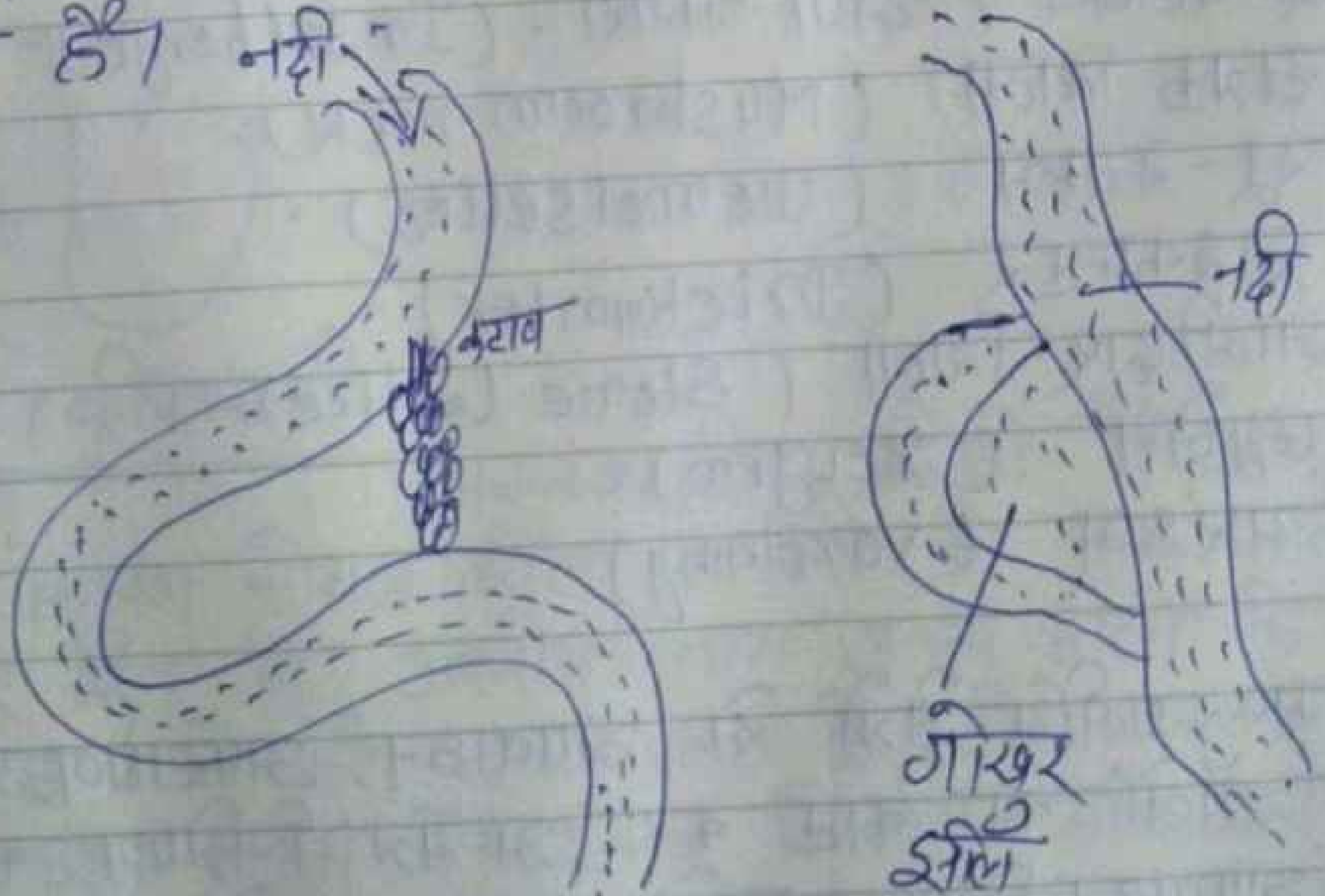

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न :- (2) पवन की अपरदनात्मक एवं निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का चित्र सहित वर्णन करें। (2013, 2019)

प्रश्न• मरूस्थलीय प्रदेशों में पवन के अपरदन एवं निक्षेपण से बनी विभिन्न स्थलाकृतियों या भू- आकारों को समझाइये ; (2019)

उत्तर :- मरूस्थलीय क्षेत्रों में पवनों की अपरदनात्मक व निक्षेपात्मक क्रियाओं द्वारा विभिन्न स्थलरूपों का निर्माण होता है,

⇒ हवा के प्रवाह को ही पवन (wind) कहते है,

(I) पवन द्वारा निर्मित अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ :-

(1) वातगर्त / अपवाहन बेसिन (blowout):-
(2) इन्सेलबर्ग / द्वीपा भगरी - (Inselberge):-
(3) छत्रक शिला (Mushroom rock):-
(4) भू-स्तम्भ (Demoiselles):-
(5) ड्राइकान्टर (Driekamter):-
(6) जालीदार शिला (Stone Lattice):-
(7) ज्यूजेन (zeugen):-
(8) यारडंग (yardang):-

⇒ पवनें मरूस्थलीय क्षेत्रों से अपवाहन, अपघर्षण, एवं सन्निघर्षण द्वारा शैलों को काट कर अन्यत्र निक्षेपण करती है

(i) अपवाहन क्रिया :- पवनें, मृदा चट्टानों अलग करके दूसरे स्थान पर ले जाती है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) अपघर्षण :- इसमें पवन मार्ग में पड़ने वाली चट्टानों को रगड़ कर, घिस कर, अपरदित करती है।

(3) सन्निघर्षण :-
शैल कण तथा धूलिकण मार्ग में आपस में रगड़ खाकर यांत्रिक ढंग से टूटने की क्रिया को सन्निघर्षण कहते हैं,

(1) वातगर्त (अपवाहन बेसिन) :-
पवन द्वारा मरूस्थलीय भागों में धूल कणों को अपने साथ उड़ाकर ले जाने से वहाँ छोटे - छोटे गर्त बन जाते है। यह गर्त धीरे - धीरे बड़े हो जाते है। इन्हे वात गर्त कहते है।

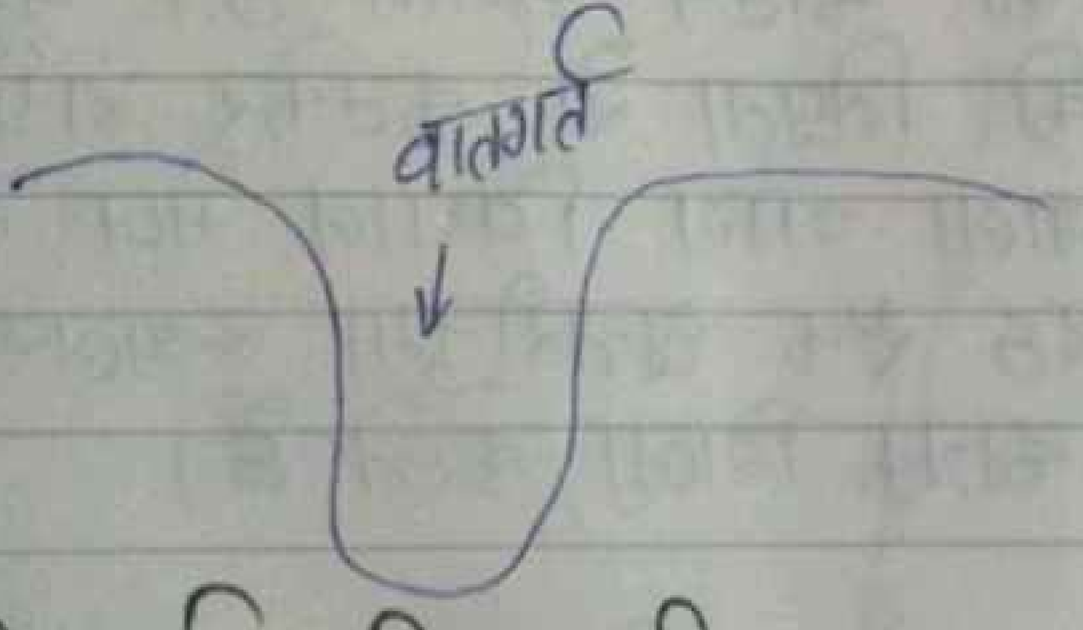

(2) इन्सेलबर्ग / द्वीपाभगरी :-
मरूस्थलीय प्रदेशो में अपक्षय तथा अपरदन के कारण कोमल शैल आसानी से कट जाती है। परन्तु कठोर शैल के अवशेष भाग उच्च टीलों के रूप मे शेष रह जाते है। इस तरह के टीलों या टापुओं को इन्सेलबर्ग कहा जाता है। "इनका निर्माण अधिकतर ग्रेनाइट एवं नाइस चट्टानों के अपक्षय तथा अपरदन द्वारा होता है।" - कॉटन 1962

Lets be Clean, Lets be Civilized.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

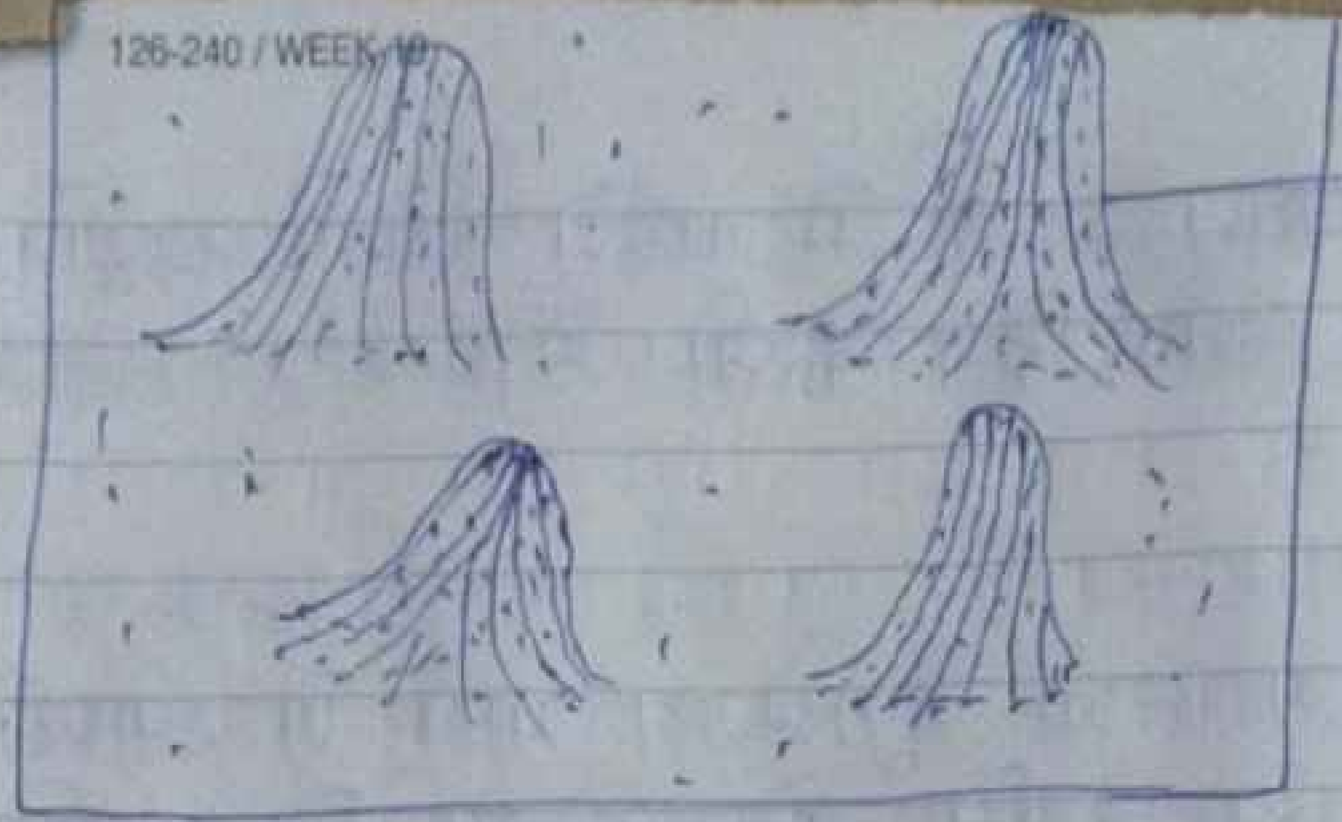

बोर्नहार्ट :- इन्सेलबर्ग को बोर्नहार्ट भी कहते हैं क्योंकि बोर्नहार्ट नामक भू-वैज्ञानिक ने ही सर्वप्रथम इन्सेलबर्ग की निर्माण प्रक्रिया का अध्ययन किया था।

(3) छत्रक शिला :- (Mushroom rocks) जर्मन भाषा में - 'गारा'
(छतरीनुमा शैल)

पवन अपनी अपघर्षण क्रिया द्वारा उस चट्टान को काटने लगती है। चट्टान के निचले भाग पवन की तिव्रता से कटकर संकीर्ण हो जाता है और ऊपर वाला भाग विशाल मेज के समान चौड़ा रहता है। इस तरह एक छतरीनुमा स्थलरूप का निर्माण होता है। जिसे छत्रक शिला कहते है।

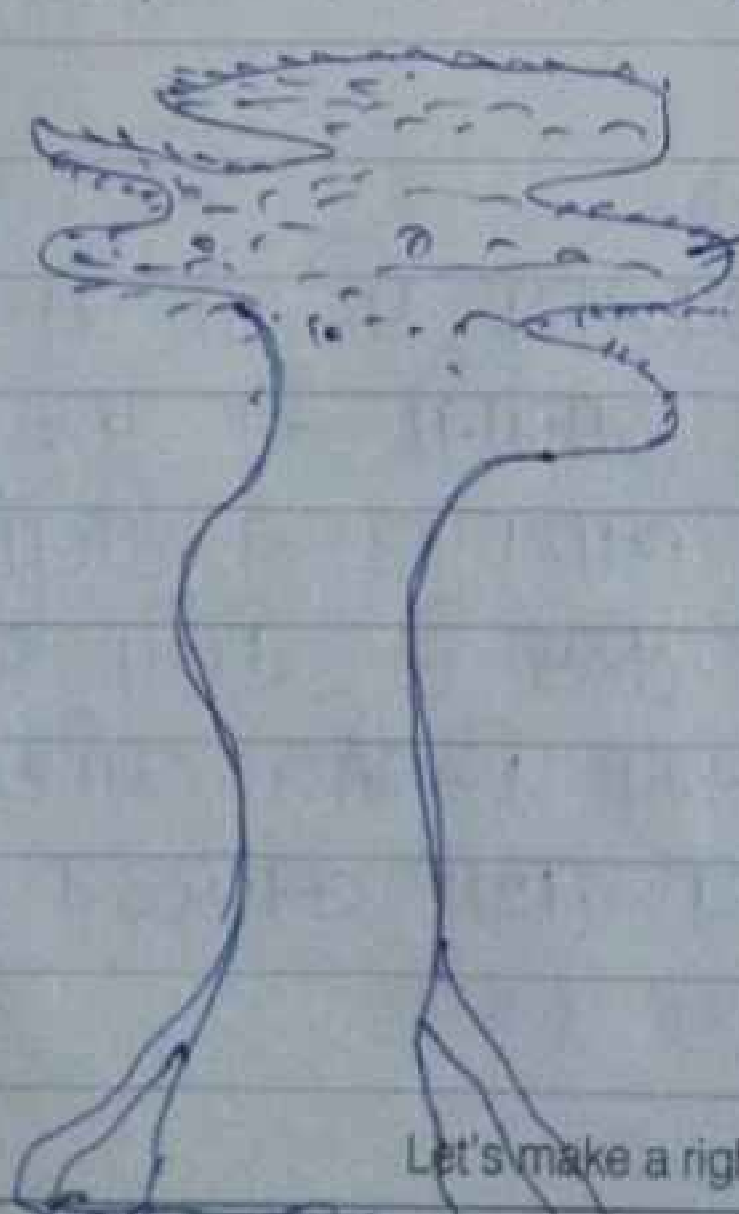

Let's make a right choice and use dustbin.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(4) भू-स्तम्भ (Demoiselles):- मरूस्थलीय भागों में जब कोमल एवं असंगठित चट्टानों के ऊपर संगठित एवं कठोर चट्टान का आवरण पाया जाता है, तो इन कठोर चट्टानों के आवरण के कारण नीचे स्थित कोमल चट्टानों का पवन द्वारा अपरदन नहीं हो पाता है। लेकिन इनके पास स्थित कोमल एवं असंगठित चट्टानें पवन के अपरदन द्वारा वहाँ से अपवाहन क्रिया द्वारा कटकर एवं बिखरकर पवन के साथ चली जाती है। जिससे कठोर चट्टानों के आवरण से युक्त ये चट्टानें स्तम्भ के रूप में खड़ी दिखाई देती है। इन्हें भू-स्तम्भ कहते है,

(5) ज्यूजेन (Zeugen):- मरूस्थली भागों में कठोर तथा कोमल शैलों की परतें ऊपर-नीचे एक दूसरे के समानान्तर होती है, तो अपक्षय तथा वायु द्वारा अपरदन के कारण निर्मित खाँचे होते है। उन्हें ज्यूजेन कहते है,

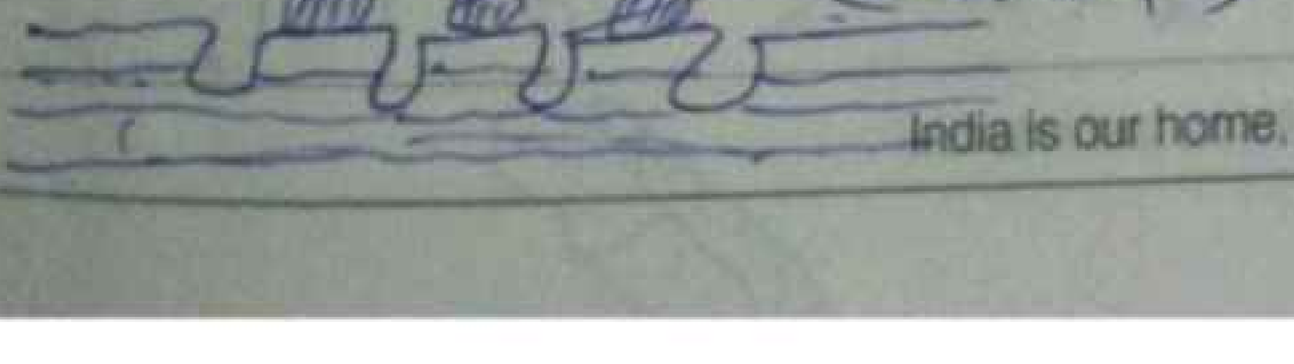

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(6) यारडांग :- (yardang) :-

इसका निर्माण तब होता है जब चट्टानें लम्बवत रूप में होती हैं, लम्बवत रूप में स्थित कठोर एवं कोमल चट्टानों में पवन अपने अपरदन कार्य द्वारा कोमल चट्टानों को काटकर अपने साथ उड़ाकर ले जाती है, तथा कठोर चट्टाने अपने स्थान पर ही खड़ी रहती है। कठोर चट्टानों के पास से कोमल चट्टानों के अपरदन हो जाने से कठोर चट्टानें नालीनुमा आकृति में दिखाई देती है। इन्हें यारडांग कहते हैं।

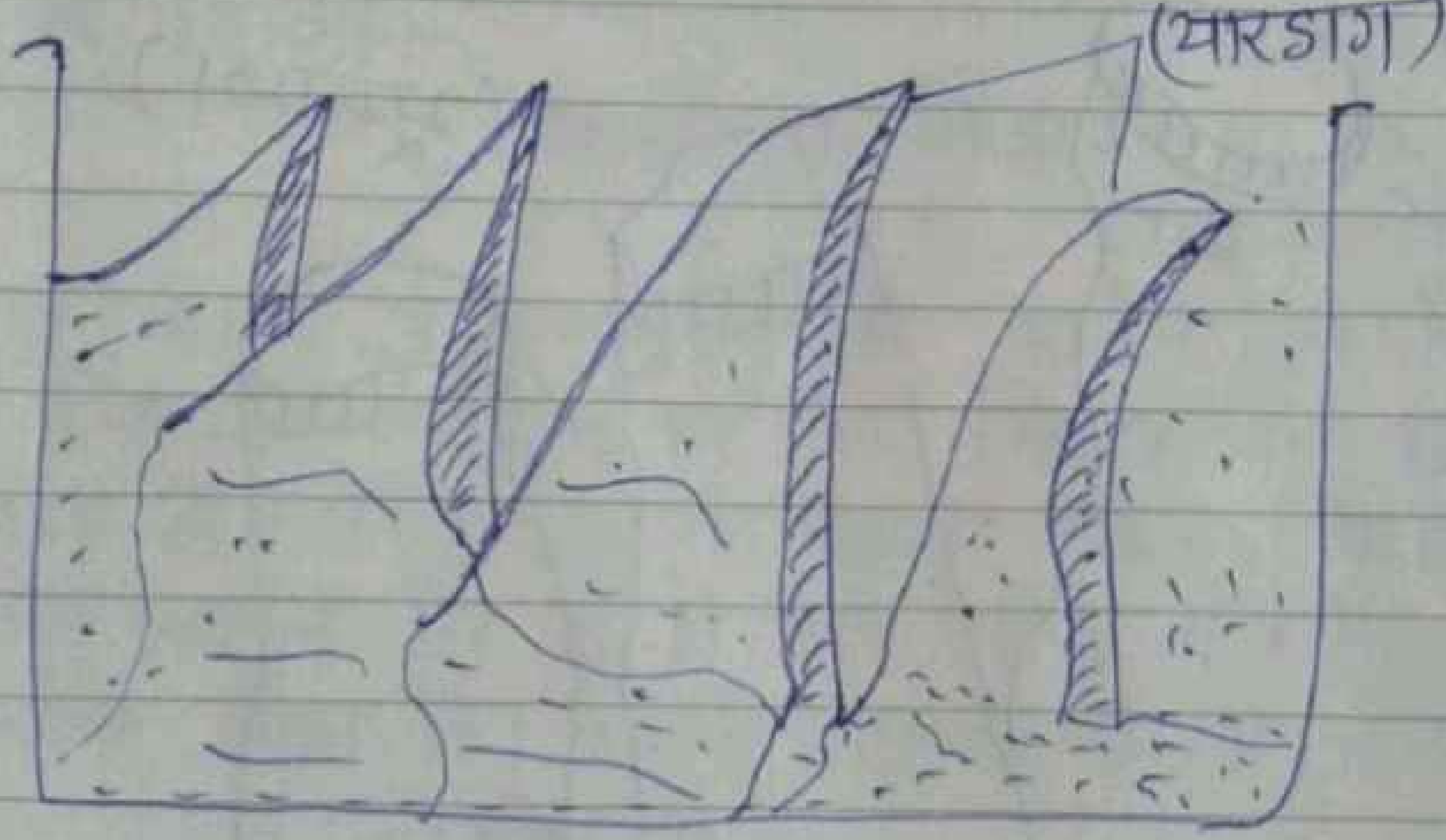

(7) ड्राइकान्टर या त्रिकोणक :- (Dreikanter) :-

पथरीले मरूस्थलों में सतह पर पड़े शिलाखण्डों पर पवन से अपरदन द्वारा खरोंचे पड़ जाती है। जिस कारण शिलाखण्ड या पत्थर के टुकड़ों पर तरह - तरह की नक्काशी हो जाती है और शिलाखंडों की आकृति चतुष्फलक जैसी हो जाती है, जिसका एक फलक भू-पृष्ठ पर तथा शेष तीन फलक बाहर की ओर होते है। इन्हें ड्राइकान्टर कहते हैं।

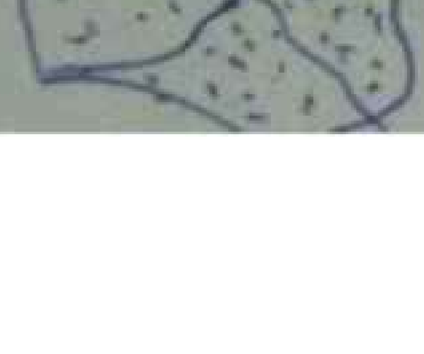

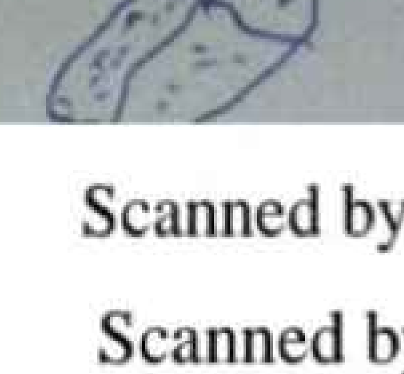

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(8) जालीदार शिला (Stone lattice):- मरूस्थलीय भागों में जब पवनों के सामने ऐसी शिलायें पड़ जाती हैं। जिनकी कठोरता में भिन्नता हो तो पवन रेत कणों की सहायता से अपघर्षण द्वारा शैल के कोमल भागों को अपरदित करके उड़ा ले जाती है कठोर भाग स्थिर रहते हैं इस प्रकार के अपरदन के कारण शैल भाग में जाली का निर्माण हो जाता है इस तरह की शैल को जालीदार शीला कहते हैं,

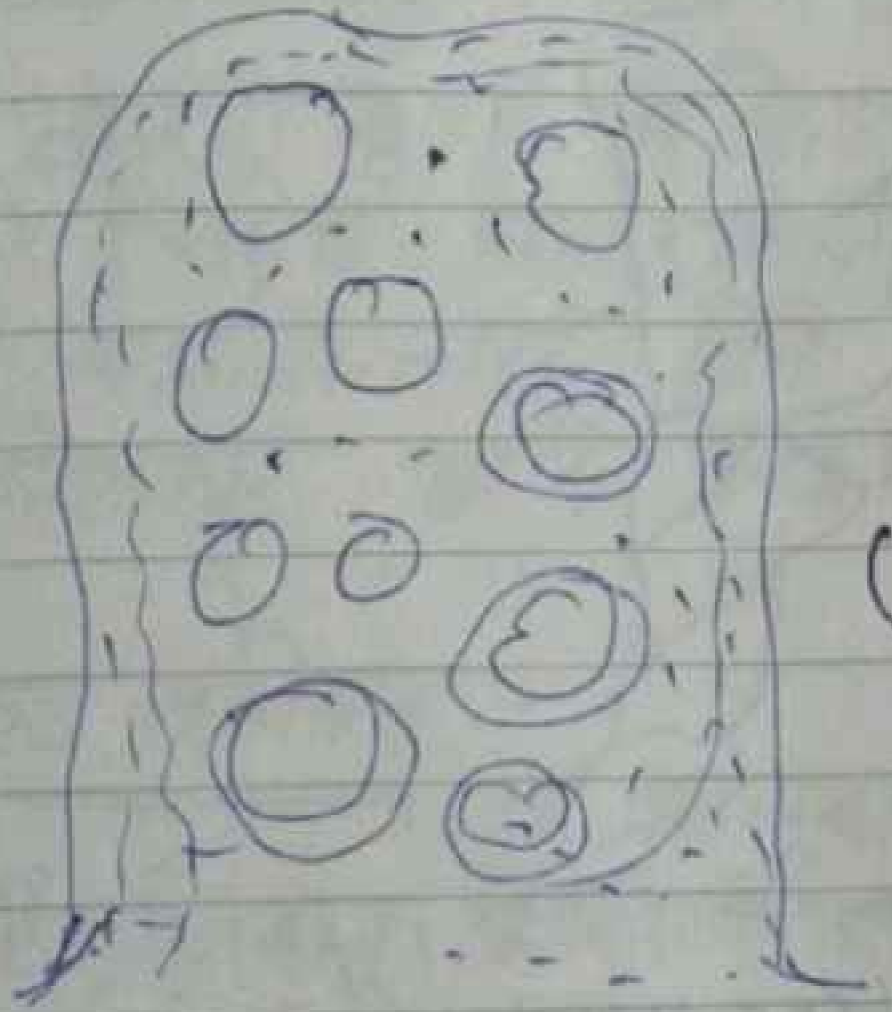

(जालीदार शिला)

(9) पुल तथा खिड़की :- (Bridge and window):- जालीदार शिला में पवन के अपरदन द्वारा पवनो-मुखी भाग में छिद्र हो जाता है एक लम्बे समय तक अपरदन के कारण छिद्र शैल के आर-पार व विस्तृत हो जाता है इसे खिड़की कहते है

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

8.00
9.00
10.00
11.00
12 NOON
1.00
2.00
3.00
4.00
5.00
6.00

(10) महराब (Arch):- शिला में खिड़की से होकर अपरदन द्वारा चट्टान का धीरे - धीरे नीचे तक कटाव हो जाता है और एक महराब की आकृति का निर्माण होता है। इसे पुल भी कहा जाता है। खिड़की का ऊपरी चट्टानी भाग एक पुल की आकृति में पाया जाता है,

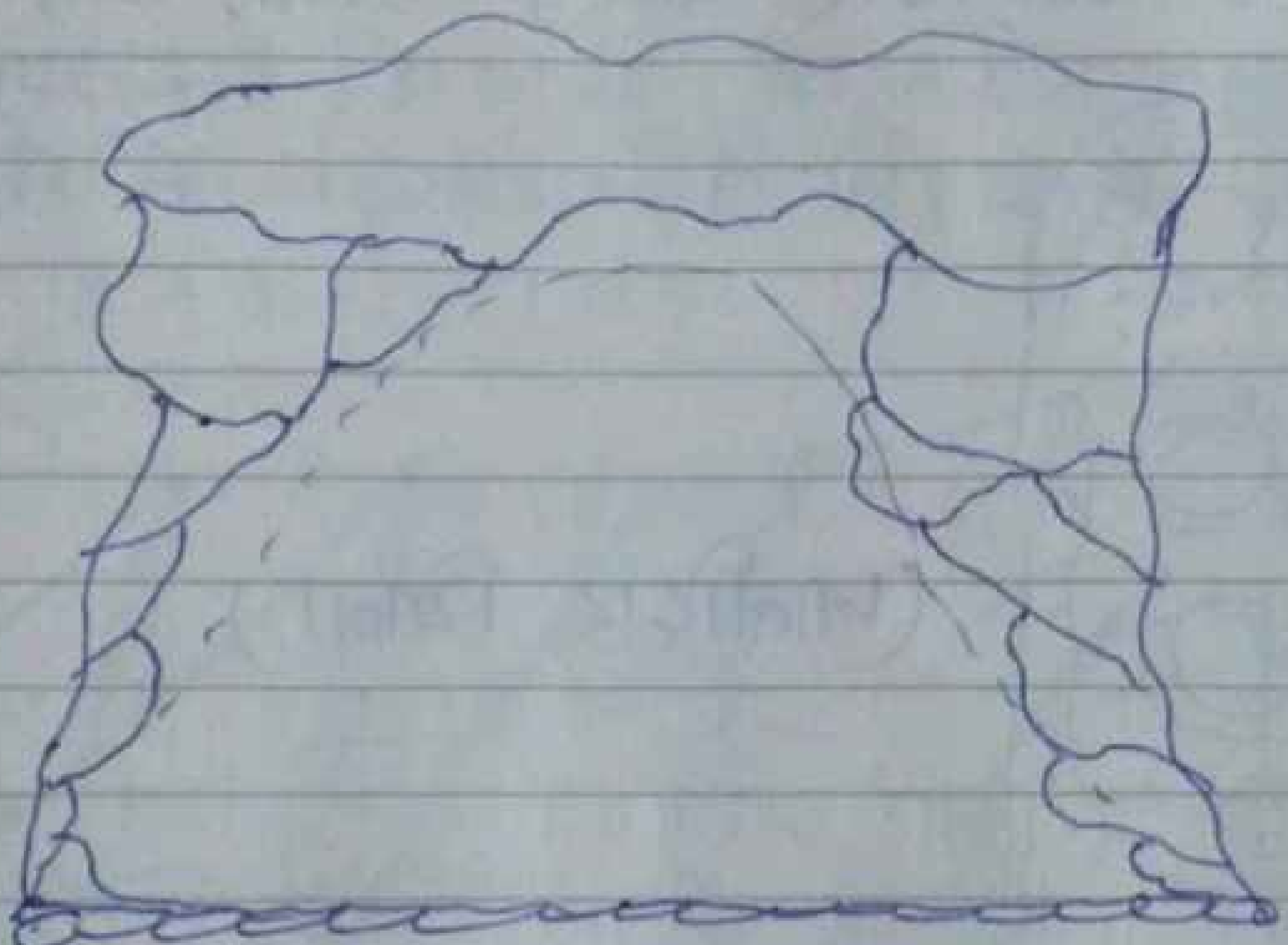

(Arch) (महराब)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

पवन द्वारा निर्मित निक्षेपात्मक स्थलाकृतियाँ :- (Depositional T

(i) बालुका स्तूप -
(2) उर्मिकाएं -
(3) लोयस -

(i) बालुका स्तूप (Sand Dunes) :- मरूस्थलीय भागों में पवन द्वारा मृदा या रेत का बड़े पैमाने पर किया गया निक्षेप बालुका स्तूप कहलाता है। ये बालुका स्तूप स्थानान्तरित होते रहते हैं। ये गोलाकार, अर्द्ध गोलाकार आदि आकृतियों में पाए जाते हैं।

बैगनाल्ड महोदय :- "बालुका स्तूप बालू के गतिशील टीले होते हैं, जिनका अस्तित्व एवं स्वरूप धरातलीय स्वरूप से स्वतंत्र होता है।"

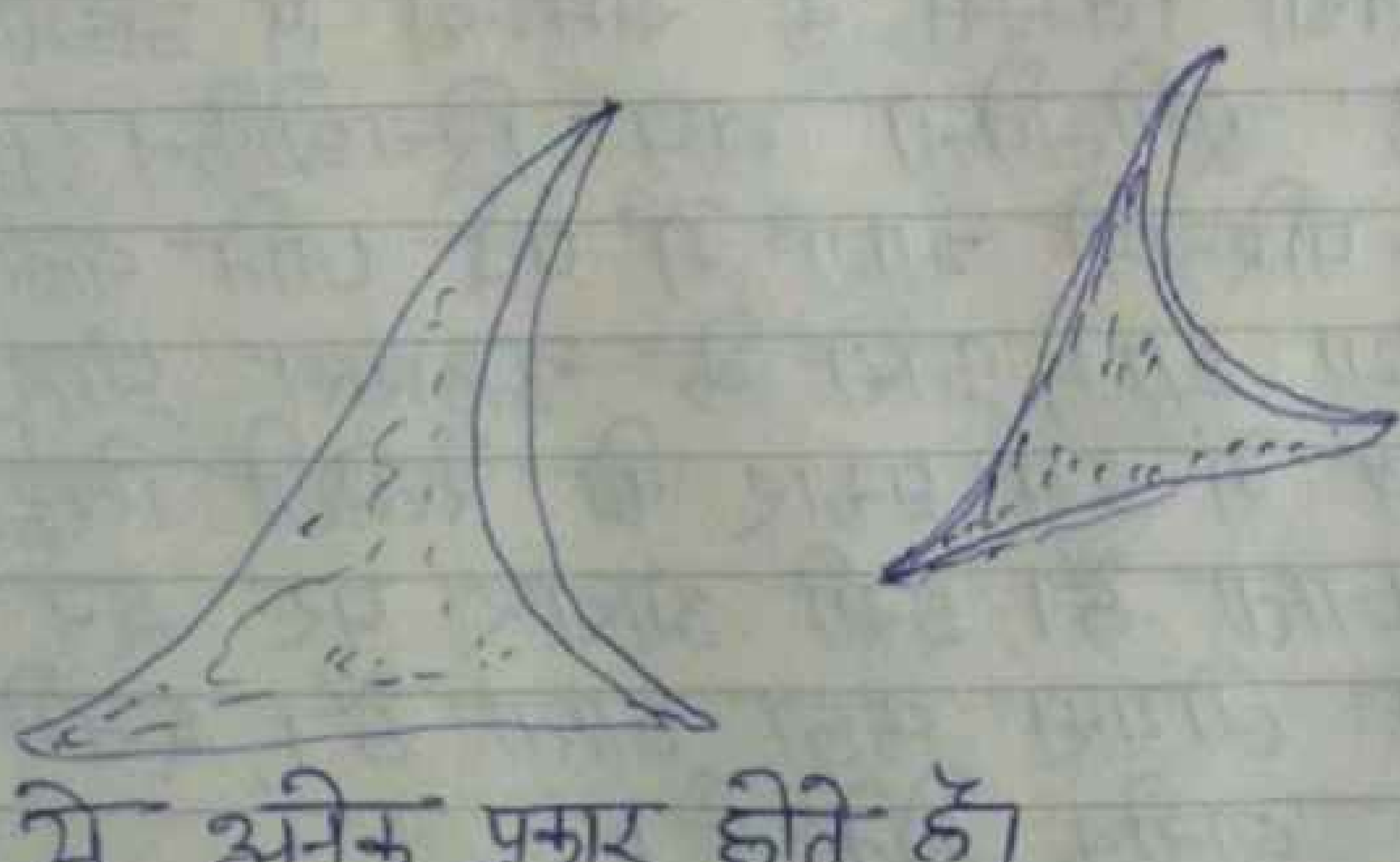

ये अनेक प्रकार होते हैं
(i) अनुप्रस्थ, अर्द्धचन्द्राकार स्तूप या बरखान -
(ii) अनुदैर्ध्य स्तूप या सीफ

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) **उर्मिकाएँ :- (Ripples) :-** मरूस्थलीय प्रदेशों में ही पवन के निक्षेप द्वारा जमा की गई रेत लहरों की तरह दिखाई देती है, रेत की ये लहरें कुछ सेंटीमीटर पर स्थित होती है ऐसी आकृतियों को उर्मिका कहते है। पवन की दिशा बदलने पर इनकी आकृति बदलती रहती है,

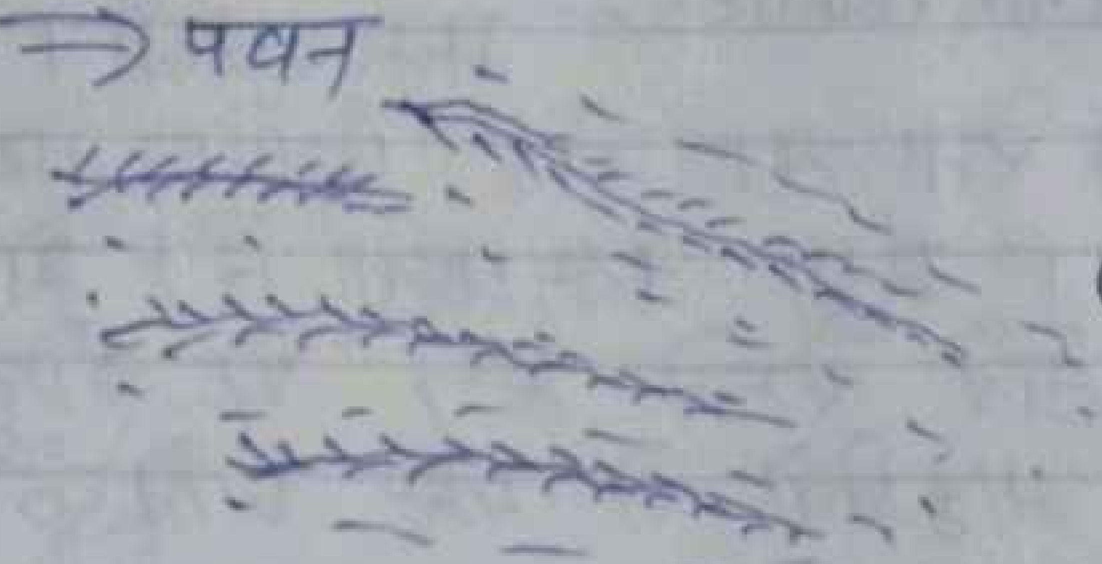

(उर्मिकाएँ)

(3) **लोयस :- (Loess) :-** पवन द्वारा मरूस्थली भागों से उड़ाकर बहुत दूर लाकर किए गए रेत के निक्षेप को लोयस कहा जाता है।

लोयस के निर्माण तथा विकास के सम्बन्ध में अध्ययन सर्वप्रथम जर्मनी के भूगोलवेत्ता वान रिचथोफेन (1886) ने चीन के उत्तरी-पश्चिमी भाग में पाई जाने वाली रेतीली मृदा में किया था। फ्रांस के अलसस प्रांत के लोयस नामक गाँव में इस प्रकार की रेतीली मिट्टी का निक्षेप पाया जाता है, इसी आधार पर इन रेतीले निक्षेपों को लोयस कहा जाता है, इसमे रेत के कण बहुत बारीक होते है।

⇒ चीन मे लोयस का मैदान

Live life cleaner, make earth greener.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

मरुस्थलीय भागों में जलीय स्थलाकृतियाँ :-

(1) उत्खात भूमि (Bad Land) :-

वर्षा से घाटियों, खड्डों, गर्त तथा कटकों से युक्त ऊबड़-खाबड़ भाग को ही उत्खात भूमि कहते हैं। उदा० --चम्बल के बीहड़ (उत्खात भूमि)

(2) प्लाया (playas) :-

मरूस्थलीय भागों में स्थित निम्न गर्तों में वर्षा के समय जल भर जाने से छोटी-छोटी झीलों का निर्माण हो जाता है इन्हें प्लाया कहते है,

(3) बजादा :- (Bajada) :-

मरूस्थलीय भागों में उच्च पर्वतीय भाग एवं प्लाया झील के मध्य लाए गए पदार्थों - कंकड़-पत्थर रेत बजरी आदि का निक्षेप पाया जाता है इस भाग को बजादा कहते है

Every litter bit hurts our mother nature.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न (3) भूमिगत जल द्वारा निर्मित अपरदनात्मक एवं निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का सचित्र वर्णन करें (2022)

प्रश्न :- विश्व के प्रमुख कार्स्ट - प्रदेशों का वर्णन कीजिये। कार्स्ट प्रदेशों से सम्बन्धित विभिन्न भू - आकारों का विवरण दीजियें। (2014)

उत्तर :- भू - सतह के नीचे स्थित शैलों के रन्ध्रों, दरारों, सुराखों में विद्यमान जल 'भूमिगत जल' कहलाता है,

कार्स्ट :- चूने के प्रदेश

कार्स्ट शब्द का प्रयोग यूगोस्लाविया के एड्रियाटिक सागर के तटीय सँकरे चूनायुक्त पहारी भाग के लिए किया गया है

चूना प्रदेश - स्लोवानिया, क्रोशिया, बोस्निया, हर्जगोविना आदि देशों का एड्रियाटिक सागर तटीय क्षेत्र प्रमुख है,

अन्य फ्रास का कौसे क्षेत्र, ग्रीस, स्पेनिश, जमैका, मैक्सिको (यूकाटन एवं टेबेस्को) पश्चिमी क्यूबा, गुयाना, पश्चिमी आस्ट्रेलिया, U.S.A के पैन्सिलवानिया का ग्रेट वेली प्रदेश, वर्जीनिया, इण्डियाना, केन्टुकी, मध्य फ्लोरिडा, मिसौरी, इग्लैण्ड का चाक क्षेत्र

भारत में - कुल्लू, कांगड़ा, देहरादून, (सहस्त्रधारा तथा राबिट कन्दरा), चेरापूँजी, विशाखापट्टनम, जबलपुर (भेड़ाघाट), सोलन, पचमढ़ी, बस्तर, तथा रोहतास का पठार (गुप्तधाम) प्रमुख कार्स्ट क्षेत्र है,

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(1) कार्स्ट प्रदेशों में अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ :-

(1) लेपिज (Lapies) -
(2) घोल रन्ध्र (Sink Holes) :-
(3) विलय रन्ध्र (Swallow Holes)
(4) डोलाइन (Doline)
(5) युवाला (Uvala)
(6) राजकुण्ड (Poliye) पोलिये
(7) कन्दरा या गुफा -
(8) कार्स्ट घाटी -
(9) कार्स्ट झीलें
(10) हम्स -
(11) टेरा रोसा : घोलन क्रिया से निर्मित लाल व भूरि मिट्टीयाँ टेरा-रोसा कहलाती है।

(1) लेपिज (Lapies) :- चूने के प्रदेशों में वर्षा का कार्बनयुक्त जल जब धरातल पर बहता है। जल चट्टान की संधियों को अपनी घुलन क्रिया द्वारा विस्तृत करने लगता है। जिस कारण छोटी-छोटी शिखरिकाओं का निर्माण हो जाता है। इन्हें लैपीज कहते है,

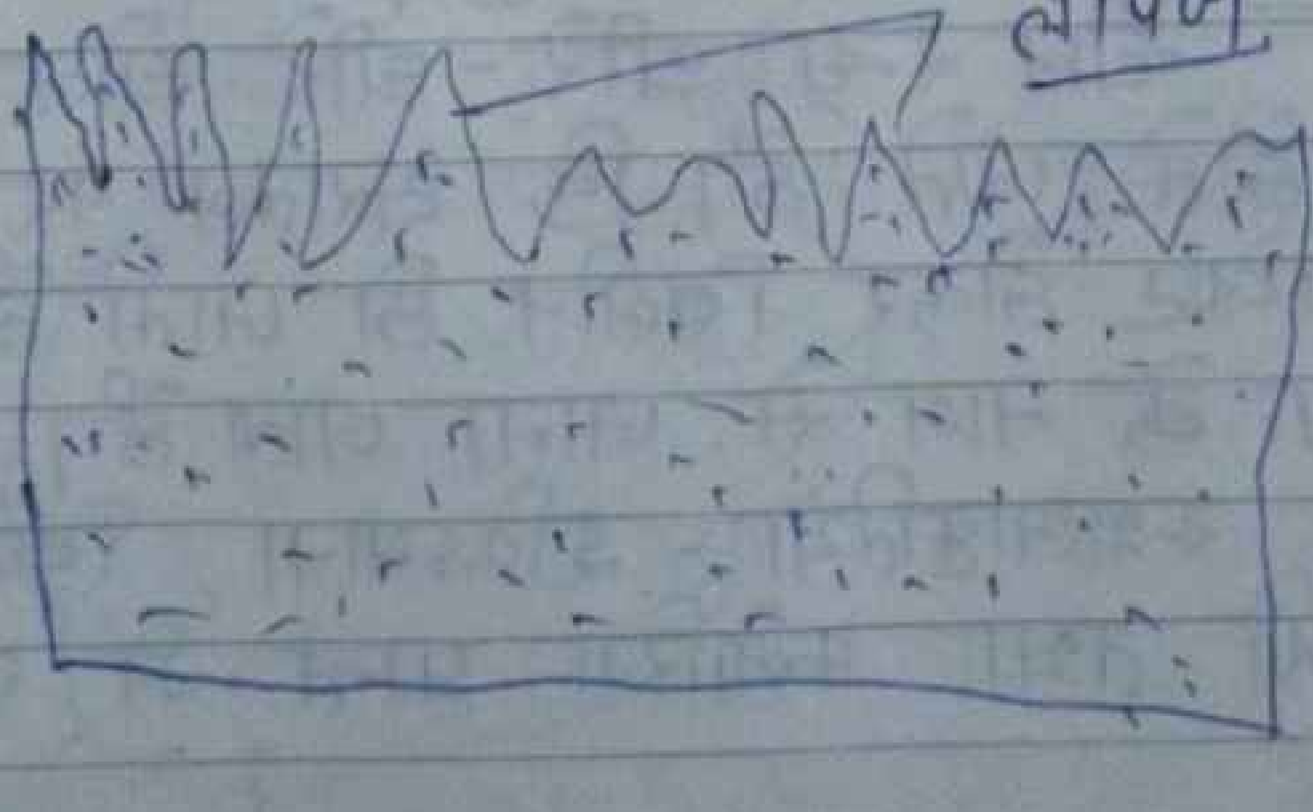

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) घोल रन्ध्र :- (Sink Holes) :- चूने की चट्टान वाले प्रदेशों में ऊपरी सतह पर जब वर्षा का जल आता है, तो CO_2 गैस के साथ मिलकर वह सक्रिय घोलक बन जाता है।
- चट्टान की संधियों में जल प्रविष्ट होकर उसके घुलनशील तत्वों को घुला कर निकाल लेता है, इससे असंख्य छिद्रों का विकास हो जाता है, छोटे - छोटे छिद्रों को घोल रन्ध्र कहा जाता है,
- U.S.A के दक्षिणी इण्डियाना प्रान्त में 3000,00 की संख्या में घोलरन्ध्र मिलते हैं।

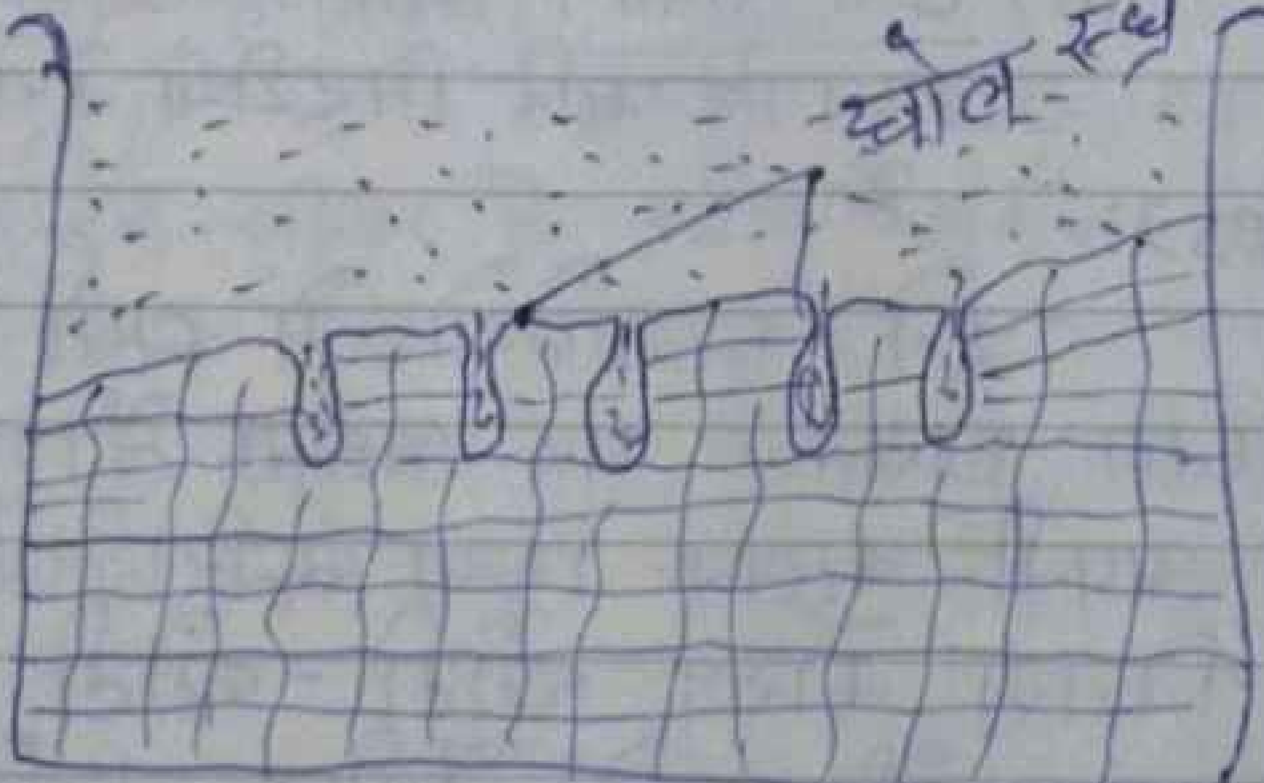

(3) विलय रन्ध्र :- (Swallow Holes) :- घोल रन्ध्र धीरे - धीरे घोल क्रिया द्वारा विस्तृत (चौड़े) होते जाते हैं कि धरातल पर बहने वाली नदियाँ इनमें प्रविष्ट होकर विलीन हो जाती हैं ऐसे रन्ध्रों को विलय रन्ध्र के नाम से जाना जाता है।
- इस प्रकार की स्थलाकृतियाँ :- इण्डियाना, ब्रिटेन में गेपिंग झील, कैंचुकी तथा फ्लोरिंग प्रान्त में पाई जाती हैं।

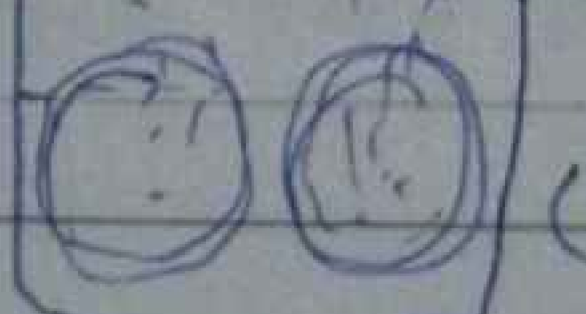

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(4) डोलाइन (Doline) :- चूने के प्रदेशों में शैलों के घुलन क्रिया द्वारा विलयन छिद्रों का विकास लगातार गहराई में तथा क्षेत्रफल में होता रहता है। जब इन छिद्रों का अत्यधिक विस्तार हो जाता है। तो उन्हे डोलाइन कहते है, इनकी आकृति बेलनाकार या कीप के समान होती है,

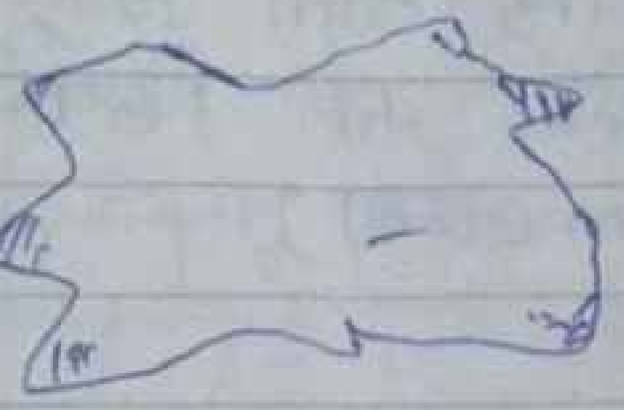

(डोलाइन)

(5) युवाला :- (सकुण्ड) (Uvala) :- जब घुलनशील क्रिया द्वारा अनेक डोलाइन मिलकर एक लम्बाकार विस्तृत गर्त का निर्माण करते है, तो इसे युवाला या घाटी रन्ध्र कहते है। इनका निर्माण भू-सतह की छत के विस्तृत रूप में ध्वस्त होने व संयुक्त घोल रन्ध्रों के ध्वस्त होने पर भी होता है, ये इतने विस्तृत होते है कि इनमें सतही नदियाँ भी समाकर विलुप्त हो जाती है

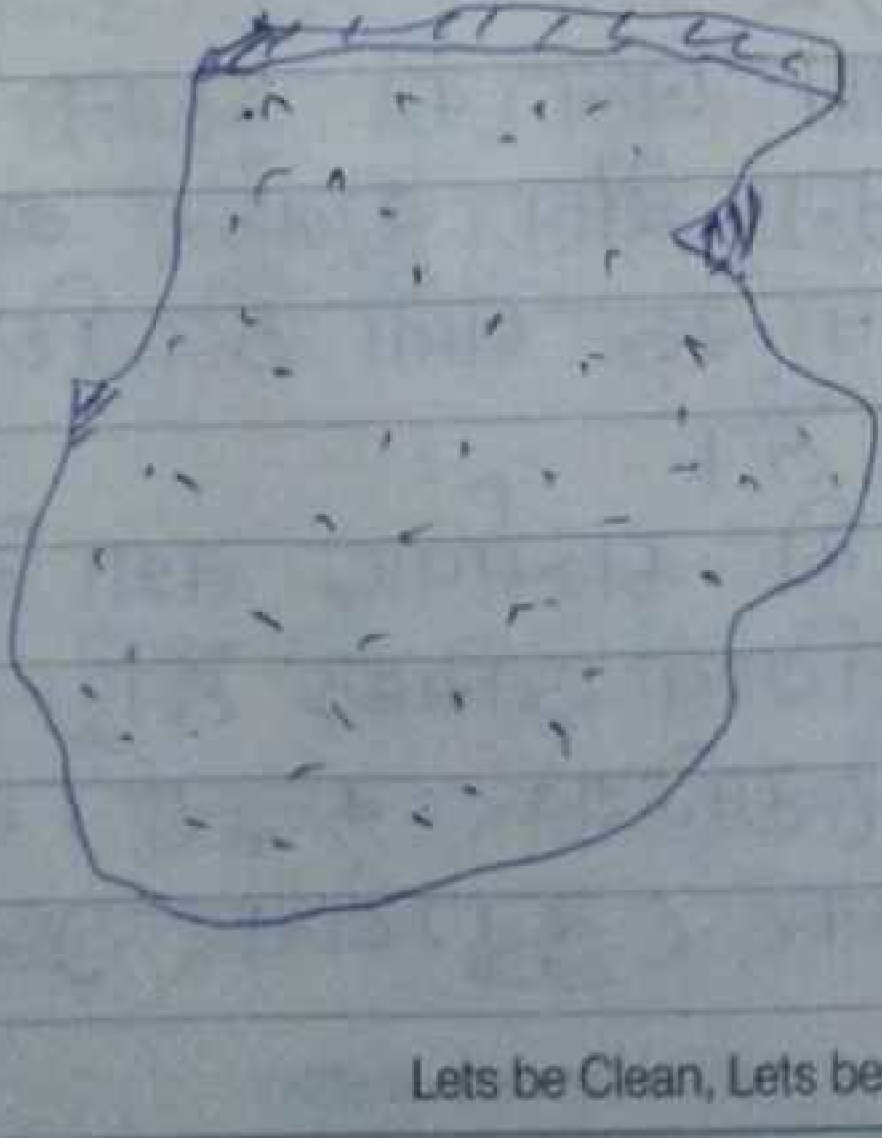

(युवाला)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(6) राजकुण्ड (पोलिये) (Polje) :- अर्ध खुला क्षेत्र युवाला से भी अधिक विस्तृत गर्त को राजकुण्ड या पोलिये कहते है, चूना प्रदेशों वाले क्षेत्रों में नीचे की ओर भ्रंशित तथा अववलित भागों में घुलन क्रिया द्वारा कुछ परिवर्तन हो जाने पर पोलिये का निर्माण हो जाता है, इसका क्षेत्रफल कई वर्ग किलोमीटर तक होता है,

Eg :- बुल्गारिया के बाल्कन प्रदेश का लिवानो पोलिये (5-11 Km चौड़ा व 64 Km लम्बा)

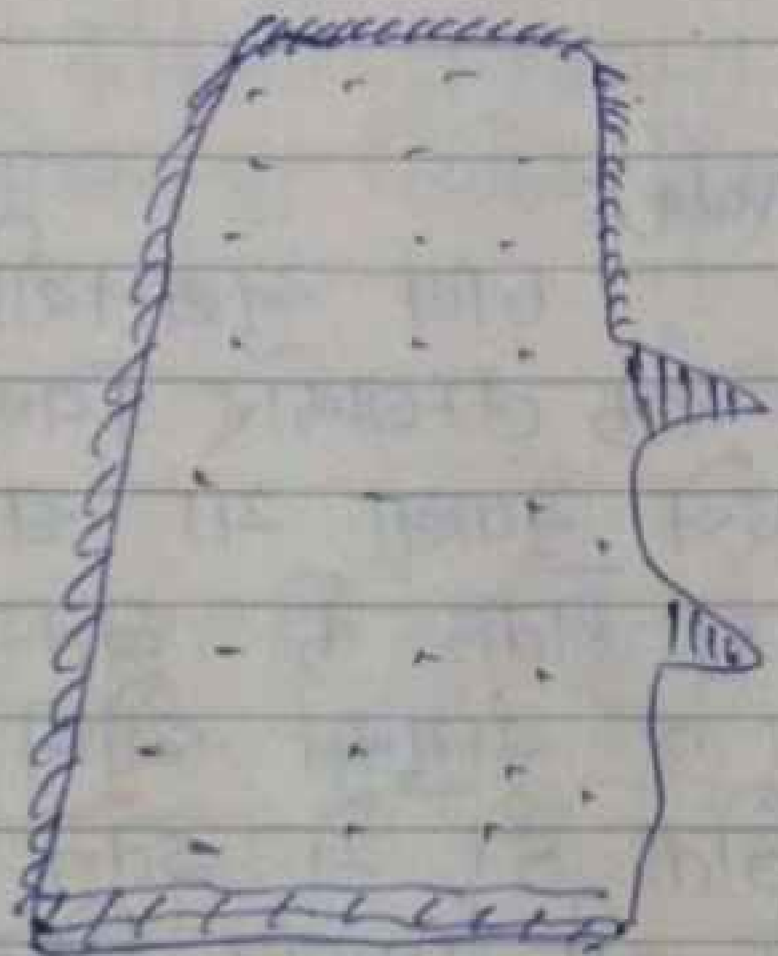

(7) कन्दरा या गुफा (Cave) :-

भूमिगत जल की घुलन क्रिया के कारण भूमि के अन्दर चूना शैल घुलकर बह जाती है तथा खोखली आकृति शेष रह जाती है। जिसे कन्दरा के नाम से जाना जाता है।

⇒ U.S.A के न्यू मैक्सिको की कार्ल्सवाद तथा केण्टुकी राज्य की मैमथ कन्दराएँ विश्व प्रसिद्ध है,

⇒ भारत मे देहरादून (टपकेश्वर कन्दरा)

⇒ छत्तीसगढ़ के बस्तर (कुटुम्बसर) कन्दरा

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

→ होलोक कन्दरा - माउरेटल (स्विट्जरलैण्ड) ४५.२ km लम्बाई

पोनर:- नलिका जो लम्बवत होती है। यह कन्दरा को विलयन छिद्र से या सीधे सतह से मिलाता है। पोनर द्वारा कन्दरा को जल मिलता है।

(8) कार्स्ट घाटी :-(Karst valley):-
कार्स्ट क्षेत्रों में वर्षाकाल में सतही नदियाँ चूने के धरातल पर प्रवाहित होती है तो घोलीकरण द्वारा यह धरातल तीव्र खड़े ढालों वाली यू-आकार की घाटी बना देती है, इन घाटियों को ही कार्स्ट घाटी या घुलन घाटी भी कहते है।

(9) हम्स :-
चूने के प्रदेशों में बनी स्थलाकृतियों में कुछ कठोर चुना पत्थर के अवशिष्ट भाग खड़े रह जाते है। इन टीलों के शिखर एक शंकु से होते है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

जो कि एक अकेली पहाड़ी के रूप में खड़े पाये जाते हैं।

(10) कार्स्ट झीलें :- (Karst Lake) :-

इनका निर्माण डोलाइन के तल में अन्तः घुलित मृत्तिका के जमा होकर अवरुद्ध होने से होता है जिससे डोलाइन की तली में बने छिद्र बन्द हो जाते हैं, जिससे जल रिसकर नीचे नहीं जा पाता तथा एकत्रित होकर झील का रूप ले लेता है जिसे कार्स्ट झील कहते हैं

⇒ फ्लोरिडा (U.S.A) की एलाशुआ झील (कार्स्ट झील है)

(II) कार्स्ट प्रदेशों मे निक्षेपात्मक स्थलरूप :-

(i) स्टैलेक्टाइट (आश्चुताश्म) (Stalactite) :-
(ii) स्टैलेग्माइट (निश्चुताश्म) (Stalagmite) :-
(iii) कन्दरा स्तम्भ (Cave Pillars) :-

(i) स्टैलेक्टाइट (आश्चुताश्म) :-

~~कन्दरा की छत से रिसने वाले जल की मात्रा यदि कुछ अधिक~~

कन्दरा की ऊपरी छत से जल रिस कर नीचे टपकने लगता है परन्तु जब अधिक ताप के कारण जल सूखने लगता है, तब कन्दरा की छत के निचले स्तर पर पदार्थों का निक्षेप होने लगता है यह निक्षेप लम्बे किन्तु पतले स्तम्भों के रूप में होता है जो कि कन्दरा की फर्श की ओर बढ़ने लगते है इन लटकते हुए स्तम्भों को

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

स्टैलेक्टाइट कहा जाता है,

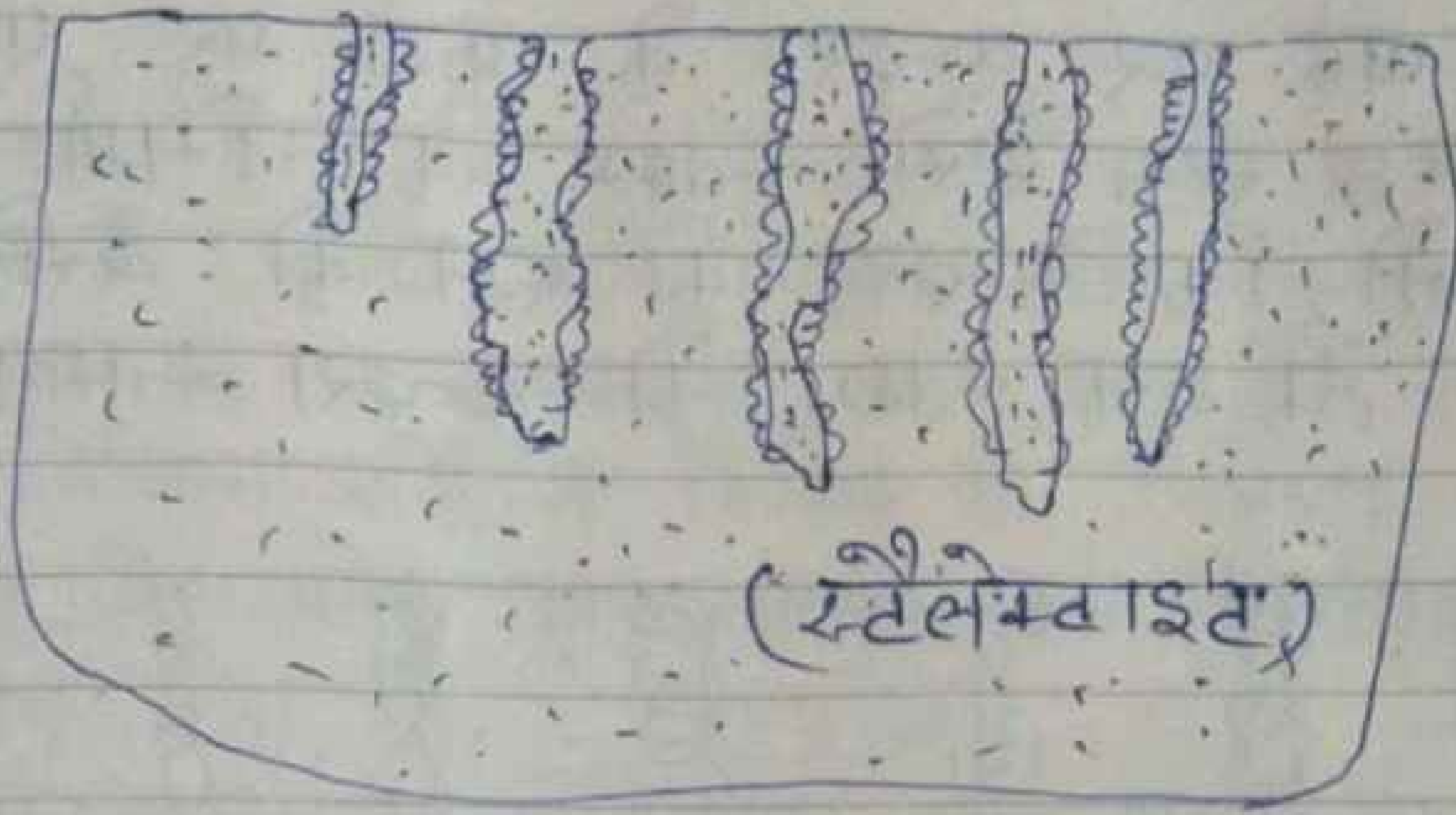

(2) स्टैलेग्माइट :-(निश्चुताश्म):-

कन्दरा की छत से रिसने वाले जल की मात्रा यदि कुछ अधिक होती है तो वह सीधे टपक कर कन्दरा के फर्श पर पहुँच जाता है, इस तरह कन्दरा के फर्श पर निक्षेपात्मक स्तम्भ का निर्माण हो जाता है। धीरे-2 निक्षेप द्वारा इन स्तम्भों की ऊँचाई ऊपर की ओर बढ़ती जाती है। इस प्रकार के स्तम्भों को 'स्टैलेग्माइट' कहते हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) कन्दरा स्तम्भ :- (Cave Pillar) :-

निरन्तर लम्बाई में वृध्दि के कारण स्टैलेग्माइट बढ़ कर कन्दरा के फर्श पर पहुँच जाते है, इस तरह एक ऐसे स्तम्भ का निर्माण हो जाता है जो कि कन्दरा की छत को इसके फर्श से मिलाता है, इस स्तम्भ को कन्दरा स्तम्भ कहते है,

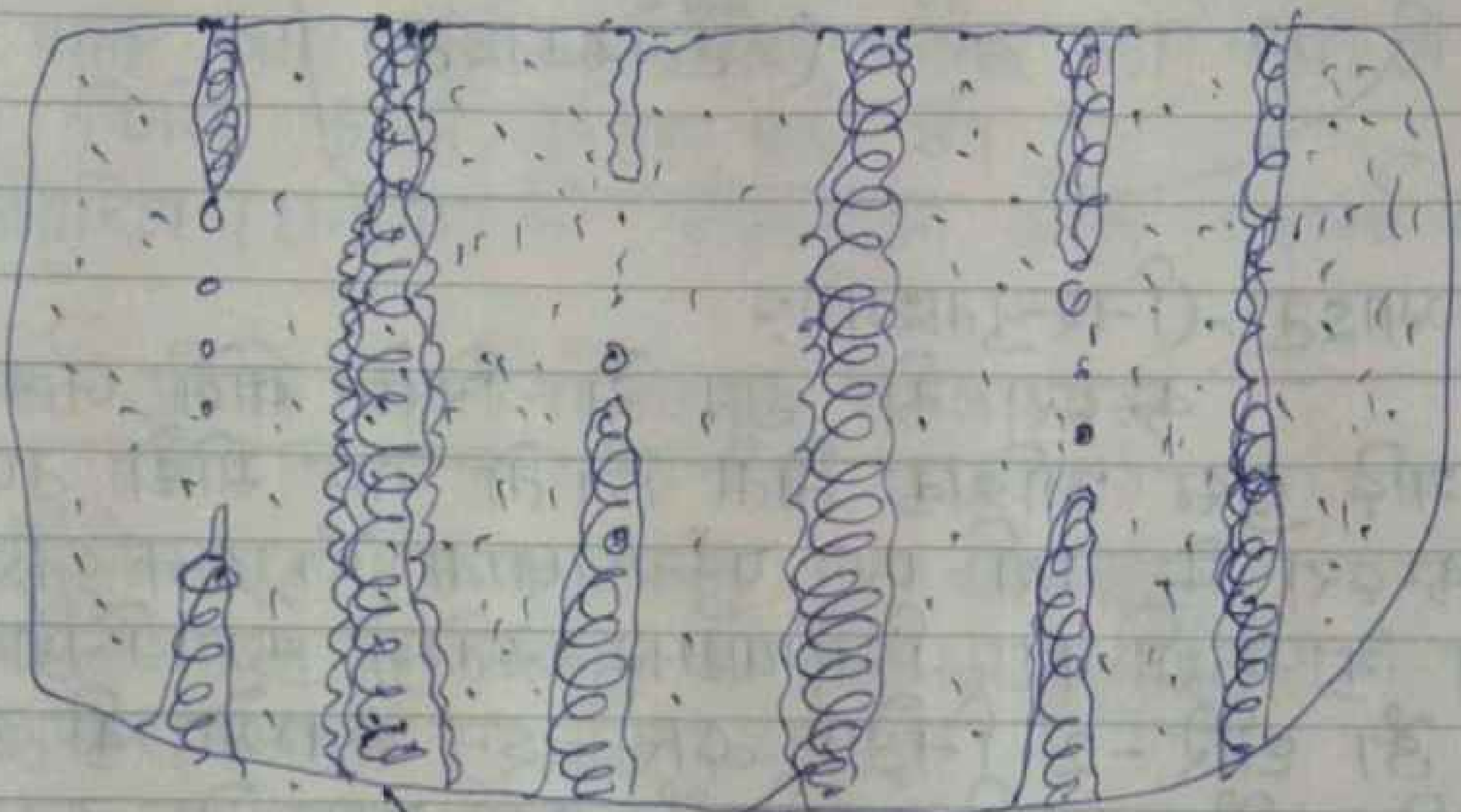

(कन्दरा स्तम्भ)

(4) ज्यूडीज एवं वग्स :-

चूने के प्रदेशों में चट्टानों के खाली स्थानों पर भूमिगत जल में घुले हुए खनिज जमा हो जाते है इन खनिजों के रवों की आकृति गोलाकार तथा अण्डाकार होती है इन्ही को ज्यूडीज एवं वग्स या नोडुल्स कहते है,

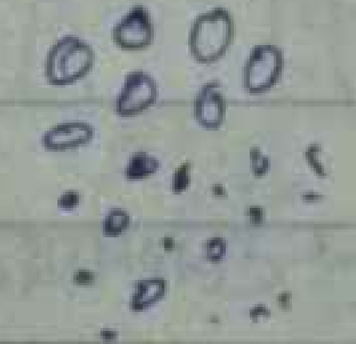

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

प्रश्न• 4 हिमानी या हिमनद द्वारा अपरदनात्मक व निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का वर्णन कीजिए।,

उत्तर:- हिमनद हिम की ऐसी राशि है।, जो धरातल पर संचय के स्थान से धीरे- धीरे खिसकती है, हिमच्छादित क्षेत्रों में हिमानी उत्पाटन व अपघर्षण करते हुए शैलों का अपरदन करती है एवं विभिन्न रूपों में हिमोढ़ का निक्षेपण करती है, जिससे हिम क्षेत्रों में अनेक अपरदनात्मक एवं निक्षेपात्मक स्थलाकृतियों का निर्माण होता है,

⇒ हिम के सम्पीड़ित होने पर बर्फ बनती है। हिम से बर्फ दो प्रक्रियाओं के द्वारा बनती है,

(i) संचयन (Accumulation) -
(2) संहनन या सम्पीड़न (Compression):-

(i) संचयन :- हिम गिरती है, वह गहराई तक संचित होती रहती है।

(2) सम्पीड़न :- हिम कण जैसे-जैसे संगठित होते जाते हैं उन पर निरन्तर हिम परतों का भार बढ़ते रहने से हिमनद बर्फ बनती है, सम्पीड़न से ये सघन हो जाती है,

(1) अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ :- अपघर्षण, उत्पाटन, घर्षण,
(कंकड़ पत्थर के घर्षण साथ -) (हिम पिण्ड का टूटना) (हिम के साथ कंकड़ पत्थर आपस में रगड़)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(I) अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ :- (Erosional Topographies) :-

(i) 'U' यू - आकार की घाटी ·
(ii) लटकती घाटी - (Hanging Valley)
(iii) हिम गह्वर - (सर्क) (Cirque)
(iv) टार्न (Tarn) - (सर्क झील)
(v) नूनाटक - (Nunatak)
(vi) कॉल - (Col) (दर्रा या विभाजक पात्र) -
(vii) श्रृंग व पुच्छ - (Crag and Tail) - ([illegible])
(8) मेष शिला . (Sheep Rock) -
(9) फियोर्ड - (-
(10) हिमानी खाँच तथा खरोच -
(11) हिमानी सोपान -
(12) हार्न (Horn) (गिरि श्रृंग)
(13) अरेत (तीक्ष्ण कटक) (Arete)

(i) 'U' यू - आकार की घाटी :- पर्वतीय क्षेत्रों में हिमनद ऐसी घाटियों से प्रवाहित होती हैं। जिनकी तली सपाट एवं चौरस तथा किनारे खड़े ढाल वाले होते है इनका आकार अंग्रेजी के 'U' अक्षर के समान होता है, जिस कारण इसे यू- आकार की घाटी कहते है, हिमनद से ये घाटिया नही बनती है नदियों से निर्मित घाटियों को विकसित करती है अपघर्षण व उत्पाटन द्वारा यू - आकार की घाटी का निर्माण करते है।

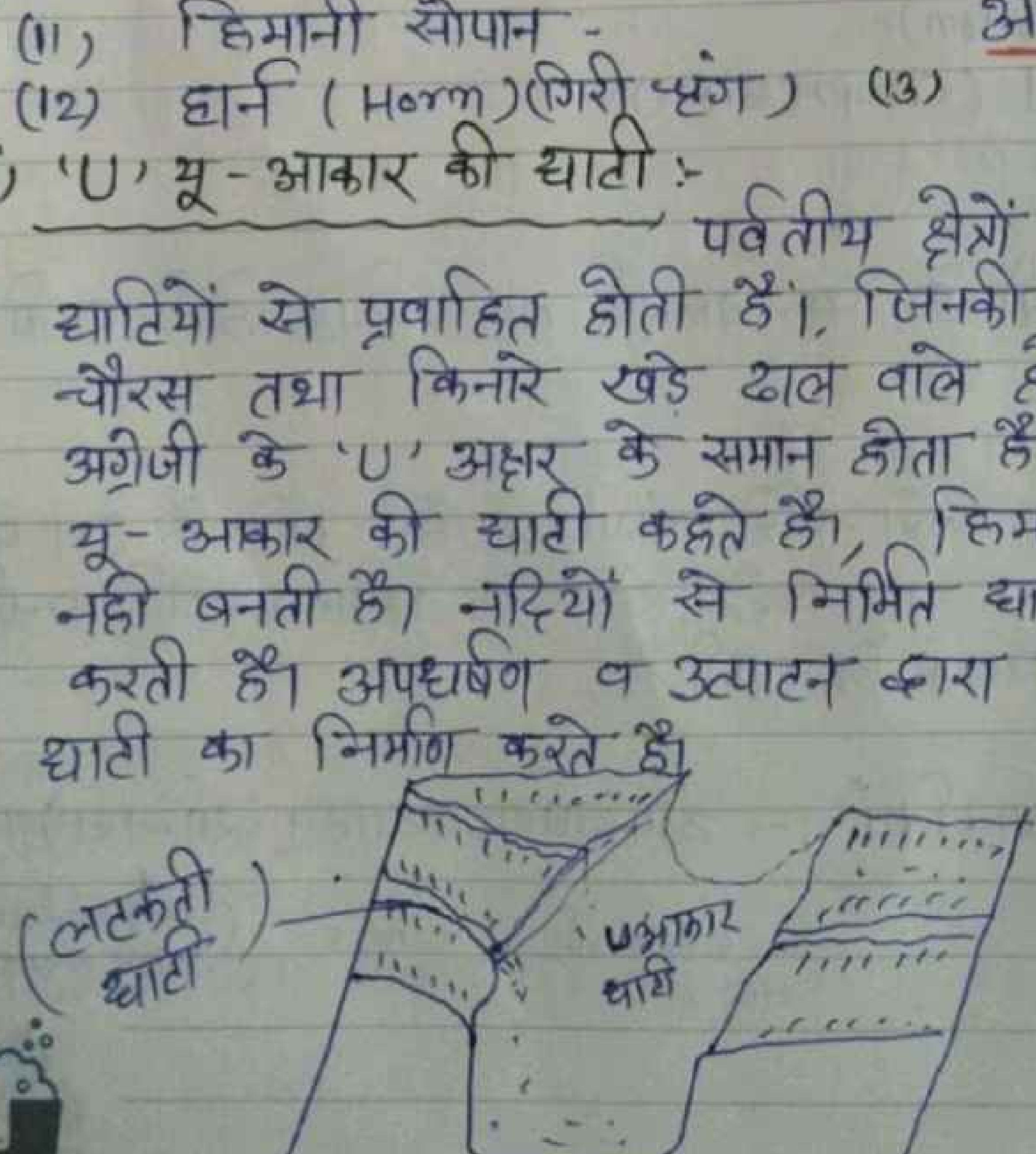

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) लटकती घाटी :- (Hanging Valley) :- मुख्य हिमनद घाटी में मिलने वाले सहायक हिमनदों का तल हिमनद घाटी से ऊँचा होता है, इस स्थिति में सहायक घाटी मुख्य घाटी पर लटकती हुई दिखती है, इसी कारण इन्हें लटकती घाटियाँ कहते हैं। लटकती घाटी के हिमनद से हिम के पिघलने से जल निचली घाटी में गिरता है, तो लटकती घाटी को प्रपात घाटी भी कहते हैं,

(3) हिम गह्वर (सर्क) (cirque) :- सर्क हिमनदीय घाटी के ऊपर एक कटोरेनुमा या अर्द्धवृत्ताकार गहरा गर्त होता है, जिसके किनारे खड़े होते हैं। एक तरफ से खुले रहते हैं, ये हिम से भरे रहते हैं। जिस कारण इन्हें हिमगह्वर कहते हैं। ये आराम कुर्सी जैसी आकृति होती है,

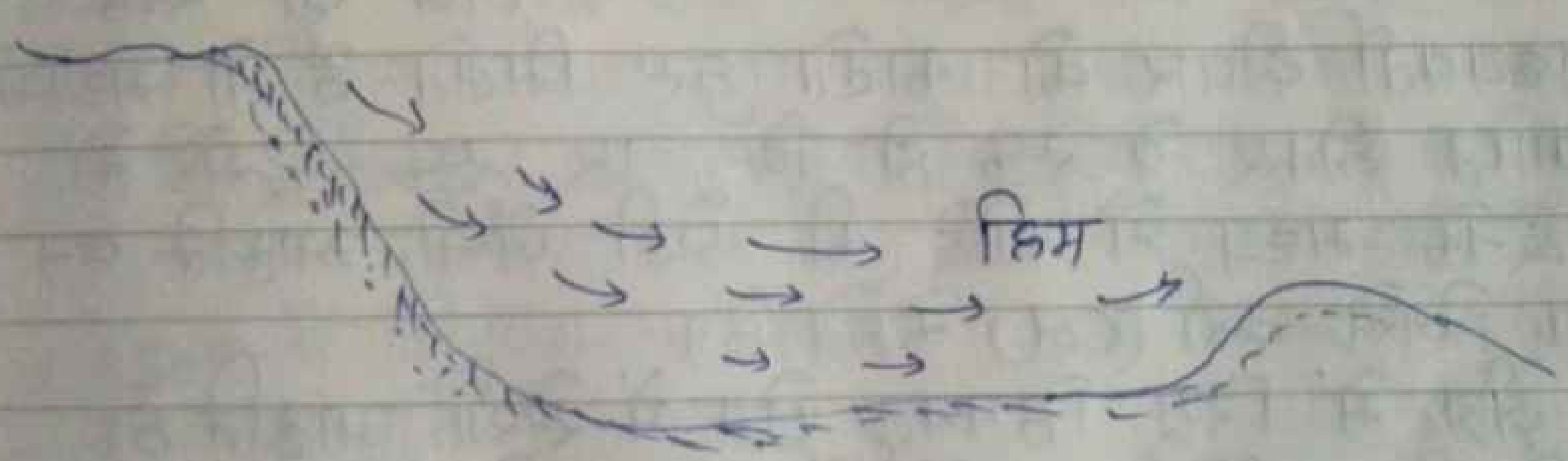

(4) टार्न (Tarn) सर्क झील :- सर्क बेसिन में हिम से अधिक दबाव से चट्टानी तली में अपरदन क्रिया से गड्ढे बन जाते हैं। इनमें हिम के पिघलने पर जल भर जाता है। जिसमें एक लघु झील बन जाती है। इस प्रकार की झील को सर्क या टार्न झील कहते हैं,

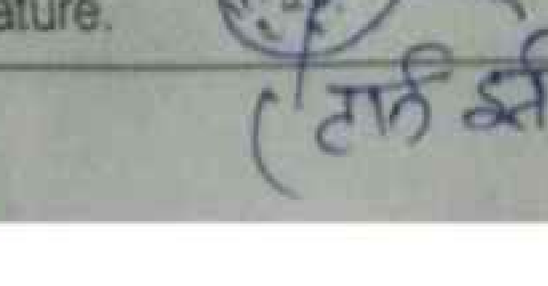

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(5) नूनाटक :(Nunatak) :- किसी विस्तृत हिम क्षेत्र में उभरे हुए शैल श्रृंग या टीले नुनाटक कहलाते है, ये द्वीप सदृश लगते है, ये टीले विस्तृत हिमराशि के मध्य ऊँचाई में विस्तृत रहते है। जिस कारण इन्हें हिमान्तरण द्वीप भी कहते है, नूनाटक हिमनद द्वारा क्षैतिज अपरदन एवं तुषार क्रिया के कारण नीचे होते रहते है,

(हिम क्षेत्रों में उभरे टीले - नूनाटक)

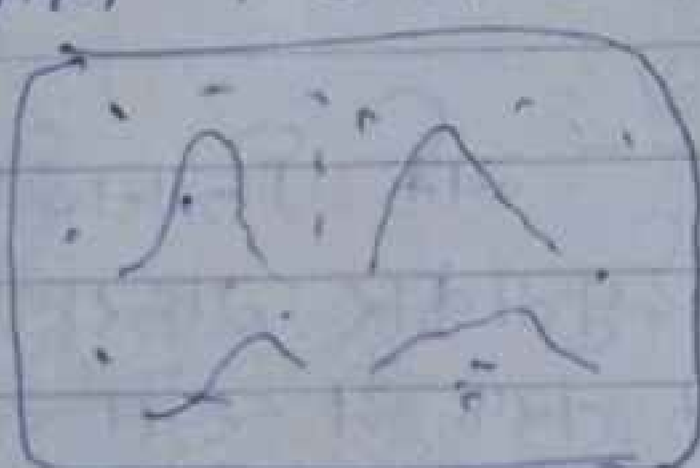

(6) दर्रा (कॉल) col - (विभाजक पात्र) :- जब दो सर्क अपनी मध्यवर्ती दीवार को काटते हुए मिलते हैं तो मध्यवर्ती श्रेणी समाप्त होकर वे एक ही बिन्दु पर एक - दूसरे को छूते है, इनके मध्य में घोड़े की काठी जैसी आकृति बन जाती है। जिसे दर्रा (col) कहते है।

⇒ काराकोरम क्षेत्र में रिमू हिमनद क्षेत्र में ऐसी आकृति है।

⇒ उत्तरी अमेरिका का कैनेडियन पैसेफिक रेलमार्ग ऐसे ही दर्रे से होकर गुजरता है।

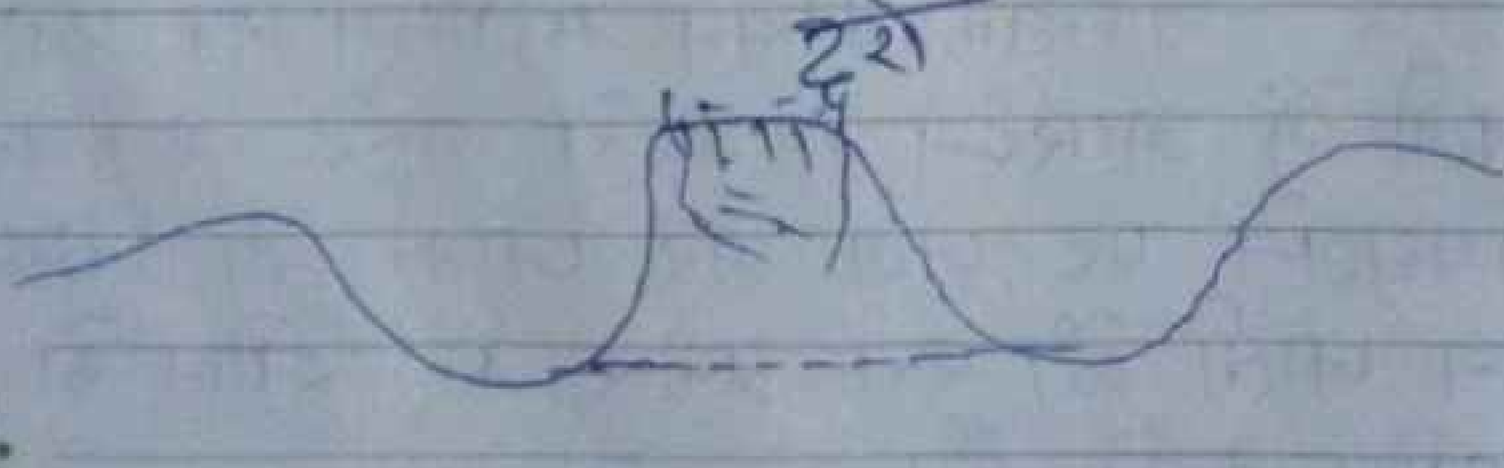

Clean India is our duty and right.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(7) श्रृंग व पुच्छ :- (Carg and Tail) :- हिमानी क्षेत्रों में ऐसी शिलाऐं जिनके हिम सम्मुख ढाल तीव्र व उबड़-खाबड़ व विमुख ढाल सपाट व मंद होते हैं, श्रृंग व पुच्छ कहलाते हैं।,

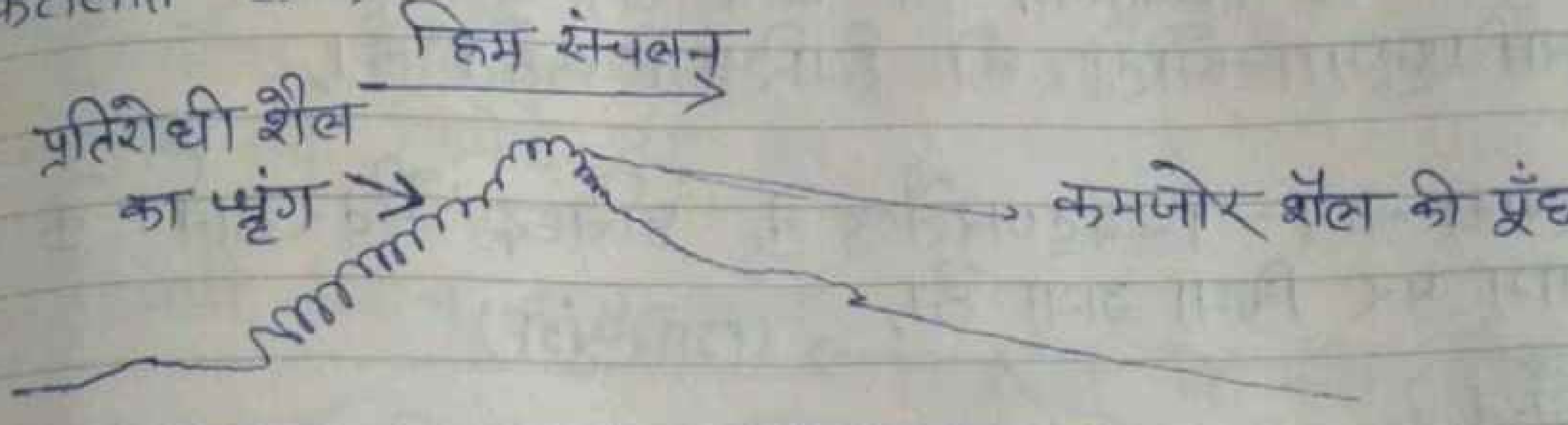

(8) मेष शिला :- (Sheep Rock) :-
हिमनद जब आगे की ओर अग्रसर होता है, तो अपने मार्ग में आने वाली सभी अवरोधों को काट कर सपाट बना देता है इस प्रकार अपघर्षण एवं उत्पाटन द्वारा हिमानी का सम्मुख ढाल चिकना एवं सपाट हो जाता है, लेकिन विमुख ढाल टूटा-फूटा तथा ऊबड़-खाबड़ हो जाता है ये गोलाकार टीले दूर से देखने पर भेड़ की पीठ के समान दिखाई देते हैं, मेष शिलाएँ कहते हैं,
⇒ 1804 में डीसॉसर महोदय ने इस प्रकार के टीलों को 'रॉश मुटोने' कहा था।,

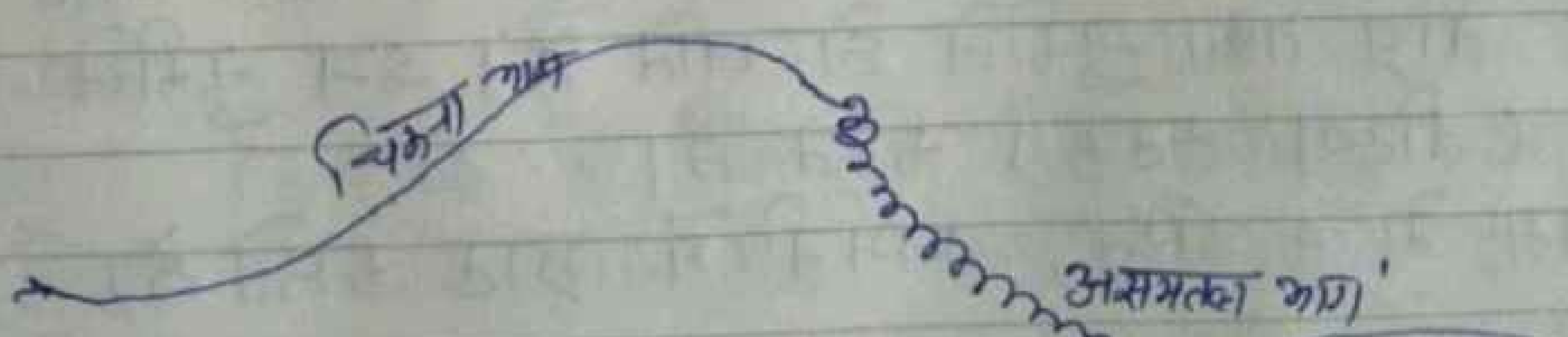

(मेष शिला)

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(9) गिरी श्रृंग (Horn) :- (हार्न) जब किसी पहाड़ी के पार्श्वों पर अनेक सर्क विकसित हो जाते हैं तो ये निरन्तर अपघर्षण द्वारा पीछे हटने के कारण पिरामिड़ की आकृति में विकसित हो जाते हैं इस प्रकार की पिरामिडनुमा चोटी को गिरिश्रृंग कहते हैं,

⇒ इसका नाम - स्विट्जरलैण्ड के प्रसिद्ध 'मैटरहार्न' के नाम पर किया गया है,

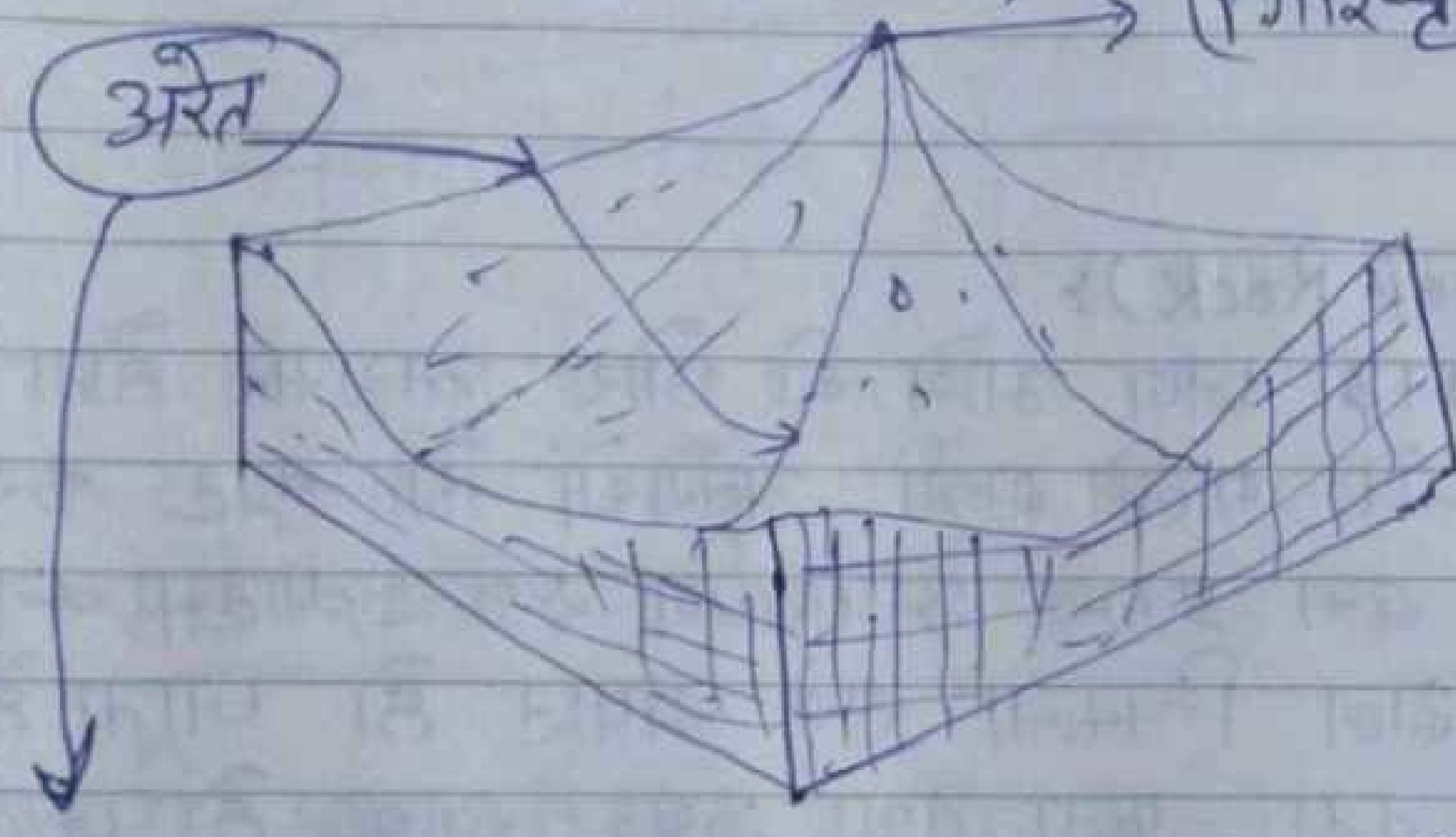

(10) तीक्ष्ण कटक (अरेत) :- (Arete) :- अर्थ - (तीव्र ढाल वाले किनारे)

⇒ पर्वतीय भाग में जब किसी पहाड़ी के दोनों ओर सर्क परस्पर एक - दूसरे के समीप आने लगते हैं, तो उनका मध्यवर्ती भाग अपरदित होकर नुकीला हो जाता है, अन्त में ये तीव्र तथा नुकीले हो जाते हैं। इन नुकीले कटकों को अरेत (तीक्ष्ण कटक) कहते हैं।
फ्रांस में - अरेत, जर्मनी में ग्राट कहते हैं)

(11) फियोर्ड (Fiords) :- ये लम्बी सँकरी तथा तीव्र ढाल

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

वाली हिमानीकृत जलमग्न घाटियाँ होती हैं, यह उच्च अक्षांशों में एक प्रकार का सागर तट होता है, फियोर्ड का निर्माण हिमनदी घाटियों के भू-गर्भिक हलचल के कारण निमज्जन से होता है,

⇒ ग्रीनलैण्ड, नार्वे, स्वीडन, न्यूजीलैण्ड, चिली, आदि के सागरीय तट फियोर्ड तट है,

(12) हिमानी खरोच तथा खाँच :- हिमनदों में फँसे शैलखण्डों की अपघर्षी क्रिया द्वारा शैल पृष्ठों पर उत्पन्न खरोंचों को हिमानी खरोंच कहते है।

⇒ हिमनद के साथ प्रवाहित बजरी तथा कंकड़ शैल पृष्ठों पर उत्पन्न खरोचे विखण्डित होकर अधिक गहरी तथा विस्तृत हो जाती है, जिन्हे खाँच कहते है।

(13) हिमानी सोपान :- मुख्य: हिमनद की सहायक हिम नदियाँ कभी-कभी अपरदन द्वारा सीढ़ीनुमा आकार के सोपान बना देती है, इन सोपानों को हिमानी सोपान कहते है, इन्हे देखने पर डरावने लगते जिस कारण इन्हे दैत्याकार सोपान कहते है।

(14) सुरंग घाटी :- हिमनद के पिघलने से अधिक मात्रा में जल उपलब्ध होता है। जिसका कुछ भाग हिमनद के ऊपर, कुछ भाग इसके अन्दर तथा कुछ भाग आधार शैलों पर प्रवाहित होता है। हिम पिघलने से प्राप्त यह जल हिमनद के ग्रीव से घाटी तक तिव्रता से प्रवाहित होता है इस प्रवाह मार्ग को सुरंग घाटी कहते है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(II) निक्षेपात्मक स्थलाकृतियाँ :- (Depositional Topographies):-

(1) हिमोढ (Moraines):-
(2) एस्कर (Esker):-
(3) केम (Kame):-
(4) केटील (Kettle) व (हमक - Hummock)
(5) ड्रमलिन (Drumlin)-
(6) हिमानी अवक्षेप मैदान (Outwash plain):-
(7) टिल (Till)

(1) हिमोढ (Moraines):-

हिमानी द्वारा निक्षिप्त कंकड पत्थर व गोलाश्म के जमाव हिमोढ कहलाते है जो हिमानी के किनारो, उसके अन्तिम भाग या तल पर निक्षेपित होते है।

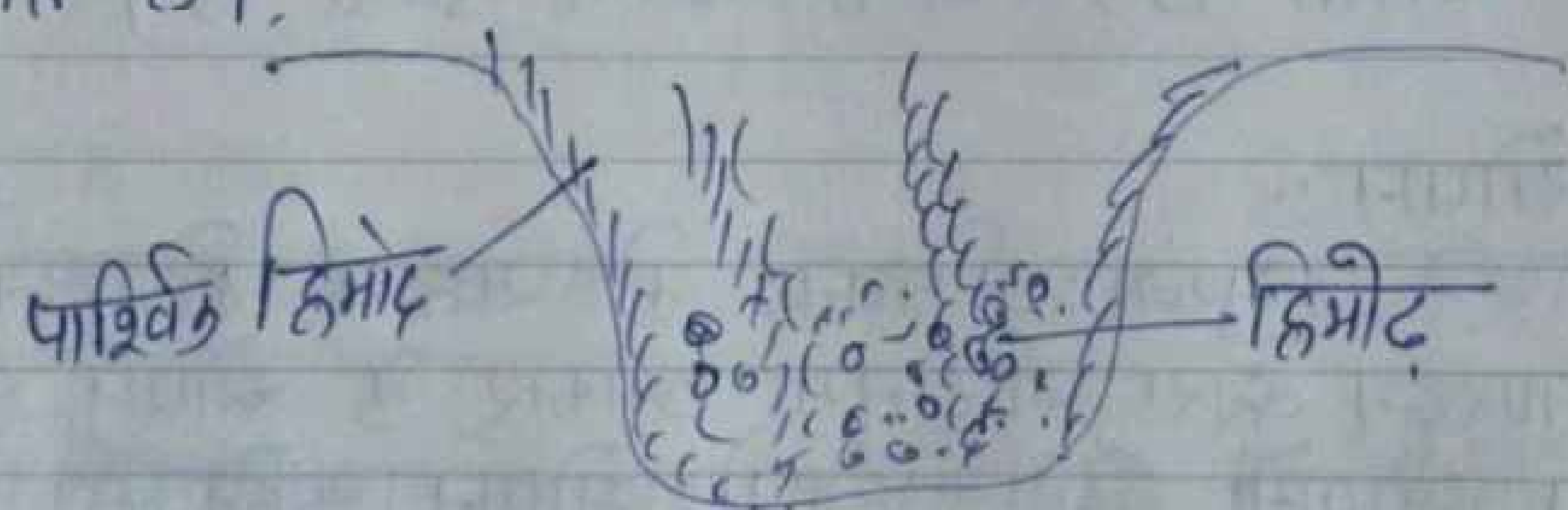

(2) एस्कर :-

यह हिमानी जलोढ़क [illegible] के जमाव से निर्मित लम्बे, संकड़े एवं लहरदार कटक होते है बालु बजरी से निर्मित होते है इनका विस्तार हिमनद जलधारा के समानान्तर होता है

Let's make a right choice and use dustbin.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(3) केम :- (Kame) :- हिमनद के अग्र भाग में रेत, बजरी एवं टिल से तीव्र ढ़ाल वाले टीले बन जाते हैं। इन्हे केम कहते हैं।

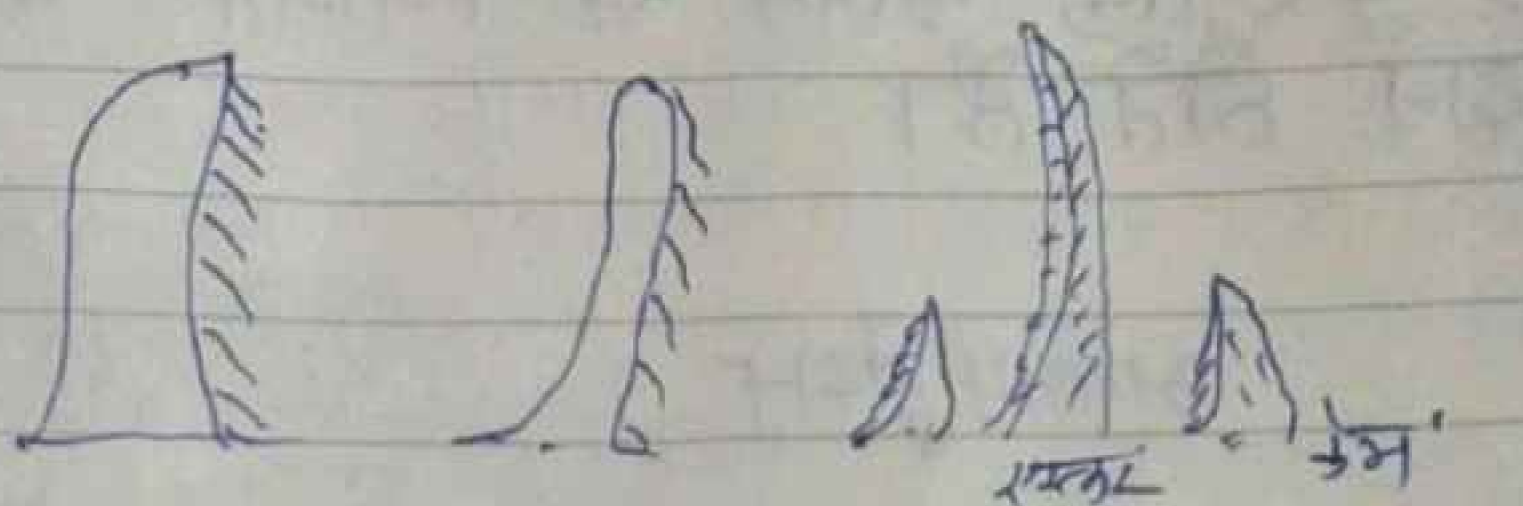

(4) केटील :- (Kettle) :- ये बड़े-बड़े हिम के टुकड़ों के पिघलने से निर्मित गर्त को केटील कहते हैं, केटील मे स्थित टीलों को हमक कहते हैं,

(5) # ड्रमलिन :- गोलाश्म मृतिका के निक्षेपण से अण्डो की टोकरी के समान आकृति को ड्रमलिन कहते हैं इसके निचले भाग दलदली होते हैं,
⇒ मध्य-न्यूयार्क और फिनलैंड में अनेक ड्रमलिन मिलते हैं।
बड़े व विस्तृत ड्रमलिन पर सड़क विकास तथा बस्तियाँ भी विकसित हो जाती हैं

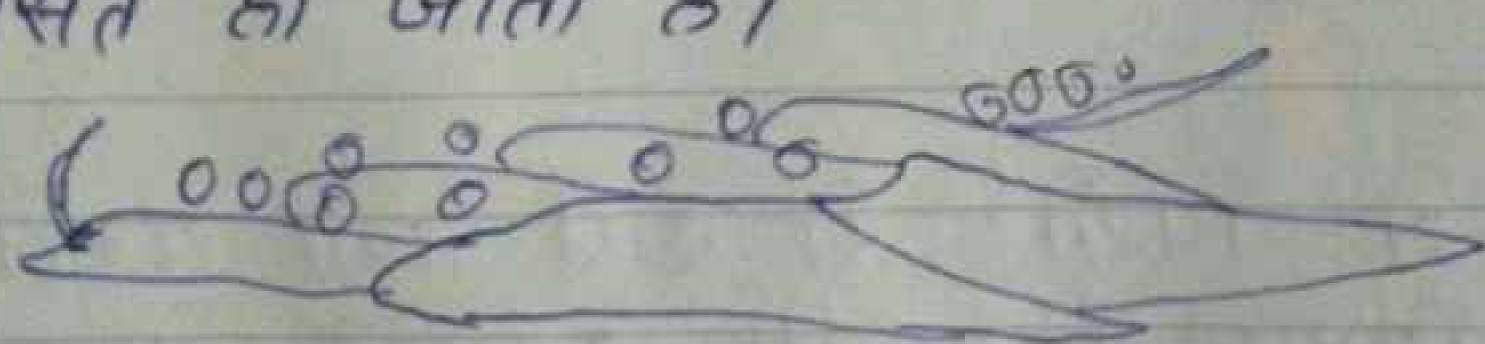

(6) टिल :- हिमनद द्वारा कमोबेश रूप में जमा किए गए अस्तरित तथा असंगठित मलबे को टिल कहते हैं।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(7) हिमानी अवक्षेप मैदान :- (Outwash Plain) :- यह हिमजल के प्रवाह से मलबे के दूर तक फैलने से निर्मित पंखे के आकार वाले मैदान होते है।

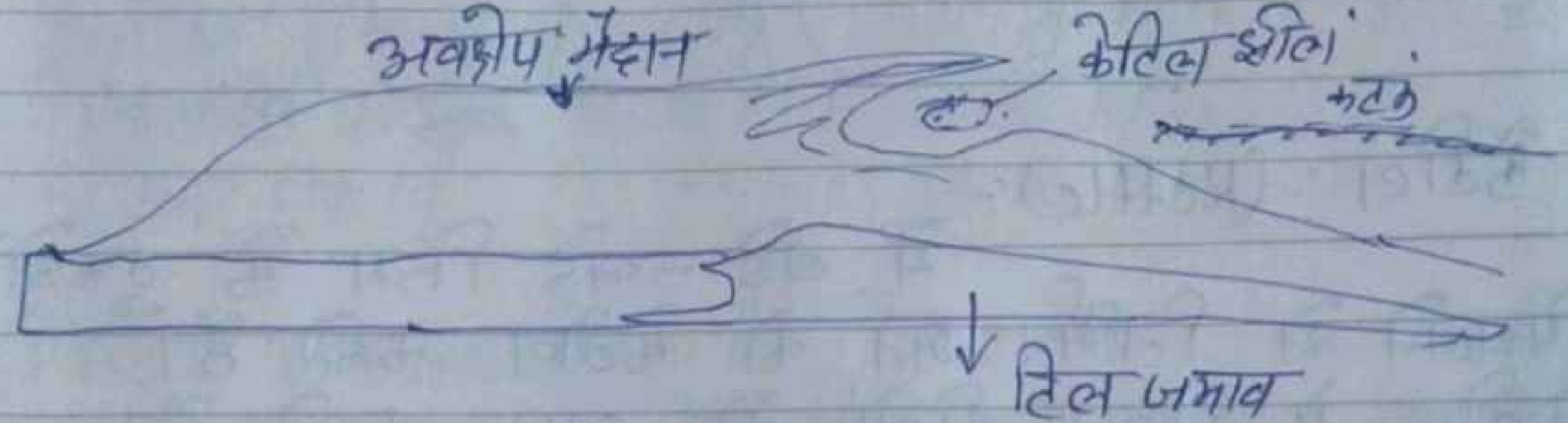

अन्य (पारिभाषिक शब्द) :-

(1) फर्न :- पुरानी दानेदार हिम

(2) रेण्डक्लफ्ट :- हिमनद एवं शैल पृष्ठ के मध्य की शिखर दीवार

(3) हिमानी प्रोथ :- यह हिमनद का अन्तिम भाग

(4) फियार्ड :- ये फियोर्ड से छोटे तथा उथले होते है नार्वे को फियार्ड की भूमि कहते है। जबकि फियार्ड स्वीडन में अधिक मिलते है।

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(तरंगों)

प्रश्न.5 सागरीय लहरों द्वारा - तटीय स्थलाकृतियों का वर्णन किजिए।,

उत्तर:-

पवनों के प्रवाह से सागरतल पर उठने वाली तरंगों को लहरें कहते हैं, लहरें तटवर्ती भागों में जलगति क्रिया, अपघर्षण, सन्निघर्षण व जलीय दाब क्रिया एवं मलबे के निक्षेप से अनेक प्रकार की स्थलाकृतियों का निर्माण करती है.

(A) अपरदनात्मक स्थलाकृतियाँ:- निम्न है।

(i) भृगु (cliff):-
(ii) लघुनिवेशिका (caves):-
(3) कन्दरा - (Sea caves):-
(4) वात छिद्र- (Blow-out).
(5) मेहराब -
(6) गुहा स्तम्भ -
(7) तरंग घर्षित वेदिका:-

(1) भृगु:- (cliff):-

लहरों द्वारा तटवर्ती भाग पर निरन्तर प्रहार से अपरदन के कारण निर्मित लम्बवत किनारा क्लिफया भृगु कहलाता है।

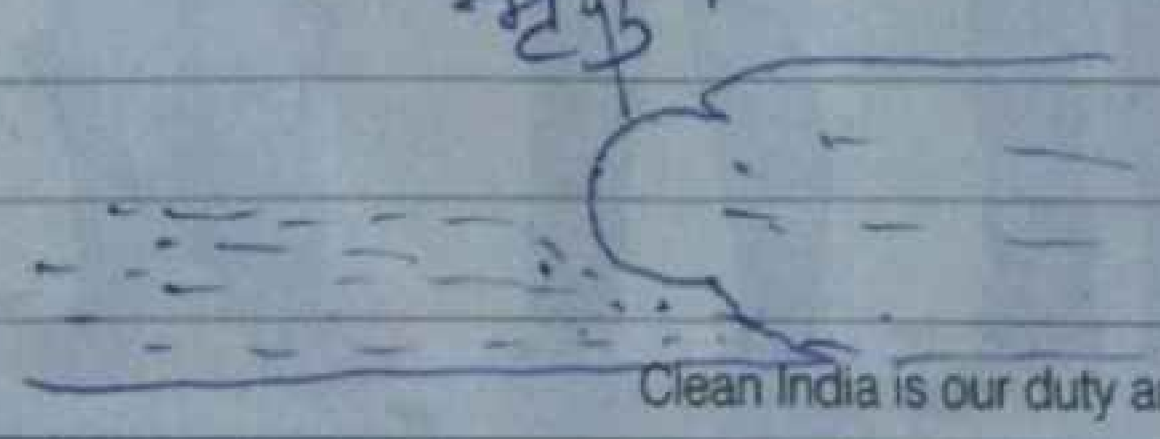

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(2) लघुनिवेशिका :- (Cave) :-

तट के समानान्तर कठोर व कोमल शैलों वाले क्षेत्रों में कोमल शैलों के कटाव से बनी अण्डाकार आकृति को लघु निवेशिका कहते हैं,

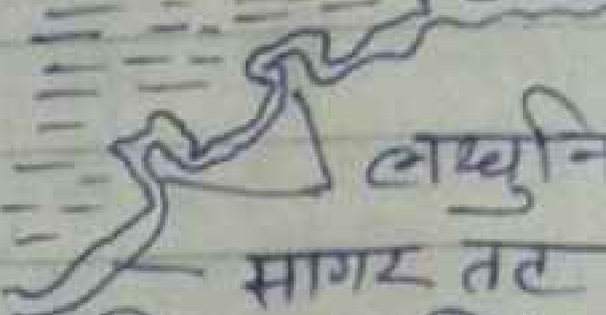

(3) कन्दरा :- (Sea Caves) :-

तटवर्ती भागों में लहर द्वारा निर्मित खांचों का लगातार कटाव होने से समुद्री गुफाओं का निर्माण होता है

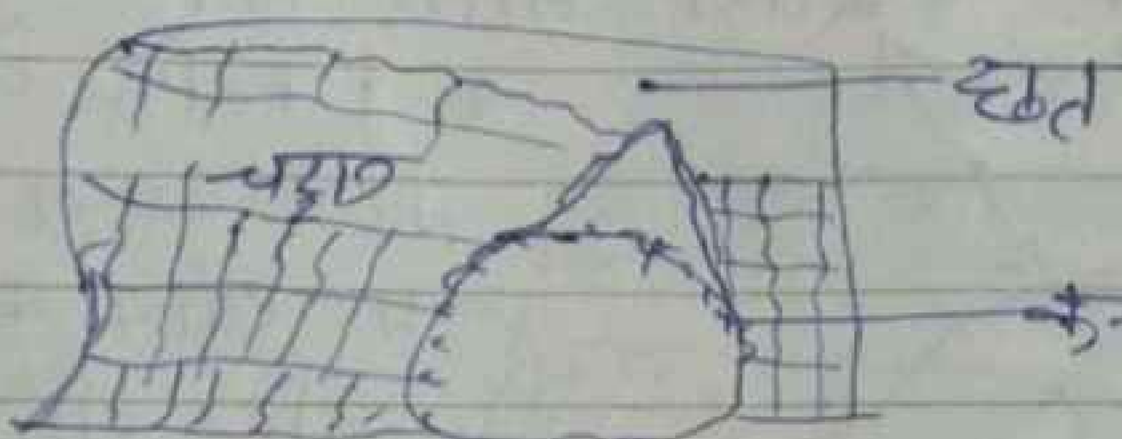

(4) वात छिद्र :-

तटवर्ती कन्दरा की छत पर ज्वारीय तरंगें छेद कर देती हैं जिसे वात छिद्र कहते हैं,

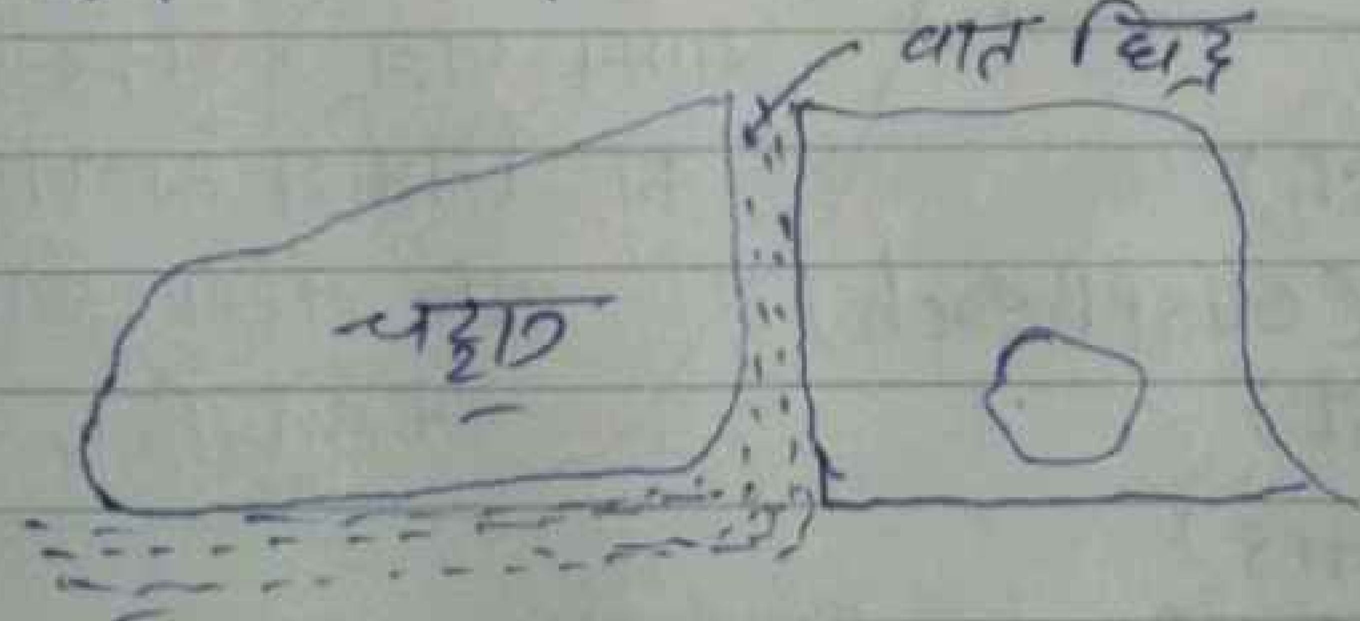

(5) मेहराब :- समुद्र तट पर दो ओर से बनने वाली गुफाओं के परस्पर मिल जाने से मेहराब की रचना होती है

(मेहराब)

Clean India, Beautiful India

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

(6) <u>गुहा स्तम्भ</u> :- (स्टैक) मेहराब की छत के टूटने से निर्मित स्तम्भ को गुहा स्तम्भ कहते है। इसका निर्माण उस समय भी होता है जब तट के पास निकले भाग के आस-पास की कोमल चट्टाने कट कर या घुलकर अलग हो जाती है तथा कठोर शैल तट से दूर स्टैक रूप में शेष रह जाती है इसे चिमनी शैल भी कहते है।

(7) <u>तंरग घर्षित वेदिका</u> :- यह भृगु के निरन्तर पीछे हटने से निर्मित चबूतरा होता है।

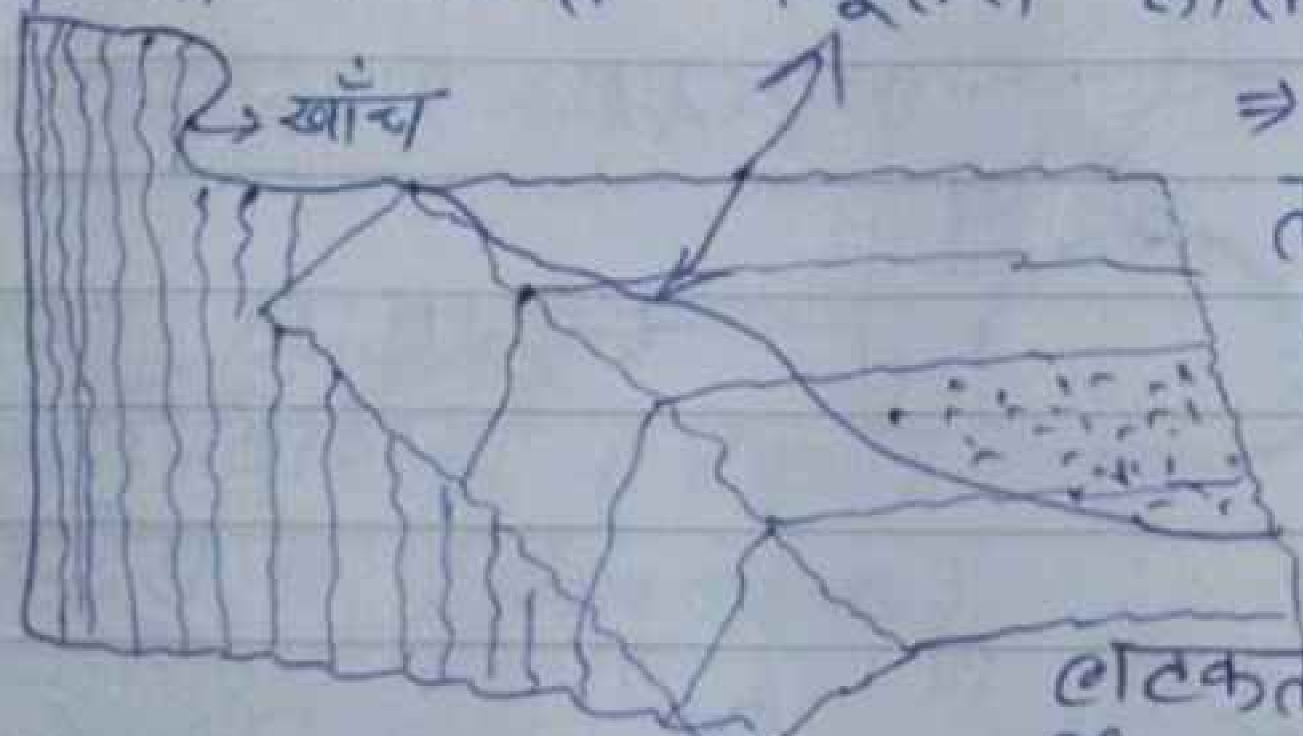

⇒ क्लिफ से सागरीय तरंगे टकरा कर उसके आधार पर खांच का निर्माण करती है, धीरे-धीरे खांच के विस्तृत होने पर क्लिफ का ऊपरी लटकता भाग टूट कर गिरने लगता है तथा क्लिफ निरन्तर पीछे हटता जाता है जिससे क्लिफ के सामने जल के अन्दर एक मैदान का निर्माण हो जाता है इसे तंरग घर्षित वेदिका कहते है,

(B) <u>निक्षेपात्मक स्थलाकृतियाँ</u> :-

(1) <u>पुलिन</u> :- (Beach)
(2) कस्प <u>पुलिन</u> :- (Cusp Beach)
(3) स्पिट - (Spit)
(4) रोधिका - (Bars)
(5) अपतट रोधिका (Offshore Bars)
(6) हुक (Hook)
(7) लूप (Loop)
(8) संयोजन रोधिका -
(9) लैगून या खाड़ी रोधिका -
(10) टोम्बोलो (Tombolo)
(11) सबखा (12) तटीय तर भाग -

Cleanliness is happiness.
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

उदा :- केरल तट के सहारे - कोवलम पुलिन मुख्य है।
उडीसा मे पुरी पुलिन है।

(1) पुलिन :-
सागर तट के सहारे लहरों द्वारा मलबे के निक्षेपण से पुलिन का निर्माण होता है, पुलिन का निर्माण उच्च ज्वारतल तथा निम्न ज्वारतल के मध्य वाले स्थानों मे होता है, सागरीय जल द्वारा अपरदित पदार्थों का कुछ भाग तट के सहारे जमा हो जाता है, जिससे तट का कुछ भाग उथला हो जाता है, जलमग्न तट का यह उथला भाग बीच या पुलिन कहलाता है

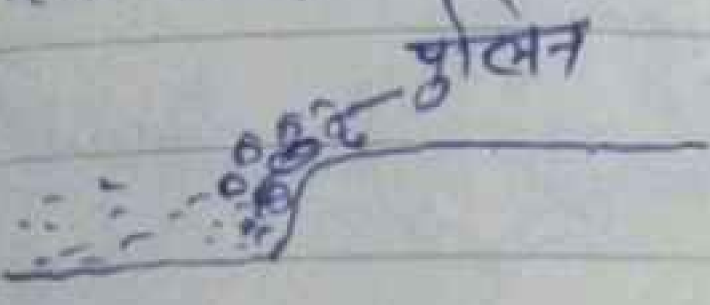

(2) कस्प पुलिन :- (उदा :- गोवा तट के सहारे कोल्वा, पुलिन
सागर की ओर लम्बाई में विस्तारित कंकड़ - पत्थर, बजरी निर्मित त्रिकोण के रूप में बने बीच को कस्प पुलिन कहते है,

(3) स्पिट :- (Spit) :-
लहरों द्वारा सागर की ओर जिव्हा के रूप में किया गया निक्षेपण स्पिट कहलाता है,

(4) रोधिका :-
तरंग या धाराओं द्वारा निक्षेपित कटक या बाँध को रोधिका कहते है, इनका रूप की तरह का होता है.

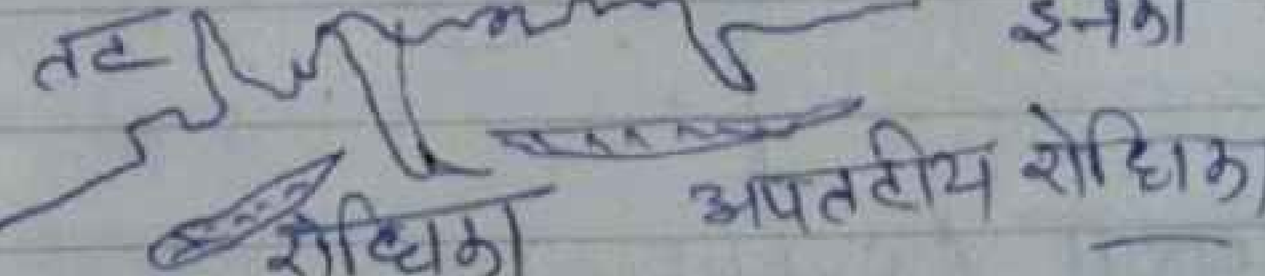

(5) अपतट रोधिका :-
तट से दूर किन्तु उसके समान्तर बनी बांध या दीवार, अपतट रोधिका कहलाती है

(6) हुक (Hook) :-
स्पिट के अर्द्धचन्द्राकार घुमावदार जमाव को हुक कहते है

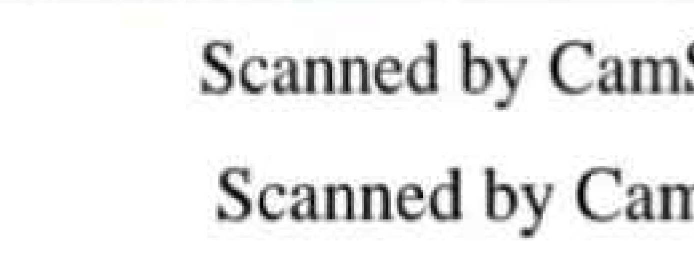

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner

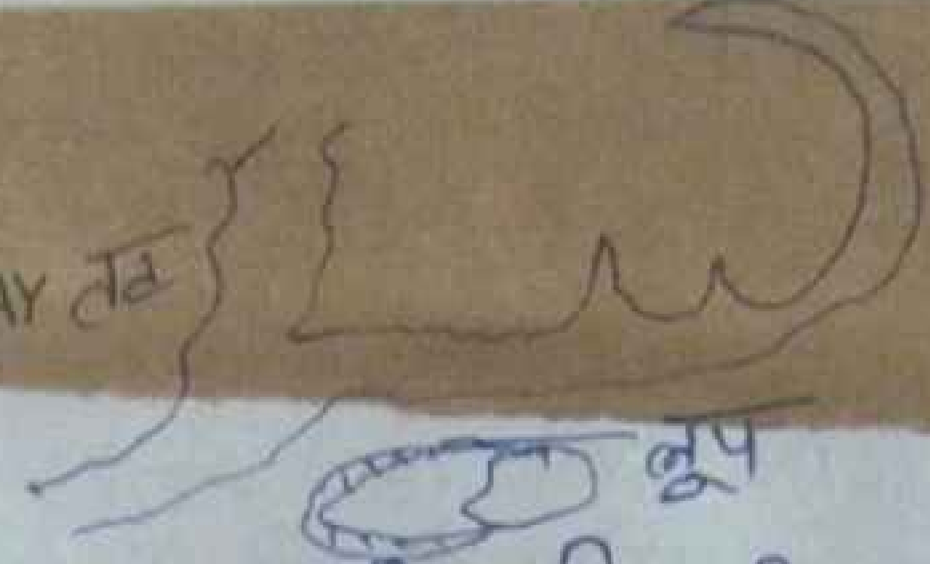

(7) **लूप (Loop)**:- जब एक छल्ले की ओर मुड़कर तट से मिल जाता है। तो लूपनुमा आकृति बनती है,

(8) **संयोजन रोधिका**:-
दो द्वीपों को जोड़ने वाले बाध या दीवार को संयोजी रोधिका कहते है,

(9) **लैगून एवं खाड़ी रोधिका**:-
किसी खाड़ी के दोनों छोर निक्षेपित दीवार या बांध से जुड़ जाते है, जो उस दीवार को खाड़ी रोधिका तथा इस बन्द खाड़ी को लैगून कहते है,

(10) **टोम्बोलो**:-
द्वीपों को तट से जोड़ने वाली रोधिका 'टोम्बोलो' कहलाती है।

(11) **सबखा (Sabkhas)**:-
शुष्क उष्ण कटिबन्धी भागों में तटीय भागों में सपाट निक्षेप जनित तटों को साल्ट फ्लैट या सबखा कहते है ये पूर्णतया चौरस बन्जर तटीय भाग होते है इनका मिस्र, मेक्सिको, कैलिफोर्निया में विकास हुआ है। (12) **तटीय तर भाग**:- तटीय क्षेत्रों में विकसित सपाट दलदली भागों का निर्माण जब आर्द्र उष्ण कटिबन्धी भागों में होता है तो उन्हें तटीय तर भाग कहते है

Let's make a right choice and use dustbin.

Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner
Scanned by CamScanner